भ्रमर गीत संग्रह

डॉ॰ स्नेहलता श्रीवास्तव

भ्रमर गीत संग्रह

डॉ॰ स्नेहलता श्रीवास्तव

मध्ययुगीन कवियों के भ्रमर गीतों का संकलन

भ्रमर गीत संग्रह

[redacted]

डॉ० स्नेहलता श्रीवास्तव
हिन्दी-विभाग, इन्द्रप्रस्थ कालिज फॉर वीमेन
[दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-६]

राजेश प्रकाशन
कृष्णनगर दिल्ली-५१

[इस पुस्तक का कोई भी अंश प्रकाशक की पूर्वलिखित अनुमति के बिना उद्धृत नहीं किया जा सकता]

प्रथम संस्करण : २६ जनवरी १९७४
मूल्य : तीस रुपये

35/-

प्रकाशक :
इन्द्रेश राजपूत
प्रबन्धक : राजेश प्रकाशन
डी. ४/२०, कृष्ण नगर, दिल्ली-११००५१

मुद्रक :
कुमार प्रिंटिंग प्रेस
नवीन शाहदरा दिल्ली-३२

Bharmar Geet Sangrah—Dr. Sneh Lata Srivastava

सावित्री सिन्हा की सरल, सरस,
स्निग्ध स्मृतियों को,

भूमिका

भ्रमरगीत काव्य की एक विशिष्ट विधा के रूप में प्रयुक्त होने वाली शैली है जो कथानक रूढ़ियों के अन्तर्गत काव्य शास्त्र सम्मत है। संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में इस शैली का प्रचुर मात्रा में प्रयोग उपलब्ध है। मुख्यतः उपालंभ, व्यंग्य परिहास आदि के लिए इसका आश्रय लिया जाता है। भ्रमर के माध्यम से रचनाकार अपना अभिप्रेत अभिव्यक्त करता है और उपालंभ के लिए जिस मर्मस्पर्शी अभिव्यंजना की अपेक्षा होती है वह भ्रमर को लक्ष्य बनाकर की जाती है। भ्रमरगीत शैली का प्रयोग सोद्देश्य ही होता है अतः उसके पीछे छिपे लक्ष्य को जान लेना पाठक के लिए कठिन नहीं होता। इस शैली का वैशिष्ट्य समझने के लिए कवि का मूल आशय समझना अनिवार्य है। यदि पाठक कवि के उद्देश्य और लक्ष्य से परिचित है तो उसे भ्रमर के प्रति सम्बोधित उक्तियों के आस्वादन में आनन्द का अनुभव होगा। भ्रमरगीत शैली की लोकप्रियता का कारण उसकी मर्मस्पर्शिता और व्यंग्यात्मकता है। जो प्रत्यक्ष कहते नहीं बनता या कवि प्रत्यक्षतः कहना नहीं चाहता वह भ्रमरगीत शैली से सहज ही कह देता है और पाठक उसको हृदयंगम करके आनन्द विभोर हो उठता है।

मध्यकालीन हिन्दी-काव्य में भ्रमरगीत शैली का प्रयोग अधिकांश कवियों ने किया है। भक्तिकालीन कृष्णोपासक कवियों के लिए यह शैली उपलम्भ का साधन ही बन गई थी। विशेषतः सगुणोपासना की स्थापना के लिए अन्य कवियों ने इस शैली को स्वीकार किया था और भ्रमर के माध्यम से निर्गुण ब्रह्म पर कटाक्ष-व्यंग्य करने में भ्रमरगीत की सफलता में किसी को सन्देह का अवकाश नही है। सूरदास और नन्ददास के भ्रमरगीत तो इतने मार्मिक, तीक्ष्ण, कहीं-कहीं प्रखर कटाक्ष पूर्ण और सहज संवेद्य है कि उनकी समता के लिए किसी अन्य कवि के भ्रमरगीत को खोज पाना कठिन है। सूर और नन्ददास के भ्रमरगीतों से प्रभावित कवित्त शैली में रचित कविवर जगन्नाथदास रत्नाकर का 'उद्धव शतक' इस परम्परा का, आधुनिक युग का श्रेष्ठ भ्रमरगीत काव्य माना जाता है। सुप्रसिद्ध भ्रमरगीतों को पढ़ने के बाद पाठक के मन में यह जिज्ञासा पूर्ण इच्छा उदित होती है कि हिन्दी की समग्र भ्रमरगीत परम्परा का परिचय प्राप्त किया जाय। किन्तु सभी कवियों के भ्रमरगीत एकत्र उपलब्ध न होने से इस अकांक्षा का शमन संभव नहीं होता।

हर्ष का विषय है कि भ्रमरगीत काव्य परम्परा का वैज्ञानिक शोध-प्रक्रिया से अध्ययन करने वाली विदुषी डॉ० स्नेहलता श्रीवास्तव ने इस दुष्कर कार्य को पूरा करने का संकल्प किया और भक्तिकाल के निर्गुण कवियों से प्रारम्भ कर रीतिकाल पर्यन्त सभी भ्रमरगीतकारों की प्रतिनिधि कृतियों का एक ही ग्रंथ में समाहार कर दिया है। डॉ० श्रीवास्तव के इस संग्रह से पाठक उन समस्त कवियों की भ्रमरगीत विषयक रचनाओं से परिचित हो सकता है जिनका इस शैली को समृद्ध करने में कुछ भी योगदान रहा है। इस संग्रह में पचास कवियों की भ्रमरगीत सम्बन्धी प्रतिनिधि रचनाएँ संकलित है। सम्पूर्ण रचनाओं का समावेश तो संभव नहीं था। अतः प्रमुख एवं प्रतिनिधि रचनाओं को ही इस संग्रह में स्थान दिया गया है। मुझे विश्वास है कि भ्रमरगीत काव्य शैली का रसास्वाद करने में पाठक को इस संग्रह में प्रचुर सामग्री उपलब्ध होगी।

मैं डॉ० श्रीवास्तव एवं राजेश प्रकाशन के संचालक श्री इन्द्रेश राजपूत को इस श्रम साध्य कार्य के लिए हिन्दी जगत् की ओर से साधुवाद देता हूं। आशा करता हूं कि डॉ श्रीवास्तव इस परम्परा की आधुनिक कड़ी को भी दूसरे संग्रह में पूरा करके पाठकों के लिए उपयोगी सामग्री सुलभ करेंगी।

—विजयेन्द्र स्नातक

प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-७

१०-१०-७३
दिल्ली

संदर्भ

हिन्दी भक्ति-साहित्य में भ्रमरगीत काव्य का विशेष महत्त्व है। इस परम्परा से संबंधित दो शोध प्रवन्धों के अतिरिक्त प्रचुर आलोचनात्मक सामग्री भी प्रकाशित हो चुकी है सूरदास, नंददास तथा रत्नाकर के भ्रमरगीत काव्य पाठ्यक्रम में स्थान पा चुके हैं। किन्तु इनके अतिरिक्त अनेक कवियों की सरस भ्रमरगीत रचनाएँ हस्तलिखित रूप में पुस्तकालयों के बस्तों में बँधी पड़ी हैं या अप्राप्य रचनाओं के रूप में दृष्टि से ओझल हैं। जिस भ्रमरगीत काव्य पर आलोचनात्मक साहित्य का विशाल भांडार उपलब्ध हो, उस सरस साहित्य का रसास्वादन न किया जा सके, इससे बढ़कर और कौन-सी विडम्बना होगी।

भ्रमरगीत परम्परा पर शोध कार्य करते समय भ्रमरगीत रचनाओं की प्रचुरता, काल की व्यापकता तथा कलात्मकता की दृष्टि से मेरे मन में यह इच्छा हुई थी कि इन रचनाओं का एक संकलन सहृदय साहित्य मर्मज्ञों के सम्मुख रख सकूं। यह श्रम साध्य तथा अर्थ साध्य कार्य था। जहाँ तक श्रम का संबंध है यह कार्य कई वर्ष पूर्व ही समाप्त कर लिया गया था। समस्या अर्थ की थी। व्यवसायिक व्यक्ति हानि-लाभ की तुला पर रचना को तौलता है। विलम्ब का यही कारण है। सौभाग्य से श्री इन्द्रेश राजपूत ने इस व्यवसायिकता की उपेक्षा कर गत वर्ष 'चाचा वृन्दावनदास और उनका भ्रमरगीत' हिन्दी जगत के सामने रखा। यह 'भ्रमरगीत संग्रह' भी उन्हीं के साहित्यानुराग का फल है।

आदरणीय डॉ० विजयेन्द्र स्नातक ने इसकी भूमिका लिखने का कष्ट किया है। मैं इसके लिए उनकी आभारी हूं। संग्रह इस रूप में प्रकाशित हो सके इसके लिए अनुज विमलेश कान्ति का अनेक रूपों में सहयोग मिलता रहा है। उन्हें धन्यवाद देना तो औपचारिकता मात्र होगी। 'भ्रमरगीत संग्रह' के प्रकाशन का श्रेय श्री इन्द्रेश राजपूत को है। मैं उनके श्रम सहयोग और तत्परता के लिए उन्हें धन्यवाद देती हूं।

डॉ० सावित्री सिन्हा के जीवन काल में ही यह संग्रह उन्हें ही समर्पित करने का मैंने संकल्प किया था किन्तु नियति का कैसा विधान है जब रचना ने आकर ग्रहण किया वे निराकार हो चुकी थीं। अब तो उनकी स्मृतियाँ ही शेष हैं।

—स्नेहलता श्रीवास्तव

इन्द्रप्रस्थ कालिज फॉर वीमैन
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-६

अनुक्रम

१. अक्षर अनन्य १— २३
२. आलम और शेख २४— ३०
३. गोस्वामी हरिराय ३०— ३३
४. ग्वाल कवि ३३— ३८
५. घासीराम ३९
६. चतुर्भुजदास ३९— ४०
७. चाचा वृन्दावनदास ४०— ५४
८. जयसिंह ५४— ६१
९. जैन आनन्दघन ६१
१०. ठाकुर ६२
११. तुलसीदास ६२— ६९
१२. तेजसिंह ६९
१३. तोषनिधि ७०
१४. दयालाल ७०— ७९
१५. द्विजदेव नारायण शर्मा 'विधु' ७९
१६. देव ८०— ८१
१७. नन्ददास ८२— ९४
१८. नन्दराम ९५
१९. नागरीदास ९५— ९७
२०. पद्माकर ९८— ९९
२१. परमानन्ददास ९९—१००
२२. प्रागन १०१—११४
२३. प्रेमदास ११४—११५
२४. बगसी हंसराज ११६—११७
२५. बरकत उल्लाह पेमी ११७—१२०
२६. ब्रजनिधि १२१—१३१
२७. बेनी प्रवीण १३१
२८. प्रेमघन १३१

२९. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	१३२—१३६
३०. भिखारीदास	१३७
३१. मतिराम	१३७—१३८
३२. मलूकदास	१३८—१३९
३३. महाराणा जवानसिंह	१३९
३४. मुबारक	१४०
३५. रसखान	१४०—१४१
३६. रघुनाथदास राम सनेही	१४१—१५१
३७. रंगपाल	१५१—१५२
३८. रसनायक	१५२—१५५
३९. रसरूप	१५५
४०. रसरासि	१५६—१६२
४१. रशिक	१६३—१६५
४२. रसीले	१६५—१६७
४३. रहीम	१६७—१७०
४४. लालजी	१७०
४५. सेनापति	१७०
४६. संतदास	१७१—१७३
४७. श्री राम हरि	१७४—१७५
४८. सूरदास	१७५—३६०
४९. हरिराय	३६१—३६९
५०. परिशिष्ट—लोक गीतों में भ्रमरगीत	३६९—४००

० ०

अक्षर अनन्य

प्रेम दीपका

जाकी शक्ति पाइ ब्रह्मा विष्णु औ महेश रवैं ।
जाकी शक्ति पाइ शेष धरनी धरत है ।।
जाकी शक्ति पाइ अवतार करतूत करैं ।
जाकी शक्ति पाइ भानु तम को हरत है ।।
जाकी शक्ति पाइ शारदाहु गणपति गुणी ।
जाकी शक्ति पाइ जन्तु जीवत मरत है ।।
अच्छिर अनिन आन अमर उपास छांड़ि ।
ताहि आदिशक्ति को प्रणाम ही करत है ।।१।।

कर प्रणाम श्री मातु को, ग्यान सुमति उर पाय ।
प्रेम दीपका हरिकथा कहों प्रेम समुझाय ।।२।।

माधो जू इक दिन कहो, मधिकुर सो सतिभाव ।
गोपी गोप प्रवोध कौं, तुम ब्रजमण्डल जाव ।।
तुम ब्रजमण्डल जाव, प्रेम अतिही उन कीन्हों ।
जब तै भयो बिछोह, सोध हम कबहूँ न लीन्हों ।।
तुम मम मति दरसाइ हर्यो दुखसिंधु अगाधो ।
कहियो सब सों यहै दूर तुम तैं नहिं माधौ ।।३।।

विषय मदमाती त्रिया, काम केलि आसक्त ।
सुन्दर पुरुष विचारि कै करी हमारी भक्त ।।
करी हमारी भक्त नंद सुत गुन सुखदायक ।
तीन मुक्ति हम दीन नहीं चौथी कहँ लायक ।।

तातें पुम परवीन जाइ दीजो निज सिषया।
कृष्ण निरंजन देव नहीं जानौ नर विषया ॥४॥

विषय वासना त्रियन की करियो मन ते दूर।
शुद्ध ब्रह्म दरसाय कै रह्यौ सर्व भरपूर ॥
रह्यौ सर्व भरपूर तासु उपदेशन कीजो।
मम सेवा फल जान यहै उनकौ सिष दीजौ ॥
ग्यान जोग निज बोध मिटै कर्म के उपासना।
विरह मिटैं सुख होय मिटैं सब विषय वासना ॥५॥

श्री वृन्दा जग मात है वृन्दावन की देवि।
करियो जाइ प्रनाम मम चरन कमल रज सेवि॥
चरन कमल रज सेवि देवि ब्रज की रछिपाला।
वृन्दावन अति सघन जहाँ ज़ग जननि दिवाला ॥
करियो पूजा जाय जवै पूजै सुखकंदा।
जदिन भाग मम होइ तदिन परसो श्री वृन्दा ॥६॥

आयुस दै सुख पाइ इमि आप मुकुट धर मत्थ।
अपनोई जोरो रुचिर पहिरायो अप हत्थ ॥
पहिरायो अप हत्थ दिये आयुध जु मँगाइक।
खासो रथ सजवाय बोलि पठये यदुनायक ॥
दिनमनिसम निज जोति मरुतगति अति उजायस।
तव पां परि मिलि भेंटि चले ऊधौ लै आयस ॥७॥

हरि प्रीतम अति आतुरे चले तुरत रथ जोत।
नंद गाँव के गेंडड़े पहुँचे संध्या होत ॥
पहुँचे संध्या होत छप्यो गोरेनु बिवानं।
लखे न काहु जात गये ब्रजराज निधानं ॥
मिली जसोधा रोइ मनौ सुत पाइ पुनीतं।
भेंट नंद उर लाय पाइ प्यारे हरि प्रीतम ॥८॥

पूजा करी, जेंवाइ करि पारे पलंग सुछेद।
कुसल छेम बलराम की पूंछत रोवत नंद ॥

पूछत रोवत नंद सुनो ऊधौ बड़ भागी ।
नीके हैं हरि राम हमहिँ उनकी रट लागी ।।
निरमोही उन तुल्य अछिर नहिं देख्यो दूजा ।
पिघलत है पाषान जदपि कीजत है पूजा ।।९।।

हम तो हरि श्रीराम जू सेये देव समान ।
मानस कर जाने नहीं हमैं तुम्हारी आन ।।
हमें तुम्हारी आन करी बिधि सौं नित पूजा ।
ज्यौं फनिमनि सिरमौर और जानै नहिं दूजा ।।
तिहि विछुरे कहि अछिर कहौ कैसे मन दुमतो ।
दीन मीन जलहीन कौन ऐसी हरि हम तो ।।१०।।

कबहूँ या ब्रजबास की खबर करत कै नांहि ।
विविध भाँति क्रीड़ा करी उन ब्रज मंडल मांहि ।।
उन ब्रजमंडल मांहि सगुन मुख जानत भाषे ।
हम सबहीं बहुबार विविध संकट ते राखे ।।
तेई गुनगन गाइ अछिर जीवत हम अबहूँ ।
ते मनमोहन राम, मधुप, मिलि हैं अब कबहूँ ।।११।।

जसुधा को बहु सुख दिए करि करि बाल विनोद ।
ते अबहूँ रस बस भये आप करैं उत मोद ।।
आप करैं उत मोद महा मोहन निरमोही ।
जहँ ते मिलत न सोध गुपित नगरी तहुँ टोही ।।
यह कहि रोये नंद अछिर फाटत नहिं वसुधा ।
नैन नीर कुच छीर श्रवहिं अनुरागिन जसुधा ।।१२।।

देखौ ऐसे प्रेम अति ऊधौ अचरजु कीन ।
नंद जसोधा बोध कै बोले वचन प्रवीन ।।
बोले बचन प्रवीन सुनौ ब्रजराज सभागे ।
सकल सिरोमनि भक्ति जक्तपति सों अनुरागे ।।
जक्तपिता जगदीश भयो जिनते जग लेखौ ।
तिन सों पूरन प्रेम आजु तुम्हरैं हम देखौ ।।१३।।

तातें वे श्री कृष्ण जू तुम ते नाहीं दूर ।
पूरन प्रेम प्रताप तें रहैं हृदै भरपूर ।।
रहैं हृदै भरपूर मूल तुम तत्त विचारो ।
व्यापि रह्यो सब मांहि नाम अद्वैत निहारो ।।
तत्त मित्त पित मात नहीं उनके ये बातें ।
भक्ति हेत कछु काल बसे तुम्हरे गृह तातें ।।१४।।

को काको माता पिता को काको सुत होय ।
आतम एक अनेक है ज्यों घट घट ससि सोय ।।
ज्यों घट घट ससि सोय, ब्रह्म पूरन इमि जानौं ।
तव तन आतम भाव नहीं माता भ्रम मानौं ।।
रोइ गाइ कहि लेव वृथा मद मोह न छाकों ।
ग्यान मोद में रहौं कहौ जग में को काकौ ।।१५।।

इहि विधि पर्म प्रवीन अलि हरो महरि को भर्म ।
पुत्र जान ममता कही, दरसायो मति पर्म ।।
दरसायो मति पर्म रात बीती इन बातन ।
उठी सकल ब्रजनार प्रेम बूड़ी रस गातन ।।
पुलक नैन करि सुरति करी लीला हरि जिहि विधि ।
दधि भावै गावैति सुनत उमगे अलि इहि विधि ।।१६।।

पुनि अलि चलि जमुनहि गये गोपी निकसीं बार ।
मनि मानिक बानिक सुरथ देखि नंद के द्वार ।
देखि नंद के द्वार भई सब ज़ुरके ठाढ़ी ।
लागी करन विचार प्रेम करूनारस बाढ़ी ।।
फिर आयो अक्रूर गयो हतकै हम को सुनि ।
मह मुगदरिय सखी कहा करिहै अब कै पुनि ।।१७।।

ऐसी बातें सब कहैं नैनन नीर बहाय ।
जमुना तें आवत सुभग देखे ऊधवराय ।।
देखे ऊधवराय कहैं नागरि यह को है ?
हरि कैसी उनहार मधुर मूरति मन मोहै ।।
चलत हते अलि कान्ह डगैं धारै धर तैसी ।
हैं उनही को सखा और कामें गति ऐसी ।।१८।।

तौं लौं ऊधौ आइगे सब को किये प्रनाम।
ग्यान दृष्टि हरि भावतिन जानौ तिनकौ नाम।।
जानौ तिनकौ नाम रिचा वेदन की चातुर।
महर महल एकंत सु लै बैंठीं त्रिय आतुर।।
मधिकुर जोग सँदेस कहन लागे मुख जौलों।
उर अंतर गति जान बाम बोली उठ तौलों।।१९।।

उधौ हम जानत तुम्हैं हौ हरि केर खवास।
बोध करन के कारनें पठये हैं हम पास।।
पठये हैं हम पास सु तौ तुम आप विचारौ।
नीर विना नहिं जियै मीन पय सागर डारौ।।
जौ मन बध्यो सनेह तिन्हैं करिहै को सूधौ।
उठौ अग्नि को अंग अग्नि सियरो है ऊधौ।।२०।।

ऊधो जे नर नारि नित पगे प्रेम अनुराग।
तिन को बोधन बचन ते हिलन मिलन बड़ भाग।।
हिलन मिलन बड़ भाग बुद्धि तब लगत ठिकाने।
और तत्व गुन ज्ञान सहित प्रीतम सुख सानैं।।
कह जानौ तुम भेद कहा कहिये अलि सूधौ।
प्यासे सों कहि बेद होत संतोष न ऊधौ।।२१।।

ऊधौ हम श्री कृष्ण को अरपे तन मन प्रान।
वे मृग मीतहि बधिक ज्यौं कपटी कढ़े निदान।।
कपटी कढ़े निदान चलत कहु बात न सूझिय।
हम अंधी भईं रोई चलत मग बात न बूझिय।।
अछिर न अच्छो लहत घाव पूरन मध मद्धव।
करि हमरी यह दसा गये माधव सुनि उद्धव।।२२।।

ऊधो हम मन भावते चलत न देखे नैन।
भवनहि बैठे गवन के सुने ठोलिया बैन।।
सूनै ठोलिया बैन रहीं रोवत हम सबरी।
गति उठि भोर किसोर नहीं पाई हम खबरी।।

सुनि रोहिनि कौ रुदन भौन धाईं तिर सूधव ।
सुनत टूट गइ आसपास गिर गिर गई ऊधव ।।२३।।

उधो हरि रथ पर चढ़े हम रोईं बिलखाइ ।
घोरन के आगे गिरीं मारग में मुरझाइ ।।
मारग में मुरझाइ नेक उन पीर न जानी ।
रथ कनाइ दै हांक गये अति गरब गुमानी ।।
फिर चितये न कठोर और कहिए कह सूधो ।
कोटि बधिक ते अधिक कृष्ण कपटी सुन ऊधो ।।२४।।

ऊधो हरि ऐसी करी जैसी करत न कोइ ।
नाना लाड़ लड़ाइ के छाड़ गये अरि होइ ।।
छांड गए अरि होइ हुकुम दीनो अक्रूरहि ।
मोहिं न पावहिं बाम हांक रथ ऐस जरूरहिं ।।
यों मुरदा कर छांड़ मनौ अति बैर बिरूधो ।
देखौ हित के लछन कहा कहिये हम ऊधो ।।२५।।

ऊधो श्री हरि राम की खबरि कहौ अब आप ।
वे ज्यों हैं त्यों आप को हमरें उनको जाप ।।
हमरें उनको जाप प्रीति ज्यों चंद्र चकोरहि ।
जल झुक दीप पतंग अंग एकै हित जोरहि ।।
जो जानै सो करै नहीं हमरे कछु कूधो ।
अपनी निबहै वोर जोर हित कै सुन ऊधो ।।२६।।

ऊधौ जू हम जानहीं निहिचै कै यह रीति ।
ज्यों अतिही तरुनी करैं त्यों न पुरुष कै प्रीति ।।
त्यों न पुरुष कै प्रीत लगन स्वारथ लौ राखैं ।
ज्यों अलि आप सनेह कपट करके रस चाखैं ।।
पुनि वहि पुहुपहि छांड़ि केर मन करहि न सूधो ।
राम कृष्ण को हेत इतौ देखो हम ऊधो ।।२७।।

ऊधो लंपट पुरुष की नहिं काहू सों प्रीति ।
जहँ पायो खायो तहाँ ज्यों भिच्छुक की रीति ।।

ज्यों भिच्छुक की रीति प्रीति कहि जे बहु जाँचे ।
त्यों हरि बहु इत करी वहाँ वहु तिन रँग राँचे ।।
तिनहि न कोन प्रभान नहीं जिनको मन सूधो ।।
प्रीति निबाहन ओर धन्य सुपरस सुनि ऊधो ।।२८।।

ऊधो तुम साँची कहौ मनमोहन की रीति ।।
कबहुँ इत फिरि आइ हैं जान हमारी प्रीति ।।
जान हमारी प्रीति विथा मेटहिंगे तन की
हम तलफत उन हेत रहत कैसहुँ ना हुलकी ।।
यहि विचार तजि कपट कहौ करि के मन सूधों ।
करुनासिंधु कहाय करत करुना कत ऊधो ।।२९।।

ऐसे कपटी की भटू कबहुँ न कहिये बात ।
का कहिये यहि प्रेम बस निमुख निमुख रहि जात ।।
निमुख निमुख रहि जात गाढ़ि रसनै गुन रटकी ।
छोर न छूटत कुटिल तरक बहुबारन भटकी ।।
जीभ न बैरिन भई अली करिये मति कैसे ।
तजत न हठ हरि नाम जदपि देखत दुख ऐसे ।।३०।।

आसा ही आसा सखी मन नहिं तजत सनेह ।
दुबिधा में लुविधा बधौ उत हरि इत प्रिय देह ।।
उत हरि इत प्रिय देह नहीं दो मैं कछु छूटत ।
महा विरह संताप पाय हिरदौं नहिं फूटत ।।
करि आवन की आस दुःख पिव पीव प्रवासा ।
तातें भले निरास जान सोकासन आसा ।।३१।।

जानत हैं हमहूँ सखी सबतें सुखी निरास ।
जैसे गनिका पिंगला तजौ पुरुष को पास ।।
तजौ पुरुष को पास तरक ऐसे कर आना ।
तजै विरह संताप पाइ निज पद निर्वाना ।।
यहि निहिचै मन जान तऊँ मनसा नहि मानत ।
करि करि हरिगुन सुरति नहीं जानै पर जानत ।।३२।।

उनके गुन सांचे सखी महामोह के जार।
जिनहि नेक श्रवनन सुनत पुरुष तजत घर द्वार ।।
पुरुष तजत घर द्वार फिरत बन बन गुन गावत ।
श्री सौनिक सनकादि दत्त नारद मुनि भावत ।।
बालक ध्रुव प्रह्लाद कढ़े बाँधे गुन गुन के ।
हमरे हित की कहा सबै सांचे हित उनके ।।३३।।

सजनी उनके गुन सुनत को न होइ बस आइ ।
सुरपुर तें देवांगना उतरीतीं अकुलाई ।।
उतरीतीं अकुलाई सुनत रस मोह महारी ।
सिव ह्वै आए वाम वाम की बात कहारी ।।
क्यों न परै मन मोह सुनत षट मासन रजनी ।
सुनि मुरली धुनि कान्ह क्यों न बस होवहिं सजनी ।।३४।।

दूजो को सखि संभु ते पूरन पुरुष अलेख ।
ते आये हरि रहस में धर भामिन को भेख ।।
धरि भामिन को भेख नाथ कौतुक सब दरसे ।
जान सकुच हरिराय पायँ हर के तब परसे ।।
धर गोपेश्वर नाम करी विधि सों तिन पूजा ।
भये प्रेम बस संभु सखी कहिये को दूजा ।।३५।।

धोखे ही धोखे सखी बस्य भई हम आइ ।
ज्यों हिरनन के मन हरै बधिक बिसारी गाइ ।।
बधिक बिसारी गाइ कपट करके मन करषै ।
बसि कै मारत मुगद महा निर्दय हिय हरषै ।।
त्यों हमको हरि मोहि मार मग धौं कहि वोषै ।
कहिए कहा अनिन्न भई कपटी बस धोषै ।।३६।।

बधिकौ तो सुरजन सखी दुरजन महा मुरार ।
बहि मारत जिय ना रहो यहि अधमर कर डांर ।।
यहि अधमर कर डार मार सर बहुरिन काढ़ें ।
उसुसुत ससित सरीर प्रेम पूरन दुःख बाढ़ै ।।

यहि दुख अछिर अनिन्न कोटि मरबे ते अधिकौ ।
कृष्ण कठोरहि सखी पाइ सकिहै नहिं बधिकौ ।।३७।।

आली कृष्णहि दोष नहिं हम कीनी अनरीत ।
अपनो पतिब्रत धर्म तजि करी कृष्ण सों प्रीत ।।
करी कृष्ण सों प्रीत सुनौ ताको फल पायो ।
सपने से सुख भयो जनम भरि को दुख छायो ।।
इहि अपनें सिर दोष करै गत कर्म बिसाली ।
हमको कृत्या रूप भई मुरली वह आली ।।३८।।

मुरली वह पापिन सखी कौन जनम की सौत ।
वहि हमको ऐसी करी जैसी कहूँ न होत ।।
जैसी कहूँ न होत सौत लागी ऋप प्रानन ।
आपुन कठिनहि काम करो हम कामक बानन ।।
अबहूँ लौं कहि अछिर सुप्रभेदत सुर उरली ।
कत विधती हम पीर जो पै होती नहिं मुरली ।।३९।

श्री माधौ की मूरली कब सुनिहैं हम कान ।
जा सुन के रस बस भईं मन ते टरत न तान ।।
मनते टरत न तान भयो अधि फटकौ जियरा ।
ना यहि कढ़ै न रहै होत व्याकुल अति हियरा ।।
अछिर अच्छ तलफंत दुःख देखत चित चुरली ।
अटक रही घट माँहि श्याम मूरति अरुमुरली ।।४०।।

मधिकुर श्री ब्रजराज जू या ब्रजवास निवास ।
नाना विधि लीला करी हम सों रहस विलास ।।
हम सों रहस विलास आस कीनी पूरन मन ।
कोटि विष्णुपद तुल्य कृष्ण कीनो वृंदावन ।।
ऐसे सुख दिखाइ फेर सुधि लीन न धधिकुर ।
हम अति अधम अभाग अजहुँ जीवत हैं मधिकुर ।।४१।।

मधिकुर एक दिन श्याम सो सब सखियन को छांड़ ।
मोहि बाँह गहि लै चले गहवर वन हित मांड़ ।।

गहवर वन हित माड़ तहाँ केकर दरसे मग।
लीनी ग्रंक उठाइ पौंछि पीतामबर सों पग॥
नाना विध सुख दिये प्रेम पूरन दुख बधिकुर।
यों हितकर हत गये हमहि माधव हो मधिकुर॥४२॥

मधिकुर जू इक दिन हमैं लै चलिये उहि लोक।
जहां बसत गोपाल जू जादव करे ग्रसोक॥
जादव करे ग्रसोक भई ग्रविचल रजधानी।
सेवत सुर मुनि नृपति निकट श्री रुकमिन रानी॥
देखैं वहि सुख नैन होइ हमरे उर सधिकुर।
प्राणनाथ ब्रजनाथ कबहुँ मिलिहैं मधिकुर॥४३॥

ग्रब तौ हरि राजा भये राज सिरन सिरमौर।
रुकमिन सी रानी बरी गुन गरई सब ठौर॥
गुन गरई सब ठौर सदा तिन संग बिहारैं।
हम गँवार लघु जाति कतहुँ तन ग्रोर निहारैं॥
जबहिं हते इत ग्वाल हमहिं प्यारो ती तब तौं।
देख मलीन घिनाइ मिलैं कैसे हरि ग्रब तौं॥४४॥

जो पै ग्रब सब कुछ भयो तौ न टरै वह बान।
ग्रसुरन डर गोपाल जू जिये हमारी ग्रान॥
जिये हमारी ग्रान जगत जानत ये बातैं।
कोकिल के से बाल मिलैं ग्रपने पितु मातैं॥
तजी जान पहिचान मधुप कहि ग्रावत तोपै।
धृक ऐसो सुख तासु हितू देखें दुख जोपै॥४५॥

ऐसी मति हमरी भई प्राननाथ के ईठ।
जातें प्रीत विचार चित ग्रब तुम होहु बसीठ॥
ग्रब तुम होहु बसीठ जात ग्रावल पुर रहेऊ।
उत की सुधि दे हमैं इहाँ हमरी जा कहेऊ॥
दिये रहौ ग्राधार कही हित कौ गति जैसी।
हमरी प्रीति विचार ग्राप जानो उर ऐसी॥४६॥

इहि विधि कहि बातें त्रिया व्याकुल भई सरीर।
रोइ रोइ गिर गिर परीं निचुर चले सब चीर॥

निचुर चले सब चीर महा आतुर अति रोई।
कान्ह कान्ह कर रहैं प्रेम करुनारस भोई ।।
अछिर न कछु कहि जाइ भई तिनकी गति जिहि विधि
करन लगे उठ बोध मधुप देखत गति इहि विधि ।।४७।।

पूरन भक्ति निहार हिय सुनहु सकल ब्रजनार ।
जिन तन मन वच कर्म कर सुमिरे कृष्ण मुरार ।।
सुमिरे कृष्ण मुरार पुरुष पूरन परमातम ।
वे तुमते नहिं दूर जान उनही को आतम ।।
धरि उर ब्रह्मग्यान तजौ यह विरह विसूरन ।
देखौ चित्त विचार ब्रह्म सब में भर पूरन ।।४८।।

ध्यावहु निज परमातमा जो ध्यावत जोगीस ।
हम में तुम में स्याम में सब में पूरन ईस ।।
सब में पूरन ईस विरह जासों छिन नाहीं ।
रहै सदा संयुक्त सबै उर अन्तर माहीं ।।
तज नर नारी भाव विषय मन मांहि न ल्यावहु ।
सदा सकल सुखदान जान ईश्वर निज ध्यावहु ।।४९।।

तिनके बोधन को मधुप वचन कहेई यत्र ।।
तौलों इक भौंरा भ्रमत आइ गयो उहिं तत्र ।
आइ गयो उहि तत्र पाइ गोपिन संग बासहि ।।
सनमुख पावत लख्यो चतुर बनितन तब ना सहि ।
काकु वचन कहि उठी महा करुना मन जिनके ।।
हरि ऊधव पट ढारि लगो बरनन गुन तिनके ।।५०।।

रे भौंरा रसबावरे मनभावत के दूत ।
हमरे सनमुख विमुख अब तू नहि आवहु धूत ।।
तू नहिं आवहु धूत तोहि देखत रुचि बाढ़ी ।
जदुकुल तिय कुच चूमि भई कुमकुम तुव डाढ़ी ।।
तोहिं छिपत कहि अछिर लगत हमरे जिय दवरा ।
उनकौ जोग संदेस सौंप उनहीं कहँ भँवरा ।।५१।।

गावत का हतभाव तू जाइ द्वारका गाव ।।
उनही त्रिय अति चतुर हैं जानत गुन को भाव ।
जानत गुन को भाव जिनैं मनमोहन मोहे ।।
हमरी सुरत बिसार सुरत उनकी रस पोहे ।
बाढ़ी विरह विहाल वृथा कत हमहिं सतावत ।
रहु उनके गुन गाय सदा उनही ढिग आवत ।।५२।।

भौंरा तैं जानै कहा निज कर कै रसरीत ।
भ्रमन फिरत बहु कलिन में नहीं एक सों प्रीत ।।
नहीं एक सों प्रीत रीति तू सों कह जानै ।
ससि चकोर को भाव कहा कौवा पहिचानै ।।
जहाँ न एक सो नेह तहाँ कैसो रस बौरा ।
जहाँ बहु नाइक कान्ह मुगद तैसो तू भौंरा ।।५३।।

कपटी क्रूर कठोर अति तू रहु हम तैं दूर ।
तू स्वारथ को मीत है रहु पाखंडन पूर ।।
रहु पाखंडन पूर मिलन हित सो निज फूलन ।
लै रस कस उड़ जात बहुर मारत सठ सूलन ।।
ताते कारो भयो कलंक न सो मति लपटी ।
ज्यों हमको कहि अछिर छोहु दै गयो हरि कपटी ।।५४।।

कारे कूर कुमारगी छू न हमार शरीर ।
तू तन मन पापी महा जानत नहिं पर पीर ।।
जानत नहिं पर पीर काट उर कंजन पीवत ।
पुनि औरन पर जात ताहि फिर नेक न छीवत ।।
आपुन हितहि बिगोइ देत दूखन मतवारे ।
ज्यों हम तज भज गये मित्र कपटी हरि कारे ।।५५।।

कारे तो ऐसे सखी आये सब घट घालि ।
बानर मारन नहिं कह्यों मार्यों रघुवर बालि ।।
मार्यो रघुबर बालि सत्य स्वारथ लौ डाटी ।
आई करन बिहार नाक ता त्रिय की काटी ।।

त्यों निरदयी गोपाल करे मन विघ्न हमारे ।
कहँ लौ कहिये सखी होत ऐसे सब कारे ॥५६॥

कारे दोषी होत सखि महा पाप अवतंस ।
छलि बावन बलिराज को कियो जु जग्य विधंस ॥
कियो जु जग्य विधंस विष्णु ब्रह्मा छल मारी ।
राज पाट सब मेटि विकल करिकै फिर जारी ॥
त्यों छलिया गोपाल पतिब्रत मेट हमारे ।
आखिर तज भज गये सखी दोषी ये कारे ॥५७॥

यहि विधि काकु विसुद्ध कहत अली सों अलिन मिस ।
चकित चित्त हुए उद्धव जैसे फैली नीसती ॥५८॥

ऊधव अति चकित ह्वै तकित प्रेम अनुराग ।
थकित बुद्धि सब सक्ति ह्वं कहत बैन बड़ भाग ॥५९॥

जग मोहन श्री कृष्ण तुम्हारे कंत जू ।
तिनकों हौं लघुदास सनेही संत जू ॥६०॥

पठयो है तुम पास सँदेस कहाइ कै ।
सो सँदेस हौ कहत सुन चित लाइ कै ॥६१॥

हमहिं तुमहिं कछु भेद नहिं, देखौ ग्यान विचार ।
हम, तुम में ऐसे रमै ज्यों सब माँहि बिहार ॥
तुम सब हा मेरी कला, देखौ आपहिं आप ।
आतम ग्यान विचार कै तजौ विरह संताप ॥
विरह विषय मेरे विषय, तुम जनि जानहु बाम ।
देखौ जोग समाधि धरि हौं नित रमता राम ॥६२॥

जो तुम मोहि चाहत सदा भावत नेक न दूर ।
तौ देखौ नर कमल में जोग ध्यान भरपूर ॥६३॥

सुनि त्रिय जोग सँदेस ।
मिस मिस परम कलेस ॥

पर बस चलत न काब ।
दिय गद गद भर ज्वाब ।।६४।।

ऐसो तो संदेस ऊधो केसौ जू भले ही कह्यो ।
दूर बसे ताही तें निर्मोही मन लाधे हैं ।।
व्यापक ते होहीं ताके कहे को निहोरौ कहा ।
स्वर्ग अरु नर्क वे तो सब ही में साधे हैं ।।
कीजै कहा कर्म को कढ़त नाहीं पापी प्रान ।
तलफत पंछी जैसे पिंजर में धाँधे हैं ।।
अछिर हमारे अच्छ स्वच्छ सबही के इच्छ ।
तन और प्रेम के डोरन डिढ़ बाँधे हैं ।।६५।।

ऐसो तो विचार ऊधौ हम ही विचार रहीं ।
हरि के विहार नाहीं मनते टरत हैं ।।
वृन्दावन वास कीनो जाना रस रास मन ।
तिनहीं बिलासन की लालसा करत हैं ।।
अछिर अनिन्न हमैं अन्य न सुहाय नेक ।
हाय टेक लागी अनुराग ही भरत हैं ।।
प्रानन ते प्यारे गुन रूप उजियारे कान्ह ।
नैनन के तारे रूप रस को भरत हैं ।।६६।।

वृन्दावनवास षट मासन सुख की निसि कै कै ।
विविधि विलास रास रस सुख छाये हैं ।।
हाहा करि पायन परि परि भेंटी हमैं ।
ऐसे विषय आतुर चतुर चित लाये हैं ।।
अछिर अनिन्न हमें महा मिस मिस यहै ।
मिस देखो ग्यान स्वान कौनें धौं सिखाये हैं ।।
आप महाभोगी उत भोगबे अनेक नार ।
नारिन को जोग के संदेस दै पठाये हैं ।।६७।।

आवती नगर कोऊ नागरी नवीनी गौने ।
ताके पीछे फिरत ते विरह रस रये री ।।

तब सब औरन की सुरत विसारत ते ।
ताही की सुरत में मगन मन भये री ।।
अछिर अनिन्न अब पाई राज कन्या हरि ।
धन्य कै जनम मानों काम सुख छये री ।।
हमको पठायो जोग भोग करैं औरन सों ।
नवल बिहारी के नवल नेह नये री ।।६८।।

भई भली ऊधौ उन मथुरा में कंस हन्यौ ।
भली भई तात मात मिलो सब गोत है ।।
भली भई द्वारका के देस के नरेस भये ।
भली भई जस को दिसान में उदोत है ।।
भली भई जोपै श्री रुकमनी सी रानी बरी ।
हमरे तो उनके सनेहई को सोत है ।।६९।।

कहा कीजै अछिर जो अच्छिन न देखिये तो ।
आपने के कानन सुनेई सुख होत है ।।७०।।

आलम और शेख

भँवरगीत

जाके जोग जुगिया जुगत ही सों जोग जागै,
भगत संजोग बसि अलख अलेख है ।
सनक सनन्द सनकादि शिव मुनि जन,
सारद नारद हू के लगत निमेष है ।
'आलम' सुकवि आनि ब्रज नर भेष धर्‍यो,
ध्यावत हौं जाको ताके नाहीं रूपरेख है ।
निगम ते अगम सुगम करि जान्यो तुम,
निरगुन ब्रह्म सोई सगुन के भेष है ।१।।

सोई स्याम सुनहु अगाध कै समाधि ध्यावै,
सोई स्याम रैनि जामैं नितही समाति है ।
सोई स्याम पलक लगें तें स्यामताई ही मैं,
तनमय होत तब कत पछताति है ।
'आलम' सुकवि कहै सोइ स्याम वन घन,
तारनु तें न्यारे नहीं कत बिललाति है ।
तुमहीं मैं स्याम तुम स्याम ही मैं रमि रहीं,
बादि ही बिकल बिह्वल भई जाति है ।।२।।

कर्म को वियापी को है धर्म कै समाधि ध्यावै,
श्रमु कै सुनावै सु तौ ब्रह्म ही के नाम को ।
कैसो जोग जुगति संजोग कैसो कहा जोग,
ज्ञान हू की गांठि कैसी ध्यानन को धाम को ।

'आलम' सुकबि इहां वृन्दावनचन्द कान्ह,
चित ये चकोर कहाँ आन बिसराम को।
जहाँ रस परस सरस मुरली की घोर,
तहाँ ऊधौ सगुन निगुन कौन काम को ॥३॥

रुचिर बरन चीरु चंदन चरचि सुचि,
सरदु को चन्द चाहि चितहि धरत हैं।
बिविध बिलास बसि रास ब्रजपति प्यारे,
तेई ब्रज बतियां उचित उचरत हैं।
'आलम' सुकबि अब वैसे कान ऐसे भए,
उतहि लुभाने किधौं इतहि ढरत हैं।
मधुवन बसत मधुर मुरली की धुनि,
मधुप कबहूँ माधौ सुरति करत हैं ॥४॥

पतियां पठाये अस्रुपात तौ भलै पै होत,
बतियनि बिरह बितैबो कछू हाँसी है।
'आलम' निरास बैन सुने कौन जोरै नैन,
हिये को कठिन ऐसो कौन ब्रजबासी है।
ऊधौ ये सँदेसे जैये वाही चितचोर पै लै,
आपुन कठिन भये और को बिसासी है।
यहाँ लौ न आवै नेकु बाँसुरी सुनावै आनि,
बिनसैगो कहा आये जो पै अवनासी है ॥५॥

अँखियाँ भली जु ऐसे असुवनि धारैं, ना तो,
धारा पल छूटे तिहूँ देस न समाति है।
औधि है जु धूम की उसाँस रूँधि राखी है सु,
नेकु लेत द्यौस अँध्यारी होति राति है।
'आलम' संताप स्वेद सींचिवो अधार कौ हूँ,
भूरी ह्वै कै देह फिर खेह ज्यों उड़ाति है।
छाती पै सराहौं बरु दीया की सी भाँति उधौ,
पाती लिखे लेखनी ज्यों बाती बरी जाति है ॥६॥

तरनिजा तट बंसी-बट कुंज पुंज बीथी,
बन घन जहाँ वहाँ आनँदुपयोगी हैं।

सोई रहै ध्यान ऊधौ ज्ञान को न काज कीजै,
ये तो ब्रजवासी ब्रजराज के वियोगी हैं ।
'आलम' सुकवि कहै तन बीच कान्ह छबि,
जोग दैन आये तुम कहा हम जोगीं हैं ।
जोग तौ सिखैये ताहि जोग की जुगति जानैं,
जोग कों न काज हम बंसीरस भोगी हैं ।।७।।

बाँसुरी सबद सिंगीनाद पूरि पूरि रहे,
ताही को अदेस सोई तन मन धुनि है ।
बिरह की ज्वाल साधैं साधैं जल नैननि को,
निद्रा तन भूख साधैं साधैं उनमुनि हैं ।
'आलम' सुकवि यहि जुगति जागै सु जोगी,
अलि उपदेस हम सुन्यौ है न सुनिहैं ।
सुमिरन मौन उर ऊरध उसाँस रूँधैं,
जैसे ब्रजवासी ऊधौ ऐसे कहा मुनि हैं ।।८।।

चाहती सिंगार तिन्है सिंगी सों सगाई कहा,
औधि की है आस तौ अधारी कैसे गहिये ।
बिरह अगाध तहाँ सुन्नि की समाधि कौन,
जोग काहि भावै जु वियोग दाह दहिये ।
'सेख' कहै मैन-मुद्रा मोहन जु लाये बन,
मुद्रा लाओ काननि सुनेई सूल सहिये ।
लागै लग नेकहूँ कहूँ जौ बैरी नीरो होय,
ऊधौ एते बीच की बिचारि बात कहिये ।।९।।

गाँसी जाहि सूल ताहि हाँसी न हँसाये आवै,
पासी परै पेम सुनि साँसी कहियत है ।
मन गये मानस मरुरैं मारि साँस लेत,
परगट नैसुक उदासी कहियतु है ।
'सेख' कहै सोई गति हरि बिछुरत ऊधौ,
बावरे बिकल ब्रजबासी कहियतु है ।
सुर बाँसी बेधत बिसारे सर व्याधि सोई,
तातें बड़ो अधिक बिसासी कहियतु है ।।१०।।

वारै तें न पलक लगत बिनु साँवरे ते,
बाबरे अजान ऊधौ भले उपदेस हैं ।
तादिन ते बन सूनो घरु है दहत दूनो,
तारनि में ज्योति नहीं जटा भये केस हैं ।
'आलम' बिहात छिन जानो जात कोटि दिन,
कौन रैंन की समाई सुरति न नैंस हैं ।
हम हूँ ते स्याम दूरि स्याम हू ते हम दूरि,
वै तौ आछे काछे स्याम सखी मैले भेस हैं ॥११॥

बूझि कै अबूझ ऊधौ होत ऐसी बूझियै रे,
जो पै ऐसी बूझ तौ अबूझ किन बूझै ज ।
झखत झुरत झखकेतऊ खिजावै झुकि,
तुम झुकवत झूठो जूझ कौन जूझै जू ।
राजिव नयन मेरे आलम रहे कै ध्यान,
रीझि की रहनि में अबूझ कहा रूझै जू ।
प्रगटि जुगति जाहि जीजियतु ऐसी सुन,
भोग की भुगति पायें जोग काहि सूझै जू ॥१२॥

सबद सुबास रसरुप परसन ही को,
जाहि को न तोष पूजैं ताहि को बियोगु है ।
एक मग बंचिकै अनेक मग पंच कीने,
पंचसर व्यापत सकल ब्रज लोगु है ।
'आलम' सुकवि ऐसी जुगुति लखावै आपु,
तन को संजोगु कान्ह जोगिनि को जोगु है ।
अमित अगाध रस भोगिन को भोग दीनो,
सुन्न को संयोग पायें जोग ही में भोगु है ॥१३॥

जुग है कि जाम ताको मरमु न जाने कोऊ,
बिरही को घरी और प्रेमी को जु पलु है ।
'सेख' प्यारे कहियो सँदेसो ऊधौ हरि आगे,
ब्रज बारिबे को घरी घरी धृतु जलु है ।
हाँसी नहीं नैसुक उकासी देत जोग तन,
बिरह बियोग झार औरै दावानलु है ।

सिर सों न खेलै पग पेले न परे लौं जाय,
गिरि हू ते भारो इहाँ बिरह सबलु है ।।१४।।

जोग दीजै जोगिन संयोगिन को भोगु दीजै,
राज भोग कान्ह जी बड़ाई सब दीजिये ।
'आलम' अलख ज्ञान मुकुति मुनिंद लेहिं,
देव कबिलास बसैं पेमहिं पतीजिये ।
रूप रुकुमिनि रमैं साईं सत्यभामा के हौ,
कुबजा के परस परेखे कत छीजिये ।
बिनती इहाँ की इहै याही बंसीधरजू सों,
हमैं नेकु बाँसुरी बजाइ मया कीजिये ।।१५।।

वे तौ ऊधो परम पुनीत पुन्य पाइयत,
भावन प्रबीन प्यारे पावन दरस जू ।
गाँव की अहीरी हम गोरस की बास भरीं,
खरीये गँवारि गुन रुप ही न रस जू ।
कहे कबि 'आलम' विराजित वै राजा कान्ह,
राजनि के राजा गुन पूरन दरस जू ।
विसर्‌यो बसेरो बन बीथी अरु ब्रजबासी,
अति मन भाई पाई कुबिजा सरस जू ।।१६।।

सीत रितु भीत भई छाती राती ताती तई,
ऐसे ताप, तिय तन तये हैं न तवैंगे ।
'आलम' मनिल इतराय कै कलिन मिलि,
दीन्हो है कलेस सुधि आये दूनों दवैंगे ।
ग्रीषम ते ऊषम है विषम असाढ़ ऊधौ,
माधौ जौ न आए मन भ्रमर ज्यों भवैंगे ।
बधिवे को बूँदनि बियोगिनि को बीनि-बीनि,
आए बैरी बादर बिसासी बिस बवैंगे ।।१७।।

प्रेम नेम गहैं नेह बातें निरवहैं जाते,
अब उन्हें कहा परी महाराज भए हैं ।
कछुक सँदेसे ऊधो मुख के सुनाउ आनि,
हम सुख मानैं उन जेते दुख दये हैं ।

इहाँ कबि 'आलम' पुरानी पहिचानि जानि,
जोगी सुधि आये ते वियोगी भूल गए हैं।
इहाँ बैरी बिरह बिहाल करै बार-बार,
सालत करेजें नटसाल नित नए हैं ।।१८।।

जब सुधि आवै तब तन बिनु-सुधि-होत,
बन सुधि आए मन होत पात-पात है।
'सेख' कहै सरद सहेठ के वे गीत गुनि,
बाँसुरी की धुनि नटसाल गात-गात है।
तुम कह्यो मानौ उपदेश हम नाही कह्यो,
जैसी एक नाहीं तैसी नाहीं सौक सात है।
पेम सों बिरुधौ जिनि हा हा हियो रुँधौ जिनि,
ऊधौ लाख बातनि की सूधी एक बात है ।।१९।।

भावतो बिदेस जियें भामिनि कवनि भाँति,
भवन न भावे भ्रम भीत न सँभारिये।
'आलम' लगत नहीं पलनि सों पल पल,
प्रलय समान पिय बिनु पल टारिए।
उमड़त जल रही न्यारी है डरारी भारी,
डोलत डगन कहुँ कहो कहाँ डारिए।
हाथहिं कै लीजै लै कै दीजै ब्रजनाथ हाथ,
ऊधौ दोऊ अँखियाँ लै साथ ही सिधारिए ।।२०।।

लीजै छवि जुगति अछूती छाप प्रान पति,
सरसी है पलक पुनीत मेरी जासु है।
'आलम' उन्हें न परतीति और पेम बिनु,
बंसी बिनु और कहूँ ठौर न बिसासु है।
पतिया पठाई तुम बतिया न बूझी उन,
गति और नारि ब्रज औरै भयो बासु है।
बासर उसाँसनि सों औरुसै न पावै पलु,
निस अँसुवनि सों न नेक हू उकासु है ।।२१।।

मड़हो मलीन कुंज खांखरो खरो ई खीन,
मनु न लगत उदबस लगै आन सो।

बिरह बिकल गोपी डारी हैं वै ठौर ठौर,
मानौ अरसानी जागीं थाकीं करि गान सो।
'आलम' कहै हो जात भनक न सुनी कान,
मेरिये बनक कछू बाला पायो प्रान सो।
दूलह बराती लै कै राति ही सिधारो जैसे,
ऐसो ब्रज देख्यो माधो ब्याह को बिहान सो ॥२२॥

माती मद कोकिल उदासी मधुमास बोलै,
स्वाती रस तपति अबोली रहै चातकी।
'सेख' कहि भौंरा भौंरी कौलनि गुंजारै पुंज,
छाती तरकति सुनि जुवीत की जाति की।
रास रस आवै सुधि सरद सतावै न तौ,
बिरह बसंत ब्रज घरी घरी घात की।
चितवत चैत की वै चाँदनी अचेत भई,
जीती है जुन्हाई जिन कातिक की रात की ॥२३॥

गोस्वामी हरिराय

ऊधौ ! सूधौ बचन कहौ।
हरि ह्याँ के हैं, बोलौ नातर छाँने क्यों न रहौ ॥
जो ह्याँ है तौ काकी पतियाँ, पढ़ि पढ़ि मन न दहौ।
इन बातन उपजत दुख दूनौ, सूनौ ब्रज न चहौ ॥
हम जानति हैं जहाँ रहत हरि, तुम तौ मौन गहौ।
देत दिखाई बिच बिच सब कों, निहचै करिजु लहौ ॥
तुम उपदेस करत हौ का कों, मरम न गह्यौ यही।
'रसिक राइ' सिखवत ब्रजनारी, ब्रजपति मीत अहौ ॥१॥

ऊधौ सुधि कबहू हमरी करत।
अपनी दिसि अवलोकि नंदसुत, कछु करुना हमरी मन धरत ॥
दीनी सार बिसार स्याम अब, कहौ जु काहे तें दुख हरत।
बिनु देखें छिनु मूरति माधुरी, रह्यौ न हमपै पल इक परत ॥

परम चतुर जानत हौ चित की, प्रकृति परी कैसे टारी टरत ।
'रसिक प्रीतम' बिनु भेंटै, छतियाँ बिरह जरी कहौ कैसे ठरत ।।२।।

सुरति सुख दीनौ, बिरह जु दैन कों ।
जानी हम रचना उन्ह कीनी, तन-मन-धन हरि लैन कों ।।
पठवत दूत अधिक दुख दैवे, बरजि मधुर मुख मौर कों ।
'रसिक प्रीतम' तुम करी कहा यह, ब्रज प्रानन नहीं चैन कों ।।३।।

ऊधौ ! छाँड़ियै हरि बात ।
हमहिं लीला दै सिधारै, आपु मथुरा जात ।।
तजत वे सुध भए यह मन, बिरह दुख न समात ।
चलत क्यों नहीं रोकि राखे, गोंविद अति पछतात ।।
हरि की लीला ठौर देखत, जुगल हग न सुखात ।
बिरह सुधि नई तुम दई करि, तातें बहौत दुखात ।।
द्रुमलता गिरि फिरत हारी, बूझि बूझि सँकात ।
'रसिक प्रीतम' दूरि ही भले, मिलन सुख अकुलात ।।४।।

इतनी कहियो ऊधौ ! हरि सों हमारी बिनती,
तुम हमें छाँडि रहि हौ कबलों मथुरा पुरी ।
हम तौ निसि दिन मोहन जपत नाम तिहारौई,
अंग अंग सिथिल हाथ हू की ढीली चुरी ।।
कैसे करि जीवें हम अब, फाटत हृदय प्रीति,
कैसे हू न बचत प्रान विरहा की छुरी ।
'रसिक प्रीतम' हमकों और कछु नाँहीं गति,
तुम तें न ब्रज जन की बात कछु दुरी ।।५।।

इतनो कहियो हरि सों जाइ ।
कहाँ लौं तुम दूरि रहि हौ, बिरह डारत जराइ ।।
खान पान हु छुट्यौ तन में, ताप अब न समाइ ।
बाढ़ बाढ़त नैन सरिता, जीय मन अकुलाइ ।।
तुम न बूझी बात ब्रज की, बिरह देत डुबाइ ।
दीनता आधीनताई, कहाँ लगि रहि पाइ ।।
भई ऐसी गति जो हमरी, कहत हैं समुझाइ ।
'रसिक' रहिहैं तुम बिना हम, कहो कहाँ लो हाइ ।।६।।

मधुकर ! करिवे में कहा राखी ।
लोक वेद की कान तजी हम, लाज सकल कुल नाखी ।।
भाँति भांति हम भाव उधारे, बहुत दीनता भाखी ।
यों लगि रहीं स्याम के चरनन, ज्यों गुरु लागी माखी ।।
बहुत जतन करि एक बेर हम, अधर सुधा कछु चाखी ।
अब उहँ ताप सकल अंग व्यापौ, चिन्ता चित्त भई साखी ।।
यह कछु नहीं प्रीति गोबिंद की, अबलोकत मन साखी ।
'रसिक' वियोग बयौ हम ही कों, भये कुबरी कर पाखी ।।७।।

स्याम सों लागी लगन मन की ।
सपने ही सगम नित जाकौ, जागत गति छिन की ।।
बोलत बोल्यौ जाय न उनसौं, परस न परसन की ।
देखत बनै नहीं उह श्रीमुख, गमन न कुंजन की ।।
बैठे मनो निकट ही अबहू यह गति ब्रज जन की ।
मधुकर कहा चलाई तुम यह, बात कठिन उनकी ।।
हम तौ और कछू नहीं जानत, ये वृति भई मन की ।
करत अचंभौ क्यों मन मानै, 'रसिक राइ' जन की ।।८।।

मधुप ! मधुपुरी खरी हरि भाई ।
बड़रे मन्दिर भोग राग जहाँ, नगर नारि चतुराई ।।
राज करत काकी सुधि आवै, ब्रज की बात भुलाई ।
ह्याँ तौ रहे सदाँ लरिकाई, उहाँ बड़ाई आई ।।
ह्यां वृंदाबन गिरि जमुना तट खेलत गाय चराई ।
अब तौ ब्याह करन को पुर में, जहाँ तहाँ करी लराई ।।
बहु जुबतिन कर गहे कृपानिधि, नई प्रीति उपजाइ ।
सहज प्रीति ब्रज नारिन की मन, 'रसिक' कछू न बसाई ।।९।।

मधुकर ! करहु और कछु बात ।
मोहन भए मधुपुरी-प्रीतम, तातें हमें न सुहात ।।
सुरति भई हरि के बिछुरन की, मन मिलिवे अकुलात ।
नातरु देखि लीला भुवि, आनंद उर न समात ।।
वे आवत न मधुपुरी तजि कै, ब्रज तजि हमहुँ न जात ।
कहौ कौन विधि बनि है मिलिवौ, पतियनु मन न पत्यात ।।

उनहीं की सी कहत मधुप तुम, सुनि सुनि चित अनखात ।
चुप करि रहौ कहौ किन ब्रज की, ज्वाल बिरह न बुझात ।।
जैसे के संगी हो षटपद, तैसे ही प्रगट लखात ।
अचरज कहा सबै गुन हरि के, बसत रावरे गात ।।
भूल्यौ बिरह छिनक में, लागीं कहन नैन मुसकात ।
'रसिक सिरोमनि' ब्रज के बासी, ब्रज तजि कतहुँ न जात ।।१०।।

ग्वाल कवि

जैसे कान्ह जान तैसैं उद्धव सुजान आयौ,
उये हैं तौ महमान पर प्रानन निकारें लेत ।
लाख बेर अंजन अँजाय इन हाथन तैं,
तिन को निरंजन कहत हाथ झूँठ धारे लेत ।
'ग्वाल' कवि हाल ही तमालन में तालन मैं,
ख्यालन मैं खेले हैं कलोल किलकारें लेत ।
ह्यांन परचेरी पर चेरी संग परचे री,
जोग परचे ह्याँ भेज परच हमारे लेत ।।१।।

गोपिन के काज जोग साज दै पठायौ ऊधौ,
आवत न लाज डीठ प्रानन पियो चहै ।
वरी हीं बियोग-बिरहागिन-भभूकन मैं,
ता पर सलूक लूक लाखन दियो चहै ।।
'ग्वाल' कवि कान्हर को कौन कुटिलाई कहै,
जरे पै लगावै नोन काटन हियो चहै ।
कंस की जो चेरी ता को चेला भयो हाय दैया,
हमै भेज सेसी चेली आपनी कियो चहै ।।२।।

माखन के चाखन कौं लाखन उपाय कीने,
साखन तुम्हारो तउ द्वार पै अरे रहौ ।
चोरि चोरि दही लियो, छोरि छोरि मही पियो,
कही अनकही सब सही पै खरे रहौं ।।

'ग्वाल' कवि ऐसे हाल ह्ाल ही के भूलि गए,
भेजौ जोग शूल नैक लाज तो धरे रहौ ।
मानों कहाँ रस की रसाइन गुपाल तुम,
कूबरी कसाइन के पाइन परे रहौ ।।३।।

कहिबे कौं हम तौ बियोगन विदित नित.
ये पर संजोग हूँ ते सुमति सुधारी हैं ।
ऊधौ तोहि वह इहां कहूँ न लखाई परयौ,
सांचे ही अलख तोहि भयो गिरधारी है ।।
'ग्वाल' कवि ह्यां तौ वही जाम जाम धाम धाम,
मूरति मनोहर न नैको होत न्यारी है ।।
कानन मैं कानन मैं आनन मैं आँखिन मैं,
अंगन मैं रोम रोम रसिक बिहारी है ।।४।।

राधिका के मिलिबे को गुबिंद,
कितेक दिनांन लों देहही तांसी ।
प्रीति करी रस रीति करी,
भरी नाहिं मैं हां अस हां हियै नासी ।।
यों कवि 'ग्वाल' बिलास बढ़ाय कै,
छाँड़ि गयौ सिगरी गुन गांसी ।
दासी की फाँसी फसाय गरे,
अबिनासी बन्यों यह आवत हांसी ।।५।।

तोरि कै प्रीति गयो मुख मोरि कै,
कौन सो नातौ तुम्हारो रह्यौ ।
मोहन से छलिया कौ भलो,
अरे ऊधव तू छलकारौ रह्यौ ।।
और कहा कहिए कवि 'ग्वाल',
नंद हू ते वह न्यारौ भयौ ।
चेरी को नेंह नगारो बज्यो अब,
काहे को प्यारो हमारौ रह्यौ ।।६।।

किये हैं करार सो बिसार दिये दगादार,
नंद के कुमार संग को संजोगिनी बनै ।

कौन मुख लैकें तोहिं ऊधव पठायो इहां,
कैसै कही बानें हाय लंक लो गिनी बनै ॥
'ग्वाल' कवि यातें एक बात तू हमारी सुनी,
चुनि कै कही है यह तो या भोगिनी बनै।
कूबरी को कूब काटि लाय दै सिताबी हमैं,
टोपी कर ताकि तब गोपी जोगनी बनैं ॥७॥

तजि ब्रज बालन कों मथुरा गयो तौ गयो,
उहाँ जाय कोन सौ सुजस जग जग छायौ है।
करतौ विवाह जात पांत की कुमारी संग,
तऊ हम जानती सुपथ में सिधायौ है ॥
'ग्वाल' कवि जो पर सुरत ही पै रीझ हुती,
तौ पै भली जाति की न नारि पै लुभायौ है ॥
कूबरी कलंकिन वा अंकिन को अंक लाय,
कान्ह भलो कुल को कलंक तें लगायौ है ॥८॥

एरे निरदई तेरी सुधि बुधि कौनें लई,
गई कहां प्रीति रीत पाछली जु खेली है।
जोग दै पठायौ ऊधो आयौ औ सुनायौ हमें,
सब समुझायौ भलौ तेरौ मेली यह है ॥
'ग्वाल' कवि हम तौ वियोग जोग धार चुकी,
तोहीं को मुबारख या जोग सेली है ॥
कबरी के कान फाड़ माथो मूंडि राख लाय,
चेला बनौ ताके या बनाओ ताहि चेली है ॥६॥

आपनी ही सूरत कौ साजि कैं सिंगार सब,
भेज्यो सखा सेठ औ कुमंत्र अति भारा दै।
जानी ही कि मेट है अँदेस है संदेश यह,
लायौ सो अँदेस के बिचारन नगारा दै ॥
'ग्वाल कवि कैसें ब्रज बनिता बचैंगी हाय,
रचैंगी उपाय कौन द्वारनि किवारा दै ॥
चौगुनी दवागिन तें देह बिरहागिन हा,
सो तौ करी सौ गुनी यै जोग ब्रत धारा दै ॥१०॥
ऊधो तेरे यार एसे व्है हैं रिझवार जाइ,
जानती विचार तौ पै सूधौ हो न जायबौ।

करती बिचार भाँति भाँति के सुभाय भाय,
केती बड़ी बात हुती वाकौ अटकायबौ ।।
'ग्वाल' कवि पीठन पै एक एक हांडि बाधि,
नीकैं मनमोहन कों करती रिझायबौ ।।
याते कहूँ कोऊ बहुरूपिया तलास करि,
सीख लेतीं हम सब कूबर बनाइबौ ।।११।।

कैसे कैं कन्हाई की बखानै चतुराई कोऊ
भेजैं जो मिठाई तौ कभू न भरिहों गरौ ।
सारी जरतारी आंगी ओढ़नी किनारी दार,
धारि धारि फारिहौं न तन रहि हैं भरौ ।।
'ग्वाल' कवि भूखन हूँ भजे है तो टूट जैहैं,
ऐसे उर धार कै बिचार हैं कियो खरौ ।।
भेजी मथुरा तें नई जोग की सौगात सखी,
खातिर जमासों खाउ पहिरौ खुशी करौ ।।१२।।

कूबरी कसाइन के रस की रसाइन मैं,
सोभ सरसाइन मैं रहत खड़ा भयौ ।
प्रीति ब्रज बालन की नित उठि ख्यालन की,
हंसन रसालन की भुलि कें छड़ा भयौ ।।
'ग्वाल' कवि ऊधो तुहू बिगारयौ कुसंग पर,
स्याम तौ लबार अस निलज बड़ौ भयौ ।
आप करै जारी हमैं जोग जरतारी भेजी,
देइँ कहा गारी भलौ चीकनो घड़ा भयौ ।।१३।।

लै गयौ है जब ते अक्रुर,
अरी तब ते बहु रंगी भयौ ।
प्रीत तजी सब गोपिन तें,
इकली कुवजा कोईकंगी भयौ ।।
यों कवि 'ग्वाल' ही भाल लिखौ हू तौ,
मीत सही पै कुढंगी भयौ ।
मायन बाप कौ अंगी भयौ,
सो हमारौ कहौ कब संगी भयौ ।।१४।।

बन नाथ हुते तब साथ हुते,
मथुरा पति नाथ कहावति ही।
कछु और के और भये सब तौर,
रुखाई लई रसिया ह्वै दई ॥
कवि 'ग्वाल' अचंभौ यही इक है,
भला और तौ बात भई सो भई।
सुधि केलन की भुज मेलन की,
वह खेलन की कहाँ भूलि गई ॥१५॥

रास कियौ औ विलास कियौ,
रहे पास हुलास की रासि लै लूटी।
जा दिन तें अकरूर लिवाइगो,
ता दिन तें गति और ही जूटी ॥
त्यौं कवि 'ग्वाल' कलंकिनी कूबरी,
कान लगे तें सबै मति फूटी।
वाहरे वाह गुविंद छली,
भली जोग की भेज दई विस बूटी ॥१६॥

प्रीति कुलीनन सों निबहै,
अकुलीन की प्रीति मैं अंत उदासी।
खेलन खेल गयौ अवही हमैं,
जोग पठाय बन्यौ अबिनासी ॥
त्यौं कवि 'ग्वाल' बिरंचि विचारि कैं,
जोरी जुराई ढई अति खासी।
जैसोई नंद को पालक कान्ह,
तु तैसिये कूबरी कंस की दासी ॥१७॥

ऊधव एक सँदेसौ यहै,
कहि देव तौ बात सयानी करौ।
कूबरी को ठकुरानी करी,
सो भलें अपनी मन मानी करौ ॥
पै कवि 'ग्वाल' मुनासिब और हू,
सोऊ जरूर प्रमानी करौ।

लांगरी लूलनि आँधरी कानिन,
रानिन मैं पटरानी करौ ॥१८॥

उधौ यह सूधो सो संदेसो कहि दीजो जाय,
श्याम सों सिताबी तुम बिन सरसंत हैं ।
कोप पुरहूत के बचांई वारि धारन तें,
तिन मैं कलकी चंद बिष बरसंत हैं ॥
'ग्वाल' कवि सीतल समीर जे सुखद ही तें,
बेधत निसंक तीर पीर सरसंत हैं ।
जेइ बिपनागिन तैं बरत बचाई तिन्हैं,
पारि बिरहागिन मैं बारत बसंत हैं ॥१९॥

रावरे कहे ते हौं गयो हो ब्रज बालनि पै,
देखत ही मोहिं कियो आदर अपारा है ।
कहतैं तिहारी बात गात तें भभूके उठे,
परत बरूद की जमात ज्यों अंगारा है ॥
'ग्वाल' कवि कहै लगी लपट दवागिन सी,
दौरी मैं तहां ते तोऊ झरसी दुवारा है ।
गोपी बिरहागिन मैं जोग उडि गयो ऐसें,
जैसें उड़ि जात परै पावक मैं पारा है ॥२०॥

घासीराम

स्याम लिखे गुनपाती के आखर जोग़ चिठी वह जो सुनि पै है।
बाँचत ही उड़ि जायगो प्रान कपूर लौं फैरिन हाथ न छ्वै है।
ऊधौ चुपाउ सुनी खबरै बृजभान लली तन क्यों बिष ब्वै है।
कौंल कली सम राधे हमारी सोवा कुविजा की खवासिनि ह्वै है ॥१॥

कर सो गहत घिरि आई सवै आस पास,
चित्र की सी पूतरी श्रवनमग दै रहीं।
कज्जल कलित चख सजल उमहि आईं,
भरि आईं छतियाँ अनंग रस ह्वै रहीं।
घासीराम सुकवि सनेही श्याम लिखी सुनि,
प्रेम कालिन्दी की वै सुरति कछु कै रहीं।
बहुरि वियोग के हरफ़ सुनि ऊधौ मुख,
हेरि कै सलोनी दीह सांस लै चितै रहीं ॥२॥

चतुर्भुजदास

तुम सों क्यों कहौं ब्रजनाथ।
मोहू को अति गिरा गदगद देखि बिरह अनाथ।
बाँधि साहस लिखी पाती धरि मेरे हाथ।
सिथिल भई फिरि फुरि नाँही और मुख तें गाथ।
सुभट वर तुम बिना पिया ! तनु दहत मैन अकाथ।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन रति पति जीति करहु सनाथ ॥१॥

ऊधौ जू ! कहत न कछू बनै ।
हरि-बिछुरें हू कठिन बिरह के सहति बान जितनै ।
उह ब्रज रीति प्रीति पहिली वन कुंज कुटीर ठनै ।
रजधानी में कत भावत हैं ए द्रुम ताल घनै ।
पावस रितु के रंग संग मिलि खेलत प्रेम सनै ।
भींजत मोहिं जानि बूंदनि पट-ओट किए अपनै ।
घोष वास रस रासि औरु सुख नहिं मुख परत गनै ।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन बिना वैभव सब सपनै ।।२।।

नैननि निर्झर झरत सुमिरि माधौ ! वै पहिली बतियाँ ।
नहिं बिसरात निरंतर सींचत विरहानल प्रबल भयौ घतियाँ ।
नवल किसोर स्यामघन सुन्दर बेनु-ब्याज बोली अधरतियाँ ।
रास विलास विनोद महासुख गान बंधान नृत्य बहु गतियाँ ।
संग बिहार भवन बन निसिदिन अब संदेस पठवत लिखि पतियाँ ।
चत्रुभुज प्रभु गिरिधर दरसनु बिनु नीर विमुख जैसे
मीन की गतियाँ ।।३।।

चाचा वृन्दावनदास

भ्रमरगीत

ऊधौ सखा मन भावतै ब्रज पठायौ ।
कृष्ण कौ दूत लै बात आयौ ।। टेक ।।
नंद नंदन हरि खबरि ब्रज की करी जाय निज जननि आनंद दीजै ।
सबै ब्रज सुन्दरी प्रेमादिक भरी वहुत विधि तिनहि मनुहार कीजै ।
आय हौं वेगि ब्रज ईश तुम पास हौं तात अरू मात समझाइ कहियौ ।
कृष्ण दृग जल भरे निकट ऊधौ खरे कहत मम ओर तें चरन गहियौ ।
और कछु मात सों बात न्यारी कही सुत तुम्हारे बहुत विनय कीनी ।
अब कछू गहर जानौ न करुना अवधि आय हैं कृष्ण सुख रहौ भीनी ।
मन बढे रथ चढ़े नाथ आज्ञा दई पंथ की सुरति करि चले सूधौ ।

कृष्ण के वचन सुनि हिये सब लिए गुनि ब्रज जननि मिलन हियमुदित ऊधौ ।
मेरु की ओट जब भान को रथ गयौ जाय ठाढ़े भये नन्द द्वारे ।
नंद आदर दियौ भवन भीतर लियौ मिलत ब्रज ईश भुज कर पसारे ।
परम आनंद भरे दृगन आँसू ढरे घोषपति सुधि करी कृष्ण-लीला ।
सखा कौ कर गहै नंद ऐसें कहैं छिन न उर टरत वह बाल-लीला ।
कृष्ण कैसे रहत कछु हमसों कहौ भोजन करत कौन वारी ।
कहा वासर करैं रैनि क्यों अनुसरैं जिनहि छिन-छिन लगैं भूख भारी ।
यशोमति फिर कह्यौ कौन दैहै दह्यौ सुनौ ऊधौ बहुत दया आवै ।
निकट लैं टेरि कैं बदन कर फेरि कैं बड़ो हित मानि ह्याँ को जिमावै ।
सुत तुम्हारे बहुत चरन वन्दन कह्यौ रहत नीके करी सुधि तिहारी ।
नैन भरि नीर फिरि वेगि आवन कह्यौ मात सों बात यह निपट प्यारी ।
प्रात भयै गोपिका प्रेम रस ओपिका निरखि रथ कृष्ण कौ नंद पौरी ।
त्रिषित ज्यौं चातकी सबहिं बूझन लगीं धाम के काम तजि-तजि जु दौरी ।
मान ऊधौ दयौ हियौ हरषित भयौ कुशल बूझति कहौ कृष्ण दरसी ।
कहा कह्यौ श्याम घन कूबरी के खन कौन धौं काज ब्रज रैन परसी ।
कुशल तुम्हारी चहत श्याम नीकें रहत ब्रज जन सम न कोउ उन्हें प्यारे ।
सदा वांछित रहैं बास ब्रज कै हरी गुन न छिन एक बिसरत तिहारे ।
सुनौ ब्रज भामिनी परम अभिरामिनी कृष्ण आज्ञा करी सो सुनाऊँ ।
निगम हू गूढ़ आरूढ़ योगेश जहँ कहत गुन रहित ताप दहि गाऊँ ।
रहौ जू रहौ अबही कछू कहौ जिन प्यार तें धान कौ ग्राम जानौ ।
'वृन्दावन हित' भले रूप हित रावरे कहा धौं करत सोई बखानौ ॥१॥

यशोदा फिरि फिरि बूझत जाय ।
कहि ऊधौ श्री कृष्ण भले हैं बातैं सब समझाय ।
हम तौ सदा पंथ हेरति हैं कब धौं मिलि है आय ।
वृन्दावन हित रूप यशोदा कहि कहि लेत बलाय ॥२॥

ऊधौ वचन

तुम्हें छिन श्याम बिसरत नहीं ।
जब जब बात कही तबही तब नैनन वारि वही ।
जब रथ चढ़िहौं चल्यौ इहाँ कौं तबहु बहुत कही ।
वृन्दावन हित रूप श्याम घन ऐहैं वेगि सही ॥३॥

ऊधौ ये रहैं दृष्टि पथ आगे ।
तुम जु कहत हम मधुबन छाँड़े मुहिंह्याँ से लागें ।
कबहुँ कछुक माँगत से सूझै कबहुँ मचलि के भागैं ।
वृन्दावन हित रूप लाड़िले कबहुँ सोय से जागैं ।।४।।

कहत हरि सखा बधुनि समझाय ।
कृष्ण योग अरु ज्ञान पठायौ ताहि सुनौ चित लाय ।
भजिए पूरन ब्रह्म सनातन उर आनन्द बढ़ाय ।
वृन्दावन हित रूप कही यौं हिय तें ताप नसाय ।।५।।

गोपिनु वचन

ऊधौ हरि नई रजायसि पाई ।
याते ज्ञान योग कौ सिक्का हम पै प्रथम चलाई ।
पापी कंस मर्‍यौ गति अपनी यामें भली बनि आई ।
फबि गई लात कूबरी कूबै ऊधौ हम पै हा हा खाई ।
बलि हित रूप चतुर भये मोहन ह्यों जू नौवति आई ।
वृन्दावन हित हम जानति ह्याँ पोली बाँसु बजाई ।।६।।

कहा हरि हमसों होड़ परी है ।
निधरक ह्वै कीजै किनि ऊधौ जो मन माँह धरी है ।
कब पठायौ हम दूत मधुपुरी दासी यदपि वरी है ।
उननि तुम्हैं ह्यां तुरत पठायौ योगनि खेप भरी है ।
हंस सभा में भुस नीरनु जो ताकी मति बिगरी है ।
सिंहहि बांधि घास परसत जो विधना बुद्धि हरी है ।
हम गाढ़े उपदेश योग्य भई यह कहा घाटि करी है ।
ऊधौ कपट कपाट श्याम की अबही तौ उघरी है ।
सकत सनेह योग दीजत है यौं कहि कौन उरी है ।
वृन्दावन हित रूप रावरे ह्याँ तौ बात खरी है ।।७।।

ऊधौ कछु लग्यौ श्याम कौं रंग ।
स्वामी काज की बात बनावत मिली भीतरे अंग ।
भली भाँति कहुँ पढ़ौ योग विधि मन दै कीजै संग ।
योग जुक्ति तब हमैं दीजिये कहा कहौ वचन मतंग ।
मुख तें बोलों साधि सखा सुनि कहा कछु खाई भंग ।

ये वृज लोग कृष्ण रस माते लगत न दूजे ढंग ।
बलि हित रुप हमारी जीवनि ये ब्रज विटप विहंग ।
वृन्दावन हित जहँ तहँ दरसत सुन्दर श्याम अभंग ।।८।।

ऊधौ वचन

अजू कछु सुश्याम भली है ।
तुम जिनि जानौ आज कही है योग सु सदा-चली है ।
हरि को कहा दोस दीजति है यह सब युगन फली है ।
बड़े हैं श्याम सुनौ व्रज नागरि कहत रीति पिछली है ।
ब्रजपति नन्दन जो कहि भेज्यौ सुनि करिबे सुरली है ।
वृन्दावन हित रूप ज्ञान विधि हरि के मिलन की गली है ।।९।।

गोपिनु वचन

ऊधौ ये बात सबैं हैं सीठी ।
धरि राखौ अपने उर अन्तर जो कछु लागति मीठी ।
हमैं लगति ज्यौं ग्रीषम तपतैं चहुँ दिसि धरै अंगीठी ।
जैसे बकत फाग में फोकट यौं सब बातैं दीठी ।
राखौ हिये लगाय कबरी जो चित नाहि उबीठी ।
कहियौ जाय नाथ अपने सों जाकी करत मसीठी ।
स्याम सनेह देह दुख दाहत करन लगे अब डीठी ।
वृन्दावन हित रुप रावरे योग पठावत चीठी ।।१०।।

ऊधौ हम कबही विनै करी ।
निगुर्न ज्ञान हमैं उपदेशौ पंडित श्याम हरी ।
बिनु सरधा जो गरें चपेकौ लौकत गर्ज खरी ।
हमरे कथा रुप रस लीला मन में सुभर भरी ।
योग जुक्ति जो प्यारी लागति तौ क्यों इतहि धरी ।
वृन्दावन हित रूप रावरी चितवनि हिये अरी ।।११।।

ऊधौ हम धन्य भई सब आज ।
हरि के दूत ग्राम इहि आये लिये योग कौ साज ।
हरि हू बहुत कष्ट करि पायौ तजि मथुरा कौ राज ।
संदीपन के ग्रह पढ़ि आये योग हमारे काज ।
अब उपदेश करौ तुम मन दै बैठौ बधुनि समाज ।

ज्यौं दुरभिक्ष माहि गनियत है कूरी हू कौ नाज ।
काग हाथ लै मुदित हूजियतु छाड़ि दीजियतु बाज ।
ऐसी परष रही हो ऊधौ खरगहि तजि गजराज ।
यौं यह योग देत हरि हमकौ कोढ़ मिलै ज्यौं खाज ।
गीदर कहौ बसै क्यौं उहि वन जहाँ सिंह नित गाज ।
दिन दिन नये नये चरित या वन के हम मानौं सिरताज ।
वृन्दावन हित रूप रावरै यश गावति तजि लाज ।।१२।।

ऊधौ हरि सूधौ पंथ न जानै ।
ये भोरी ब्रज वधू किशोरी तिनसों कपट कहा ठानै ।
किन किन योग कियौ या ब्रज में देखौ सोधि पुरानै ।
अब कछु भाग हमारे ऊधौ मोहन भये सयाने ।
जिन उर रूप सुधा रस पूर्यौ सो कत योगहि मानै ।
वृन्दावन हित रूप रावरे कहा छाने को छानै ।।१३।।

ऊधौ वचन

बात तौ समझेइँ सुख होय ।
कहा दोस या ज्ञान योग में सुनत गई रिस भोय ।
सुनौ ब्रजभाम श्याम कही हित की चित राखौ सब कोय ।
वृन्दावन हित रूप श्याम कह्यौ बड़ो बड़ो मत जोय ।।१४।।

गोपी वचन

ऊधौ हरि बड़े तुम्हारी नगरी ।
काहे बहुत गाल फुलवत हो जानति है हम सगरी ।
अब जो कछु कह्यौ उन ऊधौ हम न चलैं उहि डगरी ।
वृन्दावन हित रूप चतुर वे हम कछु उनते अगरी ।।१५।।

ऊधौ हरि कुबिजा हाथ बिकाने ।
हम वह सुनी कंस की दासी कहा देखि ललचाने ।
ह्यां ब्रज में सुन्दरि को ऐसी जगत त्रभंगी जाने ।
भली भई कुल पावन कीनो कीरति लोक बखानै ।
तुमसे सखा सहायक पाये मंत्री निपट सयाने ।
ह्यां ते गये बुद्धि कछु बिगरी हम लक्षन पहिचाने ।

कोऊ कुल बनिता न मिली जब ब्रज तजि भये खस्याने ।
ज्यौं भूखौ भाजी सों राजी उदर पूरन मानै ।
अजहूँ सुनि ऊधौ ब्रज लावौ कहा फिरत हटराने ।
वृन्दावन हित रूप स्याम सों रोस न कोऊ ठानै ।।१६।।

ऊधौ सुनि बैरिन अपनी मति है ।
काहे कौं कियौ सनेह श्याम सों काहे अब तलफति है ।
यह तौ भई नाद की कुरंगिनि बिसरि चलनि की गति है ।
मोहन मोहन रूप दिखाय दृगनि अब डोलति भरति विपति है ।
पैरत सुभग श्याम सागर में खोई लज्या पति है ।
वृन्दावन हित रूप दरस पन लीन्हें प्राननि हति है ।।१७।।

ऊधौ भये हरि कुबिजा नायक नामी ।
यातें करत धर्म दृढ़ ऊधौ जे कोई उन पथ गामी ।
दिन दिन बिरद बढ़ावत जग में होत बड़े से कामी ।
वृन्दावन हित रूप रावरे अब काहे की खामी ।।१८।।

ऊधौ वचन

इतौ कत भामिनि कीजत रोस ।
हरि तौ बात भली कहि भेजी तुम कत मानौ दोस ।
योग मुक्ति सब काल सुखारी मन में रहे संतोस ।
वृन्दावन हित रूप योग विधि अस सुख जैसे ओस ।।१९।।

गोपी वचन

ऊधौ तुम हरि के निपट संघाती ।
यह तौ अग्नि पुंज सो लाये जाहि कहत हौ पाती ।
अब यह बाल बधू ज्यौं नाचति रही न घूंघट गाती ।
क्यों ये वचन कहत बनि आये धनि धनि हो बह छाती ।
धन की धनी दूरि भयो देखे हंदक बिलसै थाती ।
खोच खरच ज्यौं दूलह बैठे ब्याहें और बराती ।
ऐसो न्याव चल्यौ या युग में कहौ भरै किहि भाती ।
सर्वसु निलज कूबरी विलसत हमको योग घिनाती ।।
जो हम योग कुशल होतीं तौ विरह लात क्यों खाती ।
अरु वे योग निपुन होते तो युवती काहि मिलाती ।

ऊधौ जाय कृष्ण सों कहियो कछु इक दई सुहाती ।
वृन्दावन हित रूप रावरे दीपक जरै कि बाती ।।२०।।

ऊधौ ब्रज आये हो किहि काम ।
जो तुम आये योग सिखावन कहा पढ़ौ धौं नाम ।
युग नहीं बीते मधुपुरी सिधारे करन लगे इत मान ।
वेई हम वेई हरि ऊधौ निपट कपट कौ धाम ।
ह्याँ हम सुन्यौ न योंई ऊधौ कुबिजा नायक नाम ।
हमरैं बांट योग विधि आई तुम लाये इहि ग्राम ।
विधि बिनती सुनि ब्रज में प्रगटे दुख देवे ब्रज भाम ।
विरह बली सों हमसौं ऊधौ रहत सदा संग्राम ।
एते पै हम देत असीसैं कमल नयन अभिराम ।
वृन्दावन हित रूप सुखी रहौ नित प्रति आठौ याम ।।२१।।

ऊधौ वचन

सुनौ ब्रज नागरि सब श्रुति सार ।
अतिहित मानि हितू कहि भेज्यौ तुम मिलि करहु बिचार ।
कहत सुनत जरि जात हियें ते अघ अघोनि के भार ।
वृन्दावन हित रूप योग विधि सब सुख जाके भारि ।।२२।।

गोपिनु वचन

ऊधौ मन हरि मूरति में अटक्यौ ।
बहुत उपाव कियौ अपनौं सो नाहिन मानत हटक्यौ ।
ज्यौं ज्यौं कियौ उपाव घेर कौ त्यौं त्यौं अधिक है लटक्यौ ।
पंक अगाध फंसे ज्यौं कुंजर काहू भांति न पटक्यों ।
कैसोउ बली करौ बल ऊधौ नेंक न मानैं झटक्यौ ।
ऐसे हमें और विधि सिखवैं सो डोलत है मटक्यौ ।
वृन्दावन हित रूप रावरौ देखि मदन हू सटक्यौ ।।२३।।

भलौ हरि हमकौ योग पठायो ।
सुनि ऊधौ कारे तन कपटी पहिले क्यों न दृढ़ायौ ।
अब शोभा विधु वदन बिलोक्यौ चित नहिं चलन चलायौ ।
वृन्दावन हितरूप सार सुख सो तुम कियौ परवान्यौ ।।२४।।

ऊधौ वचन

कहा यह योग खिलौना जान्यौ ।
बड़े बड़े मुनि जाकौ जतन करत है कहा दोष ह्याँ आन्यौ ।
जाहि सुने ब्रज वधू खिझति हो निगम हू गूढ़ वर वान्यौ ।
वृन्दावन हित रूप सार सुख सो तुम कियौ परवान्यौ ।।२५।।

कहा सुनि चौंकति हौ यह नाम ।
निर्गुन सगुन रूप द्वै हरि के सुनि राखौ ब्रजभाम ।
अज्ञा देहु कहि समझाऊँ जो कहि भेजी श्याम ।
निर्गुन रूप बिचारौ सुन्दरि जोति परम अभिराम ।
कलह कलपना सब मिटि जैहै मन पावै विश्राम ।
वृन्दावन हित रूप रावरे कह्यौ सहित गुनधाम ।।२६।।

गोपिनु वचन

रहित गुन श्यामहि ऊधौ देखौ ।
गुन काहू कौ मानत नाही यातें प्रगट विसखौ ।
सब लक्षन गुन रहित मिले हैं तुम को गुन करि लेखौ ।
वृन्दावन हित रूप रावरे निरासे विसरि निमेसौ ।।२७।।

ऊधौ नहि लाग्यौ बात कौ रंग ।
हमैं कहा उपदेश करौगे पर्यौ न एकौ ढंग ।
गिरि ऊँचौ नाख्यौ चाहत है पग नहि धरत अपंग ।
वृन्दावन हित रूप रावरे भलौ लगायौ संग ।।२८।।

संग तौ बहुत भांति करि कियौ ।
उननि कह्यौ सौ तुम नहि मानत बहुत पचायौ हियौ ।
कोटिक परै मसाल जहाँ तहाँ कहा कै लै दियौ ।
वृन्दावन हित रूप रावरी तुम सिख एक न लियौ ।।२९।।

समुझ तौ इतनी ही चित चहिये ।
देख्यौ सुन्यौ प्रपंच सबै है याते न्यारौ रहियै ।
अविनासी निर्गुन सरूप जो निकट हिये बिच कहियै ।
वृन्दावन हित रूप भाम सुनौ यहै समझ फल लहियै ।।३०।।

गोपिनु वचन

ऊधौ हरि मतौ उपायौ।
करनी करी सु नैननि देखी कहि हूँ श्रवन सुनायौ।
नेह रतन हरि हिये छिपायौ पलटें कांच पठायौ।
ऊधौ बड़ौ जौहरी हमकौ परखि गहावन श्रायौ।
हम सब जानि गई हो ऊधौ को सुनि हो समझायौ।
कै हरि भेद दियौ नहि तुमकौ कै परखति न बनि श्रायौ।
हो तुम सखा सनेही मंत्री तऊ न तुम्हें जनायौ।
फिरि ले जाहु बनी नहिं ठगई कपट न दुर्‌यौ दुरायौ।
ह्यां लगि भार वह्यौ तुम याकौ हरि लै शीश धरायौ।
अ्र जहूँ जाय चौहटे पटकौ भयौ न मन कौ भायौ।
योग कांच को मनिया ऊधौ सो तुम हमैं दिखायौ।
वृन्दावन हित रूप रावरे प्रीति सौ रतन गमायौ ।।३१।।

ऊधौ वचन

सुनौ जू योग कांच क्यौं होई।
जिहिं धारत शंकर से योगी हरि के प्यारे सोई।
सनकादिक से जतन करत नित हरि तौ कह्यौ भलोई।
वृन्दावन हित रूप भाम सुनौ यामें दोष न कोई ।।३२।।

गोपी वचन

सखा जो शंकर योग कमायौ।
तौ क्यों रूप मोहिनी धरि कै उनकौ नाच नचायौ।
श्ररु बैकुन्ठ गये सनकादिक पौरी जब हटकायौ।
परम हानि गनि दूजै बिजै कौ तौ क्यौं श्राप दिवायौ।
हमही कहा गनी तुम भोरी यह दृष्टान्त बतायौ।
वृन्दावन हित रूप रावरौ हम सब श्राशे पायौ ।।३३।।

ऊधौ वचन

भलै जु कही सु हम सब जानी।
हित की बात दोस करि लेखति समझि श्रौर ही श्रानी।
श्याम कही, नहिं मो मन उपजी जो तुम रीति बखानी।

यह तौ उलटि बह्यौ पश्चिम दिशि ज्यौं सरिता कौ पानी ।
सभा चातुरी सब ठां देखी पै यहाँ बुद्धि भुलानी ।
बातनि ही में अंत लेति हौ हौं हु भयौ नकबानी ।
अब तो यह हठ छाड़ि दीजिये बोलौं मधुरी बानी ।
वृन्दावन हित रूप रावरे कहौ सु बात सयानी ।।३४।।

अब कछु बात कहत हौ और ।
हौं हूँ बहुत विचार करि थाक्यौ रही न बुद्धि कौ दौर ।
भली लगै सो तुम ही करिहौ नाहि कहन कौं ठौर ।
वृन्दावन हित रूप भाम तुम मैं मानी सिर मौर ।।३५।।

गोपी वचन

ऊधौ हरि अबहूँ दृष्टि परत हैं ।
हम जानति इन सघन द्रुमनि में कासों रास करत हैं ।
हम जैहैं तब आगे हरि हैं याते पग न धरत हैं ।
वृन्दावन हित रूप रावरे नैनन ते न टरत हैं ।।३६।।

ऊधौ तुम जानति हौ किधौं नाहीं ।
हम तौ सुनत श्रवन नूपुर धुनि रास रमत मन माहीं ।
घरी इक ऊधो ऐसे आवैं बैठे तरवर छांही ।
कबहूँ दृष्टि परत है ऐसे कोउ सुन्दर गलबाहीं ।
रहो जू रहौ हरि कारे कपटी क्यौं चरनन लपटाहीं ।
वृन्दावन हित रूप रावरे जाइ जाइ फिरि बांही ।।३७।।

जाने हरि मान मानवन आये ।
अजहूँ तजो कपट नहिं भावत प्रीति निहारी धाये ।
कारे सबै धूत से लागत हितकरि मन पछिताये ।
वृन्दावन हित रूप रावरे किनधौं यहाँ पठाये ।।३८।।

ऊधौ वचन

धनि धन्य ब्रज बधू हरि चरित ओपी ।
कृष्ण गुन रूप तन मन सबै रमि रह्यौ योग व्रत ज्ञान गति
सबै लोपी ।

धन्य ब्रजनाथ जिन साथ इनकौ दियौ हो भयो धन्य पद परसं गोपी।
वृन्दावन हित रूप रावरे नित लही प्रेम रस भक्ति की धुजा रोपी ॥३९॥

जो प्रसाद ब्रज गोपिन पायौ।
सो तौ रमा उमा हू दुर्लभ श्री भागोत व्यास शुक गायौ।
ब्रज बनितन की चरण रेणु कौ ब्रह्मा हू तप ध्यान लगायौ।
तऊ न भई प्रापति यह रज की अजहूं लगि रह्यौ पछितायौ।
बलि हित रूप रावरी भामिनि अखिल लोक पति प्रेम बिकायौ।
‘वृन्दावन’ हित विनय वचन कहि ऊधौ पुनि चरनन सिर नायो ॥४०॥

चंदसखी

हम पर कुबजा सोक रची रे।
हम कुलवंती नार छोड़ि कै दासी मनहिं जँची रे।
प्रीति की रीति कछू न जानी, पाती एक न बँची रे।
ओछे की परतीत न करियै जग में होत हँसी रे।
,चंदसखी’ भज बालकृष्ण छवि परबस प्रान फँसी रे ॥१॥

अरी एरी सखी, कुबिजा के सिखाये स्याम रूठे।
मधुबन जाय भये अब राजा पाये हैं राज अनूठे।
मात पिता वसुदेव देवकी नंद जसोदा के झूठे।
आपन निकट रहे भौंरा से फूलन में रस फूटे।
हम कूँ आस लगी दरसन की प्रान जाय नहिं छूटे।
करि गये कौल करार सखी री बचन भये सब झूठे।
‘चंदसखी’ राधा नहीं बस में लागे फंद नहीं छूटे ॥२॥

एरी कुबजा ने जादू डारा जिन मोह्या श्याम हमारा।
सोलह सहस गोपिका त्यागी कुबजा संग सिधारा ॥

निर्मल जल जमुना कौ त्यागौ जाय पियौ जल खारा ।
सीतल छांह कदम की त्यागी धूप सहै सिर भारा ।
जादू कीन्हाँ टोना कीन्हाँ पढ़ पढ़ मंतर मारा ।
'चंदसखी' भज बालकृष्ण छवि आखिर स्याम हमारा ।।३।।

मोहन के कान लगी कुबड़ी ।
मेरे आँगन तुलसी कौ बिरवा वामैं उपजी जहरजड़ी ।
घोटि घोटि कुबजा कों प्याई पी पी मस्त भई कुबड़ी ।
मस्त भई मोहन बस कीनें बैरिन मेरी भई कुबड़ी ।
'चंदसखी' भज बालकृष्ण छवि हरि के चरन लगी कुबड़ी ।।४।।

ऊधौ तेरी हम पै बँचे न पाती ।
यह पाती मेरे स्याम सुन्दर की बाँचत फटै मेरी छाती ।
ऐसे अनोखे कृष्ण रिझाये है रही जग में हाँसी ।
सोलह सहस गोपिका छोड़ीं कुब्जा के भये साथी ।
ये दुख सुख की बतियाँ कासे कहूँगी जरै तेल बिन बाती ।
'चंदसखी' भज बालकृष्ण छवि हरि के चरन की हूँ दासी ।।५।।

माधो जी ने कैंयाँ बिसाराँ जी ।
गिरधारी गोपाल लाल ने, पल-पल चितवाँ जी ।।
मो मन रहै, कह्यो नहिं मानै, कब कौ बैरी जी ।
माता खिजाई, वृच्छ उपाड्या, वो दिन सालै जी ।।
एक समैं हरि गउवाँ चराई, जमना के तीरा जी ।
काली दह में कूद पड्या हरि, नाग जो नाथ्याँ जी ।।
सात बरस कौं भयो साँवरो, गिरबर धार्यो जी ।
इंदर कोप चढ्यो ब्रज ऊपर, पच-पच हार्यो जी ।।
गोकल ढूँढ, वृन्दावन ढूंढयो, मथुरा हेर्यो जी ।
ऐसी वेण बजाई स्याम, म्हारो मन हर लीन्हो जी ।।
स्याम कठोर त्याग दई हमकूँ, गोपी टेरी जी ।
ले अकरुर गयो मथुरा में कब को बैरी जी ।।
एक वेर ल्यावो ऊधौ ! म्हें पूछाँ मन की जी ।
'चंदसखी' पर महर करो चेरी चरनन की जी ।।६।।

कोई कहियो रे मोहन आवण की ।
आप तो जाये द्वारिका छाये हमको जोग पढ़ावण की ।

आप न आवे पतियाँ न भेजे बात करे ललचावण की ।
दोउ नैंन कह्यो नहिं मानत, घटा उमडि रही सावण की ।
दिल चाहत है उड़ जाय मिलूँ पर पंख नहीं उड़ जावण की ।
'चंदसखी' भज बालकृष्ण छवि चरण कमल लिपटावण की ।।७।।

बोल बोल, म्हारा नंद जी रा लाल, बोल्याँ सरसी रे ।
मोहन, मुखड़े बोल ।
बोल बोल, म्हाराँ जनम सुधारण, बोल्याँ सरसी रे ।
साँवरा मुखड़े बोल ।
मोर मुकुट पीतांबर प्रभुजी मुख पर मुरली सोहै रे ।
बजा बंसरी तीन लोक में, सबकौ मनुआ मोहै रे ।
मोहन मुखड़े बोल ।
आप तो जाय द्वारिका छाये, हमको जोग पठायो रे ।
आप न आये पतियाँ न भेजी कुण सौतण बिलमायो रे ।
साँवरा मुखड़े बोल ।
सोलह सहस तो गोप्याँ त्यागीं, कुब्जा सूँ नेह लगायो रे ।
'चंदसखी' ललिता यूँ भाखै हरि नहिं आयो रे ।
मोहन मुखड़े बोल ।।८।।

ऐरी, मैं खड़ी निहारुँ बाट ।
चितवन चोट कलेजे बस गईं सुन्दर स्याम सुधार ।
मथुरा में कर राखी कुबजा बणिये की सी हाट ।
केसर चंदन लेपण कीन्हा मोहन तिलक ललाट ।
हमरौ पलंग जड़ाउ छोड़या पणिया पीले पाट ।
क्याँ पर राजी भयो साँवरो चेरी के नहिं खाट ।
अजहूँ न आयौ कँवर नंद कौ क्याँ रे लाग्यो चाट ।
छाँड़ गयो मझधार साँवरो बिना अकल रो जाट ।
तुमरे बिन गोपी ब्रज की सब व्याकुल भई विराट ।
'चंदसखी' ने दरसण दीज्यो कीज्यो आणँद ठाट ।।९।।

साँवरिया नें कहज्यो समझाय, उद्धव जी सुणजो म्हाँरी बात ।
जनम भयौ मथुरा तजी, ए जी प्रभु । पाछै लियौ उत बास ।
ग्वाल बाल सब गोपिन, ए जी प्रभु । नित प्रति रहत उदास ।
जमना तो जल उमग नहीं, ए जी प्रभु । कुँज रहे कुम्हलाय ।

'चंदसखी' की बीनती, एजी प्रभु । तन री तपत बुझाय ।।१०।।

लिख भेजूँ संदेसों, आवो म्हाँरा वलमाँ रे देस ।
लिखूँ री पतियाँ भेजूँ री वतियाँ कागद काली रेख ।
चंपा फूली मरुबो फूल्यो फूल रह्यो चहुँ देस ।
'चंदसखी' भज बालकृष्ण छवि, साँवरिया अवधेस ।।११।।

पाती सखी माधो जी की आई ।
आप न आये स्याम मनोहर, ऊधव हाथ पठाई ।
बिन दरसन व्याकुल भयो जिवड़ो नैनन नीर बहाई ।
मन सकुचाय ओट घूँघट की पतियाँ छतियाँ लगाई ।
कपट की प्रीति करी मनमोहन मोरी सुध बिसराई ।
'चंदसखी' भज बालकृष्ण छवि दरसण बिन अकुलाई ।।१२।।

ऊधी, वेग्याँ जाज्यो जीं । कहज्यो साँवरा ने महलाँ आज्यो जी ।
कब का गया म्हाँरी सुध ना लई । चाँदणी सी रात म्हाँरी वैरण भई ।
साँवण मास सुहावणा, बागाँ कोयलिया बोलै ।
पापी रे पपइया, मेरो प्राण टक छोलै ।
कोयल बचन सुहावणा, बोलै अमरित वैण ।
कहो काली कैसे भई, भई तेरे किस विध राते नेण ।
कृष्ण पधारे द्वारका जब से बिछुड़े मिले न ।
कलप कलप कालो भई, मोरे रोय रोय जम गए नैण ।
'चंदसखी' भज बालकृष्ण छवि हरि चरणाँ चित धाराँ जी ।
साँवरो बालम फेरि मिलैं म्हें तन मन बाराँ जी ।।१३।।

ऊधौ नंदलाल जी से, जै गोपाल कीज्यो रे ।
हमकूँ तज दी जादूराई कूबरी वाके मन भाई ।
हम तो सब जोगण वण बैठीं, अब तो राजी रीज्यो रे ।
हम तो लागें बिख सी खारी, कूबरी लागे भौत प्यारी ।
स्याम म्हाँरी प्रीत न जाणी दासी कूँ पतीज्यो रे ।
'चंदसखी' चरणन की दासी, एक बार फिर आके दरसण
दीज्यो रे ।।१४।।

कुछ दोस नहीं कुवजा में, बीर, आपणो स्याम खोरो ।
आप न आवै, पतियाँ न भेजै, कागद रो काँई टोटो ।
बिख री बेल के बिख फल लागैं काँई छोटो, काँई मोटो ।

जमना ने नीरे तीरे धेन चरावै, हाथ चंदण रो सोटो।
कुबजा चेरी कंसराय की वो है नंद जी रो टोटो।
'चंदसखी' भज बालकृष्ण छवि कुब्जा बड़ी हरि छोटो ।।१५।।

वो दिन क्यूँ नहीं चितारो।
कुब्ज्या राजा कंस की दासी नित उठ देती वारो।
हाथ कटोरो चंदण रो मुठियो घसती रो गयो जमारो।
बिन राबन में चुगती लकड़ियाँ चुग चुग करती भारो।
'चंदसखी' भज बालकृष्ण छवि, आखर स्याम हमारो ।।१६।।

कहूँ राधे जी संग, ऊधौ नचत कन्हैया गोपिन में।
ताथा थेई नाचत ग्वालिनी, संग नाचै गोविन्द ऊधौ०
ढप बाजै मिरदंग खंजड़ी मन मोहन मौचंग।
वेद पढ़त ते ब्रह्मा आए, इन्द्रासन वे इन्द्र। ऊधौ०
छत्तिस कुरी छत्तीसऊ देवता, संग राजा हरिचन्द।
'चंदसखी' भज बालकृष्ण छवि, उठे छत्तीसउ रंग। ऊधौ० ।।१७।।

जयसिंह

भ्रमरगीता दोहावली

ऊधो ब्रज लों जाय कै बड़ो एक जस लेहु।
ब्रह्म ज्ञान सखियान को सखा सिखावन देहु ।।१।।

जन्म जन्म ब्रज मो फिरौं बनरन बिन पद त्रान।
नाच देखावों काछि कै गाय सुनावों तान ।।२।।

जब लों पद निर्वान मो होय न दृढ़ विस्वास।
तबलों अबलों को रहै मंद रसन की आस ।।३।।

षंड षंड या पिंड में सब ब्रह्मांड देषाय।
मेरो पिंड छड़ाइए घट घट ब्रह्म बताय ।।४।।

उछरी जसुमति करन की छरी आजु लो देह।
नाव दाँवरी को बँध्यौ दून गोपिन की नेह ।।५।।

अछर अछेद अभेद जेहि गावत वेद पुरान ।
कबहू छेदैं नाक मम कबहू बेधैं कान ।।६।।

कान्ह कन्हैया कान्हरा कौन कहा मैं कीन ।
हौं अविनासी नाउ इन्ह बंसी धर लीन ।।७।।

कबहूँ बेनी गूहि कै पगन मेहाउर देउँ ।
ऐ मृगनैनी जो कहैं सबैं मूँड़ करि लेंउँ ।।८।।

द्वारपाल ह्वै करि रह्यो बलि छलि बहुत लजाय ।
एन ते अब कह छल करौ भक्त बछल कहवाय ।।९।।

जब लगि गोपी नहि लषै अलख निरंजन ठांउ ।
चरवाहो दधि चोर मम नहीं मिटन को नाँउ ।।१० ।।

आयसु लै गहि पद पदुम गए सखा परवीन ।
दरस बारि बिन तलफती देखी व्रज तिय मीन ।।११।।

नन्द जसोमति की दसा सक्यो सखा नहि देषि ।
मूरति ऊजर गाँव की पूजे बिना कुवेषि ।।१२।।

समाधान बहु विधि कियो गोपी लई बलाय ।
सुनो सँदेशो स्याम को तन मन श्रवण बनाय ।।१३।।

कान्ह कही सो कहत हौं कान करो तजि मान ।
घट घट एकै ब्रह्म मै गोपी कान्ह कहान ।।१४।।

घट बिनसे प्रतिबिम्ब को नहिं दूजो अनुहारि ।
कहो बुलबुला वारि को कौन पुरुष को नारि ।।१५।।

रूप न रेष अलेष है मन बुधि चित को पार ।
दूरि नहीं भरि पूरि है आतम ज्ञान विचारि ।।१६।।

निर्गुन ज्ञान औ ध्यान में पैहो हरि हिय हेरि ।
जैहो बुन्द समुद्र व्है ऐहो ज्वैनि न फेरि ।।१७।।

जाग्रत्स्वप्न सुषुप्त ये माया पुर हैं तीन ।
ताके आगे है तुरी पुरी निरंजन झीन ।।१८।।

गंगा जमुना सरस्वती तिरवेनी अस्नान ।
ता त्रिकुटी में बसि रहौ बसि ह्वै हैं भगवान ।।१९।।

प्राण वायु माला करो ताला करो अघान ।
देह धर्म साला करो आला जोग न आन ॥२०॥

गुनि गुनि निर्गुन के गुनन सुनि सुनि अनहद नाद ।
मेटो बिरह विषाद तब भेटो सहज समाद ॥२१॥

कोटि सूर औ चन्द्रमा उडगन गगन प्रभास ।
दीप माल मारीचिका सहज जोति आकास ॥२२॥

अष्ट सिद्धि नौ निद्ध पै बसि व्है है तब आनि ।
राग रागिनी नित करै मगन गगन मै गानि ॥२३॥

एही जोग साजुज्य तब पैहों पद निर्वानि ।
ब्रह्म अगिनि मै झोंकिहौ देह गेहमन प्रान ॥२४॥

गोपी के वचन

ऊधो कही सुनी कहो उतर देन की बुद्धि ।
हमैं अगम की गम नहीं निगम न पावत सुद्धि ॥२५॥

घट घट एकै ब्रह्म तौ काहि करत उपदेस ।
किन पठयो तुम कौन हौ कासो कहत सँदेस ॥२६॥

वै निर्गुन हम गुन भरी तुम औगुन की षानि ।
अब तौ बुंद समुद्र की परो कूबरी जानि ॥२७॥

जाग्रत्स्वप्न सुषुप्ति में हमै स्याम को ध्यान ।
तुरिया तिरिया अलख की जाके नाक न कान ॥२८॥

निज कर कोमल हरि रची घास बाँस वन आन ।
हम झाँकत सो तृन कुटी कहा तिरकुटी ध्यान ॥२९॥

सुबस वसै ब्रज बाँसुरी अधर धरे ब्रजराज ।
मोहे सुर मुनि धुनि स्वसुनि अनहद धुनि केहि काज ॥३०॥

स्यामगात मुक्तावली मिली माल गुन जानि ।
गंगा जमुना सरस्वती हमै स्व संगम ध्यान ॥३१॥

अष्ट सिद्धि नौ निद्धि दधि चाटत भई बिलाय ।
मुक्ति कुतीं भूका करै नँद घर टूका खाय ॥३२॥

जाहि न रूप रेख वपु धरो कूबरी गेहु ।
लतमरुवा भृगु को हमैं नंद पुलरुवा देहु ॥३३॥

जन्म जन्म लहि हम रहैं हरि पद पंकज पूज ।
मधुप बतावत हौ तिन्है ब्रजबासी साजूज ॥३४॥

ऊँची पदवी ऊँच कुल हमरे गोकुल गाँउ ।
ऊधौ यै गोकुल वधू नहीं चहै धूठाउँ ॥३५॥

धर निधरी सोई धरी धरी रहै कुल कानि ।
भई कनौड़ी कान्ह की लौंडी कहै कि रानि ॥३६॥

एकै मोहन एक मन नेकु न अंतर होय ।
निर्गुन सगुन को द्वै कहै दोय बाप के सोय ॥३७॥

सूधौ विष एकै जिन्है ऊधो करै सो होय ।
माय पूत ना सी करी वरी कूबरी जोय ॥३८॥

खुले बदन कुबिजा दसन साँवर करत विहार ।
हम जनती न छुटावती दाँवरि ते वहि बार ॥३९॥

अरी कूबरी हरि बरी खरी चूक हम कीन ।
गोवर्धन धन सेइकै कूबरु धन हम लीन ॥४०॥

ब्रज बनिता ब्रज पति सोई ऊधोदिन फल जोय ।
पटिया पारत जेहु ते बटिया पारत सोय ॥४१॥

सुनियत संदीपन भवन विद्या पढ़ी विचारि ।
यै बातैं कहु किन गढ़ी मढ़ी बनावै नारि ॥४२॥

ऊधो मन भाई तुलै सोई स्याम प्रवीन ।
अँगिया कुबिजा अंग को गोपिन कों कोपीन ॥४३॥

लाज न आवत बकत हौ बातै बहुत बनाय ।
आयहु अविनासी उहाँ दासी घर बैठाय ॥४४॥

अलष निरंजन करन के लखौ न दस्खत चीन्ह ।
मंजन करि अंजन नयन पगन मेहावर दीन्ह ॥४५॥

सामग्री सब जोग के लेती हम कर ओड़ि ।
कहौ बठँगि बैठैं कहा आयहु कुबरी छोड़ि ॥४६॥

जारे पर जनि जारिये जारे मधुप कुभाख ।
जोग राखु लै ताख पर निज मुख लावहु राख ॥४७॥

लीला ललित गोपाल की सुमिरि सुमिरि चित लाय ।
लेहै स्याम बुलाय मोहि टारो जोग बलाय ॥४८॥

तुम्है दोसरो सन हमै मधुकर यह अपसोस ।
केतो अहिर पिंगल पढ़ै लगी रहै यक भोस ॥४९॥

हम हारी कुबिजा जिती तुम जीते जगदीस ।
जहाँ रहैं हरि तहँ रहै जीते कोटि बरीस ॥३०॥

जोइ जोइ गोपिन सों सुनै सोई सुनै जह जाहिं ।
ऊधौ साँस बहीर के निकसन को अकुलाहिं ॥५१॥

बहुंत कही गढ़ि छोलि कै इहाँ उहाँ तकि तूकि ।
प्रेम पियूषहिं पान करि चले मुक्ति घर फूकि ॥५२॥

जो वै कहै सो यै कहै हरि कूबरिहि अनेक ।
भय भृंगी के कीट लौं ऊधो गोपी एक ॥५३॥

बूड़े प्रेम समुद्र में निकसे बहुत उपाय ।
रोम रोम गदगद गहे ब्रज बासिन के पाय ॥५४॥

मातु जसोमति नन्द धनिधनि गोपी धनि धेनु ।
हौहूँ जिनके दरस धनि पाये धनसुख चैनु ॥५५॥

बिदा भए सो विदेह सों अंग अंग पुलकात ।
पहुँचे देखे दूरि ते उठे स्याम मुसुकात ॥५६॥

दौरि चरण ऊधो गहे उर लाये ब्रजराज ।
कहो सखा जेहि काज सो गये भयो हो काज ॥५७॥

कुसलनन्द जसुमति कुसल कुसल सबै ब्रज लोग ।
तुम आए कहु कुसल तें कुसल सिखाये जोग ॥५८॥

कुसल तहाँ जह हरि कथा कुसल तहाँ सतसंग ।
कुसल तुम्हारी भक्ति जहँ सो ब्रज कीट पतंग ॥५९॥

कहाँ नाथ तुम सन कहौं ब्रज की दसा पुकारि ।
सुनि निज दसा निहारिहौ कहत न रहत विचारि ॥६०॥

गयो कियौ सब दृष्टि में उनको विधि व्यवहार ।
स्याम स्याम रटि प्राण कों राखै अवधि अधार ॥६१॥

दिन बितवैं चितवैं अवधि झौर निति ब्रज मेल ।
तुमरी लीला को करैं भानमती के खेल ॥६२॥

भेष बनाय बनाय कै होहिं कंस को दूत ।
एक पूतना होत यक होत नन्द को पूत ॥६३॥

जल वरषै तड़पे कोइ घूघुट तडित बनाय ।
यक यक ठौरी वस्य करि गिरिवर लेंहि उठाय ।।६४।।

एक चीर लै कदम पर सबन जोरावहि हाथि ।
बनमाली ह्वै एक क्वै ल्यावै काली नाथि ।।७५।।

एक एक कै कंध चढ़ि मेटुकी लेहि उतारि ।
एक वोरहनो लै चलैं पकरे बांह मुरारि ।।६६।।

एक पानि घट ते उलटि जसुमति पै चलि जाहिं ।
देखो चलनि नित ललन की चलन पावती नाहिं ।।६७।।

एक एक को दावरी बांधि लगै गृह काज ।
फिरि कबहूँ चोरी करो भला लाल ब्रजराज ।।६८।।

वादि न मारे मूकते छतिया मिटी न हूक ।
अबही फिरि केसौ किये चोली के सौ टूक ।।६९।।

एकै रास विलास रचि करि करि बैठैं मान ।
एक वेष नटवर धरे व्है रहैं अंतर ध्यान ।।७०।।

दौरी आवति एक कर लिये मेटुकिया फूटि ।
अबही बनमाली हमैं लीन्हो बन में लूटि ।।७१।।

अबहू मिलि बैठें उठें मुरली के गुन गाय ।
कीन्हे स्याम बजाय कै हम पर सौति बजाय ।।७२।।

टोन हांइ टहलन करै न सेवा चित देय ।
चाकर लाव कपूर को आठ मलै हक लेय ।।७३।।

नागी आगे पाछहू आंगी आगौ नाहिं ।
गरबीली गरजत रहैं बैठी हार कर माह ।।७४।।

छेद छेद अंगुरी करैं हरि कर नाच नचाय ।
होत हँसी तब घर बसो यह बंसी न जाय ।।७५।।

नहिं रंभा नहिं उरवसी सुरपतिनीहू नाह ।
यह बंसी गोकुल बसी कहौ कौन कुल मांह ।।७६।।

अंजन अधर लगाय कै भोरहिं आवत स्याम ।
लाल करौं मुख लाय कै मुरली के मुख स्याम ।।७७।।

बौरी सी दौरी फिरैं लखैं छांह नहि धूप ।
जेहि जक लागी रहैं व्है ताही के रूप ।।७८।।

सूखी आतम विरह तें एक एक गर मेलि ।
दरस वारि ते सींचिए एक वार वै बेलि ।।७९।।

तकै स्याम घन तड़ित पट औ मुरली घन घोर ।
मीन हीन जल स्वाति बिनु चातक दृग मृग मोर ।।८०।।

खाण्डव वन ते तन जरै ग्रीषम बिषम सुभाय ।
पाण्डव ते मुक्ता गरै गरै शिसिर रितु पाय ।।८१।।

विथराती जेही गलिन तेही कलिन के पुंज ।
छाती लौ पाती भरी रितु बसन्त ते कुंज ।।८२।।

जो न होत उनके करन लकुटी अवधि अधार ।
प्रलय होत पर लौ नही ये सब अँसुअन धार ।।८३।।

नंद जसोमति की कथा कछु मति पूछौ बात ।
रट लागी कहँ कान्ह हौ तात रसोइ सेरात ।।८४।।

मुकुट लकुट मुरली गुली गोली गेंद मुरचंग ।
जोगवत जसुमति प्रान को लहुवा चकई चंग ।।८५।।

पियरी धौरी धूमरी धेनु दोहनी नोय ।
एई जीवन नंद को नत दरसन गति होय ।।८६।।

धरिक खरिक लौं जोग ए देखिधेनु मन ऊब ।
नींद मलीन मनौ नही दातें दाबें दूव ।।८७।।

केकी शुक सारिक सबै पंछी लखै निहारि ।
साँचै दरसन वारि को चोंचै सबै पसारि ।।८८।।

मुरझाने गिरि गिरि परे आतप तप सब सूख ।
देखै रूखे रूखन सब वृन्दावन के रूख ।।८९।।

बहुरौ निर्गुन सगुन की चलो बात दुहुँ वोर ।
प्रेम उदधि गोपीन को नहि पायो कुछु वोर ।।९०।।

ब्रह्म ज्ञान की जुक्ति मैं फिरि फिरि करौ वखान ।
वै कुबरी कूबर उपर फिरि फिरि तोरैं तान ।।९१।।

अलख निरंजन ध्यान की बहुत कही गढ़ि छोलि ।
वै चोरी दधि खान की कहैं सकै नहिं बोलि ।।९२।।

आदि अंत मधि एक हरि व्यापक आपै आप ।
कहौ नंद वसुदेव हैं कहौ कौन के बाप ।।९३।।

कलिकटि बातैं मुक्ति की दाँव देव अकुलाय ।
जीति लेहिमोहि तुरित ही वै दावरि देखराय ।।९४।।

मेरी कहा चलाइए चतुरानन मुख चारि ।
उनके प्रेम चउतरा तुम आवहु हरि हारि ।।९५।।

सुनि सुनि बातैं तियन की भरि भरि नैननि नीर ।
फिरि फिरि पूछैं फिरि सुनै धरि धरि हरि मन धीर ।।९६।।

मेरी इच्छा सुनु सखा प्रेम परीछा लेउँ ।
तुमरी सिच्छा मन धरी तन मन गोपिन देउँ ।।९७।।

जैन आनन्दघन

पिया तुम निठुर भए क्यूँ ऐसे ।
मैं मन वच क्रम करी राउरी, राउरी रीति अनेसें ।
फूल फूल भँवर कैसी भाँउरी भरत हो निबहै प्रीति क्यूँ ऐसे ।
मैं तो पिय तें ऐसी मिली आली कुसुम बास संग जैसे ।
आछी जात कहा पर एती नीर नह्वैयें भैंस ।
गुन अवगुन न विचारौ आनन्दघन, कीजिए तुम हौ तौसें ।।
किन गुन भयो रे उदासी भ्रमरा ।
पंख तेरौ कारौ मुख तेरौ पीरों सब फूलन कौ बासी ।
सब कलियन कौ रस तुम लीनौ सो क्यूँ जाय निरासी ।
आनन्दघन प्रभु तुम्हारे मिलन कूँ जाय करवत ल्यूँ कासी ।

ठाकुर

धिक कान जो दूसरी बात सुनै अब एक ही रंग रहो मिलि डोरो।
दूसरो नाम कुजात कढैं रसरा जो कहै तो हलाहल बोरो।
ठाकुर यों कहतीं ब्रजबाल सुह्याँ बनिता को सुभाव है भोरो।
ऊधौ जू वे अँखियाँ जरि जायँ जो साँवरो छाँड़ि तकै तनु गोरो ॥१॥

आय जुरीं बिजुरी सी कितेकउ प्रेम प्रवाह कथा तिन बाँची।
ऊधौ सुनो तुम ऊधो सुनो तुम ऊधो सुनो तुम या धुनि माँची।
ठाकुर कौन सों का कहिये गति देखि कै मेरी गिरा तहँ नाची।
हा इतनी कहनेइ परी हमैं सांची है सांची है सांची है सांची ॥२॥

तुलसीदास

श्रीकृष्ण गीतावली

ऊधौ या ब्रज की दसा बिचारो।
ता पाछे यह सिद्धि अपनी जोग कथा बिस्तारो ॥
जा कारन पठये माधव तुम सो सोचहू मन माहीं।
केतिक बीच बिरह परमारथ जानत है किधौं नाहीं ॥
परम चतुर निज दास स्याम के संतत निकट रहत हौ ॥
जल बूड़त अवलंब फेन को फिरि फिरि कहा कहत हौ।
वह अति ललित मनोहर आनन कौने जतन बिसारौं।
जोग जुगति अरु मुकुति बिबिध विधि वा मुरली पर वारौं ॥
जेहि उर बसत स्याम सुन्दर घन तेहि निर्गुन कस आवै।
तुलसिदास सो भजन बहावौ जाहि दूसरो भावै ॥१॥

मधुकर कहहु कहन जो पारो।
नाहिन बलि, अपराध रावरो, सकुचि साध जनि मारो ।।
नहिं तुम ब्रज बसि नंदलाल को बाल बिनोद निहारो।
नाहिन राम रसिक रस चाख्यो, तातें डेल सो डारो ।।
तुलसी जौ न गये प्रीतम संग प्रान त्यागि तनु न्यारो।
तौ सुनिबो देखिबो बहुत अब कहा करम सो चारो ।।२।।

ऊधौ जू क्यों तिहारोइ कीबो।
नीके जिय की जानि अपन पौ समुझि सिखावन दीबो ।।
स्याम वियोगी ब्रज के लोगन जोग जोग जो जानो।
तौ संकोच परिहरि, पालागौं, परमारथहि बखानो ।।
गोपी गाय ग्वाल गोसुत सब रहत रूप अनुरागे।
दीन मलीन छीन तनु डोलत मीन मजा सों लागे ।।
तुलसी है सनेह सुखदायक, नहिं जानत ऐसो को है।
तऊ न होत कान्ह को सो मन, सबै साहिबहि सोहै ।।३।।

सो कहौ मधुप जो मोहन कहि पठई।
तुम सकुचत कत हौं ही नीके जानति, नंदनंदन हो निपट करी सठई ।।
हुतो न साँचो सनेह, मिट्यो मन को संदेह, हरि परे उघरि, संदेसहु ठहाई।
तुलसीदास कौन आस मिलन की, कहि गए सो तौ कछु एकौ न ठई ।।४।।

मेरे जान और कछु न मन गुनिये।
कूबरी खन कान्ह कही जो मधुप सों, सोई सिख सजनी सुचित दै सुनिये ।।
काहे को करति रोष, देहि धौं कौन के दोष, निज नयननि को बयो सब लुनिये।
दारु सरीर कीट पहिले सुख, सुमिरि सुमिरि बासर निसि धुनिये।
ये सनेह सुचि अधिक अधिक रुचि, बरज्यो न करत कितो सिर धुनिये।
तुलसीदास अब नंद सुवन हित विषम वियोग अनल तनु हुनिये ।।५।।

भली कही, आली हमहूँ पहिचाने।
हरि निर्गुन निर्लेप निरपने निपट निठुर निज काज सयाने ।।

ब्रज को बिरह, अरु संग महर को, कुबरिहि बरन न नेकु लजाने ।
समुझि सो प्रीति की रीति स्याम की, सोई बावरि जो परेखो उर आने।।
सुनत न सिख लालची विलोचन एतेहु पररुचि रूप लोभाने ।
तुलसीदास इहैं अधिक कान्ह पहिं, नीके ई लागत मन रहत समाने।।६।।

जो पै अली अंत इहै करिबे हो ।
तौ अतुलित अहीर अबलनि को हठि न हियो हरिबे हो ।।
जौ प्रपंच परिनाम प्रेम फिरि अनुचित आचरिबे हो ।
तौ मथुराहि महामहिमा लहि सकल ढरनि ढरिबे हो ।।
दै कुबरिहि रूप ब्रज सुधि भये लौकिक डर डरिबे हो ।
ज्ञान बिराग कालकृत करतब हमरेहि सिर धरिबे हो ।।
उन्हहिं राग रबि नीरद जल ज्यों प्रभु परिमिति परिबे हो ।
हमहुँ निठुर निरुपाधि नेहनिधि निज भुज बल तरिबे हो ।।
भलो भयो सबभाँति हमारो एक बार मरिबे हो ।
तुलसी कान्ह बिरह नित नवजर जरि जीवन भरिबे हो ।।७।।

ऊधौ यह ह्याँ न कछु कहिबे ही ।
ज्ञान गिरा कुबरी खन की सुनि बिचारि गहिबे ही ।।
पाइ रजाइ नाई सिर गृह है गति परमित लहिबे ही ।
मति मटुकी मृगजल भरि घृत हित मन ही मन महिबे ही ।।
गाड़े भली उखारे अनुचित, बनि आये बहिबे ही ।
तुलसी प्रभुहिं तुमहिं हमहूँ हिय साँसति सी सहिबे ही ।।८।।

मधुकर कान्ह कहा ते न होंही ।
कै ये नई सिखी सिखई हरि निज-अनुराग-बिछोही ।।
राखी सचि कूवरी पीठ पर ये बातैं बकुचौही ।
स्याम सो गाहक पाइ सयानी खोलि देखाई है गौंहीं ।।
नागर मनि सोभासागर जेहि जग जुवत हँसि मोही ।
लियो रूप दै ज्ञान गाँठरी भलो ठग्यो ठगु ओही ।।
है निर्गुन सारी बारिक, बलि घरी करौ, हम जेही ।
तुलसी ये नागरिन्ह जोग पट जिन्हहिं आज सब सोही ।।९।।

मधुकर तुम्ह कान्ह की ही कहि क्यों न कही है ।
यह बतकहि चपल चेरी की निपट चरेरीये रही है ।।

कब ब्रज तज्यौ ज्ञान कब उपज्यौ कब बिदेहता लही है ।
गये बिसारि रीति गोकुल की, अब निर्गुन गति लही है ।।
आयसु देहु करहिं सोइ सिर धारि प्रीति परमिति निरबही है ।
तुलसी परमेस्वर न सहैगो, हम अबलनि सबै सही है ।।१०।।

दीन्हीं है मधुप सबहिं सिख नीकी ।
सोइ आदरौ आस जाके जिय बारि बिलोवत घी की ।
बूझी बात कान्ह कूबरी की, मधुकर कछु जनि पूछौ ।
ठालीं ग्वालि जानि पठये, अलि, क्यों है पछोरन छूछौ ।।
हमहूँ कछूक लखी ही तब की, औरे बैं नंदलला की ।
ये अब लही चतुर चेरी पै चोखी चलि चालाकी ।।
गये करतें, घर आंगन तें ब्रजहूँ तें ब्रजनाथ ।
तुलसी प्रभु गयो चहत मनहुँ तें सो तो है हमारे हाथ ।।११।।

ताकी सिख ब्रज न सुनैगो कोउ भोरे ।
जाकी कहनि रहनि अनमिल, अलि सुनत सुझियत थोरे ।।
आप कंज मकरंद सुधाहृद हृदय रहत नित बोरे ।
हमहूँ सो करत बिरह स्रम जैसे गगन कूप खनि खोरे ।।
धान को गाँव पयार तें जानिय ज्ञान विषय मन मोरे ।
तुलसी अधिक कहे न रहै रस गूलरि को सो फल फोरे ।।१२।।

आली अति अनुचित उतरु न दीजे ।
सेवक सखा सनेही हरि के जो कछु कहैं सों कीजे ।।
उदेस काल पदेस सँदेसो सादर सब सुनि लीजे ।।
कै समुझिबो, कै ये समुझैहैं हारेहु मानि सहीजें ।।
सखि सरोष प्रिय दोष बिचारत प्रेम पीन पन छीजैं ।
खग मृग मीन सलभ सरसिज गति सुनि पाहनौ पसीजैं ।।
ऊधौ परम हितू हित सिखवत परमिति पहुँचि पतीजैं ।
तुलसीदास अपराध आपनो नंदलला बिनु जीजैं ।।१३।।

ऊधो हैं बड़े, कहैं सोइ कीजै ।
अलि, पहिचानि प्रेम सी परिमिति उतरु फेरि नहिं दीजैं।।
जननी जनक जरठ जानें जन परिजन लोगु न छीजें ।
दै पठयो पहिली बिढंतो ब्रज सादर सिर धरि लीजे ।।

कंस मारि जदुबंस सुखी कियो, स्त्रवन सुजस सुनि जीजै ।
तुलसी त्यों त्यों होइगी गरुई ज्यों ज्यों कामरि भीजै ।।१४।।

कान्ह, अलि भये नये गुरु ज्ञानी ।
तुम्हरे कहत आपने समुझत, बात सही उर आनी ।।
लिये अपनाइ लाइ चन्दन तन, कछु कटु चाह उड़ानी ।
जरि सुँघाइ कूबरी कौतुक कहि जोगी बघा-जुड़ानी ।।
ब्रज बसि रास बिलास, मघुपुरी चेरी सों रति मानी ।
जोग जोग ग्वालिनी बियोगिनि जान-सिरोमनि जानी ।।
कहिबे कछू कछू कहि जैहै, रहौ आलि अरगानी ।
तुलसी हाथ पराये प्रीतम, तुम्ह प्रिय-हाथ बिकानी ।।१५।।

कही है भली बात सबके मनमानी ।
प्रियसन प्रिय सनेह-भाजन सखि प्रीति-रीति जगजानी ।।
भूषन भूति गरल परिहरि कै हरमूरति उर आनी ।
मज्जन मान कियौ कै सुरसरि कर्मनास-जल छानी ।।
पूछँ सो प्रेम, विरोध सींग सो बिचार हितहनी ।
कीजे कान्ह कूबरी सो नित नेह करम मन बानी ।।
तुलसी तजिय कुचालि आलि अब सुधरे सबइ नसानी ।
आगे करि मधुकर मथुरा कहँ सोधिय सुदि न सयानी ।।१६।।

हे हम समाचार सब पाये ।
अब विसेष देखे तुम्ह देखे हैं कूवरी हाँक से लाये ।।
मथुरा बड़ो नगर नागर जन जिन्ह जातहि यदुनाथ पढ़ाये ।
समुझि रहीन, सुनि कहनि बिरह ब्रज अनख अमिय ओषधि सरुहोय ।।
मधुकर रसिक सिरोमनि कहियत कौनें यह रस रीति सिखाये ।
बिनु आखर को गीत गाइ गाइ चाहत ग्वालिन ग्वाल रिझाये ।।
फल पहिले ही लह्यो ब्रज बासिन्ह, अब साधन उपदेसन आये ।
तुलसी अलि अजहूँ नहीं बूझत, कौन हेतु नंद लाल पठाये ।।१७।।

कौन सुनै अलि की चतुराई ।
अपनिहि मति विलास महँ चाहत सियनि चलाई ।।
सरल सुलभ हरि भगति-सुधाकर निगम पुराननि गाई ।
तजि सोइ सुधा मनोरथ करि करि को मरिहै, री माई ।।

जद्यपि ताको सोइ मारग प्रिय जाहि जहाँ बनि आई ।
मैंन के दसन कुलिस के मोदक कहत सुनत बौराई ।।
सगुन छीर-निधि तीर बसत ब्रज तिहुँ पुर बिदित बड़ाई ।
आक दुहन तुम्ह कह्यो सो परिहरि हम यह मति नहीं पाई ।।
जानत हैं जदुनाथ सबन की बुद्धि बिवेक जड़ताई ।
तुलसिदास जनि बकहिं, मधुप सठ हठ निसि दिन अँवराई ।।१८।।

गोकुल प्रीति नीति नई जानि ।
जाइ अनत सुनाइय मधुकर ज्ञान गिरा पुरानि ।।
मिलहिं जोगी जरठ तिन्हहिं दिखाउ निरगुन खानि ।
नवल नंदकुमार के ब्रज सगुन सुजस बखानि ।।
तू जो हम आदर्यो सो तो नव कमल की कानि ।
तजहि तुलसी समुझि यह उपदेसिबे की बानि ।।१९।।

काहे को कहत बचन सँवारि ।
ज्ञान गाहक नाहिनै ब्रज मधुप अनत सिधारि ।।
जुगुति धूम बघारिबे की समुझि हैं न गँवारि ।
जोगिजन मुनि मंडली मों जाइ रीति ढारि ।।
सुनै तिन्ह की कौन तुलसी जिन्हहिं जीति न हारि ।
सकति खारो कियो चाहत मेघहू को बारि ।।२०।।

ऐसो हौं हूं जानात भृंग ।
नाहिनै काहु लहो सुख प्रीति करि इक अंग ।।
कौन भीर जो नीरदहि जेहि लागि रहट बिहंग ।
मीन जल बिनु तलफि तनु तजै, सलिल सहज असंग ।।
पीर कछु न मनिहिं जाके बिरह बिकल भुअंग ।
ब्याध बिसिष बिलोक नहीं कलगान लुबुध कुरंग ।।
स्यामघन गुनवारि छबि मीन मुरलि-तान-तरंग ।
लग्यो मन बहु भाँति तुलसी होइ क्यों रस भंग ।।२१।।

ऊधो प्रीति करि निरमोहिन सों को न भयौ दुखदीन ।
सुनत समुझत कहत हम सब भईं अति अप्रवीन ।।
अहि कुरंग पतंग पंकज चारु चातक मीन ।
बैठि इनकी पाँति अब सुख चहत मन मतिहीन ।।

निठुरता अरु नेह की गति कठिन परति कही न ।
दास तुलसी सोच नित निज प्रेम जानि मलीन ।।२२।।

सुनत कुलिस सम बचन तिहारे ।
चित दै मधुप सुनहु सोइ कारन जाते जात न प्राण हमारे ।।
ज्ञान कृपान समान लगत उर बिहरत छिन छिन होत निनारे ।
अबधि जरा जोरति हठि पुनि पुनि याते तनु रहत सहत दुख भारे ।।
पावक बिरह समीर स्वास तनु, तूल मिले तुम्ह जारनि हारे ।
तिन्हहिं निदरि अपने हित कारन, राखत नयन निपुन रखवारे ।।
जीवन कठिन, तरन की यह गति, दुरुह बिपति ब्रजनाथ निवारे ।
तुलसीदास यह दसा जानि जिय उचित होइ सो कहौं अलि प्यारे ।।२३।।

छपद सुनहु बर वचन हमारे ।
बिन ब्रजनाथ ताप नयनन की कौन हरे, हरि अंतर-कारे ।।
कनक कुंभ भरि भरि पियूष जल, बरषत सक्र कल्प सतहारे ।
कदलि सीप चातक को कारज, स्वाति वारि बिन कोउ न सँवारे ।।
सब अङ्ग रुचिर किसोर स्यामघन, जेहि हृदि जलज बसत हरि प्यारे ।
तेहि उर क्यों समात बिराट बपु क्यों महि सरित सिंधु गिरि भारे ।।
बैठ्यो अति प्रेम प्रलय के बरज्यों बिपुल जोग-जल बोरि न प्यारे ।
तुलसीदास ब्रज बनितन को ब्रत, समरथ को करि जतन निवारे ।।२४।।

मोको अब नयन भये रिपु माई ।
हरि वियोग तनु तजेहि परम सुख ए राखहि सोइ है बरिआई ।।
बरु मन कियो बहुत हित मेरो बारहि बार काम दव लाई ।
वरषि नीर ये तबहि बुझावहिं स्वारथ निपुन अधिक चतुराई ।।
ज्ञान परसु दै मधुप पठायो बिरह बेली कैसेहु कठिनाई ।
सो थाक्यो रह्यो एकहि तक देखत उनकी सहज सिंचाई ।।
हारत हू न हारि मानत सखि सठ सुभाव कंदुक की नांई ।
चातक जलज मीनहुँ ते भोरे समुझत नहिं उन्हकी निठुराई ।।
ये हठ निरत दरस लालच बस परे जहाँ बल बुद्धि न बसाई ।
तुलसीदास इन्ह पर जो द्रवहि हरि तौ पुनि मिलौं बैंरु बिसराई ।।२५।।

मधुप समुझि देखहु मन माहीं ।
प्रेम पियूष रुप उड्पति बिनु कैसे हो अलि पैयत रवि पाहीं ।।

जद्यपि तुम हित लागि कहत, सुनि स्रवन बचन नहिं हृदय समाहीं ।
मिलहि न पावक महँ तुषार कन, जो खोजत सत कल्प सिराहीं ।।
तुम कहि रहे, हमहू पचि हारी, लोचन ठीक तजत हठ नाहीं ।
तुलसीदास सोइ जतन करहु कछु बारक स्याम इहाँ फिरि जाहीं ।।२६।।

तेजसिंह

भ्रमरगीत

चोर सो आइ सुनावत चाह भए ब्रजमाँह बड़े दुखदाई ।
कान्ह बने कुबिजा पति हैं पति राखे की बात कहै न सुहाई ।।
आदि न जानत हो तब की तुम जोग की ह्यां चरचा है चलाई ।
ऊधो जू काहे को जात फिरौ घर में नहिं सूनी मगौती दोहाई ।।१।।

चाहत वे जोग हम भरी हैं वियोग बिसरायो वह भोग जाने दधि दूध महियो ।।
आप, करैं राज लागै तन को लाज इहां जप तप साज हमही सो कहै गहियो ।।
तुम हो सुजान देख जात जैसो ठान तेसौ कहियो निदान हूँ सकुचात रहियो ।।
छोड़ी ब्रजबाम की कीन्हौ कुबिजा को काम ऐसो घन स्याम सो प्रनाम जाइ कहियो ।।२।।

केलि करो हरि जू बहु भाँति सो दान लियो हमसों दधि दूधो ।
प्रीति की रीति बिसारि कै 'तेज' संदेस पठावत वेद विरूधो ।।
प्राण पियारे को छोड़ि कै काह कियो तय है हम पूछती सूधो ।।
जोग सिखावन आवत हो ब्रज बामन के घर छालन ऊधो ।।३।।

तोषनिधि

एकै कहैं हँसि ऊधव जू बृज की जुवती तजि चंद्रप्रभा सी ।
जाइ कियो कहि तोष प्रभू एक प्रान प्रिया लहि कंस की दासी ।।
जो हुते कान्ह प्रवीन महा सो हहा मथुरा में महामति नासी ।
जीव नहीं उबि जात जबै ढिग पौढ़ति है कुबजा कछुहा सी ।।१।।

दयालाल

प्रेम बतीसी

जा छिन तें जीवन की मूर संग लै कै,
क्रूर नाम अकरूर गयो करम करूर कै ।
ता छिन तें गोपी जिन नेह ध्वजा रोपी,
तिनदेह सुधिलोपी विरह जरूर कै ।
तरस हिये में रहै पयि के दरस काज,
करै सपरस आय मदन अरूर कै ।
पूरकैं दुखन हिय चूर कैं सुषन तिय,
रूरकै सुजिय बोलैं कछू गरूर कै ।।१।।

स्याम के हिये में इत रहै तलाबेली अति,
मेरी जे महेली ते अकेली मेली हाय क्यौं ।
उन बिन मैं हू सूनौ यै है अरु उन्हैं दुख,
कैसो ह्वै है ऊनौं यहै सोच माय क्यौं ।
वेग कहि आयौ अैवौ बनत अभी न जैवौ,
कछु तौ संदेस दैवौ नहीं दुख जाय क्यौं ।

सुधि न रही ये क्यौं हूँ कछू न सुहाय क्यौ हूँ,
प्यारिन को छोड़ि दुख लयौ इहाँ आय क्यौं ।।२।।

करत विचार सोच कौ न बार पार,
उन सौं मेरह्यो हार लाग खटकत रैन दिन ।
मो समान होइ गुन निधान सब जान,
विरह चखान करि ताहि भैजौ ढिग तिन ।
तब तौ बुलाइ ऊधौ बोले हरि बोल सूधौ,
मेरौं हिय रूधौ जात ब्रज बनितानि बिन ।
अब तुम जाय ब्रह्म पथ दरसाय,
दुख विरह नसाइ आय कहौ मो सौ तिहि छिन ।।३।।

निज प्रान प्यारी प्रीति समझ न वारी,
वोकी लाग चितधारी लिखौं कैसे कै तिहारी बात ।
तुम सी नारी मैं निहारी हू विचारी बहु,
मेरौ नाम तुम सौ बिहारी भयौ जग ख्यात ।
जात रूप मेरैं, न अरूप हौं अनूप अति,
तुम घट ही में देखौ कौं सु पछितात ।
उद्धव कहै सुमानि आतम पिछान मोहि,
व्यापक हो जान ठिग ब्रह्म ध्यान सो दिखात ।।४।।

अजहूँ क्यों दुर्ल्लभ जो रज ब्रज भूमि को,
सु तहाँ आय ऊधौ नंद जसुधा सौं मिल्यौ है ।
सुत के संदेसे हित भरे पित मासौं कहे,
सुनि सुनि दुहूंन कै प्रेम उर झिल्यौ है ।
सुमरन भये पूत के चरित्र भाँति भाँति,
कहत कहत मोह सिंध आन पिल्यौ है ।
ऊधौ उहाँ गोपी गोप गाय ग्वार कहौ,
कहौ गोरस के बिन्ह कैसी विधि हिल्यौ है ।।५।।

अैसैं बीती रात प्रात उठे मुसक्यात, ऊधौ
सूधौ जाय जमुना पखारि गात आयौ है ।
देखि ब्रज वनितन गन अनमनैं मुख,
तिन मधि कौन्ह कौ संदेसौ लै सुनायौ है ।

लाल की कथा कौं लगी पूछिबे को ब्रजबाल,
आय हैं विवही देस चित मैं सुहायौ है।
तुम सौ कहा कहायौ पत्रहू गहायौ कोऊ,
ऐकि ब्रज विरह समुद्र मैं बहायौ है ॥६॥

दई खोलि पाती गोपी छाती सौं लगाय लइ,
बांचत ही ताती सी ह्वै अकुलानी यौं।
विरह में माती भई तजी वधि विललाती,
हाय अैवो देखत ही हम दिन राती यौं।
आँसुन बहाती तन सुधि बिसराती कैऊ,
बैठी ही गिरां धोरे धरै किहिँ भाती यौं।
कैऊ मुरझातीं उरझाती सुरझाती नाहिं,
अनखाती कहै प्रीति करि करि काती यौं ॥७॥

कहा यहै लिख्यौ कान्ह जोग का सौं सीख्यौ,
ऊधौ अब लौं न दीख्यौ हो भावनि बुराई कौं।
हम सबला न अबला है भला देखौ तुम,
जोग कला कठिन गहै सु दीजैं जाई कौं।
कौन मौन साधै पौन बाँधै कांधै कंथा डारैं,
संथा प्रेम छाँड़ि पंथा ज्ञान कठिनाई कौं।
सुभ प्रीति पाई है कन्हाई की सुहाई,
चित लाई तन छाई हियें और न समाई कौ ॥८॥

कर तौ ढिठाई रह्यो पावत मिठाई प्रीति,
हम गठाई रूप ठाई साख अब यौं।
चीर के हरन समैं रस कौ भरन कीयौ,
यह रीति कर न कही ही सखी कब यौं।
संगरास कीयौ दीयौ लीयौ सुख जानै होयौ,
पीयौ अधरामृत उहाँ न कही तब यौं।
बोलि उठि एक तुम भोली क्यौं भई री,
खोली जोग गांठि कान्ह परी कबरी की दव यौं ॥९॥

एक तैं सरस एक औसीं ह्याँ अनेक नारि,
टेक करि वाही भजी विवेक दूर धारि।

सुंदिरि सुहावनी सलौनी सांवरे की भई,
चेरी वनि गई तिनकौं तौ दई परिहरि।
ह्यां तें जाय मथुरा की नारी दे दि भाँई नहिं,
एक कंसदासी लगी बासी हियें लई भरि।
दुख दूवरी ह्वै उवरी ही बोली खूब कान्ह,
बहू करी पूरी मह बधू कूबरी कौं करि ।।१०।।

वनि ठनि वन कौ निकसत तौ गलीन,
ह्वै कैं हम दिस कर तौ चितौ न हित कामढ़ी।
वदन दिषाय मुसक्याय कछू कहि जातौं,
कैसे विसरें वे मीठी बात मुख की कढ़ी।
गोरस के लेत हेत सुष देत हो जो अब,
वह वांनि आनि नित हिय पैं रहे चढ़ी।
कहा कहैं कथा हम जथारथ सांवरे की,
रही है न तथा ऊधौ बिथा हिय मैं बढ़ी ।।११।।

भले कहौं कोऊ बुरे भाखौ हमै सोउ रह्यो,
दोऊ सों न काज काहू कही चित धारैं ना।
पति की रही न गनि अगति गही न अति,
मतिहि चढ़ी न रति जोग मधि ढारै ना।
काहू की न हम औ हमारैं कछू नाहिं, कछु
वाही सौं लगी है प्रीति रीति जाति हारैं ना।
ऊधौ जू हमरें पन दृढ़न विचारें और,
स्यामहिं सह्मरिंगी निहारेगी बिसारै ना ।।१२।।

घर वर छाडि कैं सुन्दर वर दौर दौर,
अरवर जाय मिली अैसें और यचौ को।
सरवर जाकी नहीं अैसौ करिवर तासौं,
गहि कै नचाई देखौ इहि विधि नाचौ को।
अब हमैं वही जोग रीति समझावै पर,
देषि करि करौ न्याय भोग मधि या चौकौ।
हिय मैं विचार निरधार प्रीति सार गहि,
तुमही कहौ जू ऊधौ दोऊन सांचौ कौ ।।१३।।

तुम देखिबे कौं घर काज लाज दूर करि,
बावरी भई हो पिय बंसी गुन गाय गाय ।
गुरजन जानैं न पिछानैं पुरजन कोऊ,
दुरजन डर हिय आनै नहिं चाय चाय ।
तपर वियोग दीनौ सोऊ लीनौं सिर धरि,
कानौं सुकबूल करि रही ध्यान लाय लाय ।
निजमुख चंद कीच कोरिन कौं जोग देत क्यौं हो,
कान्ह हम संग ऐसी करौ हाय हाय ।।१४।।

ऊधौ जु हमारें तन मन मैं न ठौर कहूं,
पूछो मति हम दुख कहा लगि झावैंगी ।
नैन बैन मैन चैन सूझै न अगूझै चित,
तुम्हरी ये बांकी रीति कैसे करि दीखैंगी ।
सांवरौ ही आय दैहै दरस दिखाय नहीं,
इहि हाल हीसौं कैऊ काल लगि भाखैंगी ।
ऐंठौ सौ चलत हो अमैठौ सौ हलत फैंटा,
पैठौ हिय मैं सो कहु जोग कैसै सीखैंगी ।।१५।।

जदुकुल मंडन कौ कूबरी सौं ब्याह भयौ,
प्रथम ही तासौं जस जगत में छायौ है ।
इत वसुदेव पूत उत कंस लौंडी बनी,
वैस रूप गुन धन सम ही सुहायौ है ।
भात लीयौ मामा जी व मामिन कौ रोग राग,
उद्धव बराती करि हिय हरषायौ है ।
तुम हू कों सखीं तिहिं सम याद करि हरि,
जोग पायौ दायजै सो गोकुल पठायौ है ।।१६।।

फूली हैं विरह बेलि हिय मधिसूली सी,
ह्वै भूली तन सुधि प्रतिकूली लरा गाम कौं ।
पानी पान खान की न प्रान में बवर कछू,
कुल कान रही नहिं सूझै काज धाम कौं ।
वेरी भई रूप की ठगौरी डारि गौरी गाय,
इकठौरी ह्वै कै ठौरी लगि जात नाम कौं ।

जोग भोग कीनौ कछू ठीक नहिं ऊधौ तन कौ,
तौ लाग्यौ है वियोग रोग स्याम कौ ।।१७।।

जासौं जाकी रुचि सुचि पावे तासौं मुचत न,
ज्यौं चकोर चाहि करि चिनगी चुगति है ।
चातक सुधा न पीवे स्वाति बूंद सौं जावैं,
मान जल हीन ह्वै के लहत कुगति है ।
दीपक समीप आय पतंग सुजरि जाय,
हाय नहीं करे वहो मानत सुगति है ।
भुगति है ऊधौ हरि विरह दुसह अै पै,
हम सौं बनै न जोग कठिन सुगति है ।।१८।।

मुकि गई देहमन गति सब झकि गई,
फुकि गई वासना रही उपासना हियें ।
कुकि गई रसना अनेकन की आय आय,
धुकि गई गाय गाय कुवचन कौं लियें ।
चुकि गई लाज घर काज के समाज सब,
धुकि गई साँवरे के ध्यान में लगी जियैं ।
लुकि गई कहा ऊधौ जोग रीति और कहु,
हम पुर कान्ह राजी ह्वे है जाही के हिये ।।१९।।

वह दुख सुख मानि हारैं ही समै कौ पाय,
तब आय पलक परे हा दृग जोर तें ।
सो तौ दुख ज्यौं त्यौं कै सहै ही तापे,
वन जाते दितौ जो विरहा नित प्रति हमैं भोर तैं ।
अब मथुरा मै रहि गयौ, आयबे कौ कहि,
तापर पठायौ जोग ज्ञान की मरोर तैं ।
कौन कौन बातन कौ करिये परेखौ,
ऊधौ हम सौं तौ कान्ह सूधो नहिं ओर तें ।।२०।।

देवकी सी माता वसुदेव पिता तिन्हैं छाड़ि,
जसुधा के लाड सिंधु मैं न अट्क्यौ ।
गाय ग्वार सखा मैं रह्यो न गह्यो न,
काहू दृढ़ नेह हमरौ हू ताहि तोरिकरि सट्क्यौ ।

कतू रही है सुषमा न कूबरी सुजान,
रहैगो न थिर घर घर फिरे भटक्यौ ।
रारी साँच जान लेरी फेरी सी फिरेहै देत,
साँवरौ अँहेरी सौं गिनें न कोउ घटक्यौं ।।२१।।

हाव भाव सौं जौ रीझे तौ पे कीने चाव जुत,
प्रीति दाव रीझै तौ तिहारे काज छाड़े सब ।
चतुराई सौ जौ रीझे ऊधौ सुनि सावरे,
जु तोपै करी हम मति माफक दिखाई जब ।
चँदन सों रीझे तौ सुगंध मधि घसि लेप्यौ,
दासी सौं रीझे तौ तौपे हम न भई ही कब ।
ए कहै जु कूबरी सौं रीझे न ये रिझवार,
तौ पे कूबरी सौतन कीयौ जात नहिं अब ।।२२।।

दिन दिन मधि छिन छिन में नई नई,
सुलीला करि करि लियौ हम मन मुसि मुसि ।
घर घर गाय गाय दुहुन कौ आय आय,
मिलै धाय रीझि रीझि कभू रहे रुसि रुसि ।
भोर के समय दौरि दौरि ग्वार संग संग,
मृदु पद देखि देखि जिय जातौ मुसि मुसि ।
ऊधौ यह न्याव कहौ कौन कौन सौं करावे हम,
अब कान्ह मारै कूबरी के घर घुसि घुसि ।।२३।।

कहा लिखे नेही सिर मौर तुमकौं सु हम,
न्हात जिन खसौ वार नीकैं प्रिय रहौगे ।
ब्रज की सुरति औ हमारी प्रीति उद्धव,
कहै सो जानि सांवरे दया की दृष्टि चहौगे ।
रावरे ही सुख मैं सुखी है निहचैं यौं जानि,
इतै कोउ आवे तौ संदेसौ तासौं कहौगे ।
जोग की जो लिखी आप जा दिन ते गये, तब,
ही तैं लयौ धरि सुतौ मुख ज्ञहौगे ।।२४।।

ऐसे लिखि उद्धव के पायन परी है सब,
हरी है सुमति स्याम बौरी जिन्हैं करी है ।

देखि देखि कान्ह सखा तिनहीं की पद रज लै लै,
सिर धारैं लगी नैन आँसू झरी है।
गरौ आस भर्‌यो बिसर्‌यो सु ब्रह्म ज्ञान,
वनितान की समान जान प्रीतिहिय भरी है।
अंजुलि कौं जोरि के निहोरि कें कहत,
चल्यौ तुमहिं सांचौ लाग जिय धरी है ।।२५।।

ऊधौ कौ चलत देखि बोलो ब्रजबाल सब,
यह हाल सौं कहौगे कहू गोय कैं।
जिहि विधि उनके हिये में दया आय जाय,
सुधि वेगि लैंहि गये नेह वेलि बोय कैं
हम तौ तिहारो अब आसरौ निहार्‌यो,
भारौ कही तुम आगें कथा हिय लाज खोय कैं।
अैसैं कै बिकल भई गोपी सबै हियौ भरि,
प्राननाथ यौं पुकारि उठीं रोय कैं ।।२६।।

वार वार ऊधौ नैन जलधार पौंछि पौंछि,
कही धीर धरौ इन्हैं नीके समझाउगौ।
आयौ उनकौ मैं सखा ह्वै कै ज्ञान देन तुम्हैं,
अब तुम्हरौ ह्वै दास हित सौं कहांऊगौ।
तुम आगै ज्ञान कथा कही, सुन्नथा है सब,
यह नेह रीति स्याम आगैं नित गाउंगौ।
जाऊंगौ इहां सौं उन्हैं पाउंगौ इकंत तब,
जोग रीति उनहूं के हिय सौं बढ़ाउंगौ ।।२७।।

हेरि हेरि ऊधौ दिस फेरि फेरि कहै गोपी,
घेर घेर रहै बेर बेर मिलिहौ कहाँ।
भले तुम आये फले फल मन भाये ढले,
अश्रुभ सिहाये नैन अब जाइय वहाँ।
स्याम का प्रसन्न मन राषि भाषि ह्याँ की,
कथा तुम नीकैं रहोगे खबर भेजियैं यहाँ।
हम तौ तिहारी ह्वै विचारी ह्वै जियै अरु,
तुम दया करि याद राखै रहियौ तहाँ ।।२८।।

बंद पद गोपिन के चल्यौ ब्रजचंद ढिग,
देखि नेह फंद छंद रीति सब भूलकैं ।
मधुपुरी जाय भ्रास पूरी जदुराय देखि,
पाती दै गहाय बोल्यो प्रेम भ्रनुकूल है ।
नंद जसुधा के नेह सिंधु की न थाह लही,
रही गोपी तिन डार्‌यो ज्ञान प्रीति कूल कैं ।
परी हैं तिहारी मारी ते विचारी नारी सारी,
डारी सुधि भूल धारी प्रीति जिय भूल कै ।।२९।।

हिरदय तिहारे निरदैता देखी स्याम सौंच,
भ्रौसिन कै सिर जोग ज्ञान फिर देत हौ ।
ग्रह की न सुधि रही देह मैं न बुधि लही,
वही सी वकत पर न हमधि चेत हौ ।
भ्रसन वसन भ्रन तन की खवर नहिं,
उनकौ तौ प्रेम सब वातन समेत हौ ।
यो सौं ज्यौं वनी त्यौं घनी बात ब्रह्म ज्ञान सही कही,
गनी एक हू न दृढ़ टेक ही में देत हौ ।।३०।।

सुनि ऊधौ गोपिन कौं नीकैं पहिचानौ जानौ,
मेरो मन उनही सौं मानौ उरझानौ हौ ।
तू हो सखा सयानौ हौं कहन भ्रकुलानौ,
देख्यौ ज्ञान लपटानो राष्यौ नेह हिय छानौ हौ ।
भ्रब वहाँ जाय प्रेम मैं भिजानौ लाग सानौ,
तोहि भेजिबे कौ कियौ जोग कौ वहानौ है ।
ब्रज है विकानौं हौं तौ ताही मैं समानौ भ्रौर,
जिय नहिं भ्रानौं इहां रहौ सरमानौ हौ ।।३१।।

उद्धव विचार विचार ब्रजभूमि जानी,
सार सार गुल्म लता हौ नौ घर भ्रास हरि सौं जनाई है ।
गोपिन सौं मान हार हिय मधि राखि प्यार,
भ्राप ही सौं करी निराकार की मनाई है ।
ब्रज वनितान कौ प्रेम कौन वार पार,
बुधि भ्रनुसार कछु मैंहू नै नै गई नाई है ।

मति सरसाई मन भाई दया हिय आई,
गुरुन दिखाई रीति यातैं यौं बनाई है ।।३२।।

द्विजदेव नारायण शर्मा 'विधु'

छांड़ि दियो व्रज को बसिवो व्रजनारिन की सुधि हू को बिसारो
जा मथुरा मँह बास कियो वरी कूबरि कूबर को है विदारो ।।
काह कहूँ मति कैसी दई दई जो लखि कै विधु कान्ह बिचारो ।
दोख नहीं कछु को है पर पाजिनि वाको विवेक बिगारो ।।१।।

व्रजबाल इतै विलपैं कलपैं उत कूबरि को टरखावत है ।।
इति फूलि पलास महा दुख देत उतै सुख को सरसावत है ।
इत मन्मथ बानन बेधत है उत केलि को धूम मचावत है ।।
विधु स्याम उतै मथुरा में बसैं इते देखिवे को तरसाबत है ।।२।।

मोहन जाय बसे मथुरा महँ कूबरि के संग प्रीति अराधे ।।
बैरिन के कहे भेज्यौ संदेस सबै व्रज बालन योग को साधे ।
लेप तज़ै अँगराग को भस्म लै लेपै सबै विधु सेली लै काँधे ।।
सी सुनि आँसु चल्यो वरुनीन ते कैसे रहै जल जाल के बाँधे ।।३।।

देव

कुबिजा कितेब दुबिजा के रहे आपु देव ।।
अंस अवतारी अब तारी जिन गनिका ।
आरति न राखत निवारत नरक ही ते,
तारत तिलोक चरनोदक की कनिका ।।
उनके गुनानुवाद तुमसों सुने हैं ऊधौ,
गोपिन को सूधो मत प्रेम की जवनिका ।
कुजत मैं टेरहिं जु स्याम को सुमिरि नीकें,
हाथ लै न फेरिहैं सुमिरनी के मनका ।।१।।

अंजन सो रञ्जित निरञ्जिनहि जानै कहा,
फीकी लगै फूल रस चाखे हौ जु वौड़ी को ।
तूरज बजाय सूर सूरज को बेधि जाय,
ताहि कहा सबद सुनाबत हौ डौड़ी को ।।
ऊधौ पूरे पारखी हौ परखे बनाम 'देव'
बारही पै वोरौ पैर वैया धार औड़ी को ।
मनु मनिका दै हरि हीरा गाठि बाँध्यौ हम,
तिन्हैं तुम बनिज बतावत हौ कौड़ी कौ ।।२।।

जौ न जी में प्रेम, तब कीजै ब्रत नेम जब,
कंज मुख भूलै नव संजम विसेखिए ।
आस नहीं पी की तब आस नहीं बाँधियत,
साँसन कै साँसन को मूँदि पति पेखिये ।।
नख ते सिखा लों सब स्याम मई बाम भई,
बाहिर हू भीतर न दूजो देव देखिए ।
जोग करि मिलै जो वियोग होय वालम जु,
ह्याँ न हरि होय तन ध्यान धरि देखिए ।।३।।

जोगहि सिखैहै ऊधो जो गहि कै हाथ हम,
सो न मन हाथ, ब्रजनाथ साथ वै दै चुकी ।
'देव' पंच सायक नचाय खोलि पंचन मैं,
पंचहू सरनि पंचामृत सौ अचै चुकीं ।।
कुल वधू ह्वै कै हाय कुलटा कहाई अरु,
गोकुल मैं कुल मैं कलंक सिर लै चुकी ।
चित होत हित न हमारे नित और सो तौ,
वाही चित चोरहि चितौत चित दै चुकी ।।४।।

को हमको तुमसे तपसा, बिन जोग सिखावन आइ है ऊधौ ।
पै अब एही कहो उनको, पिछलौ सुध आवत है कबहूँ धौ ।
एक भली भई भूप भये, जिन्हैं भूलि गये दधि माखन दूधो ।
कूबरी सी अति सूधी वधू वरु पायो भलो घन स्याम सो सूधो ।।५।।

रावरो रूप रह्यो भरि बैनन, बैननि के रस सों स्रुति सानो ।
गात मैं देखत गात तुम्हारोई वात तुम्हारिये बात वखानो ।।
ऊधो कहा हरिसो कहियो, तुम हौ न इहाँ यह हौं नहि मानो ।
या तन से विछुरे तो कहा,मन ते अनते जु बसौ तब जानौ ।।६।।

मोहन माई भए मथुरापति देव महामद सो मन मात्यौ ।
कोर परे अब कूबरी के हरि याते कियो हमसों हित हात्यौ ।।
गोकुल गाँव के लोग गरीब हैं वासु बराबरी ही को यहाँ त्यौ ।
बैठि रह्यों सपनेंहू सुन्यो कहूँ राजन सो परजान सो नात्यौ ।।७।।

पूतना के पयपान करौं तन पूत नाते बिसवास बगारत ।
देव कहा कहौं मातु पिता हित बंधुन सो हित नीके निबाहत ।।
कारे हौ कान्ह निकारे हौ केलि रहे गुन लोलि पै औगुन चाहत ।
पन्नग की मनि कीन्हें तुम्हें तुम पन्नग की किचुली कियो चाहत ।।८।।

बाहिर ही बैठो मति पैठो ब्रजकुंज ऊधौ,
बातनि विरूधौ जनि सूधौ ब्रज लोग पर ।
देव कौन देखै देखे गोपी के दुरूह दसा,
विरह विलोकी रोकी प्रेम के प्रयोग पर ।
कैसे कहि आवत कुटिल हठ बात सठ,
बात न सुहात कुबिजा के सुख भोग पर ।
संजोग बिहारे ते अजोग ही निहारे जोग,
कोटिक तिहारे हम वारे या वियोग पर ।।९।।

नंददास

भँवरगीत

ऊधौ कौ उपदेश सुनौ ब्रजनागरी ।
रूप, सील लावन्य सबै गुन आगरी ।।
प्रेम-धुजा, रस-रूपिनी, उपजावनि सुख पुंज ।
सुन्दर स्याम-विलासिनी, नव वृन्दावन कुंज ।।
सुनौ ब्रजनागरी ।।१।।

कहन स्याम-संदेस एक मैं तुम पै आयौ ।
कहन समै संकेत कहूँ औसर नहिं पायौ ।।
सोचत ही मन मैं रह्यौ कब पाऊँ एक ठाउँ ।
कहि संदेस नंदलाल को, बहुरि मधुपुरी जाऊँ ।।
सुनौ ब्रजनागरी ।।२।।

सुनत स्याम कौ नाम बाम गृह की सुधि-भूली ।
भरि आनँद रस हृदय प्रेम बेली द्रुम फूली ।।
पुलकि रोम सब अंग भए भरि आए जल नैन ।
कठ घुटे गद-गद गिरा बोल्यो जात न बैन ।।
विवस्था प्रेम की ।।३।।

अर्घासन बैठाय बहुरि परिकरिमा दीनी ।
स्याम-सखा निज जानि बहुत हित सेवा कीनी ।।
बूझत सुधि नंदलाल की बिहँसत मुख ब्रजबाल ।
नीके हैं बलवीर जू बोलति बचन रसाल ।।
सखा सुनि स्याम के ।।४।।

कुसल स्याम अरु राम कुसल संगी सब उनके ।
जदुकुल सिगरे कुसल परम आनंद सबनि के ।।

बूझन ब्रज कुसलात को हौं आयौ तुम तीर।
मिलिहैं थोरे दिवस में जनि जिय होउ अधीर ।।
सुनौ ब्रजनागरी ।।५।।

सुनि मोहन-संदेस रूप सुमिरन ह्वै आयौ।
पुलकित आनन कमल अंग आवेस जनायौ ।।
बिह्वल ह्वै धरनी परी ब्रज-बनिता मुरझाय।
दै जल छींट प्रबोध हीं ऊधौ बैन सुनाय ।।
सुनौ ब्रजनागरी ।।६।।

वे तुमतें नहिं दूरि ग्यान की आँखिन देखौ।
अखिल बिस्व भरिपूरि रूप सब उनहिं बिसेखौ ।।
लोह दारू पाषान में जल थल मही अकास।
सचर अचर वरतन सबै जोति ब्रह्म परकास ।।
सुनौ ब्रजनागरी ।।७।।

कौन ब्रह्म को जोति ग्यान कासो कहै ऊधौ ?
हमरे सुन्दर स्याम प्रेम को मारग सूधौ ।।
नैन, बैन स्तुति नासिका मोहन रूप दिखाइ।
सुधि, बुधि सब मुरली हरी प्रेम ठगौरी लाइ
सखा सुनि स्याम के ।।८।।

सर्गुन सबै उपाधि रूप निर्गुन लै उनकौ।
निराकार निर्लेप लगत नहि तीनौ गुनकौ ।।
हाथ पाय नहिं नासिका नैन बैन नहिं कान।
अच्युत ज्योति प्रकासिका सकल बिस्व के प्रान ।।
सुनौ ब्रजनागरी ।।६।।

जो मुख नाहिन हुतो कहौ किन माखन खायौ ?
पायन बिन गोसंग कहौ को वन बन धायौ ?
आँखिन में अंजन दियौ गोवरधन लियौ हाथ।
नंद जसोदा पूत है कुँवर कान्ह ब्रजनाथ ।।
सखा सुनि स्याम के ।।१०।।

जाहि कहौ तुम कान्ह ताहि कोउ पितु न माता।
अखिल अंड ब्रह्मांड विस्व उनही तैं जाता ।।
लीला को अवतार लै धरि आए तन स्याम।

जोग जुगुत ही पाइये पारब्रह्म-पद धाम ॥
सुनौ ब्रजनागरी ॥११॥

ताहि बतावहु जोग जोग ऊधो जेहि पावौ ।
प्रेम सहित हम पास नंदनंदन गुन गावौ ॥
नैन बैन मन प्रान में मोहन गुन भरिपूरि ।
प्रेम पियूष छाँड़िकै कौन समेटै धूरि ॥
सखा सुनि स्याम के ॥१२॥

धूरि बुरी जौ होइ ईस क्यों सीस चढ़ावै ।
धूरि छेत्र में आइ कर्म करि हरिपद पावैं ॥
धूरिहि तें यह तन भयौ धूरिहिं सों ब्रह्मड ।
लोक चतुर्दस धूरि के सप्त दीप नव खंड ॥
सुनौ ब्रजनागरी ॥१३॥

कर्म-धूरि की बात कर्म-अधिकारी जानै ।
कर्म-धूरि को आनि प्रेम-अमृत मैं सानैं ॥
तबही लौं सब कर्म है जब लौं हरि उर नाहिं ।
कर्म बंध सब बिस्व के जीव बिमुख ह्वै जाहिं ॥
सखा सुनि स्याम के ॥१४॥

कर्महिं निंदौ कहा कर्म तें सदगति होई ।
कर्म रूप तें बली नाहिं त्रिभुअन मैं कोई ॥
कर्महि तें उतपत्ति है कर्महि तें सब नास ।
कर्म किए तें मुक्ति होइ पार ब्रह्म-पुर बास ॥
सुनौ ब्रजनागरी ॥१५॥

कर्म, पाप अरु पुन्यु लोह सोने की बेरी ।
पायन बंधन दोउ कोउ मानौ बहुतेरी ॥
ऊँच कर्म तें स्वर्ग है, नीच कर्म तें भोग ।
प्रेम बिना सब पचि मुये विषय बासना रोग ॥
सखा सुनि स्याम के ॥१६॥

कर्म बुरो जो हौहिं जोग काहे कोउ धारैं ।
पद्मासन सब द्वार रोकि इंद्रिन को मारैं ॥

ब्रह्म अगिन जरि सुद्ध ह्वै सिद्धि समाधि लगाइ ।
लीन होई सायुज्य में जोतै जोति समाइ ।।
सुनौ ब्रजनागरी ।।१७।।

जोगी जोतिहिं भजै भक्त निज रूपहि जानै ।
प्रेम पियूषै प्रगटि स्याम सुन्दर उर आनै ।।
निर्गुन गुन जो पाइयै लोग कहैं यह नाहिं ।
घर आए नाग न पूजैं बाँबी पूजन जाहिं ।।
सखा सुनि स्याम के ।।१८।।

जो हरि के गुन होइ बेद क्यों नेति बखानै ।
निर्गुन सगुन आतमा उपनिषद् जु गावै ।।
वेद पुरानानि खोजि कै नहिं पायो गुन एक ।
गुनहू के गुन होंहि जो गुन कहि अकास किहि टेक ।
सुनौ ब्रजनागरी ।।१९।।

जो उनके गुन नाहिं और गुन भये कहाँ तें ।
बीज बिना तरु जमें मोहि तुम कहौ कहाँ तें ।।
बा गुन की परछाँह री माया दरपन बीच ।
गन तें गुन न्यारे भये अमल वारि मिलि कीच ।।
सखा सुनि स्याम के ।।२०।।

माया के गुन और, और गुन हरि के जानौ ।
बा गुन कौ इन माँझ अनि काहे को सानौ ।।
जाके गुन अरु रूप कौ जान न पायौ भेद ।
तातें निर्गुन ब्रह्म कौ बदत उपनिषद् बेद ।।
सुनौ ब्रजनागरी ।।२१।।

वेदहु हरि के रूप स्वास मुख तें जो निसरैं ।
कर्म, क्रिया, असक्ति, सबै पछिली सुधि बिसरैं ।।
कर्म, मध्य ढूँढै सबै, किनहि न पायौ देखि ।
कर्म-रहित ही पाइयै, तातें प्रेम बिसेखि ।।
सखा सुनि स्याम के ।।२२।।

प्रेमहि कोऊ वस्तु—रूप, देखत लौ लागे ।
वस्तु-दृष्टि बिन कहौ कहा प्रेमी अनुरागे ।।

तरनि चन्द्र के रूप को, नहि पायौ गुन जान ।
तौ उनकौ कहा जानियै, गुना तीत भगवान ।।
सुनौ ब्रजनागरी ।।२३।।

तरनि अकास प्रकास तेजमय में रह्यौ दुराई ।
दिव्य-दृष्टि बिनु कहौ कौन पै देख्यौ जाई ।।
जिनके वे आँखें नहीं, क्यों देखैं वह रूप ।
तिन्हैं विस्वास क्यौं ऊपजै, परै कर्म के कूप ।।
सखा सुनि स्याम के ।।२४।।

जब करियै नित-कर्म भक्ति हू तामैं आई ।
कर्म रूप तें कहौं कौन पै छूट्यौ जाई ।।
करम करम कर्महि किये कर्म नास ह्वै जाहि ।
तब आतम निहकर्म ह्वै निर्गुन ब्रह्म समाहि ।।
सुनौ ब्रजनागरी ।।२५।।

जौ हरि कें नहिं कर्म, कर्म बंधन क्यौ आवै ।
तौ निर्गुन ह्वै वस्तु मात्र परमान बनावै ।।
जो उनको परमान है, तौ प्रभुता कछु नाहिं ।
निर्गुन भए अतीत के, सगुन सकल जग माहिं ।।
सखा सुनि स्याम के ।।२६।।

जौ गुन आवैं दृष्टि मांझि, नस्वर हैं सारे ।
इन सबहिन तें वासुदेव, अच्युत हैं न्यारे ।।
इन्द्री दृष्टि बिकार तें रहित अधोछज जोति ।
सुद्ध सरूपी ग्यान की प्रापति तिनको होति ।।
सुनो ब्रजनागरी ।।२७।।

नास्तिक हैं जे लोग, कहा जानैं हित रूपै ।
प्रगट भानु कि छाँड़ि गहैं परछाई धूपै ।।
हमरे बिन वह रूप ही और न कछु सुहाइ ।
ज्यौं करतल आमलक के, कोटिक ब्रह्म दिखाइ ।।
सखा सुनि स्याम के ।।२८।।

ऐसे में नंदलाल रूप, नेननि के आगे ।
आइ गये छवि छाइ बने बीरे अरु बागे ।।
ऊधौ सौं मुख मोरि कै कहै तिन हिं सौ बात ।
प्रेम-अमृत मुख तें स्रवत, अंबुज नेन चुचात ।।
तरक रसरीति की ।।२९।।

अहो ! नाथ, रमानाथ, और जदुनाथ गुसाईं ।
नंद-नंदन बिडराति फिरती, तुम बिन बन गाईं ।।
काहे न फेरि कृपाल ह्वै, गौ-ग्वाल सुख लेहु ।
दुख-जल-निधि हम बूड़ही कर-अवलंबन देहु ।।
निठुर ह्वै रहा रहे ? ।।३०।।

कोऊ कहैं अहो दरस देत पुनि लेत दुराई ।
यह छलविद्या कहौ कौन पिय तुमहि सिखाई ।।
हम सब रस आधीन हैं, तातें बोलत दीन ।
जल बिनु कौह कैसे जियैं, पराधीन जे मीन ।।
बिचारौ रावरे ।।३१।।

कोउ कहै अहो दरस देहु, पुनि बेनु सुनावौ ।
दुरि-दुरि बन की ओट कहा, हिय लौन लगावौ ।।
हमकों तुम पिय एक हौ, तुमकों हमसी कोरि ।
बहुत पाइ कै रावरे प्रीति न डारो तोरि ।।
एक ही बार जो ।।३२।।

कोउ कहै अहो स्याम कहा इतराय गए हौ ।
मथुरा कौ अधिकार पाय महाराज भए हौ ।।
ऐसी कछु प्रभुता अहो, जानत कोऊ नाहिं ।
अबला बुधि सुनि डरि गई बड़े बली जग माहिं ।।
पराक्रम जानि कै ।।३३।।

कोउ कहै अहो स्याम चहत मारन जौ ऐसैं ।
गिरि गोबरधन धारि करी रच्छा तुम कैसैं ।।
ब्याल, अनल, विष ज्वाल हैं राखि लई सब ठौर ।
बिरह अनल अब दहत हौ, हँसि हँसि नन्दकिसोर ।।
चोरि चित लै गये ।।३४।।

कोउ कहै ये निठुर इन्हैं पातक नाहि ब्यापै।
पाप पुन्य के करनहार ये ही हैं आपै।।
इनके निरदै रूप मैं नाहिन कोऊ चित्र।
पय प्यावत प्रानन हरे पूतना बाल चरित्र।।
मित्र ये कौन के ।।३५।।

कोउ कहै री आज नाहिं आगे चलि आई।
रामचन्द्र के रूप धर्म मैं ही निठुराई।।
जग्य करावन जात हे विस्वामित्र समीप।
मग में मारी ताड़का रघुवंसी-कुलदीप।।
बाल ही रीति यह ।।३६।।

कोउ कहे ये परम धर्म इस्त्रीजित पूरे।
लच्छ लच्छ संधान धरे आयुध के सूरे।।
सीतजू के कहे तैं सूपनखा पै कोपि।
छेदे अंग बिरूप करि लोगन लज्जा लोपि।।
कहा ताकी कथा ।।३७।।

कोउ कहै री सुनौ और इनके गुन आली।
बलि राजा पै गए भूमि माँगन बनमाली।।
माँगत बामन रूप धरि परबत भयौ अकाइ।
सन्त धर्म सब छाँड़ि कै धर्‍यौ पीठ पै पाय।।
लोभ की नाउ ये ।।३८।।

कोउ कहै इन परसुराम ह्वै माता मारी।
फरसा कंधा धारि भूमि छत्रिन संघारी।।
श्रोनित कुंड भराइ कै पोषे अपने पित्र।
तिनकै निरदय रूप में नाहिन कोऊ चित्र।।
बिलग कहा मानियै ।।३९।।

कोउ कहै अहो कहा हिरनकस्यप तें विगर्‍यौ।
परम ढीठ प्रहलाद पिता के सनमुख झगर्‍यौ।
सुत अपने कों देत हो सिच्छा दंड बँधाय।
इन बपु धरि नरसिंह को नखन बिदार्‍यौ जाय।।
बिना अपराध ही ।।४०।।

कोउ कहै राखि कहा दोष सिसुपाल नरेसै ।
ब्याह करन को गयौ नृपति भीषम के देसै ।।
दलवल जोरि बरात कों ढाढौ हो छयि बाढ़ि ।
इन छल कर दुलही हरी धुधित ग्रास मुख काढ़ि ।।
आपुन स्वारथी ।।४१।।

इहि बिधि होई आवेस परम प्रेम अनुरागी ।
और रूप पिय चरित तहाँ सब देखन लागी ।।
रोम रोम रहे व्यापी के जिनके मोहन आय ।
तिनके भूत भविष्य कों जानत कौन दुराय ।।
रंगीली प्रेम की ।।४२।।

देखत इनकौ प्रेम नेम ऊधौ को भाज्यौ ।
तिमिर भाव आवेस बहुत अपने जिय लाज्यौ ।।
मन मैं कहि रज पाँय कौ लै माथै निज धारि ।
परम कृतारथ ह्वै रहौं त्रिभुवन-आनँद बारि ।।
बंदना जोग ए ।।४३।।

कबहुँ कहै गुनगाय स्याम के इन्हैं रिझाऊँ ।
प्रेम-भक्ति तौ भले स्याम सुन्दर की पाऊँ ।।
जिहि किहि बिधि ये रीझही हो हौं करौं उपाय ।
जानें मो मन सुद्ध होइ दुबिधा ग्यान मिठाय ।।
पाय रस प्रेम कौ ।।४४।।

ताही छिन एक भँवर कहूँ तें उड़ि तहँ आयौ ।
ब्रज-बनिता के पुंज माँझ गुंजत छबि छायौ ।।
बैठ्यौ चाहै पाय पर अरुन कमल दल जाने ।
सो मन ऊधौ को मनौ प्रथमहि प्रगटयौ आनि ।।
मधुप को भेष धरि ।।४५।।

ताहि भवँर सो कहत सबै प्रति उत्तर बातें ।
तर्क बितर्कन जुक्त प्रेम रस रूपी घातें ।।
जनि परसौ मम पाय हो गयौ अनंद-रस-चोर ।
तुमहीं सों कपटी हुतो नागर नंदकिसोर ।।
इहाँ तें दूरि हो ।।४६।।

कोउ कहै रे मधुप तुमें लाजौ नहिं आवत ।
स्वामी तुम्हारौ स्याम कूबरी दास कहावत ॥
इहाँ ऊँची पदवी हुती गोपीनाथ कहाय ।
अब जदुकुल पावन भयौ दासी जूठन खाय ॥
मरत कहा बोल कौं ॥४७॥

कोउ कहै अहो मधुप कौन कहे तुमें मधुकारी ।
लिये फिरत बिष जोग गाँठि प्रेमी बधकारी ॥
रुधिर पान कियौ बहुत के अधर अरुन रँग रात ।
अब ब्रज में आये कहा करन कौन कों घात ॥
जात किन पातकी ॥४८॥

कोउ कहै रे मधुप भेष उनको क्यों धार्‌यौ ।
श्याम पीत, गुंजार बेनु, किंकिनि झनकार्‌यौ ॥
बापुर गोरस चोरि कैं फिरि आयौ या देश ।
इनकौ जिनि मानौ कोऊ कपटी इनकौ भेस ॥
जोरि जिनि जाय कछु ॥ ४९ ॥

कोउ कहै रे मधुप कहा मोहन गुन गावैं ।
हृदय कपट सों परम प्रेम नाहिंन छवि पावै ॥
जानति हौं हरि भाँतिन कै सरबसु लियौ चुराय ।
ऐसी बहु ब्रज बासिनी को जु तुमें पतियाय ॥
लहे हम जानि कै ॥ ५० ॥

कोउ कहै रे मधुप कहा तू रस की जाने ।
बहुत कुसुम पै बैठि सबन आपुन रस माने ॥
आपुन सों हमको कियौ चाहतु है मतिमंद ।
दुबिधा रस उपजाय कै दूषित प्रेम अनंद ॥
कपट के छंद सों ॥ ५१ ॥

कोउ कहै रे मधुप प्रेमपद को सुख देख्यो ।
अबलौ याहि विदेस मांहि कोउ नाहि बिसेख्यो ॥
द्वै सिंघ आनन पर जमे कारो पीरो गात ।
खल अमृत सम मानही अमृत देखि डरात ॥
बादि यह रस कथा ॥ ५२ ॥

कोउ कहै अहो मधुप बहुत निरगुन इन जान्यो ।
तरक बितरकन जुक्ति बहुत उनही में मान्यो ।।
ये इतनी नहिं जानि ही बस्तु बिना गुन नाहिं ।
निरगुन भये अतीत के सगुन सकल जग माँहि ।।
बूझ जो ग्यान हो ।। ५३ ।।

कोउ कहै रे मधुप होहिं तुम से जो संगो ।
क्यों न होइ तन स्याम सकल बातन चतुरंगो ।।
गोकुल में जोरी कोऊ पावत नाहिं मुरारि ।
मनों त्रिभंगी आपु हैं करी त्रिभंगी नारि ।।
रूप गुन सील की ।। ५४ ।।

कोउ कहै रे मधुप स्याम जोगी तुम चेला ।
कुब्जा तीरथ जाइ कियौ इन्द्रिन कौ मेला ।।
मधुबन सुधिहिं बिसारि कै आये गोकुल माहिं ।
इत सब प्रेमी बसत हैं तुमरौ गाँहक नाहिं ।।
पधारौ रावरे ।। ५५ ।।

कोउ कहै री सखी साधु मधुवन के ऐसे ।
और वहाँ के सिद्ध लोग ह्वै हैं धौ कैसे ।।
औगुन ही गहि लेत हैं अरु गुन डारैं मेटि ।
मोहन निर्गुन क्यौं न हों उन साधुन कौं भेंटि ।।
गाँठि कौ खोइ कै ।। ५६ ।।

कोउ कहै यह मधुप ग्यान उलटौ लै आयौ ।
मुक्ति परे जे रसिक तिन्हैं फिरि फिरि कर्म बतायौ ।।
बेद उपनिषद सार जौ मोहन गुन गहि लेत ।
तिनको आतम सुद्ध करि फिरि फिरि संथा देत ।
जोग चटसार मैं ।। ५३ ।।

कोउ कहै सखि बिस्व माहिं जेतिक हैं कारे ।
कपट कोटि के परम कुटिल मानुष बिषवारे ।।
एक स्याम तन परसि कै जरत आजु लौं अंग ।
ता पाछे फिरि मधुप यह लायौ जोग भुअंग ।।
कहा इनको दया ।। ५८ ।।

कोउ कहै रे मधुप कहै अनुरागी तुमकौं ।
कौन गुन धौं जानि परम अचरज है हमकौं ।।
करौ तन अति पातकी मुख पियरौ जग निंद ।
गुन अवगुन सब आपुनें आपुहि जानि अनिंद ।।
देखि लै आरसी ।। ५९ ।।

इहि बिधि सुमिर गोविंद कहत ऊधौ प्रति गोपी ।
भृंग संग्या करि कहत सकल कुल लज्या लोपी ।।
ता पाछें एक बारही रोई" सकल ब्रजनारि ।
हा ! करुनामय नाथ ! केसौ ! कृष्ण मुरारि ।
फाटि हियरौ बल्यौ ।। ६० ।।

उमग्यो ज्यों तहँ सलिल सिंधु लै तन की धारन ।
भींजत अंबुज नीर कँचुकी भूषन हारन ।।
ताही प्रेम प्रवाह में ऊधौ चले बहाय ।
भले ग्यान की मेड़ हौं ब्रज मैं प्रगट्यौ आय ।।
कुल के तूटन भये ।।६१।।

प्रेम बिवस्था देखि सुद्धि यों भक्ति प्रकासी ।
दुबिधा ग्यान गलानि मंदता सगरी नासी ।।
कहत भयौ निस्चै यहै परि रस की निज पात्र ।
हौं तो कृत कृत ह्वै गयौ इनके दरसन मात्र ।।
मेटि मल ग्यान की ।।६२।।

पुनि पुनि कह हरि कहत बात एकांत पठायौ ।
मैं इनको कछु मरम जानि एकौ नहि पायौ ।।
हौं कह निज मरजाद की ग्यान रू कर्म निरुपि ।
ये सब प्रेमासक्त होइ रहीं लाज कुल लोपि ।।
धन्य ये गोपिका ।।६३।।

जे ऐसी मरजाद मेटि मोहन को ध्यावैं ।
काहे न परमानंद प्रेम पदवी की पावैं ।।
ग्यान जौग सब कर्म ते परे प्रेम ही साँच ।
हौं या पटतर देत हौं हीरा आगे काँच ।।
बिषमता बुद्धि की ।।६४।।

धन्य धन्य ये लोग भजत हरि कौं जे ऐसे।
और कोऊ बिनु रसहि प्रेम पावत है कैसे॥
मेरे वा लघु ग्यान कौ उर में मद होइ ब्याधि।
अब जान्यौं ब्रज-प्रेम की लहत न आधो आध॥
बृथा स्रम करि मर्यौ॥६५॥

पुनि कहि परसत पाँय प्रथम हौं इनहि निवारचौ।
भृंग संग्या करि कहत निंद सबहिन तें डार्यौ॥
अब ह्वै रहौं ब्रज-भूमि को मारग में की धूरि।
बिचरत पग मो पर धरै सब सुख जीवन मूरि॥
मुनिनहू दुर्लभ जो॥६६॥

कै ह्वै रहौं द्रुम गुल्म लता बेली बनमाहीं।
आवत जात सुभाय परै मोपै परछाहीं॥
सोऊ मेरे बस नहीं जो कछु करौं उपाय।
मोहन होंहि प्रसन्न जो यहि बर माँगौं जाय॥
कृपा करि देहि जो॥६७॥

पुनि कहै सब तें साधु संग उत्तम है भाई।
पारस परसै लोह तुरत कंचन ह्वै जाई॥
गोपी प्रेम प्रसाद सों हौं ही सीख्यौ आय।
ऊधौ तों मधुकर भयौ दुबिधा जोग मिटाय॥
पाय रस प्रेम कों॥६८॥

ऐसे मग अभिलाष करत मथुरा फिरि आयौ।
गदगद पुलकिल रोम अंग आवेस जनायौ॥
गोपी-गुन गावन लग्यौ, मोहन-गुन गयौ भूलि।
जीवन कों लै का करौं पायौ जीवन मूलि॥
भक्ति को सार यह॥६९॥

ऐसे सोचत स्याम जहाँ राजत तहँ छायौ।
परिकरमा दंडौत प्रेम सौं हेत जनायौ॥
कछु निरदयता स्याम की करि क्रोधति दोउ नैन।
कछु ब्रज बनिता-प्रेम की बोलत रस भरे बैन॥
सुनौ नंद लाडिले॥७०॥

करुनामयी रसिकता है तुम्हारी सब झूठी ।
तब हीं लौ कहो लाख जबहिं लौं बाँधी मूठी ।।
मैं जान्यौं ब्रज जायकै निरदय तुम्हरौ रूप ।
जे तुमको अवलंबई तिनकौ मेलौ कूप ।।
कौन यह धर्म है ।।७१।।

पुनि पुनि कहै हे स्याम जाय वृन्दावन रहियै ।
परम प्रेम को पुंज जहाँ गोपी सँग लहियै ।।
और संग सब छाँडिकै उन लोगन सुख देहु ।
नातरु टुट्यौ जात है अबहीं नेंह सनेहु ।।
करोगे तौ कहा ? ।।७२।।

सुनत सखा के बैन नैन आए भरि दोऊ ।
बिवस प्रेम-आवेस रही नाहिन सुधि कोऊ ।।
रोम रोम प्रति गोपिका ह्वै गई साँवरे गात ।
काम तरोवर साँवरो ब्रज बनिता भई पात ।।
उलहि अँग अंग तें ।।७३।।

ह्वै सुचेत कहि भले सखा पठये सुधि लावन ।
औगुन हमरे आनि तहाँ तें लगे दिखावन ।।
उनमैं मो मैं हे सखा छिन अरि अंतर नाहिं ।
ज्यों देख्यौ यो माँहि वे हौं हूँ उनही माँहि ।।
तरँगिनि वारि ज्यौं ।।७४।।

गोपी आय दिखाइ एक करिकै बनवारी ।
ऊधौ के भरे नैन डारि व्यामोहक जारी ।।
अपनौ रूप दिखाइ कै लीन्हो बहुरि दुराय ।
नंददास पावन भयौ सो यह लीला गाय ।।
प्रेम रस पुंजनी ।।७५।।

नंदराम

जालिम जुलुमदार जाहिर जहान जौन,
डगर डगर बिष वगर वगरिगो।
कहै नंदराम ब्रज गाँव की गरीबिनिन,
रावरे की चेरिन नवेरिन को मारिगो ।।
ऊधो जी हवाल कहि दीजौ नंदलाल जू सों,
गोकुल की गैल गैल गजब गुजारिगौ ।।
फूले ना पलास यै पलास कै बसंत बाज,
काढ़ि के करेजे डार डारन पै डारिगो ।।१।।

नागरीदास

ऊधौ निर्गुन कैसे ध्यावैं।
जो ध्यावैं तो कहा कहि ध्यावै रूप रेख बिन ध्यान न आवै।
अगम अगाध अगोचर कहियत अविनासी को पावै।
नागर स्वाद न आवै जो कोउ बहुत उबासी खावै ।।१।।

ऊधो जल माँगत जिन देउ सयानी।
घट ही में गंगा घट ही जमुना भरि भरि पीवैं पानी ।।
स्वाद न आवत तुस फाँकत ज्यौं निर्गुन बात बखानी।
नैननि प्यास मिटैं जब मिलिहैं नागर सुख सागर ।।
दधिदानी ।।२।।

ऊधौ चरचा करी नहि जाय।
तुम न जानत प्रेम पथ हम कहत जिय सकुचाय ।।

कथा अकथ सनेंह की बिन उस न आवत और।
वेद समृति उपनिषद् की रही नाहिन ठौर।
मौन ही मैं कहनता की सुनत श्रोता नैन ।।
सो अब नागर तुम न जानत कहि न आवत बैन ।।३।।

ऊधौ तुम न जानत प्रेम।
बसो मथुरा राजधानी तहाँ व्यापक नेम ।।
कथा निर्गुन ग्यान सू को राजनीत प्रबंध।
प्रीति नैननि रूप रीझिनि कहा जानै अंध ।।
इहां ब्रज मैं वृथा कीजैं जौग नीरस पाठ ।।
छाडि नटनागर मधुर फल कौन चावै काठ ।।४।।

हा! हा! ऊधौ कहियैं बात।
सुर मुरली सौं मोही सब हम अब सुर सरबस जात ।।
रंग रस तजि रन रस भये कछु मृदु कर्कस लखि जात।
सहि न सके सर नैन हमारे क्यौं सरसार सुहात ।।
पीत झगा को लगत भार तब कवच कसत क्यौं गात।
मूंठि गुलाल लगत अबला कर अब नागर डारत पात ।।
सुनि सुनि हम यह सहि न सकत हैं होत दृगनि जलपात।
जगत कहत हमैं भई बावरी प्रीति रीति के नात ।।
मुरली मुकुट लटक व्हैं छबि की हिय तै नाहिन जात।
राज सिंघ प्रभु करयौ कहा यह धरी दया नहि गात ।।५।।

ऊधौ वृथा करत बकवादि।
हम जान्यौ तुम जानत नाही रूप सुधा सुख स्वादि ।।
सकल ब्रज मोहन भई हैं गोप अरु गोपी गाय।
तिनैं तो बिनधन श्याम सुन्दर कैसे और सुहाय ।।
हमारे तन करि खंड खंड ज्यौं देहु भूमि मैं डारि।
न्यारे न्यारे लपटि जाहिं लखि नागर नंद कुमार ।।६।।

ऊधौ मुखहिं आवत गारि।
कहा करौं नंदनंद की कुलकानि देत हौं टारि ।।
वह मनोहर माधुरी लखि मंद मृदु मुसिक्यात।
तुम्हैं फिरि सुधी रही कैसैं जोबनि निर्गुन बात ।।
जानियत हैं यह तिहारैं कहन ही के नैन।

कलप बीतैं पल परत मैं होत तोक्यों चैन ॥
नवल नागर रूपनिधि मैं व्है रह्यो जो लीन ।
मरुस्थल में डारिये क्यों कहे तैं मन मीन ॥७॥

ऊधौ बार बार सिर नावत ।
गद-गद कंठ पुलकि विह्वल मन कर पायन सो छ्वावत ॥
धन्य गोपी तुम रंगी स्याम रंग तज्यो सकल चित चैन ।
गुल्म लता ह्वै रहिये इहिठा तन रंजित ब्रज रैन ॥
प्रेम भक्ति रस सुधा पियो मैं अब चित अनत न जाय ।
तुम मेरे गुरू कह्यो छिमहु सब परतु तुम्हारे पाय ॥
यों कहि ऊधौ उठे गवन कौं फेर सकत नहि पीठ ।
नागर मन यहाँ गये राखि कै तन पहुचाये नीठ ॥८॥

नीके सुनहु स्याम सुजान ।
कौन मानै बात नीरस सकल ब्रजरस खान ॥
तुम जु हे निधि वेद वक्ता प्रगट श्री भगवान ।
उहि मनोहर मंडली मैं क्यौं न राख्यौ ग्यान ॥
कबहुँ तुमकौ लै नचाये जोरि पान निपान ।
कबहुँ छवायो मुकुट चरननि कियो उत जब मान ॥
कबहुँ बैनी गूंथि निजकर पग महावर सान ।
कबहुँ ठाढ़े जोरि कर करि दीन चित सनमान ॥
प्रेम आगे नेम की कहु चलत नाहिं निदान ।
रँगी ह्वै छूटे वहाँ क्यों नवल नागर पान ॥९॥

मोहि गोपी जन नहिं बिसरत ।
उनकी प्रीति रीति अन्तर की तनक न मुख तैं निसरत ॥
सबहि चतुर सम आनंद मूरति सब तन प्रेम अछेह ।
तिन मैं श्री राधा के मेरे एक प्रान द्वै देह ॥
जदपि विभौ ह्यां अमरावतिसों रह्यों सकल सुखछाय ।
तद्यपि सुधि आवत ब्रज की सुधि हू की सुधि जाय ॥
ऊधौ परस प्रवीन सखा प्रिय तुम बिन कासों कहियै ।
नागरी दास दुसह मनही मन बिरह पीर नित सहियै ॥१०॥

पद्माकर

पात बिन कीन्हे ऐसी भाँति गन बेलिन के,
परत न चीन्हे जे ये लरजत लुंज हैं।
कहै 'पद्माकर' बिसासी या बसंत के,
सु ऐसे उतपात गात गोपिन के भुंज हैं ।।
ऊधौ यह सूधौ सो संदेसो कहि दीजो भले,
हरि सौं, हमारे ह्यां न फूले बन कुंज हैं ।।
किंसुक गुलाब कचनार औ अनारन के,
डारन पै डोलत अंगारन के पुंज है ।।१।।

बरसत मेह नेह सरसत अंग अंग,
झरसत देह जैसे जरत जनासो है ।
कहै 'पद्माकर' कलिंदी के कदंबन पै,
मधु पनि कीन्हो आइ महत मवासो है ।
ऊधौ ऊधम जताइ दीजौ मोहन को,
ब्रज को सुबासो भयो अगिनि अवासो है ।
पातकी पपीहा जलपान को न फासो,
काहू विदित वियोगिनी के प्रानन को प्यासो है ।।२।।

आवत उसासी दुख लागै और हाँसी सुनि
दासी उर लाइ कहो को नहि दहा कियो ।
कहै 'पद्माकर' हमारे जान ऊधौ उन,
तात को न मात को न भ्रात को कहा कियो ।।
कंकालिनि कूबरी कलंकिनि कुरूप तैसी,
चेटकिनि चेरी ताके चित्त को कहा कियो ।
राधा की कहावत कहि दीजौ मोहन सों,
रसिक सिरोमनि कहाइ धौ कहा कियो ।।३।।

सोच न हमारे कछू त्याग मन मोहन के,
तन को न सोच जो पै यो ही जरि जाइ है ।
कहे 'पद्माकर' न सोच अब एहू यह,
आइ है तो आइ है न आइ है न आइ है ॥
जोग को न सोच अरु भोग को न सोच कछु,
येही बड़ी सोच तौ सबनि सुहाइ है ।
कूबरी के कूबर में बंध्यो है त्रिभंगता,
त्रिभंग को त्रिभंगी लाल कैसे सुरझाइ है ॥४॥

प्रानन के प्यारे तन ताप के हरन हरे,
नंद के दुलारे ब्रजबारे उमहत हैं ।
कहै पद्माकर उरूजे उर अन्तर यों,
अन्तर चहे हूँ जे अन्तर चहत है ॥
नैननि बसे हैं अंग अंग हुलसे हैं,
रोम रोमनि रसे हैं निकसे हैं को कहत हैं ।
ऊधौ वे गोविन्द कोउ और मथुरा में इहाँ,
मेरे तो गोविंद मोहि मोहि में रहत है ॥५॥

परमानन्ददास

ऊधौ नाहिन परत कही ।
जबते हरि मधुपुरी सिधारे बौहोतहि बिथा सही ॥
सुमरि सुरति वा स्याम की विरहा अनल दही ।
निकसत प्रान अटकि में राखे अब धौं जान रही ॥
'परमानंद स्वामी' के बिन अब नैनन नदी बही ॥१॥

पतियाँ बाचेहू न आवैं ।
देखत अंक नैन जल पूरे गद्‌गद प्रेम जनावै ॥
नंदकिसोर सुहथ अच्छर लिखि ऊधौ हाथ पठाए ।
समाचार मधुबन गोकुल में मुख ही बाँचि सुनाए ॥
ऐसी दसा देखि गोपिन की भगत मरम सब जान्यों ।
मन क्रम बचन प्रेम पद अंबुज 'परमानंद मान्यों ॥२॥

कमल नैन मधुबन पढ़ि आए ।
निर्गुन को संदेस लादि गोपिन पै लाए ।।
ऊधौ पढ़ि पढ़ि अब भए ग्यानी ।
नीति अनीति सबै पहिचानी ।।
निर्गुन ध्यान तबहि तुम कहते ।
सबै समय व्रत दृढ़ करि गहते ।।
नैनन ते सरिता कत बहती ।
हरि बिछुरन की सूल न सहती ।।३।।

सब गोकुल गोपाल उपासी ।
जो गाहक साधन के ऊधौ सो सब बसत ईसपुर कासी ।।
जद्यपि हरि हम तजी अनाथ करि अब छाड़त क्यों रति की फासी
अपनी शीतलता तऊ न छाँड़त जद्यपि बिधु है राहु गरासी ।।
किहि अपराध जोग लिखि पठयौ प्रेम भजन ते करत उदासी ।
'परमानंद' ऐसी को बिरहन माँगे मुकुति बिनु गुनरासी ।।४।।

मन हर्यो कमल दल नैना ।
चितवनि चारु चतुर चिंतामनि मृदु मधु माधौ बैना ।।
कहा करौं घर गयौ न भावे चलनि बलनि गति थाकी ।
स्याम सुन्दर हठ दासी कीनी लखि न परेगति ताकी ।।
कहु उपदेस सहचरी कहँ जाऊँ कहँ पाऊँ ।
'परमानंद' को ठाकुर जहँ ले नैन मिलाऊँ ।।५।।

क्यों ब्रज देखन नहिं आवत ।
नव विनोद नई रजधानी नौतन नारि मनावत ।।
सुनियत कथा पुरातन इनकी बहुलोक हैं गावत ।।
मधुकर न्याय सकल गुन चंचल रस लै रति बिसरावत ।।
को पतियाय स्यामघन तन को जो पर मनहिं चुरावत ।
'परमानंद' प्रीति पद अम्बुज हरि अस राग निभावत ।।६।।

माधो मुख देखन के मीत।
पाछे को काकी चलवत है मढहातर के गीत ।।
सो प्रीतम दोऊ और निवाहै सदाकरै निचीत ।
'परमानंद दास' को स्वामी सदा सराहै प्रीति ।।७।।

ऐसी मैं देखी ब्रज की बात ।
तुम बिन कान्ह कमल दल लोचन जैसे दुल्हे बिन जात बरात ॥
बेई मोर कोकिला बेई बेई पपीहा बन बोलत ।
बेई ग्वाल गोपिका बेई बेई गोधन कानन बोलत ॥
यह सब संपति नंद गोप की तुम्हरे प्रसाद रमा के साथ ।
'परमानंद' प्रभु एक बार मिलि यह पतियाँ लिखि मेरे हाथ ॥८॥

प्रागन्न

आयसु दीन्हों सखा सुजानहिं ।
स्यंदन चढ़ौ सिधारौ बृज को सिद्ध[1] रावरो आनहिं ॥
कैसे हैं जसुदा जननी जिन्ह पालि कियो परवीन ।
मोहि आछत अब होत होहिगी परपूतन आधीन ॥
गहियो पायं नंद बाबा के, कहियो यहै संदेसो ।
जो तुम कियो महाकृत हमसों, गनि न सकत गुन सेसो ॥
समाधान कीजेहु गोपिन को, दीजो निर्मल ग्यान ।
कहियो, जोग जुगुति सों प्रागनि' त्रिकुटी संजम ध्यान ॥१॥

सिख निजु गाढ़े के गहियो ।
पालगनि दोऊ भैया को मैया सों कहियो ॥
हम हैं तिहरे पै के पोषे सुरति करति रहियो ।
जोग संदेस सुनाइ तियनि को प्रीति रीति लहियो ॥
कहियो कछु न फेरि उनहूं सो कहै सो सब सहियो ।
सीतल बचन सींचियो रस सों, दही न फिरि दहियो ॥
देखि दसा उनकी मोहू को, दोष दियो चहियो ।
'प्रागनि' वृजबासिन के हिय को प्रेम सिंधु थहियो ॥२॥

चरन गहि ऊधौ सुनत सिधाए ।
रथु हाँको पथ चलत न जानो गोधन संग वृज आए ॥
परसी रेनु बेनु स्रवन सुनि सखा धेनु निहारी ।
जे अपने कर पीतांबर सों पोंछी कुंज विहारी ॥

परिकरमा कीन्ही नंदग्रामहिं रहसत पुर से पैंठे।
बूझत पौरि नंद बाबा के, द्वार उतरि हँसि बैठे ।।
भूषन बरन बसन बपु एकैं, वयसहु सखा समान।
"प्रागनि" सुनि जसुदा उठि धाई इन्द्रिन्ह पायो प्रान ।।३।।

गई लै भीतर नंद की रानी।
हरि को सखा जानि पाग्रन को, आपुहिं लाईं पानी ।।
आये को आतीथ जवन विधि, सो सबु जसुमति कीन्हों।
आसन तें लै असन अंत लौं, अति आदर करि दीन्हों ।।
बूझी कुसल राम केसो की, नैंन नीर भरि आए।
छाँड़ी कानि कन्हैया मेरी, मनहुँ मधुपुरी छाए ।।
तीजे पन जहँ पूत चाहियत तहं ते दीन्ह बिसारी।
धाहिहु के नातें नहिं "प्रागनि" लीन्ही सुद्धि हमारी ।।४।।

तेहि छिन नंद खरक तें आए।
लोचन सजल पुलकि तन लै करि, ऊधौ कंठ लगाए ।।
ता पीछे बैठे यक आसन समाचार अनुसारे।
नीके हैं बसुदेव देवकी प्रीतम परम हमारे ।।
नैन जोति वृजजोति सबनि के नीके हैं बलिकेसो।
कहि धो तात कबहिं आवहिंगे कछुऔ कहौ संदेसो ।।
बड़े सपूत भए "प्रागनि" प्रभु कोविद परम कहावैं।
बचन तात हम भए मनहु तें तो अैसो दुख हावै ।।५।।

जिय जिय ऊधौ लागि बिचारी।
करुनामय सर्वग्य कहावत, बड़े निठुर गिरिधारी ।।
प्रगट न करौं मनहिं में राखौं, पै बहुतै दुख पायो।
ता पीछे सन्देस कान्ह को, मधुकर यहै सुनायो ।।
हौं गोपाल तिहारी सब दिन, बेचौ तहां बिकाऊं।
जुग जुग अचल रहैगी कीरति प्रतिपालै को नाऊं ।।
बातन समाधान काहे को जाको सर्बस जात।
"प्रागनि" बिकल पानि के प्यासे वोसन कहा अघात ।।६।।

चर्चहिं सिगरी रैन सिरानी।
चारौ जाम चरित मोहन को, कहत रही नंदरानी ।।

भोर भये बोले पुर तमचुर, मुखरित विपुल विहंग ।
सुबल सुबाहु कृस्न की लीला, कहत आपने रंग ।।
छूटे मधुप कंज कोसल ते, करत मधुर सुर गुंज ।
मानहु वृज वासिन को बंदत भेष धरे मुनि पुंज ।।
गोदोहन, मथान वेनु रव लाग्यौ चहुँ दिसि होन ।
"प्रागनि" गोपी गुन गोपाल के करत गान प्रति भौन ।।७।।

हरि जननि जिय सी सों जानी ।
श्री गिरिधर के सखा साधु तैं, कही भावती बानी ।।
पगु धारी वृषभानु भौन लौं, समाधान के हेत ।
देखौ दसा सकल गोपिन की, श्री राधिका समेत ।।
मन माधौ के तीर मधुपुरी इहां रहत तन छीन ।
ऐसी ह्वै जो जियत आजु लौं, बचन अवधि आधीन ।।
ताते "प्रागनि" बार बार हौं, इहै सिखावन देत ।
कहियो धौं तात कबहिं आवहिंगे, प्रान रहन के हेत ।।८।।

सिख सुनि सखा सिधाये तिन पै ।
रास विलास बास वृन्दावन कियो कान्ह मिलि जिन पै ।।
बीच मिली आवत ही गोपी, सुधि पाई नंद ग्रामहिं ।
भूषन बसन देखि सिरु नायो, अरु बूझत हैं नामहिं ।।
भरि दीन्हों चख नीर निरखि कै, सुधि आई सब फेरि ।
गई सिथिल ह्वै भई प्रेम बस, रही सखा तन हेरि ।।
देखी दशा बोले सुफलक सुत, रहौं मधुपुरी गाउं ।
हौं सेवक बसुदेव सुअन को जन ऊधौ मोहि नाउं ।।
यह सुनि त्रिया फेरि बूझत है श्री बलदेव पठाये ।
दरसन को तरसत हैं लोचन, भली करी इत आये ।।
नीके नंदकुमार रहत हैं, हमरे प्रान निकेत ।
"प्रागनि" प्रगट देह देखत हौं, वचन अवधि के हेत ।।९।।

बंसी की कुसल कहौ, मोहन की पाछे ।
जाके प्रभु वस्य भये कुबिजा है आछे ।।
कौन रीझि रीझे स्याम, सोई निजु भाखो ।
उनहीं की सपथ मधुप, अंतरौ न राखो ।।

कौन लागि लाई लाल, छाँड़ी हम बालैं ।
कबहूँ बृज चरिचा हरि, झूठहूं न चालैं ।।
सुनहुँ मधुप एक बात, दुख में यह हांसी ।
"प्रागनि" प्रभु परम चतुर डहके पै दासी ।।१०।।

जिय में कहत गोपिका धन्य ।
मन बच काय नंदनंदन सों जानत नाहीं अन्य ।।
भूषन बसन तजे अंगनि के, सजे उरन सिक बन्य ।
बूझत नाम जसोदा सुत को, सूझत वृन्दारन्य ।।
बंदत गुननवाद कबहुंक मिलि, सुखद रास रसजन्य ।
"प्रागनि" प्रभु गिरधरहिं उपासी दृढ़ ब्रत गहै अनन्य ।।११।।

कठिन परी ऊधो को आनि ।
उत अग्या सों कहो चहतु हैं, इतैं प्रेम की खानि ।।
दिढ ब्रत कौ परताप इतैं उत, पठयौ जोग संदेस ।
चरचा ही मों सिथिल सखा इत, होत जात आवेस ।।
इत वै बेद रिचा आपुन ही, कहत प्रगट ही भाय ।
बोलत जुगुति रही ऊधौ की, ज्यौं पयार के पाय ।।
हारे हिये तियन हूं जाने, सबन गहे पग धाय ।
"प्रागनि" प्रभु कों देत चुनौती जीति जांहि इत आय ।।१२।।

मों कों निपट गंवारु न जानौ ।
जो प्रभु कही सो चाहौं, जिय में बिलगि न मानौ ।।
तुमको इहै उचित है गोपिहु, बचन सीस धरि लीजै ।
करत अवग्याँ जात पतिब्रत, विहित होइ सो कीजै ।।
वै निहकाम सकाम भजी तुम, रज तम के हनुमान ।
बिना भूमि जल पाहन ऊपर, चहत जमायो धान ।।
करौ प्रधान सतोगुन सुन्दर, धरो जोग को ध्यान ।
"प्रागनि" तो प्रभु भले पाइहौ जौ सिखिहौ यह ग्यान ।।१३।।

ऊधौ वृज की गैल नियारी ।
वेद पुरान उलंघन कीन्हों श्री सरबर गिरिधारी ।।
हम तौं हैं गुन माँहिं पावती, जो तुम कहत अपार ।
सांवलिया तिरभंगी मूरकि, करत मुरलिकाचार ।।

तम प्रगटित उत्कंठित ह्वै हम, करती लोचन पंग।
जित रज उड़ै तितहिं अवलोकित गोविंद गाइन संग।।
यह तो कथा प्रगट है ऊधौ, सुनी होइगी स्रौन।
जग्य भाग तजि जूठन खाई, रही बेद बिधि कौन ?
औरो करी गुप्त जो मोहन, श्री जमुना के तीर।
वै जानत की हम जानत हैं, प्रगट करै को बीर।।
अमरादिक को दुर्लभ ऊधौ, जानत नाहिन कोई।
"प्रागनि" बृज सुख सोइ जानिहैं रास रसिक जो होइ।।१४।।

ऊधो तुम अधिकारी नहिं बृन्दावन सुख के।
ताते अनवेधे बलि बिरहानल दुख के।।
पसु पक्षी द्रुम बेली नर नारी जेते।
जिन लौं अवलोके सुख, हरि बिरही ते ते।।
सुखद चारु चितवनि पर कोटि मुक्ति को है ?
मुरली रव भव सुक सनकादिक मोहै।।
मोहन मृदु बचन बोलि, करषत है हीयो।
मंद हास भ्रू बिलास, सर्बस हम दीयो।।
अंतरगत पीर बीर, और कौन मानै।
प्रसव सूल संकट कौ बंध्या का जानै।।
"प्रागनि" प्रभु जितहिं तितहिं, आगे हरि हैये।
अब जो तन पतन होत, कान्हैं ह्वै जैये।।१५।।

मधुकर कब ऐ हैं गोपाल।
जोग सोग की बात रहन दे यह चरचा कछु चाल।।
कब मोहन फिरि रास रचहिंगे श्री जमुना के कूल।
सैन हेत कब तल्प रचहिंगे, तौरि तोरि द्रुम फूल।।
दान गली कब दान मांगिहै, कब करिहै बकवाद।
गोधन संग सांझ कब ऐहै, करत मुरलिकानाद।।
ऊधौ यह सख बहुरि होइगो, जब ऐहैं गोपाल।
"प्रागनि" तब कूबरी सौति को, हिए मिटैगो साल।।१६।।

मधुकर, यह विपरीति कहत हौ।
हौ तुम चतुर, चतुर मथुरापुर, चतुर समाज रहत हौ।।
दीपक बरै बारि-के नाये, बुझै अगिनि घृत धार।
तब कबहिंक बृज की जुवतिन सौ परै जोग ब्रत पार।।

जोगी जोग त्यागि रस भोगवै, भोगी भस्म लगावै ।
तब हमहूं जोगिनी भेंस धरि अलख निरंजन गावैं ।।
निबहै नहिं गिरगुन नारिन तें, सुनौ मतोमत सौ का।
देखी सुनी कहूं है "प्रागनि" चलै नीर बिनु नौका ।।१७।।

मधुकर, मन में सोचि कहौ ।
देस काल आनौ उर अन्तर तुम सरबग्य अहौ ।।
जिन्ह के अंग लगावत मलया, लागत अनल समान ।
तिन्ह-को करत प्रलेप गरल को, यह है कछु प्रमान ।।
संजम नेम कहा नारिन में प्रेम तृषा रत आहिं ।
राखत हौ कुसुमनु पर कुलिसहिं, बिहित बिचारत नाहिं ।।
यक हम परो बिरह वापी में, "प्रागनि" अगम असूझि ।
सो मूंदत हौ जोग जँत्र दै, यहै तिहारी बूझि ।।१८।।

मधुकर, यह सुनि को सचु पावै ।
विरहानल अरु क्रोध अगिनि मिलि, अधिक अधिक तन तावै ।।
वै तो निठुर न्याइ निरगुन हैं, तुम कैसे कहि आवैं ।
पवन अधार मेखली मुद्रा राधा भस्म लगावे ।।
मंदर धरै मराली सिर पर, तुम्हैं विहित जो भावै ।
पढ़ि विद्या जो पंडित भूलै, ताहि कौन समुझावैं ।।
प्यासो मृग तृस्ना के पीछे, जो "प्रागनि" जु धावै ।।
तैसो मधुपै हमारो स्वारथ, को निरगुन मनु लावै ।।१९।

मधुकर आवत लाज न स्यामहिं ।
जन्म पत्रिका हाथ हमारे, जानत हैं कुल नामहिं ।।
दामोदर सो नाम कहावत, हम पूजत ता दामहिं ।
सखी समाज रहत उनहूं के, ध्यावत सदा त्रिजामहिं ।।
द्रिष्टि भई अब जोग सिखन को, सेये कुविजा बामहिं ।
इत तो ध्यान दिवा निसि उनको, श्री राधा के धामहिं ।।
जथा जोग अब सुनहु नाम हूं, मिलिकरि करहु बिरामहिं ।
"प्रागनि" जहं लौं रस लंपट है, चतुर अपने कामहिं ।।२०।।

मधुकर मिटै सुभाउ कहां ते ।
तुमही कहौ होत हैं न्यारे, धूम कृसानु महा तें ?
पालत काग पुत्र हित करिकै, सावक पिकहिं सदा तैं ।
आवत हीं रितुराज रीति रत, रत भये सचेत जहां तें ।।

पन्नग करै पियूष पानि जौं, तैसेहि विष अधिकारी ।
लता लता डोलत लोलुप अलि, यह आचरन तिहारी ।।
करौ पिता द्वौ प्रकट सांवरे, औरन को यह गारी ।
"प्रागनि" और कहां लौं कहिए, कारन की करनी कारी ।।२१।।

मधुकर, हमहिं बावरी जानत ।
पूरन ब्रह्म कहत हो काको कान्ह कहा करि मानत ।।
कारन तें एई करुनामय, प्रगटत जुगन चहूं हैं ।
हँसि हैं साधु सुद्धि जब दैहैं द्वो जगदीस कहूं हैं ।।
माटी खाय कहा दिखरायो, कहियो अविनासी सों ।
बिसरि गयौ परिमान अपनो, करि प्रसंग दासो सों ।।
हम सब परसि भई कछु औरे, तुम करि परस भुलाने ।
"प्रागनि" प्रभु प्रभुता न रही कसु उपदेसहिं तें जाने ।।२२।।

मधुप जू कहियो यतनी जाइ ।
अपनो निजु परिमान साँवरे, सुनहु इहाँ किन आइ ।।
नेति नेति जाके गुन नामहिं कहत निगम हैं गाइ ।
इहैं सोंचु आवै उर अंतर, सो एहि भांति भुलाइ ।।
निर्मल मति जो होत बड़ेन की, बड़ी संगती पाइ ।
मानहुं मधुप मलान संग तें रही स्यामता छाइ ।।
ऊतहीं हम जाती उपदेसन, परबस कहा बसाइ ।
"प्रागनि" प्रभु सों सकुचि न, रहियो, करिहैं कहा रिसाइ ।।२३।।

मधुकर, कहा ग्यान उपदेसौ ।
प्रगट रूप धरि आपु बंधायो, सदा भक्ति बस केसौ ।।
नंदकुमार हमारो स्वामी जन्म जन्म हम दासी ।
बृजबासी बंदित जग जानत बंसी धरहिं उपासी ।।
जो है मोच्छ ग्यान तें उधौ, सो हम चाहत नाहिं ।
प्रेम लच्छना भक्ति सिखावै, ताके हाथ बिकाहिं ।।
जहं वरु कीच मीन सचु पावै, सुधासिंधु का कीजै ।
"प्रागनि" प्रेम बियोगहुं ऊपर, निरगुन वारन दीजै ।।२४।।

कहिए कहा जो जोग कहन की, यह तौ कथा अपार ।
जो प्रभु सुनौ बिस्व को व्यापक, तिन मिलि कियो बिहार ।।

जौ तौ सिंघु समाइ कूप में, तौ बृज लायक केसौ ।
हम याको पछितात बावरी, निर्गुन केहि उपदेसी ।।
तिन सों करी काम लौं परिचै, चारि मुक्ति के दाता ।
यह अविहित संजोग कहत हौं, कैसे सहै विधाता ।।
कहँ हम जाति हीन तापर तिय, कहाँ रमा के नाँह ।
''प्रागनि'' कहाँ समाइ कुँभरो, छेरी के मुख मांह ।।२५।।

हमकौं सपनेहु मिलन बिसारो ।
बिनु अपराध तजी हम दासी, कहा हमारो चारो ।।
मारग जात बिना स्रम सेवा. कियो कुटिल को गारो ।
अब ऊधो मधुवन कुबजा सों, स्याम अपनपौ हारो ।।
वासव विरञ्चि करी बरखा रितु तब काहे गिरि धारो ।
तब राषी दावानल सों अब बिरहानल बृज जारो ।।
जो पै हुती यहै कीवे प्रभु, तबहीं क्यों न विचारो ।
''प्रागनि'' प्रभु सों कहियो ऊधौ, यहै संदेस हमारो ।।२६।।

ऊधौ के बचन

करि गुरु गोपी ऊधौ जान ।
गहे पायं दीन्हीं परिक्रर्मा, पूजी स्याम समान ।।
पायो एक अनन्य महाव्रत, जामे प्रेम प्रधान ।
त्रिपित भये मनसान रही कछु, पियत सुधा रस पान ।।
बीज मंत्र श्री नंद लाड़िले, अघतम मनसा भान ।
आनंद मगन फिरत कुंजन में, करत मधुर सुर गान ।।
इच्छत गुल्मलता होवैं कहं, निर्मल ग्यान भुलान ।
''प्रागनि'' सखा प्रेम के पलटे, बिनु हीं मोल बिकान ।।२७।।

तिहारी प्रीति जाइ नहिं बरनी ।
चातक, मोर, चकोर, मृगन सब, सिखी तिहारी धरनी ।।
इक रसना होइ कौन बापुरो, सकै न सेस बखानी ।
नंदनंदन जो कही सुनी सोऊ न आपनी मानी ।।
जौ कहिहौं हौं कोटि जन्म लौं, ऊधौ जीवन पाई ।
गोपिन के गुन ग्यान को पलटो, मो पै दियौ न जाई ।।
यहै निरंतर कहि करि मोहन, कछु करुना सी कीन्हीं ।
''प्रागनि'' प्रभु बृज के चलिबे कों, मोकों अग्यां दीन्हीं ।।२८।।

सबै मिलि इहै आसिष देहु ।
जासों मोसों नंदनंदन सों बाढ़ै अधिक सनेहु ।।
पावौं बास ब्रिच्छ ह्वै बन में मांगौं यह फल एक ।
नित प्रति होइ सीस पर मेरे, पदरज को अभिषेक ।।
मृग मयूर मर्कट जीवादिक, देह धरें इत जौंन ।
कालिन्दी बृन्दाबन वासिन, करी तपस्या कौंन ।।
जलचारिन देखी जल लीला, वन चरिन बन केलि ।
"प्रागनि" जन्म धरे बड़भागिन, मुक्ति पाय सों ठेलि ।।२९।।

अब मोहिं देहु आयसु देवि ।
हौं तिहारो दास निसि दिन सर्बदा पद सेवि ।।
चित्त तें न बिसारबी मोहि परम दीन दयाल ।
मनहुं में मोहि आनबी जन जानि जूठन पाल ।।
जौं कछु हौं करि ढिठाई, कृस्न आयसु मानि ।
छमापन सों सबै कीवो, आपनो करि जानि ।।
कहा "प्रागनि" करै बिनती, बिमल बुद्धि न आहि ।
भयो बंदी नंदनंदन, बंदत जाहि ।।३०।।

ऊधौ, अन्तन होहिं अहीरी ।
कहां हमारी विष सी बतिया, कहां तिहारी सीरी ।।
ग्रंथहु में बरनों बहु अंतर, बासु नगरु खेरे को ।
कहौ समान होइ धौं कैसे, सील स्वामि चेरे को ।।
छोटे बड़े भये दुइ यातें, जातें बुद्धि बिसेषि ।
जौं भृगुलात हन्यौ हरि हिय मैं, तदपि न मान्यौ तेषि ।।
अपने जरी हुती जो कहियो, ऊधौ उनपै जान ।
ते तुमही सौं कही जानिकै, "प्रागनि" प्रभु अनुमान ।।३१।।

कहौ हम कौन बड़ाई जोग ।
जे हम करी स्याम संगति मिलि, तिनकी निंदा मानत लोग ।।
पति छांड़े, पितु, मातु, भ्रातु, सुत, तन न बिसारे चीर ।
बेद उलंघ करी हम जैसी, तैसी भुगतत बीर ।।
आपुन आइ सुनायो सित्रधनु, हमसौं तरन उपाउ ।
केतिक कटुक कही हम तुमसौं, तजी न आपु सुभाउ ।।

अंत बड़े तुम दुहूं भांति के नवहु सो अचरज कौन।
अब हौं कहौं कवन विधि, "प्रागनि", तुम्हैं करन कौ गौन ।।३२।।

ऊधौ, भागन तैं इत आए।
दीन्हीं दरस कृपा करि हमकौं, लोचन जरत जुड़ाए ।।
सुनत रहत हीं सदा समीपी, काहू पुन्यन पाए।
परम विचित्र मित्र मोहन के धन्य जननि जिन जाए ।।
सिव कौ घ्यान ग्यान सिद्धन को, कर्मुक वचन सुनाए।
एकै पै गति भई मनहुँ जौ, व्रिज की तियनि सताए ।।
कमल नयन की कृपा चाहिए, दूरि निकट भल भाए।
"प्रागनि" प्रभु चिरजीव वीर दोउ, रहैं मधुपुरी छाए ।।३३।।

सोच भयौ ऊधौ को पोच निपट कीन्हीं।
चलत तीनि दिन कोहूि अग्यां प्रभु दीन्हीं ।।
ताके षट मास बीते बूझे का कहि हौं।
कहिहैं केहि हेतु रहे, सीस नाइ रहि हौं ।।
हंसि कैं तव जान राइ. निकट बोलि लैं हैं।
मिलिहैं मोहिं अंकम भरि, सीस पानि दैहैं ।।
गहिहौं मैं चारु चरन, तीनि ताप हारी।
कहिहौं तब "प्रागनि" बज चरिचा सुखकारी ।। ३४।।

साजे रथ, सुफलक सुत, गौन चित राखौ।
गदगद ह्वै गोपिन सों, दीन वचन भाखौ ।।
जैसे हौं उनको जन, तैसोई तिहारो।
भक्ति प्रेमलच्छना सिखाइ, सठहिं तारो।
उनहूँ कृपानिधान, बहुत कृपा कीन्हीं।
जोग के सिखावन मिसु, अग्याँ मोहिं दीन्हीं ।।
आयो सुभ सगुन साधि, सम्यक सुधि पाई।
"प्रागनि" प्रभु प्रगट छाँड़ि, झांकत हौ झाई ।।३५।।

हांको रथ कै प्रनाम ऊधौ पथ लागे।
रोम रोम भेदों रंग, परम प्रेम पागे ।।
गोपिन के बिरह घाव, सेरुह फेरि फूटे।
देह दसा रहित भई, प्रान चहत छूटे ।।
तब तौ कछु औधि हुती, आवन की फिरि कै।

अब निरास मगन भई, प्रेमसिंधु तरि कै ।।
गोपी के उर कठोर, समुझावत सबहीं ।
ऊधौ के वचन सुनत, द्रवहिं स्याम कबहीं ।।
तातें तुम धीर धरौ विकलता निवारौ ।
जो पै अब आइ बनी, विधि सों का चारो ।।
हृदय समुझि चेत भयो, सीख मानि लीन्हीं ।
"प्रागनि" फेरि प्राननि को, अवधि आस दीन्हीं ।।३६।।

ऊधौ, कुसल छेम तें आए ?
समाचार क्रम ही तें कहिये, दिन तौ बहुत लगाए ।।
बाबा नंद, जसोदा मैया, मो बिनु कहा करत हैं ।
हौं कठोर पाहन ते ऊधौ, वै तौ दिननि भरतु हैं ।।
कहा दसा गोपिन की कहिए. जिन्ह मोहिं सर्बसु दीन्हों ।
लोक वेद तजि भई निरंतर, मैं निरवाह न कीन्हों ।।
मो पै कछु न भई येकौ विधि कहं लगि गुनन गनौंगो ।
बृज बासिन्ह कहं जन्म कनौडो, "प्रागनि" रिनी रहौंगो ।।३७।।

तुम बिन जानि सिरोमनि माधो अैसी ऊन और को मानै ।
दूजो दीनदयाल और को, अंतरगति की जानै ।।
समाचार क्रम हीं ते बूझे, ते सुनिए दै कांन ।
वा दिन को हौं चल्यो इहां ते, गयो जु अथवत भान ।।
देखी जाइ जसोदा मैया, बाबा नंद तिहारे ।
लोचनहीन दीन दोउ जन, नहिं जीवत नहिं मारे ।।
चरन पकरि बिनती मैं कीन्हीं, तन अंसुवन जल भीनें ।
यतनी कही जसोदा मैया, नयन हमारे छीने ।।
और कहैं अब भये सयाने, मिलत न सोभा पावै ।
ऊधौ हैं हम परम अभागी, स्याम इहां कित आवैं ।।
एक दिना मैं दांवरि बांधी, तनक दही के काज ।
अब कौ देखि प्रताप बच्छ को, होत होइगी लाज ।।
पुत्र आस कै पालि तनक तें, जो मैं सर्बस साजो ।
दै मुख में रज मधुस्वादिक ज्यौं, लै सुफलक सुत भाजो ।।
तापर सुनत देवकीनंदन, मेरो कान्ह कहावै ।
"प्रागनि" सुनि सुनि महासूल सो, मोहि सी पापिनि पावै ।।३८।।

प्रभु ज़ू, कठिन बीती राति।
जाम चारौं मोहिं लागे, चारि जुग सों जाति।।
प्रात होतहिं मातु बोली, भानपुर लौं जाहु।
देहु मति तुम जो विहित है, चलो नयन प्रवाहु।।
सीख सुनि हौं चल्यौ पग द्वै, मिली बीचहि आनि।
कहा देखौ नखसिखा लगि, प्रेम रस की खानि।।
गात मेरे पीत पट हैं, रही नैन निहारि।
निरखि कै दंडवत कीन्हीं, चलो नैंनन वारि।।
नाम बूझो, मैं कहीं, लै गई पुरहिं लेवाइ।
धाम तजि तजि वाम सुनि सुनि सबै आई धाइ।।
उदक आसन असन बहु विधि, कियो अति सनमान।
सकल बिधि कै कुसल बूझी, पूजि तुमहिं समान।।
निगम चारौं ब्रह्म बकता, कहैं जो समुझाइ।
अचल मति नहिं चलन की पुनि, मेरु किन चलि जाइ।।
कौन हौं मोहि बुद्धि कितनी, तुम लियो जिन जीति।
तहां छल न बसाइ "प्रागनि" जहां सांची प्रीति।। ३९।।

प्रभु जी, उपजै कौन कै ऐसी।
चरन कमल की प्रीति अखंडित, ब्रज जुवतिन के जैसी।।
केवल तन मैं भई तिहारी, प्रेम कहां सों कहिये।
सुधा समान वचनिका उनकी, सदा सुनत ही रहिये।।
भजी निरंतर भाव भामिनी, मेटि'भरम की टाटी।
मोपर कहत सिखावन सीखौ, कछुक प्रेम की पाटी।।
तातु, मातु, गुरु, बंधु, जातिजन, ना उनके कछु भाये।
"प्रागनि" प्रभु पल कल न परत है, बिना केलि गुन गाये।।४०।।

राधा नाथ देखी जाइ।
भयो कछु अनचेत वाके, मेरियो सुधि पाइ।।
निकट वाके हौं गयौ, तब कही सखिन्ह बुझाइ।
गुंज माला गरे मोरे, रही नयनन लाइ।
कहै कछु ना, होत धुनि सी, कहै रसना गाइ।
स्याम स्याम हिये जपै छिन, और कछु न सुहाइ।।
हंसि कहै कछु गाइये, फिर उठै आपुहि गाइ।

विदित, घर के दुखित पीडित, हिये उपजी बाइ।
कबहुं चेतत चतुर सुंदरि, तब रह्यौ सिर नाइ।
बजत गुरजन बसन वोढ़त, कछुक रहत लजाइ ।।
कान्ह याको करि गये कछु, कहत कीरति गाइ।
प्रानदानहिं देह "प्रागनि" जाहि दरस देखाइ ।।४१।।

असमै मीत काको कौन ?
वोई है ब्रज के बसैया, वेई नंद कौ मौन ।।
टहल मिसु मृगलोचनी हंसि, महल पैठहिं धाइ।
निरखि कै बलराम स्यामहिं चलत नयन जुड़ाइ ।।
जेहि भौन भीतर देखिए को, कौन है केहि तीर।
तेहि महल के ढिग जाइकै, नर नारि धरत न धीर ।।
जेहि महरि कै मुख देखि कै, सुरपतिहु कहत सिहाइ।
अमर पद तजि दास दासी, होंहिं नर तन पाइ ।।
जे नंद ज़सुदा नगर नायक बगर हैं, दोउ दींन ।
ते दोहनी कर दुहन को, पर बालकन आधीन ।।
सुखसिंधु भूल्यौ प्रगट माया, इहां लौं रहि आनि।
कहै ते दुहि देत "प्रागनि" हेतु हरि कौ माँनि ।।४२।।

ऊधौ रहे कथा कहि, आयो गोपिन को आवेस ।
मगन भये वपु गिरो धरनि पर, आपुहिं उठे रमेस ।।
लयौ लगाइ सखा भरि अंकहि, देखि गोपिका प्रीति।
रही प्रग्या सब गोपिन की, गई धरी द्वौ बीति ।।
लोचन सजल भये हरिहू के, माया मानी नाम।
आई सुरति सकल गोपिन की, श्री वृन्दावन धाम ।।
पोंछि नयन पट सखा जगायौ, स्याम रहे सिर नाइ ।।
"प्रागनि" प्रभु को देखि प्रेम बस, ऊधौ पकरे पाँइ ।।४३।।

कहौ प्रभु, हौ तुम कृपानिधान।
अंतरगति की सब जानत हौ, करि जननी मन जान ।।
एक वार करुनाकरि, ब्रज लौं, चलिए आनंदकंद।
सदा कुहू व्यापत है तुम बिनु, श्री वृन्दावनचंद ।।
नयनपियूख सींचिए गोपिन, फिरि आनन्द की बेलि।
तुम पूरन प्रभु कहा घटैगो, बहुरि कीजिए केलि ।।

कौन पुन्य तें पूत भये हरि, कौन पाप तें सोग।
"प्रागनि" नंद जसोदा जू की, निंदा मानत लोग ।।४४।।

कृष्ण वचन

ऊधौ, ब्रजवासी मोंते नहिं न्यारे यह करु निजु परतीति।
हौं निसिबासर तहां रहत हौं, जहां निरंतर प्रीति।।
गोपि अरधंगी हैं ऊधौ, कहौ कहां को भेद।
घट घट व्यापी हौं पुरुषोत्तम, स्वांस हमारी वेद।।
ताकी रिचा सकल यै गोपी, जैसे सिंधु तरंग।
जब पूरन औतार धरत हौं, तहाँ अवतरत संग।।
तिन्ह को सोचु कहां लौं कीजै, ऊधौं मोहिं बताइ।
"प्रागनि" जिन गोपिन की कीरति, जगत तरैगो गाइ।।४५।।

ऊधौ तो सों कहौं, निरंतर निज भक्तन में रहत हौं।
वेद अतीत कोउ नहिं जानत, यहै हमारौ मतु है।।
हौं निर्लेप, निरंजन, निरगुन, कारन तैं बपु धारौं।
कर्म रहित अपनी इच्छा तें, प्रगटत हौं जुग चारौं।।
देह अदेह तकौ मति कोऊ, ग्यान दिस्टि को कोऊ।
छांड़े देह बहुरि नहिं पै है, जन्म जगत में सोऊ।।
यह मत है देवन्ह कौ दुर्लभ, मधुप हिए महं राखी।
"प्रागनि" तोसों फेरि कहौंगो, देइ येकादस साखी ।।४६।।

प्रेमदास

प्रेम सागर

उद्धव के ब्रज भेजने का उद्देश्य:—

गोपिन की बहु प्रीति मधुप सन हरि कहि वारहिं बारा।
ऊधौ ज्ञान केर अभिमानी मन महँ कछु नहि धारा।।
गर्व प्रहारी कुन्ज बिहारी अपने मनहि बसाई।।
समाचार मिसु गोपिन के ढिग मधुप देहुँ पठाई।।१।।

कृष्ण संदेश :

बूड़त विरह सोक के सागर कैसहु निकरत नाही
अब तुम हमैं निकारौ प्यारी पकरि हमारो बाँही ।।२।।

कह लौ लिखौ बात हिरदै की सुनिये आनन्द दैनी ।।
कब हमको करतार मिलावे भुज पसारि मृग नैनी ।।
इत नैननि तुम कव देखौ सुनौ बात गज गौनी ।।
उन भाँतिन सौं सुनौ पियारी हसिवो कबौ सलोनी ।।३।।

गोपिन जरत विरह में हमरे पावत दुःख महाना ।।
कन्त भाव तजि के परमेश्वर मानहिँ असदो ज्ञाना ।।
कछुक दिना रहिके तुम ऊधौ हरियौ दुःख अगाधौ ।।
तव पाती दीजौ गोपिन को दयौ सिखावन माधो ।।४।।

उद्धव का उपदेश :

छाडौ काम कलपना सब मिलि करिये भक्ति दृढ़ाई ।।
वहै प्रसन्न तुम को सुख दैहै पार ब्रह्म सुखदाई ।।
आरत पाल गुपाल कहावत अंतर जामी माधौ ।
ते तुम्हरे बूडे विरहा मैं कीन्हौ दुख अगाधौ ।।५।।

राधा का पत्र :

डारि गये हमको दुख सागर आपुन गये पराई ।
खैंचि लेहु अब बाँह पकरि कै बूड़त वाम कन्हाई ।।
भवन लगतु है वन सौ प्यारे भूषन मानौं सूला ।
पावक सौ लागतु है गहनौ सरसौ लागत फूला ।।६।।

उद्धव के मथुरा पहुँचने पर कृष्ण की दशा :

समाचार जब वाचे श्रीपति बाढ़ो प्रेम अमारा ।
करूना भई कृष्ण के हृदै भली नैन जल घारा ।।
इक छिनु रहे भवन ह्वै मोहन प्रेम जलद मैं बूड़े ।।
प्रेम लहरि लागति जब वाचत होत कन्हैया जूडे ।।७।।

ज्यों ज्यों पाती वाचत गिरधारी त्यौं त्यौं बरसत नैना ।
भए प्रेम के वस्य कन्हैया मुख ते कढत न वैंना ।।८।।

वगसी हंसराज

विरह विलास

कृष्ण का राधा के नाम पत्र :

जदपि राज सोभा हम पाई तदपि न तुम विन कछु सुहाई ।
करत चाह निसु दिन मन माँही ब्रज सम सुख अनतै कहुँ नाही ।१।

योग संदेश पढ़कर राधा की व्याकुलता :

कान्ह लिख्यौ पाती में जोगू । वाचत हिये मैं बास्यौ वियोगू ।
बोली तिहि छिन कुबरि दुलारी । सुनहु बात तुम सवै हमारी ।।
उत रस भोग कान्ह सरसायौ इत हम कौ लिखि जोगु पठायौ ।
जोग कौन आली यह आई मन माली लिखि पठयौ ताही ।।२।।

कुब्जा पर व्यंग उपहास :

कुबिजा सी रानी मिली नृपत त्रभंगी लाल ।
चली मिली जोरी जुगल लखि लखि होहि निहाल ।।३।।

गोपियों का कथन :

जोगी जोग समाधि लगावै परम जोति के दरसन पावै ।
हम समाधि दिन रैन लगावैं हरि हिरदै लखि आनन्द पावैं ।।
जो हम जोग धारना धारी सो नहि तुम सकत निहारी ।
जो हरि हम कह जोग पठायौ सो ऊधौ तुम भेद न पायौ ।।
हरि, की भगति कठिन अति होइ बिना प्रेम पावत नहि कोई ।
हरि सिखयो तुम कहँ मत ऊधो अपनौ मत कीन्हो नहि सूधो ।।
जव तुमरे उर प्रेम न आयो तव तुम कहँ हरि इहाँ पठायौ ।।४।।

उद्धव तथा कुब्जा पर व्यंग :

हौ ऊधौ तुम कुविजा पंथी हिरदै निरगुन चरचा ग्रंथी ।।
जौ हम तुमहि देहि उपदेसा किहि विधि हिरदै करहि प्रवेसा ।

कुबिजा पंथ सुनौ तुम भारी क्यौ सुनिहौ यह बात हमारी ।।
कुबिजा सौ तुम मूड़ मुड़ायौ गोप मंत्र उन तुमहि सिखायौ ।।
एक गुरु तजि और न कीजै अब कह मंत्र तुमहि हम दीजै ।
भाल तिलक छाप उन केरो तुम पहिरै दीनौ बऊ तेरी ।।
हमरौ पंथ कठिन अति भारी क्यौ सुनि हौ यह बात हमारी ।
कुबिजा पंथ छोड़ि यह साधो तौ तुम सौ दुख पैहै माधौ ।।५।।

उद्धव कथन :

हरि जू हमहि इहाँ पठवायो उपदेसन निरगुन मति आयौ ।
सिखवनि आयौ तुमहि संदेसू सीखि चल्यौ तुम तैं उपदेसू ।।६ ।

बरकत उल्लाह पेमी

मधुकर हम तबहीं ते जानी ।
कंबल छाड़कर पी मधुमाती, देखे मोहन ज्ञानी ।।१।।

चांद चांदनी सेत सेज पर, गावत कोमल बानी ।
अब हमको वह सुरत सुरत कर, ठाढे रैन बिहानी ।।२।।

वह मुरली वे बचन मनोहर, वह चितवन सुखसानी ।
करम-भाय ते हमको ऊधौ, अब वह भये कहानी ।।३।।

भूल गये सब भोग साम के, जोग जुगति नियरानी ।
दीनानाथ दया के पूरन, पाइय पीर निरानी ।।४।।

सुनै कौन कासों अब कहिये, सुन री सखी अयानी ।
ऊधो से हितकारी 'पेमी,' कुबजा सी ठकुरानी ।।५।। १।।

सखि री लेहु जोग को धन्धा ।
रहै जायै पीत 'बिसरायै, भूलै अवध-निबन्धा ।।१।।

कौन काज रूप गुन आइहै, करम भये जब अन्धा ।
हम जर बर सब छार मिलानी, कुवजा ऊँचो कन्धा ।।२।।

तन मन बिकल तपन नित बाढत, बिरह रहो सर-सन्धा ।
दुख दारुन अति आन तुलानों, मूँद लियो सुख-सन्धा ।।३।।

आपुन ही हर लट्टू हुई हैं, लट 'प्रेमी' गुन-सिन्धा ।
इक दासी औ अधिक कूबरी, सोना और सुगन्धा ।।४।। २।।

रैन दिन जात इकटक ठाढ़ें ।
कछु न सुभाय बिलक भयु तन मन, गहे काम रिपु गाढ़े ।।१।।

जंतर मूर उर नहीं लागत, स्याम-पीत चित बाढ़ें ।
बिलसै जाय कूबरी अँग सँग, गोप ग्वाल सब छाढ़ें ।।२।।

जो पीय चतुर साम मन लागे, कुबजा की गति डाढ़ें ।
'पेमी' आँव न बेग रावरे, हमहू कूबर काढ़ें ।।३।।३।।

अब हम जोग जुगत सब छाढी ।
सींगी सेली भसम मेखला, तजी गुफा औ माढी ।।१।।

भूल्यौ बिरज द्वारिका काशी, गइ पियाग की छाढी ।
छूटै ध्यान, ग्यान सब टूटै, चिन्ता मन सों काढी ।।२।।

ऊधौ रहै सँदेसो भूल्यौ, 'पेमी' आनँद बाढी ।
सुन्दर स्याम सलोनी मूरत, रही रैन दिन ठाढी ।।३।।४।।

ऊधौ तुम यह मरम न जानों ।
हम में स्याम स्याम मध हम हैं, तुम जनि अनत बखानों ।।१।।

मसि में अंक अंक मसि महियाँ, दुविधा कियो पयानों ।
जल में लहर लहर जल माहीं, कहँ विधि बिरहा ठानों ।।२।।

सिखिबो जाय जोग कुबजा किहँ, जाप ताप अरु ध्यानों ।
हम सँग जोग भोग कछु नाहीं, बूँद समुन्द समानों ।।३।।

जा मन साध समाध स्याम की, सोई बड़ो सियानों ।
करे न पीत मीत कौ 'पेमी' मन मूरख पछतानों ।।४।।५।।

मधुकर जात न ओसन प्यास ।
ध्यान ग्यान कछु काम न आवत, कीन्हों बहुत अभ्यास ।।१।।

हम चाहत वह रूप मनोहर, तुम क्या जोग बखानों ।
आंब छांडके गिनै रुख को, सोई पुरुष अयानों ।।२।।

जामें सुरत होय ध्यानन की, ताको जाय बतावो ।
हम डौंरत बौरी बर्रानी, हमें कहा समझावो ।।३।।

जो तुरंग बिन ताजन दौरे, ताको दीजै श्रास ।
'पेमी' दरसन हेत गुआरिनि, बन बन फिरते उदास ।।४।।६।।

काहे कों ऊधो दुखारी भये तुम, लाये हो मेखला जोग की बाकै ।।१।।
न्याव न कीनों अनीत करै सौ तौ ; देने लगे पब आग वे दागै ।।२।।
ताहि कहा सुख देत हो 'पेमी'; तजं कुल-कान श्रो प्रान को त्यागै ।।३।।
जा दिन स्याम बिछोह भयो हम ; ताहि दिनाँ कह्यौ गौरख जागैं ।४।।७।।

ऊधौ जू न्याय करो तुमही ; जनि देहु लगायन दाग पै दागै ।।१।।
जोग के साज अकाज ही लाये हो ; काहे कों कोऊ लै गूदरै ताकै।२।
सुन्दर मूरत लालन लै नित ; 'पेमी' के ध्यान ही मैं अनूरागे ।।३।।
सो कहौ काहैं कों, कोउ करिहै तजि, काहे कों बोले, जो गोरख
जागै ।।४।।८।।

अँग भभूत लगाएं महा-सुख ; है कोउ ऐसे जो पेमहु पाकै ।।१।।
नाथ को नावं सुनै, विकसै हियो, कान्ह को नाती सुदा अनुरागै ।।२।।
जोग लिये हर प्यारे मिलै तो पै ; कान्ह बिथाये निरे दुख लागै ।।३।।
मोहना की मन मानी भई तो ; कहो री सबै मिल गोरख जागै
।।४।।९।।

सुन्दर सी जोगिनीं औ रसीली' न कठीलों नैक,
दीनै ब्रज सुन्दरीं को, दैव भीम कैं ।१।
सखियन तो नवीन सी, पै मेखला न छीन सीं,
सो उपमान न बूझत, ता सम कै ।।२।।
मिरगहू की छाला और कंठमाला 'पेमी',
बाला रहें नई सी रसम कैं ।३।
दुख होके टलिहैं ऊधौ बांट सबही को दीने,
दौर दौर लिपट जाहु, घर चलैं 'खसम' कैं ।।४।।१०।।

कहियो सँदेस ऊधौ, सुन्दर नरेस,
चित भूल गयो ,अंग अंग भूखन कीजिवो ।।१।।
भूलो सुख-भोग, बिन जोग करत जोग,
भूलै गति मति, तन मनहु को छीजिबो ।।२।।

सुरत सुरत कर ताप से बरत तन,
भूलौ सबै 'पेमी', घन-सरन को सोचिबो ॥३॥

कुंजन को लीजिबो, जमुन जल पीजिबो,
सो गल बांह डारैं, कुंजन कुंजन को भीजिबो ॥४॥११॥

नैनतै लागी रहतै झरी ।
भर आवत ढर जात सखी री, जैसे रहट-घरी ॥१॥

जोगी-रूप मेखला पहरें, अरुन स्याम पीरी ।
आँसू-माल सुमरनी लीन्हैं, सुमरत हरी हरी ॥२॥

निरखत द्वार एक-टक निस दिन, पल पल घरी घरी ।
मानो काठ पूतरी सी चखु, अचल भई पुतरी ॥३॥

सुख दायक, दुखदायक लागत, ज्यो क (ग) दरी बदरी।
'पेमी' दरसन वेग दिखावो, बात जात बिगरी ॥४॥१२॥

हरि बिन कबहूँ ना चैन परी ।
कहियो पथिक सँदेस अवसि कर, बिरहा अधिक करी ॥१॥

मूर मंत्र कछु ओट न लावत, सीरी होत खरी ।
काल रूप ससि-जोन्ह सतावत, तातें निपट जरी ॥२॥

'पेमी' बिकल कुसल नाहि दीसत, गिन गिन अवध टरी ।
आवहु बेग रावरे नातरु, अबकै सुनो मरी ॥३॥१३॥

पावस ऋतु जानी हुंज्यो उन देस ।
पहली पीत सुरत कर हित सों, मन हरि करैं प्रवेस ॥१॥

रँगे रंग कुब्जा के लालन, गति रति नवल सुदेस ।
मिलबत करत विलास रास नित, मोहन अलि के भेस।।२॥

जोरी जनि बिछुरे दम्पति की 'पेमी' कहत-संदेस ।
हम ब्रजवासी योंही रहि है, बौरे बिरह-कलेस ॥३॥१४॥

ब्रजनिधि

प्रीति पचीसी

भोग मैं न जोग मैं न कहूँ भोग जोग सुन्यौ,
भोग जोग दोऊ क्यौं न लेत मन मानी कैं ।
आसन मिल्यौ है पाकसासन कौ सेय तिन्है,
जिनकी कृपा तैं बोल कढ़ैं बाकवानी कैं ।।
सिव-सनकादि परासर सुकदेव आदि,
धरि धरि धारना रहत सुख सानी कैं ।
भुगति मुकति दोऊ जुगति चहै तौ ऊधौ,
सेइ लै चरन ब्रजनिधि ब्रजरानी कैं ।।१।।

मथुरा तैं गोकुल गए, जोग दैन ब्रजवाल ।
उद्धव गोपी-बचन सुनि, आप भए बेहाल ।।२।।

ऊधौ तुम ल्याए जोग बूड़यौ हैं संजोग सब,
कान दै कै सुनि लेत कान्ह प्रेम-गाथ ही ।
संग हम नाचे राचे अधर-सुधा सौं सींचे,
ताही कौ बिगोवै मूढ़ पकरि कै हाथ ही ।।
कौन कौ करैंगे गुर, गुर है हमारो वह,
ब्रजनिधि प्यारो जाहि लियौ भरि वाथ ही ।
प्रानायाम साधैं सुद्ध प्रान होयें ताके अरे,
बाबरे गए रे प्रान प्राननाथ साथ ही ।।३।।

दैन लग्यौ जोग-छटा कही सिर बाँधौ जटा,
ऐसैं बोल बोलै मति पाछैं पछितायगो ।
दासीं हैं बिहारी जू की खास ही खवासी हुती,
पूँछि लीज्यौ उनहीं कौ साँच जब पायगो ।

ब्रजनिधि बिरह ये बैरी सिर पाँव तक,
जापै यह करि जरे लौन सौं लगायगो ।
कछु नहीं कही जात प्रानन की घात हमें,
ऊधौ करे खोटी बात मुँह जरि जायगो ॥४॥

जोगन हमैं है हम नाहिं जोग लायक हैं,
मोहन सँजोगी करि जस कब लैगो रे ।
तेरी कहा गावैं बात बात तू हमारी सुनि,
सीस कौ धुनैगो जब हाय हाय कैगो रे ॥
औरापन नाहीं हमैं ध्यान ब्रजनिधि जू को,
बानौ ताय ताए त्यों ही तूहू ताप तैगो रे ।
अक बक रही जक नैंक न हिये, मैं सक
होत प्रान हक्क हमैं कहा जोग दैगो रे ॥५॥

सुधि आवै प्रीतम की होत हैं विसुधि अरे,
राखे प्रान पोख दै दै गुन सब गाय गाय ।
ल्यायो है सँदेसो अब जोग दैन हमही कौ.
चाहत संजोग जाय दियो हियो दाय-दाय ॥
स्याम रंग रँगी गई ब्रजनिधि संग भई,
ताकौ फल भयौ यहै लगी मैं न ल्याय ल्याय ।
दसा तुम देखी आय सोचत ही प्रान जाय,
ता पर न पीरे ऊधौ दया नहीं हाय हाय ॥६॥

हमैं नहीं जोग भावै करि दै सँजोग अरे,
मानिहैं सुजस तेरौ ल्यावै हरिबर कौ ।
यहै नहिं होय तौ तू एक बात करि लैरे,
सिर काटि लै कै चलि नाखि जाहु धर कौ ॥
जीबौ दुःख लागै महा मरिबोई मान्यौ सुख,
ब्रजनिधि संग छोड़यौ लोक-लाज डर कौ ॥
चुप रहौ ऊधो सिर काहे लेत तूदो अरे,
हीयो दूख रुधो सूधो बूधो तेरे घर कौ ॥७।

हम तौ कियौ हो गुन औगुन कियौ हो नाहिं,
चेली सब कहैं याहि तापर मरत है ।

प्रीति ही करी ही परतीत दै कै प्रानन की,
रीति मैं अनीति भई जिय सौं लरत हैं ।।
प्यारी वें कहत हमैं हुंकरत प्यारो ब्रज,
ब्रजनिधि भूलि सबै अब क्यौं टरत हैं ।
भयौ बेवफा रे ऊधो दिल कौ करत सफा,
नैक न नफा रे जान सफा क्यों करत हैं ।।८।।

जे वे रंगमहल मैं रस की चुहल करी,
तिनही कौ वन माँझ झेरत हैं ताव रे ।
जे वे चोवा चंदन औह अतर लगात अंग,
तिनकौ तू ल्यायो अब भसमी को भाव रे ।।
जिन गान-नृत्य सबै कीनो ब्रजनिधि-संग,
तिहूँ तू कहत सीखौ प्रानायाम दाव रे ।
ऊधो चुप रहौ अब ऐसी बात कैसै कहौ,
नैक जीय लाज गहौ ए रे मति-बावरे ।।९।।

आयौ अक्रूर सो तौ महा मति-क्रूर हुतो,
आँखिन मैं धूरि दै कै कर दीवौ परदै ।
अब तुम आए ऊधो-जोग-सोग-रोग लाए,
लागत अभाए अब काहि कौ जु डर दै ।।
ब्रजनिधि कही सो तो सब बात सुनी हौं,
कहैं हम सो भी तू धरम-काज कर दै ।
पंचागनि कहा साधैं पंचौबान हमें दाधै,
हृदै बेदरद होय अग्नि भाझ धर दै ।।१०।।

दैन लाग्यौ जोग सौ तौ हम सौं कहै न होत,
भोग कुबिजा सौं सुनैं यही दुख मरियै ।
हमकौ बैराग बगसीस होत भाँति भाँति,
दासी करी दुलहीन रीझि देखि चरियैं ।।
कहा अब करियै क्यों तरै नाव पाहन की,
ब्रजनिधि ऐसी करी कौ लौं दिन भरियै ।।११।।

अबला हैं हम सब नाहिं चलै बल अब,
कहै हैं सपथ खाय साँच यह जानौ रे ।

चाह जीयै मिलन की सो तो कहा जात रही,
ग्यान ही इठावत है लायौ तू धिगानौ रे ॥
अकलै न आनौ हो रे ब्रजनिधि ल्यानौ हो रे,
करनौ हो काज यहै, तू तो है दिवानौ रे ।
ऊधौ जोग नाहिं मानौ, कृष्ण सिर हमैं बानौ,
नौकु होहु स्यानौ मन काहे देत तानौ रे ॥१२॥

आए हे जमामरद ग्यान कर करद लै,
दरद न जान्यौ अब जिन दिन पार रे ।
कहा कहै मूढ़ तोय हियौ जोग टूक करै,
दोख प्रीति आगै जीति नाहिं तेरी हार रे ॥
आग ही तो मारि राखी बृजनिधि ने ही अरे,
तापै सरुजोर हू कै करत है बार रे ।
रहे हिये हार अब काहे काहे बोल सार,
लगत दुसार तन मरे कौ न मार रे ।

आयौ मधुबन तैं तू बात कहि भेज्यौ माधौ,
साधौ जोग़-पंथा कौ जु कैसौ लायौ झटपट ।
अटक हमारी लगी वाही मनमोहन सौं,
पटकत सीस कौ मिलन मन हटपट ॥
जानै नाहिं कपटी हैं, ब्रजनिधि प्रान प्यारे ,
न्यारे ह्वै, करत सुख फिरैं हम सटपट ।
लटपटी डरी रहैं चटपटी लगी हियै,
बात अटपटी ऊधौ काहे करै खटपट ॥१४॥

रंचक हू सुधि नाहिं हमैं, जिनकौ पढ़ि जोग की देत कहा सिख ।
जैसेइ वे तुम तैसेइ हौ अजु जानि परे सु दिखावै कहा लिख ॥
दासी पियारी करी ब्रज की निधि, ए सुनि बात उठै हिय मैं धख ।
साँवरे साँप डसी हैं सबे, तिन्हैं ज्ञान सों मूढ़ उतारै कहा
विख ॥१५॥

कहा कहैं तोहि सुनि यहै बात नाहिं होय,
जोग ग्यान बातैं घोंटि यामैं न रहत क्यों ।
कौन मति तेरी सब कहा लागि रहौं हठि,
रसना रटत नाम प्यारो देखियत क्यों ।

मिले जानि ब्रजनिधि हमकौ करैंगे सिद्धि,
होय है प्रसिद्ध तापै तन यौं हतत क्यों।
बाकी सुधि आए अदा जिय में जरत सदा,
प्रान फिदा किए सदा तानै बिदरत क्यों ।।१६।।

प्रीति करी परतीति लै प्रेम की, कीन्हीं अनीति पै आई है लाज न।
नाचते गावते हे हम संग ही, रंग ही सौं करि बंसी अबजान ।।
वे ब्रज की निधि हूँ करि भावनि, राधिका कौ कहते सिरताजन।
आहि रे आहि कछू न बसाय रे, मारि गयौ वह साँवरो साजन ।।१७।।

नाचे ज़्यौंही नाचीं हम, गाए त्यौंही गाई सब,
अब यह ज्ञान की न हमकौ सुहावै पौन,
अधर-सुधा कौ पान करयौ हमनै निदान,
तिनकौ तू प्रानायाम सिखवत नाहिं हौ न ।।
ब्रज निधि भेजे तुम जानें सुख दैन आए,
जाके पर करी यह लागे सब ब्रज पौन ।
ऊधौ अरे रहि मौन वीती है सु जानें कौन,
प्रीति मध्य जोग देत खीर मांहि डारै लौन ।।१८।।

आयौ तू कहाँ सै इहाँ कौन सौ ह काज तेरौ,
जिय धरि लाज मुँह ऐसी जिन कहै बात।
काहे सिर बाधै पाप जोर कर देत ज्ञान,
मरैंगी न लैंगी जोग तेरे कहा आवै हात ।।
तजी क्यों रे ब्रजनिधि छोड़ि गए ब्रज मधि,
उनही के लीयै हम छाँड़े सब मात तात।
पीर तैं पिरात बिललात हहरात प्रान,
तापर तू अनाघात जोग सौं जरावै गात ।।१९।।

कहाँ यह जोग कहाँ सरस संजोग भोग,
कहाँ गान-तान कहाँ प्रानायाम प्रान कौ।
कहाँ वह कुज मंजु कहाँ गिरि-कंदरा हैं,
अंबर अतर कहाँ भसमी निदान कौ ।।
कहाँ वह ब्रजनिधि निरगुन ब्रह्म कहाँ,
कौन भांति मानौ मन तेरौ गुन ग्यान कौ।

ऊधौ यह बात तेरी बात डावाँ डोल सी दिखात,
बधुरे को पात ज्यों जमीन आसमान कौ ॥२०॥

जानी हुती कबहूँ तौ लैहिंगे हमारी सुधि,
जापै करी बिना सुधि वे निसाफ लेखौ रे।
कौन कौ पुकारैं अरे प्रानन हमारे हरे,
ढरे कुबिजा की ओर अचरज देखों रे॥
ब्रजनिधि हेत कियौ भाँति भाँति सुख दियौ,
जानी बात ऐसे कियौ प्रेम कौ अलेखौ रे॥२१॥

जोग की जुगति सींगी भसम अधारी मुद्रा,
ग्यान उपदेस सुनि सुनि मन मैं डरै।
रहाँ हम सब ही सबादी रास-रंग की,
स्याम-अंग संगन की पागीपन क्यों टरैं॥
तुम तौ हो नेमी हम प्रेमी ब्रजनिधि के हैं,
कागद समेट लेहु देखि अँखियाँ जरैं॥
आगिहु तताती अती छाती हहराती यह,
प्रानघाती काती असी पाती लै कहा करैं॥२२॥

बाँसुरी बजा बुलाई सैनन चला मिलाई,
नृत्य करि तान गाई वो छवि हियै भरी।
अधर-सुधा कौ पाई प्रीति-रीति सरसाई,
चित्त-सुखदायी हुते सु तो चित्त न धरी॥
मिली ब्रजनिधि जू सौं तापै इह प्यैंज करी,
हमकौ तो जोग ऊधौ दासी नैन में अरी।
बात कहा निरधारी तातैं सब राखी न्यारी,
बिना अपराध मार बिहारी भली करी॥२३॥

करती बिहार संग प्रीति हुती एक रंग,
भरै मुख स्याम अंग जिन्हैं देत जोग तम।
उनही के ध्यान रहैं रसना सौं कृष्न कहैं,
नित ही मिलन चहैं रह्यौ तन वो ही रम॥
ब्रज निधि मिले नहीं भैजी बात यह कही,
सुनत ही ऐसौ लागै मानौ तुम आए जम।

ऊधौ अब बोलि कम नाहीं हम माँझ दम,
सुख दुख भयौ सम तौहू नाही खात गम ।।२४।।

ऊधौ जू तिहारे संगी नवल त्रिभंगी जू की,
कहियै कहा लौं कथा विथा मन मोयगो ।
रास-रस रंगी करी ताहू मैं कुढंगी करी,
ढंगी करी मीर ते पठंगी छैके सोयगो ।
अब यह जोग तूप्यौ चेरी करि दियौ झूठौ,
ब्रजनिधि ऐंठि बैठ्यौ बिछुरि बिगोयगो ।
प्रान चीर चोरै अरु कोरी छिटकाई सब,
मैया कौ न वाप कौ हमारौ कब होयगो ।।२५।।

ग्यान सौं रतन लैकै ऊधो तुम दैन आए,
नगर मैं काहू निधिबान को दिखाइयौ ।
हम हैं गँवेलि ग्वालि गोपन की बेटी तिन्हैं,
दीबै को सँकोच अति स्याम पासि ल्याइयौ ।।
दासी वह कंसजू की कुवजा चतुरता कौ,
नीको नेम-प्रेम ब्रजनिधि मन भाइयौ ।
मुक्त-माल जोग ही जवाहर जलूस जेब,
नई करी प्यारी ताहि जाह पहराइयौ ।।२६

प्रीति मैं घातकी वात ही मैं सुदगा कौ कियो रे कियो रे कियो ।
कूबरी पाय कै धै लपटाय कै, यौं रे जियौ रे जियो रे जियो ।।
जोग को रोग लै आय ऊधौ अबै तैं रे दियो रे दियो रे दियो ।
पी उनै साँप ल्यौं प्रानै ब्रजनिधि, चाहै पियो रे पियो रे पियो ।।२७।।

संवत अठारह इक्यावन वरख मास,
कातिग उँन्यारी तिथि पंचमी सुहाई है ।
ताही समै श्री गुविंद चंद के चरन बंदि,
मेरी मति मंद छबि-छंद सौं छकाई है ।।
ऊधौ प्रति पूरब प्रसंग रस रंग भरयौ,
गोपिन प्रगट करयौ कथा वह गाई है ।
ब्रजनिधि-दास पता निहरयौ है नेह-लता,
बिरह-मता लै प्रीति पचीसी बनाई है ।।२८।।

ऊधो अपनें सब स्वारथ के लोग ।
आप जाय कुबिजा संग कीनो हमें सिखाबत जोग ।।
हम तों दुखिया भई सबै अब बिरह लगाए रोग ।
ब्रजनिधि अधर-अमृत-रस प्यायो कैसे सहैं बियोग ।।१।।

ऊधो कहूँ प्रेम-चोट नहिं लागी ।
जाहि लगै सोही वह जाने हम बिरहनि अनुरागी ।।
संग दासी के करत केलि हरि हमें करत बैरागी ।
जब सुधि आवत ब्रजनिधि जू वह रैन-द्यौस रहै जागी ।।२।।

ऊधो हम कृष्न-रंग अनुरागी ।
दृष्टि परयो जब तें वह सुन्दर रहै मूरत हिय मैं नित पागी ।।
तिरछी बंक कटाछि दृगन की उर में फँसि के लागी ।
दासी भई हम सब ब्रजनिधि की तो क्यों हमको त्यागी ।।३।।

ऊधो वे प्रीतम कब ऐहैं ।
सीतल मंजु-कुंज परछैयाँ सोवत आइ जगैहैं ।।
कहि कहि रस की बात रसीली मो तन मृदु मुसकेहैं ।
अमल-कमल -दल लोचन-चितवनि तन की ताप बुझैहैं ।।
बिरह बिथा बाढ़ी निस-वासर आन परेखे जैहैं ।
"ब्रजनिधि" सों निहचै करि कहियो फिरि पीछे पछितेहैं ।।४।।

ऊधो जाय कहियो स्याम सौं ।
भली भई मधबन बसि छाँडयो नातो गोकुल ग्राम सौं ।।
रास-रसिक गोपी-जन जीवन लाज लगत या नाम सौं ।
भाग सुहाग भरी कुबजा के रंग रंगो अभिराम सौं ।
हस तौ जोग-भोग तजि बैठौ काम कहा धन-धाम सौं ।
"ब्रजनिधि" प्रीतम देखे बिन अब गयो देह सब काम सौ ।।५।।

विरह सलिता

रेखता

कुवजा त्रिभंगि ओपी हम सब बुरी हैं गोपी ।
पहिचानि जानि लोपी ! भेजी है हमको टोपी ।।१।।

उद्धव जु ल्याया पोथी सब जोग बात थोथी ।
हम जब प्यारी जो थी कुब्जा निगोड़ी को थी ।।२।।

कै तो हमें बुलावो कै आप ह्याँ सिधावो ।
जब हमरी पीर पावो तब दिल में ह्वै ज्युँ तावो ।।३।।

पहले जु सिर चढ़ाई उस लाड़ सों लड़ाई ।
तिहुँ लोक संग गाई एती दई बड़ाई ।।४।।

अब नाखि बिच खटाई यह तुम्हारी है ढिठाई ।
हमें सब सेती हटाई फिरती हैं सटपटाई ।।५।।

सबकी दसा मिटाई कह्यो बाँधो सब जटाई ।
लहो जोग की छटाई बैठो बिछा चटाई ।।६।।

अंग भस्म को रमावो चित्त ब्रह्म में लगवो ।
इस ग्यान कोहि गावो जब ही तो मोहि पावो ।।७।।

ऊधौ ये बात साँची हम संग उसके नाचीं ।
जो हमसे उनसे माँची अब लेत क्यों लवाची ।।८।।

झूठी जो पत्री बाँची यह दासी दीहै भाँची ।
कुब्जा हुई है पाँची वह काए लंक लाँची ।।९।।

वे उसके रस में पागे रहते है अंग लागे ।
दौड के भाग जागे जिस्सेती हमको त्यागे ।।१०।।

उनको न ऐसी चहिए रूखे जवाब कहिए ।
क्यों करके गजब सहिए कहते हैं ज्ञान गहिए ।।११।।

हम हो रही हैं सूनी दिलवर हुआ है खूनी ।
तड़पन उठी है दूनी विरहा के भाड़ भूनी ।।१२।।

वह कंस की है दासी उसकी सिकल ददा सी ।
जिसनें भी डाली फाँसी भली कीनि जग में हाँसी ।।१३।।

हाहा करै है ऊधौ दिल उससे जा विलूधो ।
नहिं प्रेम पंथ सूधो हियरा रहै है रूधो ।।१४।।

तुम जस नगारे बाजे हैं हम सबहिं सुनि के लाजे ।
तुम हमको छाँडि भाजे कुब्जा के संग गाजे ।।१५।।

आफत पड़ी है ताजी प्रानन की लागी बाजी ।
जीती बचैं जो साची ऐसी करौ पिया जी ।।१६।।

माफ़ी गुनह की करिए ओगुन न जी में धरिए ।
कर बाँधि-पैंरो परिए अब तो जु इत को ढरिए ।।१७।।

अरजें हमारी मानौ तुम्हें अपनी ओर जानो ।
हम सिर पै कृष्ण बानौ सो तो नहीं है छानो ।।१८।।

बाने की लाज राखौ तुमसे है सब इलाखौ ।
गलबहियाँ आनि नाखौ रस उस तरे ही चाखौ ।।१९।।

गोकुल में आय बसिए वैसे ही रास रसिए ।
सुख करि समाज हँसिए छल छंद सों फँसिए ।।२०।।

सीखे हो बेवफ़ाई इसमें है क्या सफाई ।
जालिम जुलम जफाई करते हो दिल फकाई ।।२१।।

मिलने का मसला सुनिए अपने भी मन में गुनिए ।
कीरत का लाभ लुनिए हिलमिल को रास रूनिए ।।२२।।

जीवन जड़ी लै आवौ अमृत अधर को प्यावौ ।
रंगसंग अंग मिलावौ जियदान यों दिवावौ ।।२३।।

अब तो यही है अरजै उनको कहने जु लरजै ।
नाहिं रसना दासि बरजैं पुजवौ हमारि गरजैं ।।२४।।

ब्रजनिधि पियारे जानी हित हरख रस के दानी ।
हम चालै मरजी मानी कहिए यहै जुवानी ।।२५।।

बेनी प्रवीण

जोग की न कहियो वियोग की न कहियो भोग की न कहियो न सोग सरसाइयो ।
हित की न कहियो अहित की न कहियो और इतकी न कहियो न चित्त की जताइयो ।
बूझै जो प्रवीन बेनी रसिक रसाल लाल बालन को हाल व विहाल हू न गाइयो ।
ऊधौ मन भावन को सहज सुभावन को सावन सोहावन को आवन सुनाइयो ।।

प्रेमघन

ऊधौ कहा कही उन कैसे ।
हा हा फेरि समुझि समझावो रहे जहाँ जित जैसे ।
जेहि विधि जो जाके हित भाख्यौ उतनो ही बस वैसे ।
बरसावत बतिअन को रस ज्यौं वे बरसावहु कैसे ।
भरी प्रेम घनश्याम प्रेमधन रटत राधिका ऐसे ।।१।।

ऊधो बात कहो कछु नीकी ।
सुन्दर स्याम मदन मन मोहन माधव प्यारे पी की ।
सानि सानि जनि ज्ञान मिलावहु भाखो उनके जी की ।
हम प्रेमिन तजि प्रेम नेम नहि भावत बतियाँ फीकी ।
बरसाओ रस प्रेम-प्रेमघन और लगै फीकी ।।२।।

भारतेंदु हरिश्चन्द्र

ऊधो जौ अनेक मन होते
तौ इक श्याम सुन्दर कों देते इक लै जोग सँजोते
एक सों सब गृह कारज करते एक सों धरते ध्यान
एक सों श्याम रँग रँगते तजि लोक लाज कुल कान
को जप करै जोग को साधै को पुनि मूँदैं नैन
हिये एक रस श्याम मनोहर मोहन कोटिक मैन
ह्याँ तो हुतो एक ही मन सो हरि लै गए चुराई
हरीचंद कोउ और खोजि कै जोग सिखावहु जाई ।।१।।

भौंरा रे रस के लोभी तेरो का परमान
तू रस मस्त फिरत फूलन पर करि अपनें मुखगान
इत सों उत डोलत बौरानो किए मधुर मधु पान
हरीचंद तेरे फंद न भूलूँ बात परी पहिचान ।।२।।

करि निठुर श्याम सों नेह सखी पछताई ।
उस निरमोही की प्रीति काम नहिं आई ।।
उन पहिले आकर हमसे आँख लगाई ।
करि हाव भाव बहु भाँति दिखलाई ।।
ले नाम हमारा बंसी मधुर बजाई ।
अब हमें छोड़ के दूर बसे जदुराई ।।
कुबरी नें मोहा रहे वहीं बिलमाई ।
उस निरमोही की प्रीत काम नहिं आई ।।३।।

छांड़ि कै मोहिं गए मथुरा कुबरी तहँ जाय भई पटरानी
जो सुधि लीनी तो जोग सिखायो भए हरीचंद अनुपम ज्ञानी
गोप सों जो पै भए रजपूत लड़ौ किन जोड़ को आपुने जानी
मारत हौ अवलागन को तुम याही में वीरता आप खटानी ।।४।।

कुबजा जग के कहा बाहर है नंदलाल ने जा उर हाथ धर्‍यौ
मथुरा कहा भूमि की भूमि नहीं जहँ जाय कै प्यारे निवास कर्‍यौ
हरीचंद न काहू को दोष कछू मिलिहैं सोई भाग मैं जो उतर्‍यौ
सबको जहाँ भोग मिल्यौ वहाँ हाय बियोग हमारे ही बाँट पर्‍यौ ।।५।।

व्यापक ब्रह्म सबै थल पूरन हैं हमहूँ पहिचानती हैं
पै बिन नँदलाल बिहाल सदा हरिचंद न ज्ञानहिं ठानती हैं
तुम ऊधौ यहै कहियौ उनसों हम औंर कछू नहिं जानती हैं
पिय प्यारे तिहारे निहारे बिना अँखिया दुखियाँ नहिं मानती हैं

जाहु जु जाहु जू दूर हटो सो बकै बिन बात ही को अब यासों
वा छलिया नै बनाय कै खासो पठायो है याहि न जौन कहा सों
काहि कहै उपदेस खरो हरिचंद कहै किन जाइ कै तासो
सो बनि पंडित ज्ञान सिखावत कूबरीइ नहिं ऊबरी जासों ।।६।।

ऊधो जू सूधो गहो वह मारग
ज्ञान की तेरे जहाँ गुदरी है
कोऊ नहीं सिख मानिहै ह्याँ इक
श्याम की प्रीति प्रतीति खरी है
ये बृजबाल सबै इक सी
हरिचंद जू मंडली ही बिगरी है
एक जो होय तो ज्ञान सिखाइए
कूप ही में यहाँ भाँग परी है ।।७।।

सजन तोरी ही मुख देखे की प्रीत
तुम अपने जोवन मदमाते कठिन बिरह की रीत
जहाँ मिलत तहाँ हँसि हँसि बोलत गावत रस के गीत
'हरीचंद' घर घर के भौंरा तुम मतलव के मीत

ऊधो हरि जू सों कहियो हो जाई
बिन तुव प्रान परे संकट मैं घट सों निकसत आइ हो आइ
बढ़त बिरह दुख छिन छिन मोहन रोअत पछरा खाइ हो खाइ
'हरीचंद' व्याकुल ब्रज देखत बेगहि आओ धाइ हो धाइ ।।८।।

मेरी हरि जी सों कहियो बात हो बात
तुम बिन ब्रज सूनो मेरे प्यारे अब देख्यों नहिं जात हो जात

सूखी लता पेड़ मुरझाने गउ भई दुबरे गात हो गात
जमुना जरित बृंदावन उजर्यौ पीरे भये पात हो पात
जसुदा नंद बिकल रोग्रत हैं कहि कहि के हा तात हो तात
सो दुख देख्यौ जात न नैनन देखि दुखी तब मात हो मात
ब्रज नारिन की दसा कहा कहौ रोग्रत बीतत रात हो रात
'हरीचंद' मिलि जाग्रो पियारे करौ न हमसों घात हो घात ।।६।।

एतो हरि जी सों कहियों रोय हो रोय
तुम बिन रहत सदा ब्रज सुन्दरि
अँसुग्रन सों पट धोय हो धोय
निस दिन बिरह सतात व्याकुल
रही हैं सब सुख खोय हो खोय
'हरीचन्द' ग्रब सहि न सकत दुख
होनी होय सो होय हो होय ।।१०।।

ऊधो जी मिलाग्रो पियारे को हमहिं सुनाग्रो न जोग
हम नारी जोग का जानै हो हमरे लेखे सो रोग
बरसा ग्राई बन हरे भए घर फिरे पंथी लोग
'हरीचंद' लाग्रो श्यामहि मिटै बिरह दुख सोक ।।११।।

ग्रनत जाइ बरसत इत गजरात वे-काज
तुम रस लोभी मीत स्वारथ के सुनहु पिया ब्रजराज
दामिनि सी कामिनि ग्रनेक लिए करत फिरत हौ राज
'हरीचंद' निज प्रेम-पपीहन तरसावत महराज ।।१२

पिय सों प्रीति लगी नहिं छूटै ।
ऊधौ चाहौ सो समझाग्रो ग्रब तौ नेह न टूटै ।।
सुन्दर रूप छोड़ि गीता को ज्ञान लेइ को कूटै ।
'हरीचंद' ऐसो को मूरख सुधा त्यागि बिख लूटै ।।१३।।

पुरानी परी लाल पहिचान ।
ग्रब हमको काहे को चीन्हों प्यारे भये सयान ।।
नई प्रीति नए चाहन हारे तुमहू नए सुजान ।
'हरीचंद' पै जाइँ कहाँ हम लालन करहु बखान ।।१४।।

नंद-भवन हौं ग्राजु गई हो भूले ही उठि भोर ।
जागन समय जानि मंगल-मुख निरखन नंद-किशोर ।।

नहिं बंदीजन गोप गोपिका नाहिन गौवे द्वार ।
नहिं कोउ मथत दही नहि रोहिनि ठाढ़ी लै उपचार ।।
तब मोहि सुरत परी घर नाहिन सुन्दर श्याम तमाल ।
मुरछित धरनी गिरी द्वारहि पैं लखि धाई ब्रज-बाल ।।
लांई गेह उठाइ कोउ विधि जीवन गए अँदेश ।
'हरीचंद' मधुकर तब आए जागी सुनत सँदेश ।।१५।।

हठीले पिय हो प्यारिहु को हठ राखौ ।
तुव रूसे सों काम चले नहिं मधुर वचन मुख भाखौ ।।
आओ मधुबन छाँडि फेरहु दूर कूबरिहि नाखौ ।
'हरीचंद' को मान राखि कै अधर-सुधा-रस-चाखौ ।।१६।।

छोड़ि कै ऐसे मीठे नाम ।
मित्र प्रानपति पीतम प्यारे जीवितेस सुख-धाम ।।
क्यों खोजत जग और नाम सब करि कै युक्ति-सहेत ।
ईश्वर ब्रह्म नाम हौं आ सो श्रवन न जो सुख देत ।।
तजि कै तेरे कोमल पंकज पद को दृढ़ विश्वास ।
'हरीचंद' क्यों भटकत डोलत धारि अनेकन आस ।।१७।।

ऊधौ अब वे दिन नहि ऐ हैं ।
जिन मैं श्याम संग निसि-बासर ।
छिन सम विलसि वितैहैं ।।
वह हँसि दान माँगनो उनको
अब हम लखन न पैहैं ।
जमुना न्हात कदम चढ़ि छिपि अब
हरि नहि चीर चुरैहैं ।।
वह निसि सरद दिवस बरखा के
फिरि बिधि नाहि फिरैहैं ।
वह रस-रास हँसन-बोलन हित
हम छिन छिन तरसैहैं ।।
वह गल बाँही दै पिय बतियाँ
अब नहिं सरस सुनैहैं ।।
'हरीचंद' तरसत हम मरिहैं
तऊ न वे सुधि लैहैं ।।१८।।

हरि बिनु बृज बसिमत केहि भाएँ ।
जीवत अब लौं बिनु पिय प्यारे इन अँखियन दरसाएँ ।।
केहि सुख लागि जियत हम अब लौं यह नहि परत लखाई ।
बिनु बृजनाथ देखि बृज सूनो प्रान रहत किमि माई ।।
वह बन-विहरन कुंज कुंज मैं सपनेहू नहि देखैं ।
ऊधो जोग सुनन तव मुख सौं प्रान रहे एहि लेखैं ।।
बिनु प्रिय प्राननाथ मन-मोहन आरत हर कन्हाई ।
'हरीचंद' निरलज जग जीवत हम भाथी की नाँई ।।१९।।

गोपिन की बात कौं बखानौं कहा नंदलाल
तेरो रूप रोम रोम जिनके समाय गो ।
बिरह-बिथा से सब व्याकुल रहत सदा
'हरीचंद' हाल वाको कौन पैं कहाय गो ।।
आसुन को प्रलय-पयोधि बूड़ि जैसे जवै
डूबि डूबि सब ब्रह्म मंडहू बिलाप गो ।
पौड़त फिरौगौ आय नीर बीच होय जब
विरह-उसासन तैं बट जरि जाय गो ।।२०।।

तेरेई बिरह कान्ह रावरे कला निधान
मार बान मारै सदा गोपिन के घट पैं ।
व्याकुल रहत ताते रैन दिन आप बिन
धूर छाप रही देखौ नागिन सी लट पैं ।।
'हरीचंद' देखे बिनु आज सब बृज-ताल
बैठि कैं विसूरती कलिंदी जू के तट पैं ।
होयगी प्रलय आज गोपिन के आँसुन ते
ताते ब्रज जाय बैठो झट बंसीवट पैं ।।२१।।

गोपिन वियोग अब सही नहीं जात मो पैं
कब लौं निठुर होय मैन वान मारौगे ।
'हरीचंद' आप सों पुकारे कहौं बार बार
बेगही कृपाल अबै गोकुल सिधारोगे ।।
कहत निहोरि कर जोर हम पूछें जौन
राधा-रौन ताको कौन उत्तर विचारोगे ।
आँसुन को नीर जबै बाढ़ैगो समुद्र तबै
कच्छ रूप धारौगे कै मच्छ रूप धारौगे ।।२२।।

भिखारीदास

ऊधो तहाँइ चलो लै हमैं जहँ कूबरी कान्ह बसैं इक ठोरी ।
देखिए दास अघाइ अघाइ तिहारे प्रसाद मनोहर जोरी ।।
कूबरी सो कुछ पाइये मंत्र लगाइये कान्ह सों प्रेम का डोरी ।
कूबर भक्ति बढ़ाइये वृंद चढ़ाइये बंदन चंदन रोरी ।।१।।

कंठ कटोलिका बागन में बयो दास गुलाबन दूरि कै दीजै।
आजु ते सेज अंगारन की करों फूँकन को दुख दानि गनीजै।
ऊधो अहीरिनि के गुरु हौ उनको शिर आयसु मानिहि लीजै।
गुंजन के गंज गहो तजि लालनि डारि सुधा विष संग्रह कीजै।।२।।

मतिराम

पगी प्रेम नँदलाल के हमैं न भावत जोग ।
मधुप राज पद पाय कै, भीख न माँगत लोग ।।१।।

प्रगट कुटिलता जो करी हम पर स्याम सरोस ।
मधुप जोग विष उगलिए, कछु न तिहारो दोस ।।२।।

यौं दुख दै ब्रज बासिन कौं ब्रज कौ तजि कै मथुरा सुख पैहै;
वै रस केलि बिलासिनि कौ, वन-कुंजीन की बतियाँ बिसरहैं।
जोग सिगावन कौ हम कौ बहुर्यों तुम से उठि धावन ऐहैं,
ऊधो नहीं हम जानत ही मन मोहन कूबरो हाथ बिकैहैं ।।३।।

ऊधो जू सूधो बिचार है धौंजू कछू समुझैं हमहूँ ब्रजवासी;
मानिहैं जो अनुरूप कहौ 'मतिराम' भली यह बात प्रकासी ।
जोग कहाँ मुनि लोगन जोग कहाँ अबला मति है चपला सी,
स्याम कहाँ अभिराम सरूप कुरुप कहाँ वह कूबरी दासी ।।४।।

मधुप मोह मोहन तज्यौ, यह स्यामन की रीति ।
करौ आपने काज लौं, तुम्हें भाँति सौं प्रीति ।।५।।

निसि दिन श्रौननि पियूष सों पियत रहैं,
छाय रह्यो नाद बाँसुरी के सुरग्राम को,
तरनि-तनूजा-तीर बन कुंज बीथिन मैं
जहाँ-तहाँ देखति हैं रूप छवि धाम को ।
कवि 'मतिराम' होत हाँतो न हिए ते नैक,
सुख प्रेम गात को परस अभिराम को,
ऊधो तुम कहत वियोग तजि जोग करौ,
लोग सब करैं, जो वियोग होय स्याम को ।।६।।

मधुप त्रिभंगो हम तजी, प्रगट परम करि प्रीति ।
प्रगट करी सम जगत में कटु कुटिलनि की रीति ।।७।।

मलूकदास

सुनि सुनि बातें ऐसी माधौं सौं बसाति नाहिं जोग जोग नाहीं ताके कैसे उर आइ है ।
तुम को तो कही है यह कौन की कही है बात हम तो सही है जो पे तुम मन ल्याइ है ।।
सुन हो मलूक यह बात है परवाने वारी बय के बबूर कोइ आब । फल खाइहै ।
पर धन पाइ कै सु अति इतराइ ऊधो काहू कलपाइ है सो कैसे । कल पाइ है ।।१।।

अाउधौं उद्धव बात सुनो हम पूछत हैं तुमको सिगरियो।
अापुरी झूठ लै जोरत हो किधौ स्याम नें अापु कही सु कहा त्यों।।
बीच दिये तिन सोंह दिवावति साँचि कहो मति पाप लगें ज्यों।
अाप मलूक मिलै उन भोग मैं जोग को नापु लियो धौ ।।।।२।।

जो उन कौ हितु है हमसों यह मोनि है बात कही कों।
जोग मलूक बने तबहीं मन हाथ रहे जब जाने सही कों ।।
जोग वह्वै जो कहावत उद्धव जोग कहें हरि बाँह गही कों
नाता बात की बात कहो जु गई सुगई अब राख रही कों ।।३।।

महाराणा जवानसिंह

पहलैं लगाय प्रीत रीत ही बताई स्यांम, कुंजन मैं अंग संग रंग बरसाये हैं।
कपटी कठोर कहा जानै पर पीर ही मैं, करिकै विसासघात मधुपुर छाये हैं।
चेरो बस भये रहत हम जानत हैं, काहे कौं दुरावौं तिय रूप मैं लुभाय हैं।
ऊधौ तुम अाये बात भली बतराये हरि नेह कौं दुराये ग्यान देन कौं पठाये हैं।।१।।

मुबारक

हमको तुम एक अनेक तुम्हैं उनही के विवेक बनाय बहो।
इत आस तिहारी बिहारी उतै सरसाय कै नेंह सदा निबहो।
करनी है मुबारक सोई करौ अनुराग लता ज़िन बोय दहो।
घनश्याम सुखी रहो आनंद सो तुम नीके रहो उनही के रहो ।।१।।

रसखान

लाज के लेप चढ़ाई के अंग पची सब सीख को मंत्र सुनाइ कै।
गारडू ह्वै ब्रज लोग थक्यो करि औषध वेसक सोहं दिवाइ कै।
ऊधौ ! सो को 'रसखान' कहै जिन चित्त धरौ तुम ऐसे उपाय कै।
कारे बिसारे को चाहै उतार्यो अरे ! विष वावरे राख लगाय कै ।।१।।

काहूं सो माई कहा कहिये सहिये जु सोई 'रसखानिं' सहावैं।
नेम कहा जब प्रेम कियो तब नाचिये सोई जो नाच नचावैं।
चाहत हैं हम और कहा सखि क्योंहूँ कहूँ पिय देखन पावैं।
चेरिय सों जो गोपाल रच्यौ तो चलो री सबै मिलि चेरी कहावै ।।२।।

जो मथुरा हरि जाय बसे हमरे जिय प्रीति बनी रही सोऊ।
ऊधो बड़ो सुख येहि हमैं प्रति नीकी रहैं बलि मूरत्ति दोऊ ।।
मेरे ही नाम की छाप परी अरु अन्तर बीच रहै नहिं ओऊ।
राधिका कृष्ण सबैं तौ कहौं पर कूबरी कृष्ण कहै नहिं कोऊ ।।३।।

सार की सारी सो भारी लगै धरिहै कहाँ सीस बघंबर दैया ।
दासी जु सीख दई, सो दई पै लई गहि क्यों 'रसखानि' कन्हैया ।।
जोग गयो कुबजा के कलाब मैं री कब ऐहौ ऐस है जसोमति छैया ।
हा हा न ऊधो कुढ़ाओ हमें, अब ही कही दे ब्रज बाजैं बधैया ।।४।।

रघुनाथदास राम सनेही

सुमिरि राम सिय संत गुरु गणपति सुखदानि ।
भँवरगीत हरि मीत मत शुक कृत कहत बखानि ।
रे नृप यदुन में श्रेष्ठा । सखा स्याम को भाग्य बरेष्ठा ।
शिष्य बृहस्पति को बड़ज्ञानी । कृपा सिंधु ब्रज की सुधि आनी ।।
तिन उद्धव कहँ लीन बोलाई । ज्ञान मान सोवन मन आई ।।
बोले तात जाहु ब्रज माहीं । लावहु खबर मिली सुधि नाहीं ।।
नंद बबा के गहियो पाऊँ । विसरि जाइँ जनि हमरो नाउँ ।।
पालगन मैया तें कहियो । कृपा करत बलकन पर रहियो ।।
गोपिन ते सुठि योम संदेशु । बररायो तुम तजि सकल अँदेशू ।
जो वै कहैं वचन सुनि सहवी । करि विवाद पुनि जरी नदहबी ।
चरण परसि चढ़ि रचहिं सिधाये । ब्रज रवि अस्त समय बलि आये ।
रजमंडित पुर सुरभि मन पाछे । वृष डोलत खग बोलत आछे ।।
राम कृष्ण गुण गावें पुरजन । धूप दीप करि पूरित लखिवन ।
प्रभुदित ह्वै प्रविशे पुरमाहीं । खबरि पाइ निज पुत्रन पाहीं ।।
पुर नर नारि परम सुख माना । राम कृष्ण आवत है जाना ।।
वैसे स्पंदन वृषभ विशाला । वैसे मुकुट पीत पटमाला ।
निकट जाइ उद्धव को लीन्हा । हरण शोक मन में तब कीन्हा ।
नंद पँवरि पहुँचे सुनि जबहि । निकसि महरि आई ढिग तबहीं ।।
श्याम सखा लखि चरण पखारे । सुन्दर अष्ट शिला बैठारे ।
मुदित बनाय असन करवाये । अचबन करि जब सेज हिलाये ।।
तब यसुमति बोली जलडारी । हैं नीके बल कुंज बिहारी ।
पालिपोषि हम कीन्ह बड़ेरे । बाजत पुत्र देवकी केरे ।।
जब ते गये सुधिहु नहि लीन्हीं । धाइउ के नाते तजि दीन्हीं ।।

लीन्हें छीनि प्राण बसुदेऊ। तब ते तात न आने केऊ।।
हमहीं जाइ तासु घर रहतीं। दासी ह्वै सुख देखन चहतीं।।
बैरी भये कुहुम्बी मेरे। जान न दीन्हिन निरखि निबेरे।
शूल होत नवनीत निहारी। मोहन के मुख योग बिचारी ।।
प्रांतै खात रहैं दधि रोटी। को अब देत होइगो ओटी।
कीन्हें चरित लालमन जोई। सुमिरि सुमिरि अब आवत रोई।।
निशि न नींद दिन लगत न भूखा। बदन ब्रजपति कर रूखा ।।
गौ न सबैं पय तृण न चरहीं। वछरन सहित सकल हुंकरहीं।।
बालक तरूण जरठ सब लोगा। भये क्षीण तनु श्याम वियोगा।।
हम आपनि किति दशा बखानी। दीन्हों काढ़ि नयन निज पानी।
ऐसे दुख देनें को रहेऊ। तो कत दावातें निरबहेऊ।।
इन्द्र कोप ते नाहक राखा। गिरिहि छाँड़ि देते करि माखा।।
कठिन शोक निशि बासर केरा। दीन लाल करि मधुपुर डेरा।।
जीवत सकल दरश के लागे। पुनि कबहूँ देखत हरि आगे।।
कह्यो तात कब ऐहैं भैया। कब मोहिं गोहरैहैं करि मैया।।
कब गहि कै दधि मथत मथानी। कब मँगिहै माखन हठ ठानी।
एक दिवस मैं रिशि वश बाँधा। सो सुधि करि दुख होत अगाधा।
कह्यो जाइ आवैं घर अपनें। अब कबहूँ नहिं बांधव सपने।।
माखन खात न बरजव रोसी। उरहन देत न सुनब परोसी।।
जल पति कर जाना। तासु मातु संग पठव बनाना।।
मैं जानत सुख तिन्हैं न होई। हठि राखत ह्वै हैं सब कोई।।
कहा करौं परवश मैं ताता। कहुँ कहुँ गुणहुँ होत दुख दाता।।
शुक सारिक जो पढ़ते नाहीं। तौ कत परत पींजरे माहीं।।
शब्दवेध शर जो न चलौते। अंध शाप कत दशरथ पौते।।
रवि शशि जो नहिं करत प्रकाशा। तौ सन्तन कत फिरज अकाश।
जो न होत रघुपत के दाया। बन दुख कत सहत निकाया।।
जो न लाल को आवत जान्यो। तब देवें ते वचन बखान्यो।।
जो रखती हौ हम पर नेहू। तो सुन पठइ हमारे देहू।।
जो कोई कोटिन लाड़ लड़ावे। तदपि लाल हमते सचु पावै।।
तुम्हरे पुत्र सही सुनु भाइ। एक बार मुख जाई देखाई।।
यह विधि वचन कहत बहु भाये। तेहि क्षण नंद खटिक ते आये।
भेंटे डठि उद्धव पुलकाई। लीन्हें निज आसन बैठाई।।
लागे बूझन कुशल सप्रीके। हैं वसुदेव देवकी नीके।।

नीके रहत कृष्ण बलरामा । कहु आगमन कहिनि निज धामा ।।
तोतलब बचन बोलि सुख लागी । बड़े सुख दीन्हिन त्यागी ।।
हमहूँ ते कछु बना न जाना । जगत पिता बालक करि माना ।।
कोमल चरण खरक अधिकाई । तहँ उनते हम गोचर वाई ।।
उनवाहू में करेउ न रोषा । गुण गहि जु सब छिपाये दोषा ।।
हरि की बात हरी ते बनई । थोरहि में जरि उठते मनई ।।

नाम लेई जेहि युवति को नहि सुहाइ सुनि तासु ।।
राम जानकी के कहे तुष्टत तेहि पर आसु ।।

यहि विधि नंद करत पछितावा । तव उद्धव अस वचन सुनावा ।।
अहो नंद यसुमति तुम दोऊ । शील सुकृति की मूरति होऊ ।।
क्योंकि राम कृष्ण भगवन्ता । प्रणतपाल दुष्टन के हंता ।।
तिनके चरण कमल चित लायो । यहिते अधिक न कछु श्रुति गायो ।।
हरिहिं आपु सुमिरत हौ जैसे । तन मन धन वारण करि तैसे ।।
तुमते तात न बाहर दोऊ । वेचौ जहाँ बिकैं तहँ दोऊ ।।
जब तब बात तुम्हारी गावै । कहत कहत गदगद ह्वै जावै ।।
चलत कहिनि पालागन बाता । उऋण न हम तुमते पितु माता ।।
प्रतिपालन तुम कीन्ह हमारा । होइ है युग युग सुयस तुह्मारा ।।
देखौ त्रिभुवन पति गिरिधारी । चाहत करुण दृष्टि तुम्हारी ।।
बातन होइ बोध केहि भाँती । जाको रहै सरल सुख जाती ।।
हरिगुण कहत भई निशिनासा । बोले द्विज अलि लीन सुबासा ।।
दीप जोरि गृह गोप लुगाई । लगी मथन दधि हरि गुण गाई ।।

तव उद्धव वृषमानुपुर चले रजायसु पाइ ।
मारग में अवलोकि रथ मिलीं गोपिका आइ ।।

गिरिधर की अनुहारि निहारी । बोलीं तव गोपन की बारी ।।
आप गवन इत कितते कीन्हों । जानि परत मोहन सुधि लीन्हो ।।
बोले तब उद्धव हम आये । मधुपुर ते ब्रजनाथ पठाये ।।
परम मित्र हैं कृष्ण हमारे । हम हैं उनके बहुत पियारे ।।
सुनि सब बैठि गई तेहि ठौरा । बोलीं कहौ कान्हकर व्यौरा ।।
उद्धव नन्दनदैन हैं नीके । हम सबहिन के जीवन जीके ।।
कब आइहैं कछु कहिनि बखानी । शोभा शील गुणन की खानी ।।
गिरि अरि सुत रिपु पुरी बिताई । अजहूँ नहिं आये सुखदाई ।।

उद्धव हम सब श्याम विहीना । विकल होत जिमि जल बिनु मीना ।।
निशि न नींद दिन अशन न भावै । नयनपलक सम कलप वितावै ।।
हरि बिन सेज भयानक लागै । कारागार सरिस ग्रह जागै ।।
शीतल मंद सुगन्धित वाई । लागत मनहुँ अग्नि ते आई ।।
विरह वह्नि सव अंग जरावत । जारिन जात लोचन जल नावत ।।
हमते श्याम करी हैं ऐसे । बधिक करै पक्षिन ते जैसे ।।
प्रथमें प्रीति आपही जोरी । पाछे नाव मांझ सरि बोरी ।।
तुम उद्धव आये भल कीन्ह्यों । हम सवका अबलेवन दीन्ह्यों ।।
सुनियत रहै संत परमारथ । करत रहत सोइ दीख पारथ ।।

सजन स्वारथी नरन की स्वारथ ही तक प्रीति ।।
खग मृग जार असार लखि तजत सुथल सुखरीति ।।
बहुरंगी जित तितहिं सुख यक अंगी कर अंत ।।
जिमि गनिकानिधर कर हट दहत सती बिन कंत ।।

तिमि उद्धव हम हरि को जानै । श्याम चहैं मानैं नहिं मानैं ।।
सुनि उद्धव गोपिन की बानी । योग संदेश न सकत बखानी ।।
सुफलक सुतै परी कठिनाई । उत अज्ञा इत प्रेम अधाई ।।
धरि धीरज पुनि काढ़ी पाती । बोले बाँचि जुड़ाबो छाती ।।
हमते नाहिन बनी बनाई । चितवत गली छुवत जरि जाई ।।
आपु कृपा करि बाँचि सुनावो । श्याम मुखामृत वचन सुनावो ।।
सुनि उद्धव तब बाँचन लागे । लागीं सुनन बैठि सब आगे ।।
गोपी सकल सुनो मम बचना । भूलहु मत माया की रचना ।।
जो कहुगो गोचर में आवै । माया कृत सो चिर न रहावै ।।
छोड़ि देहु तेहि ते असनाई । निरगुण ब्रह्म जपहु मन लाई ।।
पूरन है सब घट में सोइ । कौन से ठौर जहाँ नहि होई ।।
पाँच पचीस तीन घट तेरे । पृथक रहत पुनि विमल वसेरे ।।
सौ हम तुम तुमसे अरू मोसे । क्षणहू मात्र वियोग न होसे ।।
आत्म आत्म से हम प्रगटावैं । पालन करि पुनि नाश करावैं ।।
रचत सकल निज माया जाते । कार्य अन्त पुनि कारण नाते ।।
कारज तजि कारण मन लावो । जेहि ते सकल परम पद पावो ।।
निरमल नीर भरा तव नेरे । मरत पियासन तेहि बिन हेरे ।।
तजि कुसंग एकांत पसीजै । द्वादस संयम नियम करीजै ।।
सूक्षम भोजन स्वल्प पियासा । करहु त्याग वसु भोग बिलासा ।।

पदमासन निरमल करि मन का। शोधत रहौ सदा निज तन का ।।
पूरक कुंभक रेचक करहू। उलटि ध्यान त्रिकुटी को धरहू ।।
सोहं शब्द माँहि चित राखौ। मन ते सकल कामना नाखौ ।।
दश प्रकार अनहद, धनि पावो। कौतुक विविध देखि छकि छावो ।।
यहि विधि योग ज्ञान जब गावा। तब गोपिन अधिकौ दुख पावा ।।

यथा वैद्य औषध करै बिन पहिचानें रोग।
सो औषध लागै नहीं उलटि बढ़ै तेहि रोग ।।
तेहि अवसर इक मधुप तहँ आयो करि गुंजार।
वैठि गयो राधिका कै चरण कमल लखि सार ।।

तब सब गोपी मधुपुर ठारी। लगी कहन उद्धव ते सारी ।।
मधुकर तुम पगते उड़ि जाहू। श्याम शरीर निठुर सब आहू ।।
मधुकर तहाँ फूल जहँ फूले। सूखी लतन जात नहिं भूले ।।
रूप रहसि सब गिरिधर केरी। है रौरे में गुप्त न हेरी ।।
आई वकी दियावन सीरा। डारिनि ताहि मारि बलवीरा ।।
शूर्पणखा रघुपति पहँ आई। नाक कान तेहि लिहिन कटाई ।।
वलि बावनई सुसर्बस दीन्हा। तबहुँता सुत बंधन कीन्हा ।।
ब्याहु किहिनि हरिहर कागोसी पुनि आपुहिं मिलि ठानि निहासी ।।
कोयल सुतहिं काग प्रतिपालै ऋतु बसंत तेहि तजि उड़ि चालै ।।
उरगै दूध प्रीति ते प्यावै उलटि अमी सों विष ह्वै जावै ।।
केंचुल त्यागि न सुधि फिरि लीन्हीं। तैसे श्याम हमें तजि दीन्ही ।।
यामें भूल न उनकी भारी। कारेन की करनी है कारी ।।
परकट जिन कीन्हें युगताता। क्यों न कहै यहि विधि की बाता ।।
तथा तुमहुँ कछु अघटित नाहीं। रुप छड़ायग हावत छाहीं ।।
उद्धव श्यामहिं लाज न आवत तेहि पर सुवियत दल कहावत ।।
हमका ज्ञान योग लिखि भेजा। आपु रहत कुबरी की सेजा ।।
जिय गणिका निज कस वैठाने। औरन ते बैराग बखाते ।।
तेहि के वचन कहो को मानैं तैसे श्याम देत है ज्ञानैं ।।
यक तौ अंध कूप में डारी। हेरत पेथ न परत निहारी ।।
तेहि पर तुम निज ज्ञान सुनावा। मानहु मुख ऊपर ते तावा ।।
उद्धव तुम हो चतुर सुज्ञानी। देश काल लखि कहिये बानी ।।
जाके मलै अनल समतावै। तेहि के कहा गरल लगवावै ।।
हम वनितन को चाहिय भोगा तिनका आय सिखावत योगा ।।

उद्धव हम सब श्याम विहीना। विकल [illegible]त जिमि जल बिनु मीना ॥
निशि न नींद दिन अशन न भावै। नयनपलक सम कलप वितावै ॥
हरि बिन सेज भयानक लागै। कारागार सरिस ग्रह जागै ॥
शीतल मंद सुगन्धित वाई। लागत मनहुँ अग्नि ते आई ॥
विरह वहिन सव अंग जरावत। जारिन जात लोचन जल नावत ॥
हमते श्याम करी हैं ऐसे। बधिक करै पक्षिन ते जैसे ॥
प्रथमें प्रीति आपही जोरी। पाछे नाव मांझ सरि बोरी ॥
तुम उद्धव आये भल कीन्ह्यों। हम सवका अबलेवन दीन्ह्यों ॥
सुनियत रहै संत परमारथ। करत रहत सोइ दीख पारथ ॥

सजन स्वारथी नरन की स्वारथ ही तक प्रीति ॥
खग मृग जार असार लखि तजत सुथल सुखरीति ॥
बहुरंगी जित तितहिं सुख यक अंगी कर अंत ॥
जिमि गनिकानिधर कर हट दहत सती विन कंत ॥

तिमि उद्धव हम हरि को जानै। श्याम चहैं मानैं नहिं मानैं ॥
सुनि उद्धव गोपिन की बानी। योग संदेश न सकत बखानी ॥
सुफलक सुतै परी कठिनाई। उत अज्ञा इत प्रेम अधाई ॥
धरि धीरज पुनि काढ़ी पाती। बोले बाँचि जुड़ाबो छाती ॥
हमते नाहिन बनी वनाई। चितवत गली छुवत जरि जाई ॥
आपु कृपा करि वाँचि सुनावो। श्याम मुखामृत वचन सुनावो ॥
सुनि उद्धव तब वाँचन लागे। लागीं सुनन बैठि सब आगे ॥
गोपी सकल सुनो मम बचना। भूलहु मत माया की रचना ॥
जो कहुगो गोचर में आवै। माया कृत सो चिर न रहावै ॥
छोड़ि देहु तेहि ते असनाई। निरगुण ब्रह्म जपहु मन लाई ॥
पूरन है सब घट में सोइ। कौन से ठौर जहाँ नहिं होई ॥
पाँच पचीस तीन घट तेरे। पृथक रहत पुनि विमल वसेरे ॥
सौ हम तुम तुमसे अरू मोसे। क्षणहू मात्र वियोग न होसे ॥
आत्म आत्म से हम प्रगटावैं। पालन करि पुनि नाश करावैं ॥
रचत सकल निज माया जाते। कार्य अन्त पुनि कारण नाते ॥
कारज तजि कारण मन लावो। जेहि ते सकल परम पद पावो ॥
निरमल नीर भरा तव नेरे। मरत पियासन तेहि बिन हेरे ॥
तजि कुसंग एकांत पसीजै। द्वादस संयम नियम करीजै ॥
सूक्षम भोजन स्वल्प पियासा। करहु त्याग बसु भोग बिलासा ॥

पदमासन निरमल करि मन का। शोधत रहौ सदा निज तन का ।।
पूरक कुंभक रेचक करहू। उलटि ध्यान त्रिकुटी को धरहू ।।
सोहं शब्द माँहि चित राखौ। मन ते सकल कामना नाखौ ।।
दश प्रकार अनहद, धनि पावो। कौतुक विविध देखि छकि छावो ।।
यहि विधि योग ज्ञान जब गाबा। तब गोपिन अधिकौ दुख पावा ।।

यथा वैद्य औषध करै बिन पहिचानें रोग।
सो औषध लागै नहीं उलटि बढ़ै तेहि रोग ।।
तेहि अवसर इक मधुप तहँ आयो करि गुंजार।
बैठि गयो राधिका कै चरण कमल लखि सार ।।

तब सब गोपी मधुपुर ठारी। लगी कहन उद्धव ते सारी ।।
मधुकर तुम पगते उड़ि जाहू। श्याम शरीर निठुर सब आहू ।।
मधुकर तहाँ फूल जहँ फूले। सूखी लतन जात नहिं भूले ।।
रूप रहसि सब गिरिधर केरी। है रौरे में गुप्त न हेरी ।।
आई बकी दियावन सीरा। डारिनि ताहि मारि बलवीरा ।।
शूर्पणखा रघुपति पहँ आई। नाक कान तेहि लिहिन कटाई ।।
वलि बावनई सुसर्बस दीन्हा। तबहुँता सुत बंधन कीन्हा ।।
ब्याहु किहिनि हरिहर कागोसी पुनि आपुहि मिलि ठानि निहासी ।।
कोयल सुतहिं काग प्रतिपालै ऋतु बसंत तेहि तजि उड़ि चालै ।।
उरगै दूध प्रीति ते प्यावै उलटि अमी सों विष ह्वै जावै ।।
केचुल त्यागि न सुधि फिरि लीन्हीं। तैसे श्याम हमें तजि दीन्ही ।।
यामें भूल न उनकी भारी। कारेन की करनी है कारो ।।
परकट जिन कीन्हें युगताता। क्यों न कहै यहि विधि की बाता ।।
तथा तुमहुँ कछु अघटित नाहीं। रुप छड़ायग हावत छाहीं ।।
उद्धव श्यामहिं लाज न आवत तेहि पर सुवियत दल कहावत ।।
हमका ज्ञान योग लिखि भेजा। आपु रहत कुबरी की सेजा ।।
जिय गणिका निज कस बैठाने। औरन ते बैराग बखाते ।।
तेहि के वचन कहो को मानैं तैसे श्याम देत है ज्ञानैं ।।
यक तौ अंध कूप में डारी। हेरत पेथ न परत निहारी ।।
तेहि पर तुम निज ज्ञान सुनावा। मानहु मुख ऊपर ते तावा ।।
उद्धव तुम हो चतुर सुज्ञानी। देश काल लखि कहिये बानी ।।
जाके मलै अनल समतावै। तेहि के कहा गरल लगवावै ।।
हम वनितन को चाहिय भोगा तिनका आय सिखावत योगा ।।

धरत मरालन सुत शिर मेरू । जिनते चलै न पग भरि सेरू ॥
उद्धव कछु तुम्हरी न लगाई । संगति करे दोष लगि जाई ॥
रस लम्पट गिरिधरन लवारा क्यों न होइ तिन संग सुवारा ॥

लम्पट की संगति किहे द्वादश गुण नशि जात ।
प्रथम सत्य पुनि स्वच्छता अरु संयम की बात ॥
अरु संयम की वात मौन ब्रत माया जानौ ।
शम दम दया सुबुद्धि सहन शीलता पिछानो ॥
प्रभुता वश नहिं रहत बसत हिरदय यहँ कम्पट ।
कपिल वचन बुध जान करत नहिं संगति लम्पट ॥

जो कहो ऐसे पुरुष ते क्यों तुम कीन्ह्यों प्रीति ।
कार्यं लिखा तेहि कांकरै जरै शलभ की भीति ॥
प्रेमहि मरन न लखि परै करै हरषि तनु अर्थं ।
जिमि गज कुरंग पतंग अलि झष पिक परिवा सर्व ॥
मित्रहि चैन न मित्र बिन कैसो करै बिगार ।
जिमि गृह जारै अग्नि पुनि होत अग्ति को प्यार ॥

बोली अपर सखी सुनि लेहू । नाहक दोष श्याम कर देहू ॥
उनमें कछु लम्पटता नाहीं । प्रीति पाय परवश ह्वै जाहीं ॥
तदपि रहत निरलिप्त विशेखा । पथ लहि यमुना में तुम देखा ॥
जो कहो अब का प्रीति न हममें । रहत न कोउ इक रस हर हम मैं ॥
जो कोई है प्रभुता श्री मानें ! तेपर बेदन सुनै न जानै ॥
देखौ शीश धरे महिं भारी । सोये तेहि पर जाय मुरारी ॥
अब नँद नंद भये महराजा । जो कछु करें उन्हें सब छाजा ॥
दिन प्रति पावक सरिस सोहावन । बोली अपर सखी महि भावन ।
प्रभुता की कहु लाग न होई । चेरी संग गई मति खोई ॥
कैसो चतुर होय किन कोऊ । नीच संग करि बिगरत सोऊ ॥
परम प्रवीण केकयी रानी । चेरी संग ते मति बौरानी ॥
गृह जल गद पद पवन समाना । पाइ कुयोग न को बिनसाना ॥
उद्धव ब्रह्म सबैं तुम कहेऊ । अब हीं भयो कि आगे हुरहेऊ ॥

ऊधो जब जब पाप ते उठति धरनि अकुलाई ।
तब तब क्यों सुर मुनि सकल हरिहि पुकारत जाइ ॥

हरिहि पुकारत जाइ आप किन धरि धरि रूपा ।
हरैं विश्व को भार होइँ जो ब्रह्म स्वरूपा ।।
तेहि ते बाद विवाद त्यागि कहिये पथ सूधो ।
ब्रिन प्रभु सेवक भाव तर्‌यो भव निधि को ऊधो ।।

माया बाद मदांध करि भूषित भो जेहि ज्ञान ।
सो अहं अस्मि ब्रह्म सो पुनि पुनि करत बखान ।
पुनि पुनि करत बखान कुत्र ऐश्वर्य मती ते ।
कुत बिमुक्त कुत भूमिं कुत्र सरवज्ञ गती ते ।।
तेहि ते ब्रह्म न जीव अहौ तुम सुख बश काया ।
बुन्द कहै में सिन्धु होइ किमि बिन हरिमाया ।।

जो कहौ पृथ्वी ब्रह्म सम घट सम जीव अनेक ।
ताहि लखौ वा ना लखौ अन्त होब सब एक ।।
एक भयो तो क्या भयो पुनि नहि गदी कुखाल ।
तेहि ते माया बाद तजि भजौ नन्द को लाल ।।
उद्धव तस्कर कयद में परो कहै हौं भूप ।
तौ का छूटै करम वश त्यौं तुम ब्रह्म स्वरूप ।।
ईश्वर आप स्वतंत्र है जित चाहे तित जाइ ।
सर्व शक्ति जाके विषे भाव सरिस दरशाइ ।।
सोहं सोहं जपत हैं जहँ तक अग जीव ।
राम कृष्ण सुमिरे बिना लहै न कोई पीव ।।
उद्धव तुम्हरी बात इमि जिमि गोपी हित भाड़ ।
जो जेंवत हैं सेर भरि सो किमि होवै चाड़ ।।
कर्मयोग तव तक करै जब तक प्रेम न होइ ।
प्रेम पाठ पढ़ि क्यों पढ़ें कक्का किक्को सोइ ।।
उद्धव तुम्हरी वात सुनि भयो न हमरे रोष ।।
अपनोइ खोटो दाम तौ पर खैये का दोष ।।

बोली अपर सुना हम ऐसा । कहत श्याम है ब्रज धौं कैसा ।।
गोपिन को सुनि नाम लजाहीं । चित्र धेनु लखि सकुचत आहीं ।।
भूलि गई माखन की चोरी । खात रहैं घर सकल ढिंढोरी ।।
जो यह बात रहै मन माहीं । तौ कत किहिनि रहस हम पाहीं ।।
प्रथमै ज्ञान विराग सिखावत । जिहि ते कछु मन हूँ में आवत ।।

जब हम रंगी श्याम के रंगा। तब लिखि पठवा ज्ञान प्रसंगा ।।
मधुकर को तजि सुरसरिवारी। कूप खोदि जल पीवै खारी ।।
गो तजि आक दुहै को बौरा। को तजि पारस माँगै कैरा ।।
को तजि श्याम सगुण मणि चारू। खानत फिरै कलि अगुण पहारू ।।
रूपरेख कछु जाके नाहीं। तौ का करब शून्य के माहीं ।।
अगुण सगुण युग ब्रह्म कहावत। सो तेहिं भजत जाहि जों भावत ।।

यथा विरोचन कुमुद दोऊ हैं विराट के नैन।
काहुइ भावत दिवस पति काहुइ शशि में चैंन ।।

तेहि प्रकार हम श्याम उपासी। हैं सबही विधि उनकी दासी ।।
मुक्ति भक्ति हम को नहि चहिये। प्रेम भक्ति किरपा करि कहिये ।।
जो कल ज्ञान कहे बिन नाहीं। तौ चलि जाइ वनारस मांहीं ।।
हमरे तौ मन एक रहावा। गयऊ श्याम संग बहुरि न आवा ।।
को अब अगुण ईश अवराधे। को एकान्त में आसन साधे ।।
तलफत दृग बिन लखे किशोरा। को चितवै भृकुटी की कोरा ।।
जरत रहत निशि बासर अंगा। कीन्हे बिन गिरि धरण प्रसंगा ।।
तुम जो कहत हरि हिरदय माहीं। शीतल हमैं करत कत नाहीं ।।
ब्रह्म अंश कैसे हैं कान्हा। माते भवन उदर में नान्हा ।।
मुख पसारि देखरावत भयऊ। तब का ब्रह्म पृथक रहिगयऊ ।।
कारण ते कारज है नीका। यथा कान्हे ते दर रस फीका ।।
कारण अगर रहत है संगा। कारज अतरबिकत सो महँगा ।।
तुमही कारण में मन लावो। हमें श्याम में प्रीति दृढ़ावो ।।
जो हरि तजि करि घासन्हि चरहीं। तौ हमहूँ जप योगहि करहीं ।।
भक्षहिं हंस मीन तजि मोती। तौ हमहूँ सब ध्याइय जोती ।।
जो रण शूर तेज तजि देवैं। तो हमहूँ तुम्हरो मत लेवैं ।।
अडल विहंग महि बैठे हारी तो हमहूँ निर्गुण मति धारी ।।
जो चातक सरवर जल पावैं। तौ हम ब्रह्म श्याम तजि ध्यावैं ।।
पशु पक्षी निज टेकहिं करहीं। हम मानुष कैसे परिहरहीं ।।
ऊधो तुम बिरही हौ नाहीं। नाहीं दास नहिं मित्रन माहीं ।।
विरही मीन जहि अनुरागे। बिछुरत प्रीतम के तनु त्यागे ।।
दास भाव पपिहा में जाना। विनु स्वाती जल करै न पाना ।।
गरजित रजि रबि डारत मेहा। तदपि बढ़त दिन प्रति नव नेहा ।।
मित्र कमल बिन लखत मारी। तुरत जात है सम्पुट मारी ।।

मधुकर हम चातक सम अहंई। बिन श्याम हम और न चहई ।।
यातन को विधि फेरि बनावै। तबहूँ भोहन मोहन लावैं ।।
जो त्वचकाढ़ि दुंदुभी साजै। सोऊ लाल लाल कहि बाजै ।।
गाड़ि देइ मृतिका ह्वै जामैं। विरह फूल फलउ रैना मैं ।।
मुये अंग की है यह रीती। जीवत किमि छुटत है प्रीती ।।
बोली अपर भली विधि हेरे। कठित लोग हैं मधुपुर केरे ।।
जिनकी संगति परि नंदलाला। सीखत भयो योग कर हाला ।।
हमहूँ को आये बहकावन। फूंकन चहत सुमेरू उड़ावन ।।
मधुकर आपन योग दुरावो। हम पूछें सो वरणि सुनावो ।।
व्रज में कब ऐ हैं बनवारी। कब हरि हैं चूनरी हमारी ।।
कव दधि दान माँगि है रोकी। हमहूँ अब हट कर बन कोकी ।।
कारहैं रहस केलि कब आई। खै हैं माखन कवै चोराई ।।
कब बजाय मुरली मन म्वैहैं। कब दुरिकै हमरे घर खैहैं ।।
जेहि सुख हित हम भइन कनौड़ी। सो सुख अब लूटत है लौड़ी ।।
कीन्हिसि कौन तपस्या भारी। ज्यहि ते पाइसि पति गिरिधारी ।।
कब अब सुनब हमारे लागी। दीन्हो श्याम कूबरी त्यागी ।।
कहियो मधुप श्याम ते जाई। कहां गई ब्रज की चतुराई ।।
किहे सनेह सयानप दुक्खा रहत न सुमति सयानप सुक्खा।।
हम युवतिन कहं लिखत विरागा। आप पड़े चेरी के रागा ।।
अपना गुरु भये संयोगी। केहिं प्रकार हम होईं योगी ।।
जो गुरु ही निज भद्रन चीन्हा। तिन शिष्यन को कब सुख दीन्हा ।।
जो गुरु काम क्रोध के जरई। तौ शिष्य को कब शीतल करई ।।
जो गुरु है तृष्णा वश लोभी। सो शिष्य को किमि करें अक्षोभी ।।
जो गुरु है पाथर की नावा। सो शिष्य को कब पार न पावा ।।
जो गुरु को कछु पढ़ि नहि आवें। तो शिष्य को केहि भाँति पढ़ावै ।।
त्यहि ते आपु दशा पर आवैं। तब हमको लिखि योग पढ़ावै ।।
ज्यहि ते कछु लागै उपदेशा। करहिं सकल योगी कर भेशा ।।
जो जल जरन आप ही लागै। तौ तजि मीन कहाँ को भागै ।।
लखि गोपिन को प्रेम प्रमाना। बिसरि गयौ उद्धव को ज्ञाना ।।
करत भयो गुरु गोपिन कै हां। पाइनि एक अनन्य ब्रत तैहां ।।
रहै मास षट तिनके पासा। देखत डोलें कुंज विलासा ।।
मैं मधुबन की प्रीति बहोरी। वोले गोपिन ते करजोरी ।।
तुम सब अहों प्रेम की खानी। क्यहि बिधि हम उत्कर्ष बखानी ।।

चातक मीन चकोर मृगाऊ। चरण किहिनि तुम्हार स्वभाऊ ।।
हमते जब तब्र प्रीति तुम्हारी। वर्णत रहै मुदित बनवारी ।।
उद्धव हम तनु कोटि बनाई। करें गोपिकन की सेवकाई ।।
तबहूँ कछु उद्धार न मानी। ऐसी मम सेवा उन ठानी ।।
ज्ञान के मिसि तिन मोहि पठावा। झाई तजि हरि रूपहि पावा ।।
अब करि कृपा देहु वर एहू। बढ़ै कृष्ण पद नित नव नेहू ।।
खग पशु विटप लता तनु पाई। जन्म जन्म ब्रज बसिये आई ।।
तुम्हरे चरण कमल की धूरी। आप होत भागते भूरी ।।

जो मैं कीन्हीं ढीठता हरि को आयसु मानि।
करेहु क्षमा अपराध सो अनुज आपनो जानि ।।

उद्धव तुम जानत सुखदायक। हम हैं कौन बढ़ाई लायक ।।
लोक वेद तजि कहत बढाना। व्यहि ते निन्दत सकलज हाना ।।
तुम हौ तात सराहन योगा। क्षमावन्त सव भाँति विशोभा ।।
हम अहीर वहु भाँतिन केरे। कहे कठोर वचन वहुतेरे ।।
तुम्हरे माष न तनकहु आवा। धन्य धन्य जननी जिन जावा ।।
उद्धव कृपा श्याम की चाही। निकटहु दूरि उभय भल आही ।।

बन बरही वारिद नियत लक्षान्तर रविपद्य।
बिलख कुमुद शशि सुख लहत लखि सनेह निज सद्य ।।

बिन सनेह उप दूरि विशेखी युग अंगुल श्रुनि परत न देखी ।।
चिरंजीव रहें दोऊ भाई। मधुपुर करहिं राज सुख पाई ।।
उद्धव हमरे दोऊ कर लाडू। मिले तो अनिभल हरि तजि आडू ।।
जो न मिलव तबहूं भल जानौ। भयौ सुयस तिहुं लोक पिछानौ ।।
कहँ हम जात वरण कुल हीना। श्रुति मर्यादा सोउ तजि दीना ।।
कहँ हरि श्रीपति पालक सगरे। सो सव बिधि कहवावत हमरे ।।
इत उत फिरि फिरि ब्रज ही भावै। जिमि परवा छतुरी पर आवै ।।
सत्य वचन तव झूठ न आहीं। हरि निज जन वश सदा रहा हीं ।।
कहेउ उद्धव अब आज्ञा दीजै। तौ हत गमन मधुपुरी कीजै ।।
तीनि दिवस कर आयुस भयऊ। तेहि के बीति मास षट गयऊ ।।
हमरी सुधि न बिसारब देवी। सव विधि जानि आपनो सेवी ।।
बिछुरन विरह सबन के जागा। कीन्हेनि विदा सहित अनुरागा ।।
रथ चढ़ि चलि निज आश्रम आये। समाचार यदुनंदन पाये ।।

पठवत भये दूत यदुनाथा। आये भवन तुरत्यहि साथा ।।
भेटे श्याम सखै मन लाई। बूझत भे ब्रज की कुशलाई ।।
सुनि उद्धव सब बात प्रकासी। तुम बिन दुखित रहत ब्रजवासी ।।
यक दिन आवो दरस दिखाई। सुनत वचन बोले यदुराई।
मम श्वास वेदन की ऋचा हैं गोपिकन के दुख कहा।
सुनिहैं जे कहिहैं चरित तिनके नाशि हैं संकट महा ।।
जो कहौ रहत वियोग क्यहि हित सुनहु सो उनि कामहुं।
यक दिन गयौ यक सखी घर हौं द्वार राखि सियाम हूँ ।।
तहाँ आइ प्यारी चहत प्रवेश सखा रोकत रिस ठई।
नहिं मिलहिं हरि शत वर्ष तोहि त्यहुँ कही सोई सोई भई ।।
यद्यपि हौं तिग तीर तदपि न देखत शाप वश।
धरिहौं विविध शरीर करन चरित बहुं भाँति के ।।
उद्धव गोपिन केर कह्यो ज्ञान दृढ़ नेम।
पढ़ै सुनै रघुनाथ तौ बढ़े इष्ट पद प्रेम ।।
प्रेम बिना पावै नहीं प्रीतम को दीदार।
ताते जन रघुनाथ ते करू उद्यम सार ।।
प्रेम न वारी उपजै दिये न आवैं दाम।
प्रेम जगत रघुनाथ तब जब सुमिरै हरिनाम ।।

रंगपाल

ऊधौ यहाँ को जाय तिन सों सुनै ये बलि,
चीठी लिखि जोग की बसीठी जिन भेजे ये।
अम्बन के बैंर ये न जानौ कमनेत काम,
बिरचे सुपंजर पवारि नीर नेजे ये।

रंगपाल किंशुक अनार कचनार कहा,
सुमन समूह जुत सहेजे थे।
डारन पे डारयौ है बसंत बज मारो बाज,
ऊधो बिरहीन कें करेजन के रेजे ये ॥

रसनायक

बिरह बिलास

उद्धव के प्रति कृष्ण बचन:—

श्री गोकुल मधूकर चलत ॥ कहत कान्ह इमि बेन ॥
गोपिन ज्ञान विधान कहि ॥ सखन चराव धेनु ॥

उद्धव वचन:—

अलख निरंजन ध्यान धरि निर्गुन ज्ञान उर धारि ॥
जोगजुगति सिखव हूँ अवै सीखौ सब ब्रजनारि ॥

गोपी बचन:—

प्रेम सुधा जिन जनम सों अलि चाख्यो अनुकूल ॥
जोग जहर तिन कौं कहाँ सचि माने मति भूल ॥

जोग लै सिधारे तुम कुबिजे दे भोग आए ॥
निरगुन हमैं लाये लंपट लखातौ है ॥
रोवत सकल पथ वेद और पुरानन के ॥
कापत अपध पथ निज निकलें सिहातु हौ ॥
थामें धों कहा है रसनायक व्रथा वादि है वाद ॥
चाह जौ हमासे सो न चरचें चलातु हौ ॥

अपनी कहत अपें पीरन लहन ऊधौ,
माधव मिले की विधि काहि न बतावत हौ ।।

सोच न हमें है गुन औगुन किये कौ,
कछु सोच न हमें है दधि माखन उजारे कौ ।।
सोच न हमें है रसनायक अमोही भये कौ,
सोच न हमें है कीन्ही कुविजा भले ही प्यारी ।।
सोच न हमें है कहू मथुरा सिधारे कौ,
सोच न हमें है जोग ग्यान हिय धारे कौ ।।
गोपी नाथ बाजि गोपी रोवत ही छाड़ी,
ताकौ सोच है हमारे ऊधौ विरद विसारे कौ ।।
पाती जिनि लिखि भेजियो आँसुनि भीजति हाय,
नेकु रावरे चलि इहाँ मिलौ न हमसों आय ।।

मन थिर कीनो सोही अस्थल इकंत बैठी,
लाज ही के आसन सनेह ब्रत लाध्यौ है ।
गुरजन त्रास रही दारुन अगनि तचि,
पतिब्रत पोष रस नायक समाध्यौ है ।।
मंत्र नंदनंदन त्यौ काम के निकंदन कौ,
वदन सरस प्रेम जोग तप साध्यौ है ।।
कौन गुर करें गुर धुर तें हमारौ,
वह गोकुल कौ नाथ ऊधौ गोपिन अराध्यौ है ।।

मुकति कृपा करि साँवरे अलि उन भेजी सोहि ।
लीनी सीस चढ़ाय हम रीझि देत हैं तोहि ।।

कुविजा सो कति रमन करि लोग हँसाये चाप ।
भली लजाई सांवरे रसिक नाम की छाप ।।

कुबरी कुरूप अति दूबरी कुटिल हिय,
ताही सों जु चाह चित रावरो उमायौ पै ।।
कंस की जु लौंडी वह भौंडी सी निगोड़ी नारि
ताही के समान रस रंग सरसायौ पै ।।
हाय अकुलानी हम जानी यह बात जब ।।
छाती ये दुखानी तब पाती दै जतायौ पै ।।

भायौ तुम कीनो रसनायक सुहायौ आप।
रसिक या नाम को लजायौ जु लजायौ पै॥

मधुवन की मानिनी जिती सुधर जानिहें सार।
निगुन तहां लै जाहु अलि ब्रज ही बसत गवाँर॥
भूलि परे भोरे किधौं अलि बौरे ब्रज आय।
जोग देत कहि साँवरे ने कहु हँसे उछाय॥
प्रान हमारे मधुप हरि संग लै गये लिवाय,
ताबिन अब कैसे सधै प्रानायाम बताय॥

ऊधौ इन नैंनन ही दोस न हमारी सोंह,
अबलौं निहारी आसु आतुर अकाज में॥
हाल ही तिहारी बाति सुनत निदान,
इन्हें छूटि गैं सबै ही धीर अब न इलाज में॥
आँसू झर रहे देखि रसनायक भरयौ है घर,
सेज यों तिरत तूह बैठि लै जहाज में॥
चाहति हौ याही नावि चढ़ि के चलोगी अब,
प्रीति में मिलेंगी जाइ द्वारकापुर आज में॥

उद्धव वचन

एक जो कहों तो रसनायक अनेक कहें,
चुप न रहात बाइ बाढ़ी काम रोग की।
गोपिन के प्रेम आग गोविन्द तिहारी सोंह,
गिनति कछू न देखी रावरे के जोग की॥

कृष्ण वचन

सुनि ऊधौ ब्रज जन की मो सुधि विसरत नाँहि।
सदा रहत जिय जानि हो निस दिन उन ही माँहि॥

यह कंचन की द्वारिका कौन काज की प्रान।
ऊधो घर माटीन के वा ब्रज मेरे प्रान॥

उद्धव कथन

ब्रज की अकथ कथा कहत बने न हौ तौ,
छकि गौ निहारि जिय जरि गौ जरनि मैं॥

गोपिनु कौ प्रेम, रसनायक औ नेम देखि,
नसि गो हमारो ग्यान कूह की परन में ।।
विरह अनल बीच वचिवौ वन्यौ है नीठि,
बढ़िगौ हलाहल त्यौं अति की अरन मैं ।।
सरन तिहारे नाथ आयौ हो अनाथ,
भागि रावरी कृपा तें गहे बराबरे चरन मैं ।।

रसरूप।

जब ते गए हैं तजि उधव न लागे आँखि सदा चले
आवत वियोग के ही वे विस्ते हैं ।
लाग सुख देह तव झारत चरण सेखन सरूप अबतौ वे
राजत न रिस्ते हैं ।
कैसे गोपीनाथ गाय गतिन में नाथहू में नाहक गजब
मारे उनमें उमिस्ते हैं ।
आप है त्रिभंगी तैसी कूबरी मिली है संगी जैसी
जहाँ रूह तहाँ तैसई फिरस्ते हैं ।।१।।

रसरासि

रसिक पचीसी

परम पवित्र तुम मित्र हो हमारे उधौ,
अंतर-विथा की कथा मेरी सुनि लीजियै ।
वृज की वे बाला जपें मेरी जप माला,
बढ़ी बिरह की ज्वाला ता में तन मन छीजियै ।
मेरी विसवास मेरी आस रसरासि मेरे,
मिलिवे की प्यास जानी समाधान कीजियै ।
प्रीति सों प्रतीति सों लिखि है रसरीतिन सों,
पत्रिका हमारी प्रान प्यारिन को दीजियं ।।१।।

मोहि तुम दीनों तन मन धन प्रान जैसे,
तैसे ही समाधि साधि ध्यान धरि ध्यावोगी ।
अलख अरूप घट घट कौ निवासी
मोहि जानि अविनासी जोग जुगति जगावौगी ।
प्रानायाम आसन असन ध्यान धारना तें,
ब्रह्म कौ प्रकास रसरासि दरसावौगी ।
अैसे चित लावौगी सुख में समावौगी,
अरु मुक्ति पद पावौगी हमारे ढिग आवौगी ।।२।।

कौन की लिखी हैं पाती कौन मैं पगई,
तुम कौन हो ? कहाँ ते आये ? काके निज मान हो ?
काकी पहिचानि रसरासि वा निरंजन सों
कौन सीखै ज्ञान कहां भूले अवसान हो ?
कौन साधे पोन अरु मोन धरि बैठे कौन,
काके नैन श्रोंन भये अजहूँ अजान हो ?
अब हम जानी तुम हो दिवान कूबरी के,
कपट करि आये हो पै मछर समान हो ।।३।।

आपनें करन जिन कीनें है करन फूल,
कौन भांति कहते वे मुद्रा कान धारे की ।
आप ही अतर चोबा चंदन लगायौ जिन;
क्यों करि कहें वे कंथा कथा कंडवारे की ।
वै तो अंग-अंग लागें पागे रसरासि,
रंग भसम कहानी कढ़ी वाणी मुख न्यारे की ।
बड़े धूत, दूत काहू करी करतूति यह,
नाहीं कहतूति वा हमारे प्रान प्यारे की ।।४।।

हाथ जोरे हाजर हजूर में रहत जाकी,
मरजी को रांखे बात भाखे इक रंगी जू ।
वाही को हुकम पाय करत अन्याय-न्याय,
भयौ रसरासि वाकी प्रीति को प्रसंगी जू ।
याही तें वियोग माँहि जोग राज-रोग हमें,
सोग दै पगयौ आय संग अरधंगी जू ।
अब हम जानी लिखि वाके मन मानी,
उहां साहिब है कूबरी मुसाहिब त्रिभंगी जू ।।५।।

आयौ आयौ भयौ ऊधौं आय ब्रज मंडल में,
राम में कुराग जोग कौ गीत गायौ है ।
सेली सींगी माला मृगछाला झोली कुंडा,
डंडा गूदरी भसम मुद्रा स्वांग लै दिखायौ है ।
संजम नियम ध्यान धारना द्रढ़ावत है,
ब्रह्म कौ प्रकास रसरासि दरसायौ है ।
कूबरी वै पढ़ि आयौ पैंज करि कढ़ि आयौ,
रथ चढ़ि आयौ अनरथ गढ़ि ल्यायौ है ।।६।।

भली भई सुधि आई हमारी कन्हाई जू को,
भलौ दूत आयौ सबहिन मान्यौ भूरि भाग ।
अब ये संदेस में करन उपदेस लागे,
जानि परे कोई लसे भले बनि आये काग ।
रूप के उपासी रसरासि बृजवासी,
कैसे होत वे उदासी लगी जिनकी निसंग लाग ।
देखौ री अनीत बात आंधरे या उद्धव की,
लगावत जोग बेलि प्रेम को कटाय बाग ।।७।।

रह्यौ प्रेम नेम रह्यौ बूझि वो कुसल खेम,
रह्यौ चित चाड़-लाड़ गुन गरखाई कों ।
रह्यौ मुख बोल रह्यौ रह्यौ गयौ सब तोल,
कढ़ि आयौ अब मोल लाज लगी सुधराई कों ।
सरबस चाख्यौ तापै गीत ज्ञान भाख्यौ,
रसरासि नें कहू न राख्यौ रंग रसिकाई को ।
कारे कान्ह डारे है अन्याव के नवारे,
देखौ बूड़े वहे जात तापै आये उतराई कों ।।८।।

दस ही दिना कौ भयौ नयौ जस धारि जिन,
मारि डारी नारी ऐसौ निठुर निहार्‍यौ है ।
वछां मार्‍यौ वका मार्‍यौ अजगर हूँ को मार्‍यौ,
खर हूँ कौं मारि हमहूं को मारि डार्‍यौ है ।
मनी माहिं भूल्यौ फूल्यो फल्यौ रसरासि,
इहां एतौ कृत कीन्हों सब ही विसारयौ है ।
मामा मारिवे कौ पाप प्रगट उतारिवे कों,
कूबरी त्रिवेणी तां में तन को पखार्‍यौ है ।।९।।

दासी दास दोऊ महल मांझ भोर सांझ,
रहते रमड़ि सेवा सोंज सेज त्यारी में ।
दौरे-दौरे टहल टकोरे झकझोरे,
अंग, संग-संग जाते रसरासि बाग बारी में ।
पंखी पीकदानी पानदानी की निसानी,
लिए पाँछे-पाछे आवते गरूर खोई गारी में ।
कंस मरि गयौ जामें सब ही सुधारि गयौ,
जोपै वह जीव तो तौ घात होत यारी में ।।१०।।

जाकी कोख जायौ ता कों कैद करवाय आयौ,
धाय करि मारी नारी निठुर मुरारि है ।
और बृजनारी तिन्हें मिलि-मिलि मारी!,
फेरि अमिल है वैं मारी जो मिलैंगी ताहि मारि है ।
एरी सुनि चेरी लेरी तेरी सी कहत है री,
तू ही रसरासि आंखे असुवन ढारि हैं ।

परी यैं पूकारि है तू फेरि न संभारि है री,
नारि मारिवे कौ तौ कन्हैया तरवारि है ।।११।।

पति हूं ते पिता हूं ते मुसि-मुसि ल्याय-ल्याय,
सवस हमारौ हम सौंप्यौ तन-मन-प्रान ।
कल हूँ की संपत्ति समेटि हम भेंट भई,
लोभ सों लपेटि लई करि के सुजस-गान ।
अब रसरासि उधौ ले के वह लौटि गयौं
कहै बिन रहें कैसे सुन तुम दे के कान ।
भयौ हौ संगाती सोतौ निकस्यो मेवाती
देखौ थाती दाबि छाती तेरे पाती में पगयो ज्ञान ।।१२।।

लोचन हमारे सदा रहत उघारे, कहौ,
कैसे रहें मूँदे, जिन रूप रस चाख्यौ है ।
मन हू हमारौ मान कान्ह सो करन वारौ,
कैसे मन माने जोग भोग भरि राख्यौ है ।
कान्ह हू हमारे रस रासि रीझें तान सों,
कौन सुने ज्ञान, इन गान अभिलाख्यौ है ।
रसिक सभा की तेरे कसक न लागी,
या ते खीर मांहि मूसर सौ मुक्ति पद नाख्यौ है ।।१३।।

उधौ ! कहि को है ? जदुनाथ द्वारका को नाथ,
कौन वसुदेव कौन पूत सुखदायी है ?
कौन है निरंजन अलख अविनासी,
कौन ब्रह्म हू कहावै कौन जाकी जोति छाई है ?
इनसों हमरी कहौ कासों पहचानि, जानि,
याते रसरासि बाते मन में न भाई है ।
प्रीतम हमारौ मोर मुंकट लकुट वारौ,
नंद कौ दुलारौ स्याम सुन्दर कन्हाई है ।।१४।।

खरक में खौरिन में खेलिवे की गैरन में,
मोर को मुकुट दिये मुरली बजावै है ।
चटक-मटक भर्‌यौ हाथ में लकुट लै के,
पीत पट कटि बाँधे लटक सोभा वे है ।

जमना के तट वंशीवट के निकट रसरासि,
नटवर वेष बछरा चरावै है।
चित्त के चुरावै मुरि-मुरि मुसकावै देखौ,
साथ-साथ श्रावै है ये हाथ नहीं श्रावै है ।।१५।।

श्रकरी खरीद करि गठरी लगाय ल्यायौ,
ठगिवे को श्रायौ बात घात सों कहत है।
तोल-मोल किमत हू करत तफवत
सो ऐसे रसरासि नफा कैसे के लहत है।
ब्रज की श्रहीरी हम पोतिकों परखि,
जानें गुंज हार सों हियौ हरख्यौ रहत है।
जोग के जवाहर कौ गहत कनकोऊ,
इहाँ श्रनाहक उधौ गैर डार्‌यौ ही चहत है ।।१६।।

बसन मलीन बन वन तन छीन डोले,
मोन ही सों बोले, वेनी जटा पद पायौ है।
श्राठों जाम जागी रहें ध्यान ही सों लागी,
देखौ भूख प्यास भागी, मन सून्य में समायौ है।
विरह दवाग्नि हूँनी धूनी धधकाय राखी,
एक रस, एक रसरासि दरसायौ है।
उधौ श्रव श्राय कहा जोगतैं सुनायौ इहां,
सांवरौ सिधायौं तव ही ते जोग छायौ है ।।१७।।

कौन भाँति जायबौ बनत ब्रजमंडल में,
नई प्राणप्यारी इहां श्रति श्रकुलावैगी।
जौ पै रसरासि को संग लिए जैये तो,
उनके हिय में यह कैसे कौ समावेगी।
श्रैसे-श्रैसे करत श्रंदेसे वह कारौ,
कन्हैया ही तिन श्रायौ जानि दास दुख पावैगी।
कंचन की बेली श्रलबेली कूबरी कोऊ,
गूज़री नबेली उहाँ नजर लगावैगी ।।१८।।

एक बेरि फेरि ब्रजमंडल में श्रावौ कान्ह,
श्रव सब सूधी भई मानहू न करेंगी।
मनहू में ये कहत कहूं न झगरेगी
श्रौर माखन मलाई हू छिपाय कै न धरेंगी।

नई प्राणप्यारी हू की कानि हम मानि लेहैं,
बाकी ह्वै रहेगी रसरासि वांसो डरेंगी ।
दोऊ कर जोरि-जोरि करि कोरि चांइन सो,
दौरि-दौरि कूबरी के पाइन में परेंगी ।।१६।।

व्याकुल विकल महा बिरही विचारे बौरे,
अलवल बोले ताकी चूक माफ कीजैं अब ।
काहू भाँति कान्ह प्यारे को हमारे ब्रज ल्याबौ,
हिलि मिलि जल जमुना कौ पीजैं अब ।
कती हू में आयबौ जरूर मजकूर लिख्यौ,
उधौ रसरासि कोई को से जाम दीजै अब ।
बिनती हमारी करौ सांवरो विहारी सों,
तिहारी मारी मरी हैं, जिवाय जस लीजैं अब ।।२०।।

कहाँ हम गोकुल के गोपी-गोप ग्वाल बाल,
चंचल चबाई चोर त्यों कठोर ही के हैं ।
कहाँ वे कमल दल नैंन कमला के नाथ,
एक साथ खाए खारे खाटे मीठे फीके हैं ।
तीनों लोक माँहि धन्य धन्य व्रजवासी भये,
जीवन मुकति रसरासि प्राण पीके हैं ।
उधौ जु हमारे इहाँ दोऊ हाथ लड्डुआ हैं,
आवैं तंऊ नीके जो न आवैं तऊ नीके हैं ।।२१।।

उधौ अकुलाय धाय पाँय गहें गोपिन के,
कह्यौ धन्य धन्य तुम बड़ी वड़भागी हौ ।
आठौ याम नन्द को नवेलो रसरासि,
तुम घेरि राख्यौ पास वाके अंग संग लागी हौ ।
तिहारे दरस ही सो नीर सरस होत,
कहियै कहाँ लौं जस प्रेम रस पागी है ।
लोक-लीक त्यागी सदा जोग ही में जागी,
तुम भरम सों भागी, सांवरे सो अनुरागी हौ ।।२२।।

इते ब्रजवासिन कौ विरह वियोग उत,
माधौ के विरह उधौ अति अकुलायौ है ।

दोऊ और दोऊ मुख कारौ नाग डसै,
तैसे रसरासि रोम रोम विष छायौ है।
राधे कृष्ण, राधे कृष्ण एक रट लागि रह्यौ,
रोवत हँसत पुलकित छवि छायौ है।
छकनि छकायौ वाकौ चित्त चिकनायौ,
पेखि कान्ह को सुहायौ दौरि गले लगायौ है ॥२३॥

आयौ हों इहाँ ले तौलों निरखत आयौं,
संग जोरी रसरंग बोरी मोरे मन भाई है।
अब यों अकेले देखि आँखें अकुलाइ परें,
देखें कहा गोरी बिन श्यामताई है।
तुम अरु वे तौ सदा रहत हिलेई मिले,
सो तौ रसरासि कथा रसिकन गाई हैं।
कहा मन आई यह सांवरे कन्हाई,
उहाँ आप छिपि रहे इहाँ राधे को छिपाई है ॥२४॥

भले मिले दोउ सुख-स्वारथ के लोभी,
तुम सलिल तरंग जैसे एक-मेक ह्वै रहे।
कहा गति विरही विचारे ब्रजवासिन की,
व्याकुली विकल परे अंसुवनि च्वै रहे।
जाय सुधि लीजियै के लीजियै बुलाय,
उन्हें रसरासि प्यास त्रास सो त्वै रहे।
कान्ह कह्यौ अब कुरुखेत को चलेंगे,
तब सब सों मिलेंगे चलिनि के दिन ह्वै रहे ॥२५॥

राधे जू रसिक महा रसिक गुव्यन्द जू के,
रस के संदेसन में भरी रसिकाई हैं।
रस के ही ऊत रसीले वृजवासिन के,
सुनि सुनि उधौ हू रसिकताई पाई है।
रसिक सुजान महाजन श्री प्रताप भूपतिन की,
कृपातें यह बात बनि आई हैं।
रसिक सभा में रसरंग बरसायवै को,
रसिक-पचीसी रसरासि हू बनाई है ॥२६॥

रशिक

उद्धव गोपी संवाद

ऊधौ समुझि लई सब बातैं ।
काहै को अवस्रम करि खोलत ज्ञान जोग की गाठें ।
प्रीति प्रतीत रीति सोई जानै जाकौ मन रस राते ।
मधुप फोरि घर करत काठ में बंधत कमल के पातैं ।
विवस होत मृगनाद मधुर सुनि सुधि न रहत तन तातें ।
सन्मुख बान संघान सूल सहै घर तिन रति मन साते ।
ज्यों पतंग रस रूप विवस ह्वै जदपि पंख जरि जाते ।
मिटति न चाह तदपि दीपक की फ़ेरि फेरि लपटाते ।
पायो छोर कपट को तबही कुबिजा बसि भयो जाते ।
कौन परेखौ करै रशिक छबि सब तोरि दई उन नातैं ।। १ ।।

ऊधौ हम सब दास तिहारी ।
हित करि जेहि विधि मिलहि साँवरो सोई कछु मनो विचारी ।
जदपि संदेस रीति करि भाख्यौ जोग कथा विस्तारी ।
यामें कछु बिलग नहि मान्यौ हम जितनी ब्रजनारी ।
कहँ रस रीति कहाँ तन सोधन देखो हृदय विचारी ।
जे सर्करा चाह रस गीधे क्यों सिहाहि मुख खारी ।
हम नहि कहैं आप मन सोचिय देखिय नयन पसारी ।
जल सफरी नहिं जियै नीर बिनु कोट जतन प्रतिपारी ।
जेहि विधि मिलहि श्यात सुन्दर घन रशिक नवल बनवारी ।
हमकौ सोई जोग उपदेसो नेकु दया उर धारी ।। २ ।।

मधुकर कठिन जोग की गाथैं ।
हम अभी अबलनि पै कहि कत खोवत ताहि अकाथैं ।
यह उपदेश जोग वै नागरि जे सब भाँति सनाथैं ।
हम जड़ ग्वारि हीन मति तापर दही अंग रति नाथैं ।

यह लै जाय बचाय भली विधि धरि दीजै उन हाथै ।
जन छवि रशिक न लियो जानियत पर्‍यौ रावरे माथै ।। ३ ।।

उधौ हम सब कृष्ण उपासी ।
ज्ञान उपाधि जोग साधन विधि सुनि सुनि आवत हाँसी ।
माया जीव कौन सौं कहियत कौन ब्रह्म सुखरासी ।
काको जीवन मुक्ति कहावत काहि कहत भ्रम फांसी ।
इंगला पिंगला सुखमनि का है जेहि श्रुति कहत प्रकासी ।
शून्य समाधि लगाय कौन विधि पावत जीव सुपासी ।
यहाँ न जोग शोक प्रतिपादन जिते घोष निवासी ।
सुधा केलि रस भक्ति पान करि निसि दिन रहत हुलासी ।
इतनी दूरि और परिस्रम करि चलै जाइये कासी ।
राखत चाह मुक्ति मरवे की जे हैं ह्वाँ के वासी ।
साचो जोग व्रत संजय कौन करै उपहासी ।
हम छवि रशिक नेह मोहन तजि चहै न मुक्ति उदासी ।। ४ ।।

ऊधौ भली करी ब्रज आये ।
राउर दास कुसल मधुबन लहि व्रज जन मनहर खाये ।
श्री मुख बचन संदेस जोग की पाती बांचि सुनाये ।
बूझि पर्‍यौ उन मधुपुरी कहिं रतन सनेह गवाये ।
परिहरि नेह प्रेम दृढ़ गहिबो गूढ़ भाव दरसाये ।
सो हम रीति प्रीति बस बारिहि ते गहिरा वेष बनाये ।
मयन महंत निकुंज क्षेत्र वय तरु निपर्व्व शुचि पाये ।
हेरति मंत्र केलि शिला विधि जोग अंग सिखराये ।
श्याम रूप गुण ध्यान निरंतर अचल समाधि लगाये ।
भई सिद्धि छवि रशिक प्रेम पथ डिगति न कोटि डिगाये ।। ५ ।।

ऊधौ निपटि ज्ञान रस फीको ।
जोग निवौरी कौन चखै तजि मोदक नेह अभी को ।
कहँ लखि रूप रशिक अंखियन उरसोच पलक परती को ।
कहँ तुम अलख अरूप बतावत अगम जो मुनिहिं जती को ।
कह रसकेलि संग मनमोहन सूर सुक्त तटनी को ।
कह मिलिवो निज देह खेह करि जरिवो मन शक्ती को ।
समुझि जोग की तनिक लुकाई बोध होत नहि जी को ।
बिनु छवि रशिक सूखि है क्योंकरि विरह सिंधु ब्रजती को ।। ६ ।।

ब्रजतिय कैसे जोग निबाहै ।
गीधि सगुन संजोग रूप दरस निर्गुननि रस क्यो चाहै ।
सोधे विविध वसन आले कह सुमन सेज पलिका है ।
कहँ घसि क्षार कुछाल भगोहो ओढ़िवे खाल मृगा है ।
रत्न जड़ित ताटंक श्रृवण कह भूषन मोतिन मॉग महत छटा है ।
कहँ अनिगढे मुद्रा माटिन के माथनि जूट जटा है ।
जा मुख पान सुगन्ध खाय रस चाखै अधर सुधा है ।
रूप रस सराहि मौन कौन विधि पूरहि मन सधि है ।
कह अनुराग बिबस विलसनि संग बन कुंजअनि की छाहैं ।
कह विराग बसि त्यागि गेह बसिवो गहन गुफा है ।
भोग संजोग जोग दारुन की मधुप कौन समता है ।
कह सृंगी सेल्ही सुग्रीव कह लटकत रशिक दयाल मृदुल वाहै ।। ७ ।।

मधुकर भली कुशलात सुनाये ।
अमी आस आवन परिहरि जिय जोग जहर रस प्याये ।
यक ऐसे ब्रज़ तियन छोह करि मैन विरह अंग छवि छाये ।
ता पर सोन सुगन्ध ज्ञान केतु मगहि वे गढ़ि ल्याये ।
अन्त क्षुधारत विह्वल मति ज़े देह दशा विसराये ।
बिनुहि असन सो मो शूल है किमि स्रक चंदन अंग लाये ।
शिक्षा जोग भोग तन जुवतिन करत न तन सिहलाये ।
वसि छवि रशिक निठुर मोहन तुमहुँ दया दुरि जाये ।।८।।

रसीले

ऊधौ ब्रजागमन चरित

या गुनि के मन में जदुनाथ चलाई कथा कछु प्रेम की सूधो ।
सो सुनि के जिहिं आतन्द भो अति ब्रह्म विचार परो मन रुधो ।।
धीरज हेत सुभाखि रसीले अहै ब्रज लोग विथा में समूधौ ।
ज़ाइ वहां तुम ज्ञान सिखाबहु श्री वृखभान सुता कहँ ऊधो ।।१।।

एक सुना हम ऊधव बात वा बूझति मैं हमैं आवत लाज है ।
कामरी त्यागि दई मुरली मोर पखौबन के सिर साज है ।
भावै न माखन हूँ सु रसीले सुभावत ज्यौं इत को व्रजवाल है ।
चित्र लिखी लखि धेनु सकोचत नाम सुने व्रजवाल को लाज है ।।२।।

सूरति बिलोकि प्रेम पूरत प्रमोद पाय,
मूरति तृभग करि डारी ताके हेत हैं ।।
सुन्दर सुसील दुखदाई दीह गोपिन के,
ताहि उर लाई मन भाई फल देत हैं ।।
नीति पुँज निपुन रसीले सो निपट नाम,
निराकार निर्मल निकाई के निकेत हैं ।।
ऊधौ कहौ कूबरी के सुरति समैं में स्याम,
गाड़ौ खोदि लेत हैं कै से खाट काटि देत हैं ।। ३ ।।

ऊधौ वही साँची कान्ह कुब्जा के मोहिवे को,
कौन भाँति जोग को आराध्यौ भोग ठाय के ।।
आसन लगाय अंग ताय पंच अग्नि माह,
नाह गोपिकान को कहाय कित जाय के ।।
गूढ़ ग्यान राति में रसीले सो निपुन पैठि,
बैठि कहा जपै अंग भूति को लगाय के ।।
ठाव ठीक हमैं तो बतावो जाय देखो धाय,
लाय पीठि हांडी मिले कूबरी कहाय के ।। ४ ।।

आँधरी को अंजन न शोभा सरसावत है,
बधिरी के कान को न राग परसत है ।
त्योंही पर बेसर न नकटी को नीको लागै,
टीको माथ बिधवा के ज्वोंहि दरसत है ।
मुंडली के माँग को सवारिवो रसीले कहै,
गूँगिन के बात जैसे गुन बरसत है ।
तैसे जोति रूप हो ऊधौ जी के,
पी के बिन तीके ही के ज्वाल झरसत है ।।५।।

द्रगि ढारत नीर जसोदा गई घर में मन पीर न जात सही ।
कर लै दोहनी मुरली हरि की भरि माखन मंजुल देत कही ।।

यह घी मटुकी भरि दीजियो जू जो रसीले वो प्रिय गाय रही ।
तिन ही को बहोरि धरयो दधि के उनके हित मैं निज हाथ मही ॥६॥

मेरो सदा उनही में रहै मन ऊधव या नहचै तुम जानौ ।
प्रान पियारी हमारे बसैं हिय माँझ सदा करि प्रेम प्रमानो ॥
मो ते जुदो न अहैं कबहूँ ब्रज नीके रसीले कहै या बखाने ॥
वेगि मिलौंगों सुजान सखा सुन ता दुख दारुन जात ही मानो ॥७॥

रहीम

ऊधौ भलौ न कहनौ, कछु पर पूठि ।
साँचे तेभे झूठे, साँची झूठि ॥१॥

कहा छलत हो ऊधौ दै परतीति ।
सपनेहू नहिं बिसरै मोहन मीति ॥२॥

बन उपवन गिरि सरिता जिती कठोर ।
लगत देह से बिछुरे नंद किशोर ॥३॥

भलि भलि दरसन दीनहु सब निसि टारि ।
कैसे आवन कीनहु, हौं बलिहारि ॥४॥

आदिहि ते सब छुटगे जग व्यौहार ।
ऊधौ अबन तिनौ भरि, रही उधार ॥५॥

घेरि रहयो दिन रतियाँ बिरह बलाय ।
मोहन को यह बतियाँ ऊधौ हाय ॥६॥

निरमोंही अति झूँठौ साँवर गात ।
चुभ्यौ रहत चित कौधौ जानि न जात ॥७॥

बिन देखे कल नाहिन यह अखियाँन ।
पल पल कटत कलप सों अहो सुजान ।।८।।

जब तब मोहन झूठी सौंहे खात ।
इन बातन ही प्यारे चतुर कहात ।।९।।

ब्रज बासिन के मोहन जीवन दान ।
ऊधौ यह संदिसवा अकह कहान ।।१०।।

मोहिं मीत बिन देख़ें छिन न सुहात ।
पल पल भरि भरि उल्ल उलझत दृग जल जात ।।११।।

जब ते बिछुरे मितवा कहु कस चैन ।
रहत भर्‌यो हिय सांसन आँसुन नैन ।।१२।।

कैसे जावत कोऊ दूरि बसाय ।
पल अन्तर हू सजनी रह्यो न जाय ।।१३।।

जान कहत हो ऊधौ अवधि बताइ ।
अवधि अवधि लों दुस्तर परत लखाइ ।।१४।।

मिलनि न बनि है भाखत इन इक टूक ।
भये सुनत ही हीय के अगनित टूक ।।१५।।

गये हेरि हरि सजनी विहँसि कछूक ।
तबते लगनि अगनि की उठत भबूक ।।१६।।

मनमोह की सजनी हँसि बतरान ।
हिय कठोर कीजत पै खटकत आन ।।१७।।

होरी पूजत सजनी जुर नरनारि ।
हरि बिन जानहु जिय में दई दवारि ।।१८।।

दिस विद सौन करत ज्यौं कोयल कूक ।
चतुर उठत है त्यौं त्यौं हिय में हूक ।।१९।।

जबतें मोहन बिछुरे, कछु सुधि नाँहि ।
रहे प्रान परिपलकनि दृग मग माँहि ।।२०।।

उझकि उझकि चित दिन दिन हेरत द्वार।
जब ते बिछुरे सजनी नन्दकुमार ।।२१।।

जक न परत बिन फेरें सखिन सरोस।
हरि न मिलत वसि नँरे यह अफ़सोस ।।२२।।

चतुर भयाकर मिलि हो तुरतहि आइ।
बिन देखे निस बासर तरफत जाइ ।।२३।।

तुम सब भाँतिन यह चतुरे कल बात।
होरी से त्यौहारन पीहर जात ।।२४।।

और कहा हरि कहिये छवि यह नेह।
देखन ही को निसदिन तरफत देह ।।२५।।

जब ते बिछुरे मोहन भूख न प्यास।
बेरि बेरि बढ़ आवत बड़े उसास ।।२६।।

सास नन्द गुरु पुरजन रहे रिसाय।
मोहन हू अस बिसरे हे सखि हाय ।।२७।।

उन बिन कौन निबाहे हित की लाज।
ऊधौ तुमहू कहियों धनि बृजराज ।।२८।।

जिहि के लिये जगत में बजै निसान।
तिहि ते करे अबोलन कौन सयान ।।२९।।

बिरहिन सब भाखत, अब जनि रोय।
पीर पराई जानै तब कहु कोय ।।३०।।

कोटि जतन हू फिरत न, विधि की बात।
चकवा पिंजरे हूँ सुनि विमुख बसात ।।३१।।

कहा कान ते कनौ, सब जग साखि।
कौन होत काहू के कुबरीं राखि ।।३२।।

तैं चंचल चित हरि कौ, लियौ चुराइ।
याहीं तें दुचती सी परत लखाइ ।।३३।।

नव नागर पद परसी, फूलत जौन।
मेटत सोक असोक सु अचरज कौन ।।३४।।

समुझि मधुप कोकिल की यह रस रीति।
सुनहु श्याम की सजनी का परतीति ।।३५।।

नृप जोगी सब जानत होत बयार।
संदेसन तौ राखत हरि व्यौहार ।।३६।।

मोहन जीवन प्यारे कसि हित कीन।
दरसन ही तरफत ये दृग मीन ।।३७।।

लाल जी

चाहै जो वियोग कितेक बकौ वै संजोग ही कै उर आनती हैं।
हरि कैं गुण में अति बँधी बँधी अपनो औ परायौ न जानती हैं।
रंगराती व पाती सु 'लाल जी' को करमै सबहै सुख सानती है।
बतिया अब ऊधौ तिहारी कोउ ब्रज की बनिता नहीं मानती हैं ।।१।।

सेनापति

कुबिजा उर लगाई हमहूँ उर लगाई,
पी रहे दुहू तन मन वारि दीने हैं।
वे तो एक रति जोग हम एक रति जोग,
सूल करि उनके हमारे सूल कीने हैं।
कूबरी यों कलपैहै हम इहां कल पैहैं,
सेनापति स्यामें समुझै यों परवीने हैं।
हम वै समान ऊधौ कहौ कौन कारन हैं,
उन सुख माने हम दुख मानि लीने हैं ।।१।।

संतदास

गोपी सनेहबारह खड़ी

कका । कमल नैन जब से गये तब से चित नहिं चैंन ।
व्याकुल जल विन मीन जो पल नहिं लागत नैंन ।।१।।

खखा । खबरि नहिं पाई श्याम की रहे मधुपुरी छाई ।
प्रीतम बिछुरै हे सखी कीजै कौन उपाय ।।२।।

गगा । गली गली ढूँढी सबैं गिरधारी के काज ।
सो प्रीतम अब छिप रहे करि सब सुख के साज ।।३।।

घघा । घायल तो विलपत फिरै हम सब ब्रज की वाल ।
ऊधौ तुम आये भले सुखी रहत गोपाल ।।४।।

नना । नित नई प्रीति बढ़ाई कै बाल कुंवर ब्रिज चन्द ।
सो प्रीतम अब कित को गये डारि प्रेम के फंद ।।५।।

चचा । चित के टारे ना टरै मन मोहन चित चोर ।
मधुकर हम घायेल करी निरखि निरंजन कोर ।।६।।

छछा । छलबल करि मोही सबै बँसी धुनि छिन माँहि ।
छाइ रहे अब मधुपुरी हमको विसरत नाहिं ।।७।।

जजा । जेहि कारण तुम छिप रहे सो हम जानी वीर ।
अब न पकरि लै आइहौं होइ जसुमति के तीर ।।८।।

झझा । झूमि झूमि सब गिरि परी प्रेम की प्रीति बढ़ाइ ।
कथा कही सुभ स्याम की ऊधौ का समुझाई ।।९।।

नना । नगरढिढोरा हम दीऔ औ तुम कित छिपेउ गोपाल ।
देहु दरस किन आनि के अब मति करौ विहाल ।।१०।।

टटा । टारे चित के न टरै निर्मोही नंदलाल ।
कहां निरंतर बसि रहे कौन प्रिया है बाल ।।११।।

ठठा। ठौर बतायो कित गयौ ठहरायौ केहि ठाँउ।
तुम देखे विंद्रा सखी श्याम गये केहि गांव ॥१२॥

डडा। डार पात ढूँढी सबै वेली लता बनाइ।
श्याम छिपायौ मधुपुरी सो हम देहु बताइ ॥१३॥

ढढा। ढोल बजाये कहति है सुनो प्रिया व्रज चंद।
प्राननाथ आरति हरन देहु दरस नंदनंद ॥१४॥

नना। नंद नंदन देख कहौ ते कदम्ब इत जात।
सुँदरि मूरति सबरी मंद मंद मुसकात ॥१५॥

तता। ताला बेली लगि रही हरि मिलन की आस।
जैसे रटत पपीहरा सदा पिआस पिआस ॥१६॥

थथा। थोरे जल की माछरी महादीन ज्यौ होइ।
सोई गति हमरी भई विरह अगनि तन मोइ ॥१७॥

ददा। दामिनि सी ब्रिज मोहिनी छांड़ि गये वे पीर।
उहाँ जाइ कुविजा रची आखिर जाति अहीर ॥१८॥

धधा। धूमि के गोपाल तव हम सब मोही बाल।
अब कुविजा प्यारी लगी करै हियो मा साल ॥१९॥

नना। निपट निरंजन अति डर कपटी है सब भांति।
मन मोहन मानै सोई करै जिनके जाति न पांति ॥१०॥

पपा। पाती लिखी न जाति है भरि भरि आवत नैन।
ऊधौ तुम समझायौ प्रीति रीति के बैन ॥२१॥

फफा। फांसी हाँसी श्याम की गांसी चितवनि बंक।
हम भोली बोली नहीं घायल करी निसंक ॥२२॥

बना। बँक विलोचन वानिये बेनु बजावन वान।
मेरे मन में बसि रही श्याम सुँदर मुस्कान ॥२३॥

भभा। भनक परी मेरे कार्न में कहि काहु कछु जात।
लगी चटपटी चित में सुनी अटपटी वात ॥२४॥

ममा। मन मोहन मन में बसैं मंगल मूरति आइ।
मगन भई छवि देखि कै हमैं न आन सोहाइ ॥२५॥

याय। यक बार मेटुकी गहि दही दियौ ठरिकाइ।
तोरिं हार ठाड़े भये ये मंद मंद मुसकाइ ॥२६॥

ररा । रोकत टोकत राह में माँगै हम सौं दान ।
जो माग्यो सोई दियो कियो न कछुक गुमान ।।२७।।

लला । लोचन लौने लाल के बनितनि के सुख दैन ।
अनि आरे प्यारे खड़े मानौ सीरे नैन ।।२८।।

ववा । वन लीला अद्भुत कियो शेष न पावे पार ।
विपिनि वाटिका बाग में कुंजन कियौ विहार ।।२९।।

ससा । सरद रैनि में सुँदरी लीन्ही सबै बोलाइ ।
सैन रैन सवँरे सकल वँसी मधुर बजाइ ।।३०।।

षषा । ष्याल लाल के सावरे भले रच्यौ षटमास ।
बंसीबट जमुना निकट कीन्ह्यों रहस विलास ।।३।।

ससा । स्नान करन जमुना गई अंबर धर एक तीर ।
नंद नंद तरु चढ़ि गयौ चोरयो हमरो चीर ।।३२।।

हहा । हाहा खात अठिलात लखि विनती कीन्हीं वीर ।
न्यारे कीन्हो नीर ते तब हँसि दीन्हौं चीर ।।३३।।

छछा । छाइ रहे निज मधुपुरी छिन छिन प्रीति वढ़ाइ ।
ऊधौ मोहन की कथा कहा लगि कहि गाइ ।।३४।।

त्रत्रा । त्रिभुवन की सोभा सबै रही श्याम पर छाइ ।
अैसो को जमनी (रमनी) जान्यौ जो न देखि ललचाय ।।३५।।

ज्ञज्ञा । ज्ञान अच्छरीकृष्न की बाल रही होइ मौन ।
संत दास ऊधौ गये करि प्रनाम निज भौन ।।३६।।

जो गावै सीखै सुनै गोपी कृष्न सनेह ।
ताके श्री जदुवंश मणि संपत्ति भरी रहै गरेह ।।३७।।

ब्रज तजि अंत न जाइहौं मेरी तौ यह टेक ।
भूतल भार उतारि हौं धरि रूप अनेक ।।३८।।

श्री राम हरि

ऊधौ जू वे सत रमन क्यों न सतर मन होय।
याते भाषत सत रमन न सत रमन प्रभु सोय।।१।।

ऊधौ सर मन त्यागई सरम न आवत ताहि।
स रमन तें बहि जात हैं जे ता सरमन आहि।।२।।

हरी बरी है कूवरी बरी देह सुनि बात।
वरी कौन अब खाय है बरी न खाई जात।।३।।

ताके हैं अलि कूवरी नाम कूवरी आहि।
करी कृष्न ताहि कूबरी ता कूबरी न जाहि।।४।।

ऊघौ तेसु पुराण है सुनत सु नांहि पुरान।
भई पुरा न सुकरन हैं दीन्हीं त्याग पुरान।।५।।

ऊधौ वे बारे सुजिन तुम पर वारे प्रान।
देखौ ब्रजवारे सवै तुम वारे ब्रज आन।।६।।

ऊधौ उह कूबरी जु है कुबरी है विख्यात।
कुबरी ज्यों रहि काख में कुबरिया की बात।।७।।

आनी है कहा दान दै निबहैंगी सु सदा न।
पाए कुबरी दान में कितने करी सदा न।।८।।

ऊधौ हरि रु पुरी गए पुरी कछू मन आस।
कुवरी वपुरी कों किती दई पुरी तिह दास।।९।।

ऊधौ ताने जोग ही सु तों जोग ही आहि।
हमैं जोग ही कों करी दै संजोगहि ताहि।।१०।।

ऊधौ सुनिये कान दै छांड़ि दीजिए काँन।
कूबरी पर भइ का नकी विनही मोल विकाँन।।११।।

जे संजोग के जोग हैं तेई करिहैं जोग।
हम वियोग के जोग हैं हमसौं बनै न जोग ।।१।।

ऊधौ हरि ताके मनहि हरि तासों लपटात।
हरि ह्वै हमरे प्रान क्यों हरत कहौ यह बात ।।२।।

ता तन सों लागे रहौ तात न धरौ सुनित।
ता तनि मांहि सपूत हौ तात नि बधे सुचित्त ।।३।।

हे ऊधौ वे वरज हैं वरजन नहि तुम दास।
वर जत कैसे रहेगो अबरज तिय के पास ।।४।।

राची सूत की कृपाबल सतहंसी बल नाम।
करी वैष्नव दास बरन बल वृन्दावनधाम ।।५।।

हरी राम हैं जौहरी जौहर परख प्रवीन।
तिंह प्रेरें जौं हरि करी जौं हर भरी नवीन ।।६।।

सूरदास-भ्रमर गीत

१. लघु भ्रमर गीत

यह संदेश कह्यौ है माधौ। करि बिचार जिय साधन साधौ ।।
इड़ा, पिंगला सुषमन नारी। सुन्य सहज में बसत मुरारी ।।
ब्रह्म-भाव करि सब मैँ देखौ। अलख निरंजन ही कौँ लेखौ ।।
पदमासन इक चितमन ल्यावौ। नैन मूँदि अंतरगति ध्यावौ ।।
हृदै-कमल मैं ज्योति प्रकासी। सोइ अच्युत अविगत अविनासी ।।
इहि उपाय बिरहा तुम तरिहौ। जोग-पंथ क्रम-क्रम अनुसरिहौ ।।
दुसह सँदेस सुनत ब्रज-बाल। मुरछि परीँ धरनी बेहाल ।।
रे मधुकर लंपट अन्याई। यह सँदेश कत कहैँ कन्हाई ।।
श्री वृंदावन भवन विराजं। नटवर भेष सदा हरि साजैँ ।।

रास बिलास करत वृंदावन। बिच गोपी बिच कान्ह स्याम-घन।
अलि आयौ हो जोग सिखावन। देखि प्रीति लाग्यौ सिर नावन ।।
भँवंर गीत जो दिन दिन गावै। परम भक्ति सो हरि की पावै ।।
सूर जोग की कथा न भाई। सदा भक्ति गोपौ जन गाई ।।

२. लघु भ्रमर गीत

हरि-रथ रतन जर्‍यौ अनूप दिखावै।
जिहिँ मग कान्ह गयौ तिहिं मग तैँ आवै।।

तिहिँ मग आवै, सखिनि बुलावै, देखौ आनि बिचारी।
मुकुट कुँडल तन, पीत बसन कोउ, गोविँद की अनुहारी ।।
वेई भूषन निरखन लागीँ, तब लगि नेरैँ आए।
ऊधौ जिन जानी, मन कुम्हिलानी, कृष्न सँदेश पठाए।।

चलौ चलौ पूछैँ कछु बातेँ।
कहि कहि ऊधौ हरि कुशलातेँ ।।

कहि कुशलातैँ साँची बातैँ आवन कह्यौ कि नाहीँ।
कै गरबाने राजस बाने अब चित हम न सुहाहीँ ।।
ठाड़ी तन काँपैँ, हेरैँ छाकैँ, बार बार अकुलाहीँ।
अब जिय कपट कछू जन राखी पूछैँ सौँह दिवाहीँ ।।

कहो ऊधौ तुम क्योँ ब्रज आए।
तब हँसि कह्यौ हम कृष्न पठाए ।।

कृष्न पठाए हम ब्रज आए कहत मनोहर बानी।
सुनौ सँदेसौ तजौ अँदेसौ तुम हो चतुर सयानी।।
गोप सखा जिय मैँ जनि राखौ, अविगत हैँ अविनासी।
मोह न माया बैर न दाया सब घट आपु निवासी।।

ऊधौ जनि कहौ प्रभु की प्रभुताई।
सुनि जिय अनख सही न रिस जाई।।

रिस नहिँ जाई अनख बढ़्यो अति, पुनि ह्याँ लौँ चतुराई।
दासी कुबिजा नीच कुसंगति कौन वेदमति पाई ।।
तुमहूँ भली कहन कौँ आए, हमकोँ भले सयाने।
जो कछु वस्तु देखियत नैननि, सो किन मनह्रीँ माने ।।

गोविंद की बातैं सब जानैं ।
परबस भईं कहत सोई मानैं ।
सब कोउ जानैं, क्यों मन मानैं अब न कछू कहि आवै ।।
जो कछु कुबिजा के मन भावै, सोई नाच नचावै ।
बाकौं न्याउ दोष सब हमकौं, कर्म रेख को जानै ।।
गोमस देखि जु राख्यौ गाहक, विधना की गति आनै ।।

(ऊधौ) कमलनैन सौं कहियौ जाइ ।
एक वेर ब्रज देखौ आइ ।।
जिनके प्रीति निरंतर मन मैं, सो मन क्यों समुझावैं ।
संकर, ब्रह्म, सेष अरु सुरपति, कोउ हरि दरस न पावैं ।।
वैसेइ रास बिलास कुलाहल, घर घर माखन हरियै ।।
सूरदास-प्रभु मिलत बहुत सुख, विरह स्वास कत जरियै । १।।

२. उद्धव-वचन

मैं तुम पैं ब्रजनाथ पठायौ । आतम ज्ञान सिखावन आयौ ।।
आपुहिँ पुरुष आपुहीँ नारी । आपुहि बानप्रस्थ ब्रह्मचारी ।।
आपुहिँ पिता आपुहीं माता । आपुहिँ भगिनी आपुहिँ भ्राता ।।
आपुहिँ पंडित आपुहिँ ज्ञानी । आपुहि राजा आपुहिँ रानी ।।
आपुहिँ धरती आपु अकास । आपुहिँ स्वामी आपुहिँ दास ।।
आपुहिँ ग्वाल आपुहिँ गाइ । आपुहिँ आपु चरावन जाइ ।।
आपुहिँ भ्रमर आपुहिँ फूल । आतम ज्ञान विन जग भूल ।।
राव रंक दूजा नाहिँ कोइ । आपुहिँ आपु निरंजन सोइ ।।
इहि प्रकार जाकौ मन लागैं । जरा मरन नासै भ्रम भागैं ।।
जोग समाधि ब्रह्म चित लावहु । परमानंद तबहिँ सुख पावहु ।।

गोपी-वचन

जोगी होइ सो जोग बखानैं । नवधा-भक्ति दास रति मानै ।।
भजनानंद हमैं अलि प्यारौ । ब्रह्मानँद सुख कौन विचारौ ।।
बतियाँ रचि-रचि कहत सयानी । अँखियाँ हरि के रूप लुभानी ।।
ब्यावर ब्यथा न बंध्या जानै । बिनु देखें कैसैं रुचि मानै ।।
पुनि पुनि वहै वहै सुधि आवै । कृष्ण रूप बिनु और न भावै ।।
नव किसोर जिन नैंन निहारयौ । कोटि जोग वा छवि पर वार्यौ ।।
सीस मुकुट कुंडल वनमाला । क्यौं विसरैं वे नैन विशाला ।।

मृगमद मलय अलक घुँघरारे । उन मोहन मन हरे हमारे ।।
भृकुटी कुटिल नासिका राजै । अरुन अधर मुरली कल बाजै ।।
दाड़िम दसन तड़ित द्युति सोहै । मृदु-मुसकानि जुवति मन मोहै ।।
चंद्रक झलक कंठ मनि मोती । दूरि करत उडुपति की जोती ।।
कंकन किंकिनि पदिक बिराजै । गज गति चाल नूपुरनि बाजै ।।
बन की धातु चित्रित तन कीए । श्री बछ चिह्न बिराजत हीए ।।
पीत बसन छवि बरनि न जाई । नखसिख सुंदर कुँअर कन्हाई ।।
रूप रसि ग्वारनि कौ संगी । कब देखैं वह ललित त्रिभंगी ।।
जौ तुम हित की बात बतावहु । मदन गुपालहिँ क्यौं न मिलावहु ।।

उद्धव-वचन

जाकै रूप बरन बपु नाहीँ । नैंन मूँदि चितवौ मन माहीँ ।।
हृदय कमल तैं जोति बिराजैं । अनहद नाद निरंतर बाजै ।।
इड़ा पिंगला सुषमन नारी । सहज सुन्न मैँ बसहिँ मुरारी ।।
माता पिता न दारा भाई । जल-थल घट घट रह्यौ समाई ।।
इहिँ प्रकार भव दुस्तर तरिहौ । जो पंथ क्रम-क्रम अनुसरिहौ ।।

गोपी-वचन

हम ब्रजबाल गोपाल उपासी । ब्रह्मज्ञान सुनि आवे हाँसी ।।
ब्रज मैँ जोग कहाँ तैँ ल्यायौ । कुबिजा कूबर मांहि दुरायौ ।।
स्याम सुगाहक पाइ दिखायौ । सो माधव तुम हाथ पठायौ ।।
हम अबला ठगीँ बिवस अहेरी । सो ठग ठग्यौ कंस की चेरी ।।
राम जनम सीता जु दुराई । बधू भई अब कुबिजा पाई ।।
तब सीता-वियोग दुख पायौ । अब कुबिजा पै हियौ सिरायौ ।।
नीरस ज्ञान कहा लै कीजै । जोग मोट दासी सिर दीजै ।।

उद्धव-वचन

पारब्रह्म अच्युत अविनासी । त्रिगुन रहित प्रभु बरैँ न दासी ।।
नहिँ दासी ठकुराइनि कोई । जहँ देखौ तहँ ब्रह्म है सोई ।।
उर मैं आनौ ब्रह्महिँ जानौ । ब्रह्म विना दूजौ नहिँ मानौ ।।

गोपी-वचन

खरे करौ अलि जोग सबारौ । भक्ति विरोधी ज्ञान तुम्हारौ ।।
कहा होत उपदेसनि तेरैँ । नैन सुबस नाहीँ आलि मेरैँ ।।

हरि-पथ जोवैं छिन छिन रोवैं । कृष्न वियोगी निमिष न सोवै ।।
नंदनँदन कौं देखैं जीवैं । जोग-पंथ पानी नहिं पीवैं ।।
जब हपि आवै तव सचु पावै । मोहन मूरति कठ लगावैं ।।
दुसह बचन अलि हमैं न भावैं । जोग कहा ओढ़ैं कि विछावैं ।।

उद्धव-वचन

ऊधौ कह्यो धन्य ब्रजबाला । जिनके सरवस मदन गोपाल ।।
मैं कीन्हौं हो और उपाई । तुम्हरे दरस भक्ति निज पाई ।।
तुम मन गुरु मैं दास तुम्हारौ । भक्ति सुनाइ जगत निस्तारौ ।।
भ्रमर गीत जो सुनै सुनावै । प्रेम-धक्ति गोपिनि की पावै ।।
सूरदास गोपी बड़भागी । हरि दरसन की ढोरी लागी ।।

३. लघुभ्रमर गीत

ऊधो कौ उपदेस सुनौ किन कान दै ।
हरि-निर्गुन संदेस पठायौ आन दै ।।
कोउ आवत उहिं और जहाँ नँद-सुवन पधारे ।
वहै वेनु-धुनि होइ, मानौ आए ब्रज प्यारे ।।
धाईं सब गलराजि कै, ऊधौ देखे जाइ ।
लै आई ब्रजराज गृह, आनँद उर न समाइ ।।
अर्ध आरती साजि तिलक दधि माथै कीन्यौ ।
कंचन कलस भराइ और परिकरमा दीन्यौ ।।
गोप भीर आँगन भई, मिलि बैठी सब जाति ।
जल झारी आगैं धरी, पूछत हरि कुसलाति ।।
कुसल छेम बसुदेव कुसल देवै बलदाऊ ।
कुसल छेम अकूर कुसल नीकैं कुविजाऊ ।।
पूछि कुसल गोपाल की, रहे सबे गहि पाईं ।
प्रेम मगन ऊधौ भए, देखत ब्रज के भाइ ।।
मन मन ऊधौ कही, यौं न बूझियै गोपालहि ।
ब्रज कौ हेत विसारि, जोग सिखबत ब्रजबालहि ।।
इनकी प्रीति पतंग लौं जारति है सब देह ।
वे हरि दीपक जोति ज्यौं नैंकु न उनकैं नेह ।।
तब ऊधौ कर लई लिखो हरि जु की पाती ।।
पढ़ी परित नहि नैंकु रहे निठूर करि छाती ।

पाती बाँचि न आवई, रहे नैंन जल पूरि ।।
देखि प्रेम गोपीन कौ ज्ञान गरव गयौ दूरि ।
फिरि इत उत बहराइ नीर नैननि कौ सोध्यौ ।।
ठानी कथा प्रमोधि बोलि सब घोष समोध्यौ ।
जो ब्रत मुनि जन ध्यावहीं, पावहिं तऊ न पार ।।
सो व्रत सिखयौ गोपिका, छाँड़ौ विषय-विकार ।
सुनि ऊधौ के बैन रहीं नीचे करि नारी ।
मानौ माँगत सुधा आनि विष-ज्वाला जारी ।।
हम अहीरि कह जानईं, जोग जुगुति की रीति ।
नंद नँदन व्रत छाँड़ि कै, को लिखि पूजै भीति ।।

उद्धव-वचन

एकै अलख अपार आदि अविगत है सोई ।
आदि निरंजन नाम ताहि रीझै सब कोई ।।
नैन नासिका अग्र है तहाँ ब्रह्म कौ बास ।
अविनासी बिनसै नहीं, सहज जोति परकास ।।

गोपी-वचन

जौ तौ कर पग नहीं कहो ऊखल क्यौ बाँधौ ।
नैन नासिका मुखन चोरि दधि कौनै खाध्यौ ।।
कबैं खिलाए गोद लै कहे तोतरे बैन ।
ऊधौ ताकौ न्याउ यह, जाहि न सुझै नैन ।।

उद्धव-वचन

माया नित्यहि अंध, ताहि द्वै लोचन जैसे ।
ज्ञान नैन अनंत ताहि सुझत नहिँ कैसे ।।
बुझहु निगम बलाइ कै, कहै भेद समुझाइ ।
आदि अंत जानौ नहीं कौन पिता को माइ ।।

गोपी-वचन

घर लागी अरु घूर कहौ मन कहाँ लगावैं ।
अपनौ घर परिहरैं, कहौ को घूर बुझावै ।
मूरख जादव जाति है, हमैं सिखावत जोग ।
हमसौं भूली कहत है हम भूली किधौं लोग ।।
ऊधौ कहि सति भाइ न्याइ तुम्हरैं मुख साँचे ।

Devavanj Parishad New Delhi

गोपी वचन

जोग प्रेम रस कथा कहौ कंचन की काँचै ।।
जाके पहरैं हूजिए साँचौ ताकौ नेम ।
मधुप हमारी सौं कहौ, जोग भलौ कै प्रेम ।।
प्रेम प्रेम तैं होइ, प्रेम तैं पारहिं जइयै ।
प्रेम बँध्यौ संसार प्रेम परमारथ लहियै ।।
साँचौ निहचै प्रेम कौ, जीवन मुक्ति रसाल ।
एकै निहचै प्रेम कौ, जबै मिलैं गोपाल ।।
सुनि गोपिनि कौ प्रेम, नेम ऊधौ कौ भूल्यौ ।
गावत गुन गोपाल, फिरत कुंजनि मैं फूल्यौ ।।
छिन गोपिन के पग परैं, धन्य तुम्हारी नेम ।
धाइ धाइ द्रुम भेटईं, ऊधौ छाके प्रेम ।।
धनि गोपी, धनि ग्वाल, धन्य ये सब ब्रजवासी ।
धनि यह पावन भूमि, जहाँ बिलसे अविनासी ।।
उपदेसन आयौ हुतौ मोहिं भयौ उपदेस ।
ऊधौ जदुपति चले किए गोप कौ भेष ।।
भूल्यौ जदुपति नाम कह्यौ गोपाल गुसाईं ।
एक बेर ब्रज जाहु देहु गोपिनि दिखराई ।।
बृंदावन सुख छाँड़ि कै, कहाँ बसे हौ आइ ।
गोबरधन-प्रभु जानि कै, ऊधौ पकरे पाँइ ।।
ऊधौ ब्रजकौ प्रेम नेम, बरनौ सब आई ।
उमग्यौ नैननि नीर बात कछु कही न जाई ।।
सूर स्याम भूतल परे नैन रहे जल छाइ ।
पौंछि पीत पट सौं कह्यौ भले आए जोग सिखाइ ।।

बृहत भ्रमर गीत

जदुपति सखा ऊधौ जानि ।
लगे मन मन यहै सोचन भली नहिं यह बानि ।।
अस भुज धरि होत ठाढ़ौ, निठुर जैसौ काठ ।
संग यह नहिं बनत नीकौ, होइ कैसेहु साँठ ।।
जौ कहौं तौ करै क्यों यह, निंदिहै अरु-मोहिं ।
देखिबे कौं परम सुन्दर, रहत नैननि जोहिं ।।
कनक कलस अपान जैसैं, तैसोई यह रूप ।
सूर कैसैंहु प्रेम पावै, तबहिं होइ सुरूप ।।१।।

पाती बाँचि न आवई, रहे नैंन जल पूरि ।।
देखि प्रेम गोपीन कौ ज्ञान गरब गयौ दूरि ।
फिरि इत उत बहराइ नीर नैननि कौ सोध्यौ ।।
ठानी कथा प्रमोधि बोलि सब घोष समोध्यौ ।
जो ब्रत मुनि जन ध्यावहीं, पावहिं तऊ न पार ।।
सो ब्रत सिखयौ गोपिका, छाँड़ौ विषय-विकार ।
सुनि ऊधौ के बैन रहीं नीचे करि नारी ।
मानौ माँगत सुधा आनि विष-ज्वाला जारी ।।
हम अहीरि कह जानईं, जोग जुगुति की रीति ।
नंद नँदन व्रत छाँड़ि कै, को लिखि पूजै भीति ।।

उद्धव-वचन

एकै अलख अपार आदि अविगत है सोई ।
आदि निरंजन नाम ताहि रीझै सब कोई ।।
नैन नासिका अग्र है तहाँ ब्रह्म कौ बास ।
अविनासी बिनसै नहीं, सहज जोति परकास ।।

गोपी-वचन

जौ तौ कर पग नहीं कहो ऊखल क्यौ बाँधौ ।
नैन नासिका मुखन चोरि दधि कौनै खाध्यौ ।।
कबैं खिलाए गोद लै कहे तोतरे बैन ।
ऊधौ ताकौ न्याउ यह, जाहि न सुझै नैन ।।

उद्धव-वचन

माया नित्यहि अंध, ताहि द्वै लोचन जैसे ।
ज्ञान नैन अनंत ताहि सुझत नहिँ कैसे ।।
बुझहु निगम बलाइ कै, कहै भेद समुझाइ ।
आदि अंत जानौ नहीं कौन पिता को माइ ।।

गोपी-वचन

घर लागी अरु घूर कहौ मन कहाँ लगावैं ।
अपनौ घर परिहरैं, कहौ को घूर बुझावै ।
मूरख जादव जाति है, हमैं सिखावत जोग ।
हमसौं भूली कहत है हम भूली किधौं लोग ।।
ऊधौ कहि सति भाइ न्याइ तुम्हरैं मुख साँचे ।

Devavanj Parishad New Delhi

गोपी वचन

जोग प्रेम रस कथा कहौ कंचन की काँचै ।।
जाके पहरैं हूजिए साँचौ ताकौ नेम ।
मधुप हमारी सौं कहौ, जोग भलौ कै प्रेम ।।
प्रेम प्रेम तें होइ, प्रेम तैं पारहिं जइयै ।
प्रेम बँध्यौ संसार प्रेम परमारथ लहियैं ।।
साँचौ निहचै प्रेम कौ, जीवन मुक्ति रसाल ।
एकै निहचै प्रेम कौ, जबै मिलैं गोपाल ।।
सुनि गोपिनि कौ प्रेम, नेम ऊधौ कौ भूल्यौ ।
गावत गुन गोपाल, फिरत कुंजनि मैं फूल्यौ ।।
छिन गोपिन के पग परैं, धन्य तुम्हारी नेम ।
धाइ धाइ द्रुम भेटईं, ऊधौ छाके प्रेम ।।
धनि गोपी, धनि ग्वाल, धन्य ये सब ब्रजवासी ।
धनि यह पावन भूमि, जहाँ बिलसे अविनासी ।।
उपदेसन आयौ हुतौ मोहिं भयौ उपदेस ।
ऊधौ जदुपति चले किए गोप कौ भेष ।।
भूल्यौ जदुपति नाम कह्यौ गोपाल गुसाईं ।
एक बेर ब्रज जाहु देहु गोपिनि दिखराई ।।
बृंदावन सुख छाँड़ि कैं, कहाँ बसे हौ आइ ।
गोबरधन-प्रभु जानि कैं, ऊधौ पकरे पाँइ ।।
ऊधौ ब्रजकौ प्रेम नेम, बरनौ सब आई ।
उमग्यौ नैननि नीर बात कछु कही न जाई ।।
सूर स्याम भूतल परे नैंन रहे जल छाइ ।
पौंछि पीत पट सौं कह्यौ भले आए जोग सिखाइ ।।

बृहत भ्रमर गीत

जदुपति सखा ऊधौ जानि ।
लगे मन मन यहै सोचन भली नहिं यह बानि ।।
अस भुज धरि होत ठाढ़ौ, निठुर जैसौ काठ ।
संग यह नहिं बनत नीकौ, होइ कैसेहु साँठ ।।
जौ कहौं तौ करै क्यों यह, निंदिहै अरु मोहिं ।
देखिबे कौं परम सुन्दर, रहत नैननि जोहिं ।।
कनक कलस अपान जैसैं, तैसोई यह रूप ।
सूर कैसैंहु प्रेम पावै, तबहिं होइ सुरूप ।।१।।

जदुपति जानि उद्धव रीति ।

जिहिँ प्रगट निज सखा कहियत, करत भाव अनीति ।।
बिरह दुख जहँ नाहिँ-नैंकहुँ, तहँ न उपजैं प्रेम ।
रेख, रूप न बरन जाकैं, इहिँ धर्‍यौ वह नेम ।।
त्रिगुन तन करि लखत हमकौं ब्रह्म मानत और ।
विना गुन क्यौं पुहुमि उधरै, यह करत मन डौर ।।
बिरस रस किहिँ मंत्र कहिये क्यौं चलै संसार ।
कछु कहत यह एक प्रगटत, अति भर्‍यौ अहँकार ।।
प्रेम भजन न नैंकु याकैं, जाय क्यौं समुझाइ ।
सूर प्रभु मन यहैं आनी, ब्रजहिँ देउँ पठाइ ।।२।।

यह अद्वैत दरसी रंग ।

सदा मिलि इक साथ बैठत, चलत बोलत संग ।
बात कहत न बनत यासौं, निठुर जोगी जंग ।
प्रेम सुनि विपरीत मापत, होत है रस भंग ।।
सदा ब्रज कौ ध्यान मेरैं, रास रंग तरंग ।
सूर वह रस कहौं कासौं, मिल्यौ सखा भुरंग ।।३।।

संग मिलि कहौं कासौं बात

यह तौ कहत जोग की बातैं, जामैं रस जरि जात ।।
कहत कहा पितु मात कौन के, पुरुष नारि कह नात ।
कहाँ जसोदा सी है मैया, कहाँ नंद सम तात ।।
कहँ वृषभानु सुता सँग कौ सुख, वह बासर वह प्रात ।
सखी सखा सुख नहिं त्रिभुवन मैं, नहिं बैकुंठ सुहात ।।
वे बातैं कहिए किहिं आगै, यह गुनि हरि पछितात ।
सूरदास प्रभु ब्रज महिमा कहि, लिखी बदत बल भ्रात ।।४।।

कहाँ सुख ब्रज कौसौ संसार ।

कहाँ सुखद बँसी बट जमुना, यह मन सदा बिचार ।।
कहँ बन धाम कहाँ राधा संग कहाँ संग ब्रज बाम ।
कहँ रस रास बीच अंतर सुख, कहाँ नारि तन ताम ।।
कहाँ लता तरु तरु प्रति बुझनि, कुंज कुंज नव धाम ।
कहाँ बिरह सुख विन गोपिन संग, सूर स्याम मन काम ।।५।।

वह सुख कहौं काके साथ।

सखा हमकौं मिले ऊधौ, वचन मारत माथ।।
भजन भाव बिना नहीं सुख, कहाँ प्रेऽमरू जोग।
काग हँसहि संग जैसौ, कहाँ दुख कहँ भोग।।
जगत मैं यह संग देखौ, वचन प्रति कहै ब्रह्म।
सूर ब्रज की कथा कासौं, कहौं यह करै दंभ।।६।।

हंस काग कौ संग भयौ।

कहँ गोकुल कहँ गौप गोपिका, विधि यह संग दयौ।।
जैसैं कंचन कांच सँग, ज्यौं चंदन संग कुगंधि।
जैसे खरी कपूर एक सम, यह भई ऐसी संधि।।
जल विन मीन रहति क्यौं न्यारी, यह सोइ रीति चलावत।
जव ब्रज की वातैं इहिं कहियत, तवहीं तव उचटावत।।
याकौ ज्ञान थापि ब्रज पठवौं, और न याहि उपाउ।
सुनहु सूर याकौं ब्रज पठऐं, भलौ वनैगौ दाउँ।।७।।

याहि और नहिं कछू उपाय।

मेरौ प्रगट कह्यौ नहिं बदिहै, ब्रज हीं देउँ पठाइ।।
गुप्त प्रीति जुवति न की कहि कैं, याकौ करौं महंत।
गोपिन के परमोधन कारन, जैहै सुनत तुरंत।।
अति अभिमान करैगौ मन मैं जोगिन की यह भाँति।
सूर स्याम यह निहचैं करिकैं, बैठत है मिलि पाँति।।८।।

तवहिं उपँग-सुत आय गए।

सखा सखा कछु अंतर नाहीं, भरि भरि अँक लए।।
अति सुंदर तन स्याम सरीखो, देखत हरि पछितानें।
ऐसे कैं वैसी बुधि होती, ब्रज पठऊँ मन आनें।।
या आगैं रस-कथा प्रकासौं, ज़ोग कथा प्रगटाऊँ।
सूर ज्ञान याकौ दृढ़ करिकैं, जुवतिन्ह पास पठाऊँ।।९।।

जबहीँ यह कहौंगौ याहि।

मोहिं पावत गोपिकनि पै, हरष ह्वैहै ताहि।।
जोग कौ अभिमान करिहै, ब्रजहिं जैहै धाइ।

कहैगौ मोहिँ स्याम मानत, क्यौं यह चतुराइ ।।
आइ गए तेहि समै ऊधौ, सखा कहि लियौ बोलि ।
कंध धरि भुज भए ठाढ़े, करत बचन निठोलि ।।
बार-बार उसाँस डारत, कहत ब्रज की बात ।
सूर प्रभु के बचन सुनि-सुनि, उपँग-सुत मुसकात ।।१०।।

हरि गोकुल की प्रीति चलाई ।
सुनहु उपँग-सुत मोहि न बिसरत, ब्रज-बासी सुखदाई ।।
यह चित होत जाउँ मैं अबहीं, इहाँ नहीं मन लागत ।
गोपी ग्वाल गाइ बन चारन, अति दुख पायौ त्यागत ।।
कहँ माखन-रोटी, कहँ जसुमति, जेबहु कहि-कहि प्रेम ।
सूर स्याम के बचन हँसत सुनि, थापत अपनौ नेम ।।११।।

जदुपति लख्यौ तिहिँ मुसुकात ।
कहत हम मन रही जोई, भई सोई बात ।।
बचन परगट करन कारन, प्रेम कथा चलाइ ।
सुनहु ऊधौ मोहि ब्रज की, सुधि नहीं बिसराइ ।।
रैनि सोवत, दिवस जागत, नाहिँनै मन आन ।
नंद-जसुमति, नारि-नर-ब्रज तहाँ मेरौ प्रान ।।
कहत हरि सुनि उपँग सुत यह, कहत हौं रस रीति ।
सूर चित तैं टरति नाहीं, राधिका की प्रीति ।।१२।।

सखा सुनि एक मेरी बात ।
वह लता-गृह संग गोपिन, सुधि करत पछितात ।।
बिधि लिखी नहिँ टरत क्यौं हूँ, यह कहत अकुलात ।
हँसि उपँग-सुत बचन बोले, कहा हरि पछितात ।।
सदा हित यह रहत नाहीं, सकल मिथ्या जात ।
सूर प्रभु यह सुनौ मोसौं, एक ही सौं नात ।।१३।।

जब उधौ यह बात कही ।
तब जदुपति अति ही सुख पायौ, मानी प्रगट सही ।।
श्री सुख कह्यौ जाहु तुम ब्रज कैं, मिलहु जाइ ब्रज-लोग ।
मो बिन, बिरह भरीं ब्रज-बाला, जाइ सुनावहु जोग ।।

प्रेम मिटाइ ज्ञान परबोधहु, तुम हौ पूरन ज्ञानी।
सूर उपँग-सुत मन हरषाने, यह महिमा इन जानी ॥१४॥

ऊधौ तुम यह निहचे जानौ।
मन, बच, क्रम मैं तुमहि पठावत, ब्रज कौं तुरत पलानौ॥
पूरन ब्रह्म अकल अविनासी, ताके तुम हौ ज्ञाता।
रेख न रूप जाति कुल नाहीं, जाके नहिं पितु माता॥
यह मत दै गोपिन कौं आवहु, बिरह नदी मैं भासत॥
सूर तुरत तुम जाइ कहौ यह, ब्रह्म बिना नहिं आसत ॥१५॥

ऊधौ बेगिहीं ब्रज जाहु।
स्रुति सँदेस सुनाइ मेटौ वल्लभिनि कौ दाहु ॥
काम पावक, तूल तन मैं, विरह स्वास समीर।
जरि भसम नहिं होन पावैं, लोचननि के नीर ॥
आजु लौं इहिं भाँति हैं वै, कछूक सजग सरीर॥
इते पर बिनु समाधानहिं, क्यौं धरैं तिय धीर।
वार-बार कहा कहौं, तुम सखा साधु प्रवीन ।
सूर सुमति बिचारिऐ, जिहिं, जिऐं जल बिनु मीन ॥१६॥

ऊधौ ब्रज कौं गमन करौ।
हमहिं बिना गोपिका बिरहिनी, तिनके दुःख हरौ ॥
जोग ज्ञान परबोधि सबनि कौ, ज्यौं सुख पावैं नारि।
पूरन ब्रह्म अकल परिचै करि, डारैं मोहि बिसारि ॥
सखा प्रवीन हमारे तुम हौ, तुम तैं नहीं महंत।
सू स्याम इहिं कारन पठवत, ह्वै आवैगो संत ॥१७॥

ऊधौ मन अभिमान बढ़ायो।
जदुपति जोग जानि जिय साँचो, नैन अकास चढ़ायौ॥
नारिनि पै मोकौं पठवत हैं, कहत सिखवत जोग।
मन हौ मन अप करत प्रसंसा, वह मिथ्या सुख-भोग॥
आयसु मानि लियौ सिर ऊपर, प्रभु अज्ञा परमान।
सूरदास-प्रभु गोकुल पठवत, मैं क्यौं कहौं कि आन ॥१८॥

तुम पठवत गोकुल कौं जैहौं।
जौ मानिहैं ब्रह्म की बातैं, तौ उनसौ मैं कैहौं॥

गदगद बचन कहत मन प्रफुलित, बार-बार समुझैहौं।
आजु नहीं जो करौं काज तुव, कौन काज पुनि लैहौं।।
यह मिथ्या संसार सदाई यह कहिकै उठि ऐहौं।
सूर दिना द्वै ब्रज-जन सुख दै, आइ चरन पुनि गैहौं।।१९।।

सुनु सखा हित प्रान मेरैं, नाहिनै सम तोहिं।
कैसैहू करि उरिन कीजै, गोपिकनि सौं मोहिं।।
रैनि दिन मम भक्ति उनकैं, कछू करत न आन।
और सरवस मोहिं अरप्यौ, तरुनि तन धन प्रान।।
ब्याज मैं ये रतन दीन्हे, बृथा गोप कुमारि।
सालोकता समीपता सारूपता, भुज चारि।।
इक रही सायुज्यता सो, सिद्ध नहिं बिनु ज्ञान।
सोइ तुम उपदेसियौ जिहिं, लहैं पद निर्बान।।
जौ न अंगीकृत करैं वै होइ हौं रिन दास।
सूर गाइ चराइहौं मैं, वहुरि बसि ब्रजबास।।२०।।

तुरत ब्रज जाहु उपँग-सुत आजु
ज्ञान बुझाइ खबरि दै आवहु एक पंथ द्वै काज।।
जब तैं मधुबन कौं हम आए, फेरि गयौ नहिं कोइ।
जुवतिन पै ताही कौं पठवैं, जो तुम लायक होइ।।
इक प्रवीन अरु सखा हमारे, ज्ञानी तुम सरि कौन।
सोइ कीजौ जातैं ब्रज बाला, साधन सीखे पौन।।
श्रीमुख स्याम कहत यह बानी, ऊधौ सुनत सिहात।
आयसु मानि सूर-प्रभु जैहौं नारि मानिहैं बात।।२१।।

ऊधौ ब्रज जनि गहरु लगावहु।
तुम ब्रजनारि जानि मन सकुचत, कहि धौं जोग सुनावहु।।
बानी कहत समुझि वै लैहैं, कही हमारी मानौ।
बिरह दाह यह सुनत बुझैहै, मानौ अनलहिं पानौ।।
अबहीं जाहु बिकल सब गोपी, जोग बचन कहि पोषौ।।
सूर नंद बाबा जसुमति कौं, बेगि जाइ संतोषौ।।२२।।

हलधर कहत प्रीति जसुमति की।
कहा रोहिनी इतनी पावै, वह बोलनि अति हित की।।

एक दिवस हरि खेलत मो सँग, झगरी कीन्हौ पेलि ।
मोकौं दौरि गोद करि लीन्हौ, इनहिं दियौ कर ठेलि ।।
नंद बबा तब कान्ह गोद करि, खीझन लागे मोकौं ।
सूर स्याम नान्हौं तेरौ भैया, छोह न आवत तोकौं ।।२३।।

जसुमति करति मोकौं हेत ।
सुनौ ऊधो कहत बनत न, नैन भरि-भरि लेत ।।
दुहुँमि कौ कुसलात कहियौ, तुमहि भूलत नाहिं ।
स्याम हलधर सुत तुम्हारे, और के न कहाहिं ।।
आइ तुमकौं धाइ मिलिहैं, कछुक कारज और ।
सूर हमकौं तुम बिना सुख कौ नहीं कहुँ ढोर ।।२४।।

स्याम कर पत्री लिखी बनाइ ।
नँद बाबा सौं बिनै, कर जोरि जसुदा माइ ।
गोप ग्वाल सखानि कौं हिलि मिलन कंठ लगाइ ।।
और ब्रज-नर नारि जे हैं, तिनहिं प्रीति जनाइ ।
गोपिकनि लिखि जोग पठयो, भाव जानि न जाइ ।।
सुर-प्रभु मन और यह कहि, प्रेम लेत दिढ़ाइ ।।२५।।

उपँग-सुत हाथ दई हरि पाती ।
यह कहियौ जसुमति मैया सौं, नहिं बिसरत दिन-राती ।
कहत कहा वसुदेव-देवकी, तुमकौं हम हैं जाये ।।
कंस-त्रास सिसु अतिहिं जानिकै, ब्रज मैं राखि दुराये ।।
कहै बनाइ कोटिक कोउ बातैं कही बलराम कन्हाई ।
सूर काज करिकै दिन कछु मैं, बहुरि मिलैंगे आई ।।२६।।

ऊधौ इतनी कहियौ जाइ ।
हम आवैंगे दोऊ भैया, मैया जनि अकुलाइ ।।
याकौ बिलग बहुत हम मान्यौ, जो कहि पठयौ धाइ ।
वह गुन हमकौं कहा बिसरिहै, बड़े किए पय प्याइ ।।
अरु जब मिल्यौ नंद बाबा सौं, तब कहियौ समुझाइ ।
तौ लौ दुखी होन नहिं पावैं, धौरी धूमरि गाइ ।।
जद्यपि इहाँ अनेक भाँति सुख, तदपि रह्यौ नहिं जाइ ।
सूरदास देखौं ब्रजबासिनि, तबहीं हियौ सिराइ ।।२७।।

नीकैं रहियौ जसुमति मैया ।
आवैंगे दिन चारि पाँच मैं, हम हलधर दोउ भैया ।।
नोई, बेंत, बिषान, बाँसुरी, द्वार अबेर सबेरैं ।।
लै जनि जाइ चुराइ राधिका, कछुक खिलौना मेरे ।।
जा दिन तैं हम तुमतैं बिछुरे, कोउ न कहत कन्हैया ।
उठि न सबेरे कियो कलेऊ, साँझ न चाखी धैया ।।
कहियो कहा नंद बाबा सौं, जितौ निठुर मन कीन्हौ ।
सूरदास पहुँचाइ मधुपुरी, फेरि न सोधो लीन्हौ ।।२८।।

ऊधौ जननी मेरी कौं मिलि, अरु कुसलात कहौगे ।
बाबा नंदहिं पालागन कहि, पुनि-पुनि चरन गहौगे ।।
जा दिन तैं मधुबन हम आए, सोध नहीं तुम लीन्हौं ।
दै-दै सौंह कहोगे हित करि, कहा निठुरई कीन्हो ।।
यह कहियो बलराम स्याम अब, आवैंगे दोउ भाई ।
सूर करम की रेख मिटै नहिं, यहै कह्यो जदुराई ।।२९।।

विधना यहै लिख्यो सँजोग ।
कहाँ तैं मधुपुरी आए, तज्यौ माखन भोग ।।
कहाँ वै ब्रज के सखा सब, कहाँ मथुरा लोग ।
देवकी वसुदेव सुत सुनि, जननि करिहै सोग ।।
रोहिनी माता कृपा करि, उछंग लेती रोग ।
सूर प्रभु मुख यह बचन कहि, लिखि पठायौ जोग ।।३०।।

ऊधौ जात ब्रजहिं सुने ।
देवकी वसुदेव सुनि कै, हृदय हेत गुने ।।
आपु सौं पाती लिखी, कहि धन्य जसुमति नंद ।
सुत हमारे पालि पठए, अति दियौ आनंद ।।
आइकैं मिलि जात कबहुँ न, स्याम अरु बलराम ।
इहौ कहत पठाइहौं अब, तबहिं तन बिश्राम ।।
बाल-सुख सब तुमहिं लूट्यौ, मोहि मिले कुमार ।
सूर यह उपकार तुम तैं, कहत बारंबार ।।३१।।

पाती लिखि ऊधौ कर दीन्हीं ।
नंद जसोदहिं हित करि दीजौ, हँसि उपंग सुत-लीन्हीं ।।

मुख बचननि कहि हेत जनायौ, तुम हौ हितू हमारे।
बालक जानि पठाए नृप डर सौं, तुम प्रतिपालन हारे।।
कुबिजा सुन्यौ जात ब्रज ऊधौ, महलहिं लियौ बुलाइ।
अपने कर पाती लिखि राधेहिं, गोपिनि सहित बड़ाइ।
मोकौं तुम अपराध लगावति, कृपा भई अनयास।
झुकति कहा मो पर ब्रज-नारी, सुनहु न सूरजदास।।३२।।

हम पर काहें झुकति ब्रजनारी।
साझे भाग नहीं काहू को, हरि की कृपा निनारी।।
कुबिजा लिख्यौ संदेश सबनि कौ, अरु कीन्ही मनुहारी।
हौं तौ दासी कंसराई की, देखौ मनहिं विचारी।।
फलनि माँझ ज्यौं करुइ तोमरी, रहत घुरे पर डारी।
अब तौ हाथ परी जंत्री के, बाजत राग दुलारी।।
तनु तैं टेढ़ी सब कोउ जानत, परसि भई अधिकारी।
सूरदास-स्वामी करुनामय, अपने हाथ संवारी।।३३।।

ऊधौ ब्रजहिं जाहु पालागौं।
यह पाती राधा-कर दीजौ, यह मैं तुमसौं माँगौं।।
गारी देहिं प्रात उठि मोकौं, सुनति रहति यह बानी।
राजा भए जाइ नंदनंदन, मिलौ कूबरी रानी।।
मो पर रिस पावति काहे कौं, बरजि स्याम नहिं राख्यौ ?
लरिकाईं तैं बाँधति जसुमति, कहा जु माखन चाख्यौ।।
रजु लै सबै हजूर होतिं तुम, सहित सुता-वृषभान।
सूर स्याम बहुरौ ब्रज जैहैं, ऐसे भए अजान।।३४।।

ऊधौ यह राधा सों कहियौ।
जैसी कृपा स्याम मोहि कीन्हीं, आपु करत सोइ रहियौ।।
मो पर रिस पावति बिनु कारन, मैं हौं तुम्हरी दासी।
तुमहीं मन मै गुनि धौं देखौ, बिनु तप पायौ कासी।।
कहाँ स्याम को तुम अरधंगिनि, मैं तुम सरि की नाहीं।
सूरज प्रभु कौ यह न बुझिए, क्यों न उहाँ लौं जाहीं।।३५।।

सुनियत ऊधौ लए संदेसौ, तुम गोकुल कौं जात।
पाछें करि गोपिनि सौं कहियौ, एक हमारी बात।।

मातु पिता कौ नेंह समुझि कै, स्याम मधुपुरी आए।
नाहिन कान्ह तुम्हारे प्रीतम, ना जसुदा के जाए।।
देखौ बूझि आपने जिय मैं, तुम धौं कौन सुख दीन्हे।
ये बालक तुम मस्त ग्वालिनी, सबै मूंड़ करि लीन्हे।।
तनक दही माखन के कारन, जसुदा त्रास दिखावै।
तुम हँसि सब बाँधन कौं दौरीं, काहू दया न आवै।।
जो बृषभान-सुता उत कीन्हीं, सो तुम सव जिय जानी।
ताहीं जाल तज्यौ ब्रज मोहन, अब काहैं दुख मानो।।
सूरदास प्रभु सुनि-सुनि बातैं, रहे भूमि सिर नाए।
इत कुबिजा उत प्रेम गोपिकनि, कहत न कछु बनि आए।।३६।।

तब ऊधौ हरि निकट बुलायौ।
लिखि पाती दोउ हाथ दई तिहि, औ मुख वचन सुनायौ।।
ब्रजवासी जावत नारी नर, जल थल द्रुम बन-पात।
जो जिहिं बिधि तासों तैसैंही, मिलि कहियौ कुसलात।।
जो सुख स्याम तुमहिं तैं पावत, सो त्रिभुवन कहुँ नाहिं।
सूरज प्रभु दई सौंह आपुनी, समुझत हौ मन माहिं।।३७।।

पहिलैं प्रनाम नंदराई सौं।
ता पाछैं मेरौ पालागन, कहियौ जसुमति माइ सौं।।
बार एक तुम बरसानें लौं, जाइ सबै सुधि लीजौ।
कहि वृषभानु महर सौं मेरौ, समाचार सब दीजौ।।
श्री दामाऽदि सकल ग्वालिनि कौं मेरौ कोतौ भेंट्यौ।
मित्र एक मन बसत हमारैं, ताहि मिलैं सुख पाइहौ।
करि करि समाधान नीकी बिधि, मोकौं माथौ नाइहौ।।
डरपहु जनि तुम सघन कुँज मैं, है तहँ के तरु भारी।
बृंदावन मति रहति निरंतर, कवहुं न होति निनारी।।
ऊधौं सौं समुझाइ प्रगट करि, अपने मन की बीती।
सूरदास स्वामी सौ छल सौं, कही सकल ब्रज-प्रीती।।३८।।

कही हरि ऊधौ सों ब्रज प्रीति।
वै लै चले जोग गोपिन कौं, तहाँ करन बिपरीति।।
तुरत अंक भरि रथहिं चढ़ायौ, बिनै कह्यौं करि ताहि।
बिरह जंजाल मेटि गोपिन कौ, आवहु काज निबाहि।।

लै रज चरन सीस बंदन करि, ब्रज रैंहौं दिन द्वैकु ।
सूरज-प्रभु श्री मुख कहि पठवत, तुम बिनु रहौ न नैकु ।।३६।।

गहरु जनि लावहु गोकुल जाइ ।
तुमहिं बिना व्याकुल हम ह्वै हैं, जदुपति करी चतुराइ ।।
अपनौ ही रथ तुरत मँगायौ, दियौ तुरत पलनाइ ।
अपने अंग अभूषन करि-करि आपुन ही पहिराइ ।
अपनौ मुकुट पितंबर अपनौ, देत सबै सुख पाइ ।
सूर स्याम तदरूप उपंगसुत, भृगुपद एक बचाइ ।।४०।।

ऊधौ चले स्याम आयसु सुनि, ब्रज नारिन सौं जोगकह्यौ ।
हरि के मन यह प्रेम लहैगौ, वह तौ जिय अभिमान गह्यौ ।।
आतुर चल्यौ हरष मन कीन्हे, कृष्न महत करि पठै दियौ ।
स्यंदन उहै स्याम सब भूषन, जानि परै नंद-सुवन बियौ ।।
जुवती कहा ज्ञान समुझैंगी, गर्व वचन मन कहत चल्यौ ।
सूर ज्ञान कौ मान बढ़ाए, मधुवन के मारगहिं मिल्यौ ।।४१।।

जबहि चले ऊधौ मधुवन तैं, गोपिनि मनहिं जनाइ गई ।
बार-बार अलि लागे स्रवननि, कछु दुख कछु हिय हर्ष भई ।।
जहँ तहँ काग उड़ावन लागी, हरि आवत उड़ि जाहिं नहीं ।
समाचार कहि जबहिं मनावति, उड़ि बैठत सुनि औचकहीं ।।
सखी परस्पर यह कही बातैं, आजु स्याम कै आवत हैं ।
किधौ सूर कोऊ ब्रज पठयौ, आजु खबरि कै पावत हैं ।।४२।।

भुज फरकत अँगिया तरकति, कोउ मीठी बात सुनावै ।
श्याम सुंदर कौ आगम जानिय, वै निस्चय घर आवैं ।।
इमि सगुननि कौ यहै भरोसौ, नैननि दरस दिखावै ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौ, नव जोवन धनि भावैं ।।४३।।

आज कोऊ नीकी बात सुनावै ।
कै मधुवन तैं नंद लाड़िलौ, कैऽब दूत कोउ आवै ।।
भौंर एक चहुँ दिसि तैं उड़ि-उड़ि, कानन लगि-लगि गावै ।
उत्तम भाषा ऊँचे चढ़ि-चढ़ि, अंग-अंग सगुनावै ।
भामिनि एक सखी सौं विनवै, नैन नीर भरि आवै ।
सूरदास कोऊ ब्रज ऐसौ, जो ब्रजनाथ मिलावं ।।४४।।

तौं तू उड़ि न जाइ रे काग।
जौ गोपाल गोकुल कौं आवैं, तौ ह्वै है बड़भाग।।
दधि ओदन भरि दोनौ दैहौं, अरु अंचल की पाग।
मिलिहौं हृदय सिराइ स्रवन सुनि, मेटि बिरह के दाग।।
जैसे मातु पिता नहिं जानत, अंतर कौ अनुराग।
सूरदास-प्रभु करैं कृपा जब, तब तैं देह सुहाग।।४५।।

ऊधौ रथ बैठि चले, ब्रज तन समुहाइ।
मथुरा तैं निकसि परे, गैल माँझ आइ।।
वहै मुकुट पीताम्बर स्याम रूप काछे।
भृगुपद इक बंचित उर और अंग आछे।।
ज्ञान कौ अभिमान किए, माकौं हरि पठयौ।
मेरोई भजन थापि, माया सुख झुठयौ।।
मधुबन तैं चल्यौ तबहिं, गोकुल नियरान्यौ।
देखत ब्रज लोग स्याम आयौ अनुमान्यौ।।
राधा सौं कहति नारि, काग सगुन टेरौ।
मिलिहैं तोहिं स्याम आजु, भयौ बचन मेरौ।।
वैसोई पथ देखतिं सब, कहतिं हरष बानी।
सूरज प्रभु से लागत, तरुनी मुसुकानी।।४६।।

राधेहिं सखी बतावत री।
वैसोई रथ लागत मोकौं, उतही तैं कोउ आवत री।।
चढ़ि आयौ अक्रूर जाहि पर, स्यंदन ब्रज तन धावत री।
वैसियै ध्वजा पताका वैसोइ घर घर सबद सुनावत री।।
कोउ कहै स्याम, कहति को ए हैं, ब्रज तरुनी हरसावत री।
सूर स्याम जेहि मग पग धारे, तेहि मारग दरसावत री।।४७।।

है कोउ वैसी ही अनुहारि।
मधुबन तन तैं आवत सखि री, देखौ नैन निहारि।।
वैसोइ मुकुट मनोहर कुंडल, पीत बसन रुचिकारि।
वैसहिं बात कहत सारथि सौं, ब्रज तन बाहँ पसारि।।
केतिक बीच कियौ हरि अंतर, मनु बीते जुग चारि।
सूर सकल आतुर अकुलानी, जैसै मीन बिनु बारि।।४८।।

वैसोई रथ वैसोइ कोउ आवत उतही तैं ।
झुरि झुरि कब मरतिँ बिरह गोपी जित कीतैं ।।
देखौ री मुकुट झलक, कुंडल की ओभा ।
वैसोइ पट पीत अंग सुंदर अति सोभा ।।
आए री नंद सुवन राधा हरषानी ।
सूर मरत मीन तुरत मिलैं अगम पानी ।।४९।।

देखत हरष भई ब्रजनारी । वह निहचै आए बनवारी ।।
जो जैसैं सो तैसैं धाई । घर घर लोगनि सुने कन्हाई ।।
रथ ही तन सब निरखन लागे । सयानें कौ सुख लूटत आगे ।।
कृपा करी आए गोपाला । गोपिनि जानी बिरह बिहाला ।।
ज्यों ही ज्यौं रथ आतुर आवै । त्यौं ही त्यौं तनु पट फहरावै ।।
सूर भईं सुख व्याकुल नारी । प्रेम बिबस आनँद उर भारी ।।५०।।

घर घरइ है सब्द पर्यौ ।
सुनत जसुमति धाइ निकसी, हरष हियौ भर्यौ ।।
नंद हरषित चले आगैं, सखा हरषित अंग ।
झुंड झुंडनि नारि हरषित, चलीं उदधि तरंग ।।
गाइ हरषित ते स्रवतिं थन, चौकरत गौ बाल ।।
उमँगि अँग न मात कोऊ, विरध तरुनऽरु बाल ।।
कोउ कहत बलराम नाहीं, स्याम रथ पर एक ।
कोऊ कहत प्रभु-सूर दोऊ, रचित बात अनेक ।।५१।।

सुनें ब्रज लोग आवत स्याम ।
जहँ तहाँ तें सबै धाईं सुनत दुर्लभ नाम ।।
मनु मृगी बन जरत व्याकुल. तुरत बरष्यौ नीर ।
बचन गद गद प्रेम व्याकुल, धरतिं नहिं मन धीर ।।
एक इक पल जुग सबनि कौं, मिलन कौं अतुरात ।
सूर तरुनी मिलि परस्पर, भईं हरषित गात ।।५२।।

नंद गोप हरषित ह्वै, गए लैन आगैं ।
आवत बलराम स्याम, सुनत दौरि चली बाम, मुकुट झलक
पीताम्बर मन मन अनुरागैं ।।

निहचै आये गुपाल, आनंदित भईं वाल, मिट्यौ विरह कौ
जँजाल, जोवत तिहिँ काला।
गदगद तन पुलक भयौ, बिरहा कौ सूल गयौ, कृष्न दरस आतुर
अति प्रेम कैं बिहाला।।
ज्यौं ज्यौं रय निकट भयौ, मुकुट पीत बसन नयौ, मन मैं कछु
सोच भयौ स्याम किधौं कोऊ।
सूरज प्रभु आबत हैं, हलधर कौं नहीं लखतिं, झखतिं कहतिं
होते तौ संग बीर दोऊ। ५३।।

आजु कोउ स्याम की अनुहारि।
आवत उतै उमँग सौं सबहीं, देखि रूप की पारि।।
इंद्र धनुष की उर बनमाला, चितवत चित्त हरै।
मनु हलधर अग्रज मोहन के, श्रवननि सब्द परै।
गईं चलि निकट न देखे मोहन, प्रान किये वलिहारि।
सूर सकल गुन सुमिरि स्याम के, विकल भईं ब्रजनारि ।।५४।।

कोउ माई आवत है तनु स्याम।
बैसे पट वैसिय रथ बैठनि, वैसीयै उर दाम।।
जो जैसै तैसे उठि धाईं, छाँड़ि सकल गृह काम।
पुलक रोम गदगद तेहीं छन. सोभित अँग अभिराम।।
इतने बीच आइ गए ऊधौ, रहीं ठगी सब बाम।
सूरदास प्रभु ह्याँ कत आवैं, बँधे कुबिजा रस-दाम ।।५५।।

उमँगि ब्रज देखन कौं सब धाए।
एकहि एक परस्पर बूझतिं, मोहन दूलह आए।।
सोई ध्वजा पताका सोई, जा रथ चढ़ि जु सिधाए।
श्रुति कुंडल अरु पीत बसन छबि, वैसोइ साज बनाए।।
आइ निकट पहिचाने ऊधौ, नैन जलज जल छाए।
सूरदास मिटि दरसन आसा, नूतन बिरह जनाए ।।५६।।

जबहिं कह्यौ ये स्याम नहीं।
परी मुरछि धरनी ब्रजबाला, जो जहँ रही सु तहीं।।
सपने की रजधानी ह्वै गइ, जो जागीं कछु नाहीं।
बार बार रथ ओर निहारहिं, स्याम बिना अकुलाहीं।।

कहा आइ करिहैं ब्रज मोहन, मिली कूबरी नारीं।
सूर कहत सब ऊधौ आए, गईं काम-सर मारी ॥५७॥

तरुनी गईं सब बिलखाइ।
जबहिं आए सुने ऊधौ, अतिहिं गईं झुराइ॥
परी व्याकुल जहाँ जसुमति, गईं तहँ सब धाइ।
नीर नैननि बहति धारा, लई पौंछि उठाइ॥
इक भई सब चलौ मारग, सखा पठयौ स्याम।
सुनौ हरि कुसलात ल्यायौ, महरि सौं कहैं वाम॥
जवहिं लौं रथ निकट आयौ, तबहुं तै परतीति।
वह मुकुट कुंडल पितंबर, सूर-प्रभु अंग-रीति ॥५८॥

भली भई हरि सुरति करी।
उठौ महरि कुसलात बूझिए, आनँद उमंग भरी॥
भुजा गहे गोपी परबोधति, मानहु सुफल घरी।
पाती लिखि कछु स्याम पठायो, यह सुनि मनहिं ढरी॥
निकट उपंगसुत आइ तुलाने, मानौ रूप हरी।
सूर स्याम कौ सखा यहै री, स्रवननि सुनी परी ॥५९॥

निरखत ऊधौ कौं सुख पायौ।
सुन्दर सुलज सुबंस देखियत, यातै स्याम पठायौ॥
नीकैं हरि-संदेश कहैगौ, स्रवन सुनत सुख पैहै।
यह जानत हरि तुरत आइहैं, यह कहि हृदै सिरैहै॥
घेरि लिए रथ पास चहूँघा, नंद गोप ब्रजनारी।
महर लिवाइ गए निज मंदिर, हरषित लियौ उतारी॥
अरघ देत भीतर तिहिं लीन्हौ, धनि धनि दिन कहि आज।
धनि धनि सूर उपंगसुत आए, मुदित कहत ब्रजराज ॥६०॥

कबहूँ सुधि करत गुपाल हमारी।
पूछत पिता नंद ऊधौ सौं, अरु जसुदा महतारी॥
बहुतै चूक परी अनजानत, कहा अबकै पछितानें।
वासुदेब घर भीतर आए, मैं अहीर करि जाने॥
पहिलैं गर्ग कह्यौ हुतौ हमसौं, संग दुःख गयौ भूल।
सूरदास-स्वामी के बिछुरैं, राति दिवस भयौ सूल ॥६१॥

कह्यौ कान्ह सुनि जसुदा मैया ।
आवहिंगे दिन चारि पाँच मैं, हम हलधर दोउ भैया ।।
मुरली बेंत बिषान हमारौ, कहूँ अबेर सबेरौ ।
मति लै जाइ चुराइ राधिका, कछुव खिलौना मेरौ ।।
जो दिन तैं हम तुम सौं बिछुरे, काहु न कह्यौ कन्हैया ।
प्रात न कियौ कलेउ कबहूँ साँझ न पय पियौ घैया ।।
कहा कहौं कछु कहत न आवै, जननी जो दुख पायौ ।
अब हम सौं बसुदेव देवकी, कहत आपनौ जायौ ।।
कहिये कहा नन्द बाबा सौं, बहुत निठुर मन कीन्हौ ।
सूर हमहिं पहुँचाइ मधुपुरी, बहुरि न सोधौ लीन्हौ ।।६२।।

हमतैं कछु सेवा न भई ।
धोखैं ही धोखैं जु रहे हम, जाने नाहिं त्रिलोकमई ।।
चरन पकरि कर बिनती करिबौ, सब अपराध क्षमा कीबैं ।
ऐसौ भाग होइगौ कबहूँ, श्याम गोद पुनि मैं लीवैं ।।
कहै नंद आगै ऊधौ के, एक बेर दरसन दीवें ।
सूरदास स्वामी मिलि अबकैं, सबै दोष निज गत कीबे ।।६३।।

ऊधौ कहौ साँची बात ।
दधि, मह्यौ नवनीत माधव, कौन के घर खात ।।
किन सखा सँग-संग लीन्हे, गहे लकुटी हाथ ।
कौन की गैयाँ चरावत, जात को धौं साथ ।।
कौन गोपी कूल-जमुना, रहत गहि-गहि घाट ।
दान हठ कै लेत कापैं, रोकि किनकी बाट ।।
कौन ग्वालनि साथ भोजन, करत किनतैं बात ।
कौन कौं माखन चुरावन, जात उठिकैं प्रात ।।
इतौ बूझत माइ जसुमति, परी मुरछित गात ।
सूरदास किसोर मिलवहु. मेटि हिय की तात ।।६४।।

भली बात सुनियत है आज ।
कोउ कमल नैन पठयौ है, तन बनाइ अपनौ सौ साज ।।
पूछत सखा कहौ कैसे हैं. अब नाहीं करिबैं कछु काज ।
कंस मारि बसुद्यौ गृह आये, उग्रसेन कौं दीन्हौ राज ।।

राजा भए कहाँ है यह सुख, सुरभी सँग वन गोप समाज।
अब सुनि सूर करै को कौतुक, ब्रजमें नाहिं वसत ब्रजराज ।।६५।।

बातैं सुनियत हैं मनभावन ।
वैसेइ ग्वाल गोप गोपी सब, वैसोइ भेष बनावन ।
नंद-नंदन पतिया लिखि पठई, आजु कालि हरि आवन ।।
वैसेइ कुंज गलिन मैं फिरि-फिरि, वैसेइ वेनु बजावन ।।
वैसेइ बिहँसि बिहँसि मृदु टेरनि, वैसोइ अनँद बढ़ावन ।
सूरदास वैसियै विधि बिहरनि, वैसेइ खरिक दुहावन ।।६६।।

वैसोइ रथ वैसोइ सब साज ।
मानहु बहुरि बिचारि कछू मन, सुफलक सुत आयौ ब्रज आज ।।
पहिलैई गमन गयौ लै हरि कौ, परम सुमति राषौ रतिराज ।
अजहूं कहा कियौ चाहत है, यातैं अधिक कंस कौ काज ।।
व्याध जु मृगनि बधत सुनि सजनी, सो सर काढ़ि संग नहिं लेत ।
यह अक्रूर कठिन की नाइं, हिएं बिषम इतनौ दुख देत ।।
ऐसे बचन बहुत विधि कहि कहि, लोचन भरि सिंचत उर गात ।
सूरदास-प्रभु अवधि जानि कै, चलीं सवै पूछन कुशलात ।।६७।।

ब्रज घर-घर सब होति बधाइ ।
कंचन कलस दूब दधि रोचन लै वृंदावन आइ ।।
मिलि ब्रजनारि तिलक सिर कीनौ, करि प्रदच्छिना तासु ।
पूछत कुशल नारि-नर हरषत, आए सब ब्रज-बास ।।
सकसकात तन धकधकात उर, अकबकात सब ठाढ़े ।
सूर उपंगसुत बोलत नाहीं, अति हिरदै ह्वै गाढ़े ।।६८।।

आजु ब्रज कोऊ आयौ है ।
किधौं बहुरि अक्रूर क्रूर ह्वौ जियत जानि उठि धायौ है ।।
मैं देख्यौ ताकौ रथ ठाढ़ौ, तुमकौं सोध बतायौ है ।
कै किर कृपा दुखित दीननि पै, हरि संदेस पठायौ है ।।
चलीं मिलि समिटि सखी पूछन कौं, ऊधौ दरस दिखायौ है ।
तब पहिचानि जानि प्रभु कौ भृत करनि जोर सिर नायौ है ।।
हरि हैं कुसल कुसल हौ तुमहूँ, कुसल लोग सब भायौ है ।
है वह नगर कुसल सूरज-प्रभु, करि सुदृष्टि जहं छायौ है ।।६९।।

देखौ नंद द्वार रथ ठाढ़ौ ।
बहुरि सखी सुफलक सुत आयौ, परयौ संदेह जिह गाढ़ौ ।।
प्रान हमारे तबहिं लै गयौ, अब किहिं कारन आयौ ।
मैं जानी यह बात सुनत प्रभु, कृपा करन उठि धायौ ।।
इतनें अंतर आइ उपंग सुत, तेहिं छन दरसन दीन्हौं ।
तब पहिचानि सखा हरि जू कौ, परम सुचित मन कीन्हौ ।।
तिहि परनाम कियौ अति रुचि सौं, अरुसबहिनि कर जोरे ।
सुनियत हुते तैसेई देखे, परम सुहृद जिय भोरे ।।
तुम्हरौ दरसन पाइ आपनौ, जनम सुफल करि मान्यो ।
सूर सु ऊधो मिलत भयो सुख, ज्यौं झख पायो पान्यो ।।७०।।

बोलक इनहूं को सुनि लीजै ।
कैसी उठनि उठं धौं ऊधौ, तैसोई उत्तर कीजै ।।
यामैं कछू खरचियत नाहीं, अपनो मतो न दीजै ।
कहि री सखी भागिऐ किहि डर, चलैं जाइ सुख छीजै ।।
दोउ कर जोरि भईं सब सन्मुख, वचन कहो ज्यों जीजै ।
सूर सुमिति सोई दीजै, हरि वदन सुधा रस पीजै ।।७१।।

ऊधौ कहो हरि कुसलात ।
कह्यौ आवन किधौं नाहीं, बोलिऐ मुख बात ।।
एक छिन जुग जात हमें बिनु सुने हरि प्रीति ।
आपु आए कृपा कीन्हीं, अब कहो कछु नीति ।।
तब उपंग सुत सबनि बोले, सुनो श्रीमुख जोग ।
सूर सुनि सब दौरि आईं हटकि दीन्हौ लोग ।।७२।।

गोपी सुनहु हरि कुसलात ।
कंस नृप कौ मारि छोरे आपने पितु-मात ।।
बहुत विधि मनुहार करि दियो उग्रसेनहिं राज ।
नगर लोग सुखी बसत हैं, भए सुरनि के काज ।।
मोहि यह पाती दई लिखि, कह्यो कछु संदेस ।
सूर निर्गुन ब्रह्म उर धरि तजहू सकल अंदेस ।।७३।।

गोपी सुनहु हरि संदेस ।
गए संग अक्रूर मधुवना हत्यौ कंस नरेस ।।
रजक मारयो बसन पहिरे धनुष तोरयौ जाइ ।

कुबलया चानूर मुष्टिका दिए धरनि गिराइ ।।
मातु पितु के बंद छोरे, बासुदेव कुमार ।
राजदीन्हीं उग्रसेनहि, चोंर निजकर ढार ।।
कह्यौं तुमकौं ब्रह्म ध्यावन, छाँड़ि विषय बिकार ।
सूर पाती दई लिखि मोहिं, पढ़ौ गोप-कुमारि ।।७४।।

पाती मधुबन हीं तैं आई ।
सुन्दर स्याम आपु लिखि पठई, आइ सुनौ री माई ।।
अपने अपने गृह तैं दौरीं, ले पाती उर लाई ।
नैननि निरखि निमेष न खंडित प्रेम-तृषा न बुझाई ।।
कहा करौं सूनौ यह गोकुल, हरि बिबु कछु न सुहाई ।
सूरदास ब्रज कौन चूक तैं, स्याम सुरति विसराई ।।७५।।

निरखति अंक स्याम सुन्दर के वार-बार लावति लै छाती ।
लोचन जल कागद मसि मिलि कै ह्वै गइ स्याम स्याम जू की पाती ।।
गोकुल बसत नंदतनंदन के, कबहुँ बयारि न लागी ताती ।
अरु हम उती कहा कहैं ऊधौ, जब सुनि वेनु नाद सँग जाती ।।
उनकैं लाड़ बदति नहिं काहूँ, निसि दिन रसिक-रास रस राती ।
प्रान-नाथ तुम कबहि मिलौगे, सूरदास-प्रभु बाल सँघाती ।।७६।।

पाती मधुबन तैं आई ।
ऊधौ हरि के परम सनेही, ताकैं हाथ पठाई ।।
कोउ पढ़ति, कोउ धरती नैंन पर काहूँ हृदै लगाइ ।
कोउ पूछति फिर फिर ऊधौ कौ आपुन लिखि कन्हाई ?
बहुरौ दई फेरि ऊधौ कौ, तब उन बाँचि सुनाई ।
मन मैं ध्यान हमारौ राख्यौ, सूर सदा सुखदाई ।।७७।।

लिखि आई ब्रजनाथ की छाप ।
ऊधौ बाँधे फिरत सीस पर, बाँचत आवै ताप ।।
उलटी रीति नंदनंदन की, घर घर भयौ संताप ।
कहियौ जाइ जोग आराधैं, अविगत अकथ अमाप ।।
हरि आगैं कुबिजा अधिकारिनि, को जीवे इहिं दाप ।
सूर संदेस सुनावन लागे, कहौ कौन यह पाप ।।७८।।

कोउ ब्रज बाँचत नाहिंन पाती ।
कत लिखि-लिलि पठवत नँद-नंदन कठिन बिरह की काँती ।।
नैन सजल कागद अति कोमल, कर अंगुरी अति ताती ।
परसैं जरै, बिलोकैं भीजै, दुहूँ भाँति दुख छाती ।।
को बाँचे ये अंक सूर-प्रभु, कठिन मदन सर-घाती ।
सब सुख लै गए स्याम मनोहर, हमकौं दुख दै थाती ।।६९।।

ब्रज सैं पाती पढ़न न आवै ।
सुन्दर स्याम लाल लिखि पठई कोउ न बाँचि सुनावै ।।
जो निरखत सो लेत स्वास भरि लोचन नीर बहावै ।
ना जानौं का है इहि महियाँ, लै उर सौं लपटावै ।।
गूँगे को गुर कियो सबनि मिलि, अबलहि कौं जु भुलावै ।
सूरदास गोकुल के बासी, विरही क्यौं सचु पावैं ।।७०।।

ऊधौ नीकी लाँवी चीठी ।
गोपीनाथ लिखी कर अपनै, यामैं जोग बसीठी ।।
आँजहु भस्म जु मुद्रा सेल्ही, हियैं लगत सब सीठी ।
हम रातीं मोहन मुरति सौं, अरु मुरली धुनि मीठी ।।
एजू तुम तो स्याम सनेही, ह्याँ मिलबत सब ईठी ।।
यह कलंक तुमही कौं चढ़िहै जैंसे रंग मजीठी ।।
हम दासिनि की विनती कहियो जो नैननि तुम दीठी ।
सूरदास प्रभु दीन बंधु हैं करिहैं कहा उबीठी ।।७१।।

काहे कौं लिखि पठवत कागर ।
मदन गुपाल प्रगट दरसन बिनु, क्यौं राखैं मन नागर ।।
ऊधो जोग कहा लै कीजै बिनु जल सूखौं सागर ।
कहि धौं मधुप काँच के बदले, को दैहै बैरागर ।।
कहियौ मधुप सँदेस सुचित दै मधुवन स्याम उजागर ।
सूर स्याम विनु क्यौ मन राखैं तन जीवन के आगर ।।७२।।

ऊधौ कहा करैं लै पाती
जौ लौं मदनगुपाल न देखैं बिरह जरावत छाती ।।
निमिष निमिष मोहि बिसरत नाहीं सरद सुहाई राती ।
परि हमारी जानत नाहीं तुम हो स्याम संघाती ।।

यह पाती ले जाहु मधुपुरी, जहं वे बसें सुजाती ।
मन जु हमारे उहाँ लै गए, काम कठिन सर घाती ।
सूरदास-प्रभु कहा चहत हैं, कोटिक बात सुहाती ।
एक बेर मुख वहुरि दिखावहु, रहैं चरन रज-राती ।।७३।।

हरि की ब्रज तन दीठि रुखौंही ।
याही तैं लिखि पठवत अलि कर, बातैं प्रेम छकौंही ।।
नातरु कहा करे हमसौं तब, मिलि मिली बात लगौंही ।
कै अब प्रगट करी करुनामय, या ढँग करत हंसौंही ।।
कै बुलाइ लीन्हे हम घर तैं, तरल भौंह मुसकौंही ।।
कै अब डारि दई मन वच क्रम, पतरी ज्यौंहि जुठौंही ।।
जहाँ रहौ तहँ कोटि बरष लगि, जियौ स्याम सुख सौंही ।
वे कुबिजा बस हम जु जोग बस सूर आपनौ गौं ही ।।७४।।

आए नंद-नंदन के भेव ।
गोकुल माँझ जोग बिस्तार्यौ, भली तुम्हारी टेव ।।
जब वृंदावन रास रच्यौ हरि, तबहिं कहा तुम हेव ।
अब यह ज्ञान सिखावन आए भस्म अधारी सेव ।।
अबलनि कौं तुम सो व्रत ठान्यौ, जो जोगिनि कौं जोग ।
सूरदास यह सुनत दुसह दुख, आतुर बिरह बियोग ।।७५।।

इहिं अंतर मधुकर इक आयौ ।
निज स्वभाव अनुसार निकट ह्वै, सुंदर सब्द सुनायौ ।
पूछन लागीं ताहि गोपिका, कुबिजा तोहिं पठायौ ।
कीधौं सूर स्याम सुन्दर कौं, हमैं संदेसौ लायौ ।।७६।।

मधुप कहा ह्याँ निरगुन गावहि ।
यह प्रिय कथा नगर-नारिनि सौं कहहि जहाँ कछु पावहि ।।
जानतिं मरम नंदनंदन कौ, और प्रसंग चलावहि ।
हम नहीं कमला सी भोरी, करि चातुरी मनावहि ।।
अति विचित्र अरिका की नाईं, गुर दिखाइ बौरावहि ।
जौ तू कितक सुमन रस लै, तजि जाइ बहुरि नहिं आवहि ।।
सुन्दर मधु आनन अनुरागी, नैननि आनि पिवावहि ।
नागर रति-पति सूरदास-प्रभु किहिं बिधि आनि मिलावहि ।।७७।।

जाके गुन गावत दिन-रात ।
ताकौं निरगुन कहत मधुप तुम, नई सुनी यह बात ।।
जौ बादर जल बरषै निसि दिन उमड़ि भरैं नद खात ।
स्वाति बिना नहिं कल मधुकर सुनि खग चातक के गात ।।
बंसी मधुर सुनाइ हर्‌यौ मन दधि खायौ लै पात ।
सूर स्याम नृप राज भए अब गौपिनि देखि लजात ।।७८।।

(मधुप तुम) कहौ कहाँ तै आए हौ ।
जानति हौं अनुमान आपने तुम जदुनाथ पठाए हौ ।।
वैसेइ बसन, बरन तन सुन्दर, वेइ भूषन सजि ल्याए हौ।
लै सरबसु सँग स्याम सिधारे, अब का पर पहिराए हौ ।
अहो मधुप एकै मन सबकौ सु तौ उहाँ लै छाए हौ ।
अब यह कौन सयान बहुरि ब्रज, ता कारन उठि धाए हौ ।।
मधुबन की मानिनी मनोहर, तहीं जात जहँ भाए हौ ।
सूर जहाँ लौं श्याम गात हैं, जानि भले करि पाये हौ ।।७९।।

मधुकर जो हरि कह्यौ सु कहियैं ।
तब हम अब इनहीं की दासी, मौन गहे क्यों रहियै ।।
जो तुम जोग सिखावन आए, निरगुन क्यों करि गहियैं ।
जो कछु लिख्यौ सोई माथे पर, आनि परैं सब सहियै ।।
सुंदर रूप लाल गिरधर कौ, बिनु देखे क्यों रहियै ।
सूरदास-प्रभु समुझि एक रस, अब कैसैं निरबहियै ।।८०।।

उद्धव-वचन

सुनौ गोपी हरि कौ संदेस ।
करि समाधि अंतर-गति ध्याबहु, यह उनकौ उपदेस ।।
वै अविगत अविनासी पूरन, सब घट रहे समाइ ।
तत्व ज्ञान बिनु मुक्ति नहीं है, वेद पुराननि गाइ ।।
सगुन रूप तजि निगुन ध्यावहु, इक चित इक मन लाइ ।
वह उपाइ करि बिरह तरौ तुम, मिलै ब्रह्म तब आइ ।।
दुसह सँदेस सुनत माधौ कौ गोपी जन बिलखानी ।
सूर बिरह की कौन चलावै, बूड़ति मनु बिनु पानी ।।८१।।

गोपी-वचन

मधुकर हमहौं क्यों समुझावत ।
बारंबार ज्ञान गीता को, अवलनि आगैं गावत ।।
नँद नंदन बिनु कपट कथा कत, कहि कहि रुचि उपजावत ।
एक चंदन जो अंग छुधा-रत, कहि कैसैं सचु पावत ।।
देखि विचारि तुहीं जिय अपने, नागर है जु कहावत ।
सव सुमननि फिरि-फिरि जु निरस करि, काहैं कमल बंधावत ।।
चरन कमल, कर नयन बदन छबि, वहै कमलमन भावत ।
सूरदास मन अलि अनुरागी, कहि कैसैं सुख पावत ।।८२।।

रहु रे मधुकर मधु मतवारे ।
कौन काज या निरगुन सौं, चिर जीवहु कान्ह हमारे ।।
लोटत पीत पराग कीच मैं, नीच न अंग सम्हारे ।
बारंबार सरक मदिरा की, अपरस रटत उघारे ।।
तुम जानत हौ वैसी ग्वारिन, जैसे कुसुम तिहारे ।
धरी पहर सबहिनि बिरमावत, जेते आवत कारे ।।
सुंदर बदन कमल-दल लोचन, जसुमति नंद-दुलारे ।
तन मन सूर अरपि रहीं स्यामहि, कापै लेहि उधारे ।।८३।।

मधुकर कौन देस तैं आए ।
जब तैं क्रूर गए लै मोहन, तब तैं भेद न पाए ।।
जाने सख़ा स्याम-सुंदर के, अवधि बंध उठि धाए ।
अंग विभाग नंद-नंदन के, इहिं सुरूप दरसाए ।।
आसन, ध्यान वायु-आराधन, अलि मन चित तुम ताए ।
अतिहिं बिचित्र सुबुद्धि सुलच्छन, गुनी जोग मत गाए ।।
मुद्रा, भस्म, बिषान, त्वचा-मृगव्रज, जुवातिन नहिं भाए ।
अतिसी कुसुम वरन मुख मुरली, सूरज-प्रभु किन ल्याए ।।८४।।

मधुकर काके मीत भए ।
त्यागे फिरत सकल कुसुमावलि, मालति भुरै लए ।।
छिनु के बिछुरै कमल रति मानी, केतिक कत बिधाए ।
छाँड़ि जु देह नेंह नहि जान्यौ लै गुन प्रगट नए ।।
नृतन कदंब, तमाल, बकुल, बट, परसत जनम गए ।
भुज भरि नलिनि उड़त उदास होई, गत स्वारथ समए ।।

भटकत फिरत पात द्रुम वेलिनि, कुसुमाकर रमए।
सूर बिमुख पद-अंबुज छाँड़े, बिषयनि बिवर छए।।८५।।

मधुकर काके मीत भए।
द्यौस चारि करि प्रीति सगाई, रस लै अनत गए।।
डहकत फिरत आपने स्वारथ, पाषँड अग्र दए।
चाँड़ सरैं पहिचानत नाहीं, प्रीतम करत नए।।
मूँड़ उचाट मेलि बौराए, मन हरि हरि जु लए।
सूरदास-प्रभु घूति धर्म ढिग, दुख के बीज बए।।८६।।

मधुकर हम न होंहिं वै बेलि।
जिन भजि तजि तुम फिरत और रँग, करत कुसुम-रस केलि।।
बारे तैं बर बारि बढ़ी हैं, अरु पोषी पिय पानि।
बिनु पीय परस प्रात उठि फूलत, होत सदा हित हानि।।
ये बेली बिरहीं बृंदावन, उरझीं स्याम तमाल।
प्रेम-पुहुप-रस-बास हमारे, बिलसत मधुप गोपाल।।
जोग समीर धीर नहिं डोलतिं, रूप डार दृढ़ लागीं।
सूर पराग न तजतिं हिए तैं, श्री गुपाल अनुरागीं।।८७।।

मधुकर कहाँ पढ़ी यह नीति।
लोक वेद सब ग्रंथ रहित यह, कथा कहत बिपरीति।।
जनम भूमि ब्रज सखी राधिका, केहिं अपराध तजी।
अति कुलीन गुन रूप अमित सुख, दासी जाइ भजी।।
जोग समाधि वेद-गुनि मारग, क्यौं समुझै जु गँवारि।
जो पै गुन अतीत व्यापक है, तौ हम काहैं न्यारि।।
रहि अलि ढीठ कपट स्वारथ हित, तजि बहु बचन बिसेषि।
मन क्रम बचन बचति इहिं नातैं, सूर स्याम तन देखि।।८८।।

मधुकर काहे कौं गोकुल आए।
हम वैसी ही सचु अपने मैं, दूने बिरह जगाए।।
जानति हैं तुम जिनहिं पठाए, स्याम सँदेसौ लाये।
जन्म जन्म के दूत तिरोवन, कौन हिलार लगाए।।
कहा करहिं कहँ जाहिं सखी री, हरि बिनु कछु न सुहाए।
जनम सुफल सूरज तिनकौ, जे काज पराए धाए।।८९।।

आए माई दुरँग स्याम के संगी ।
जो पहिलैं रँग रँगे स्याम के, तिनही की बुधि रँगी ।।
हमरी उनकी सी मिलवत हौ, तातैं भए विहंगी ।
सूधी कहि सबिहिनि समुझावत, ते साँचे सरबंगी ।।
औरनि कौ सरबस लै मारत, आपुन भए अभंगी ।
सूर सुनाम सिलीमुख जो पै, बेधन कवच उपंगी ।।९०।।

कोउ माई मधुबन तैं आयौ ।
सखी सिमिट सब सुनौ सयानी, हित करि कान्ह पठायौ ।।
जो मोहन बिछुरे तैं गोकुल, इते दिवस दुख पायौ ।
सो इन कमलनैन करुनामय, हिरदै माँझ बतायौ ।।
जाकौं जोगी जतन करत हैं नैंकहुँ ध्यान न आयौ ।
सो इन परम उदार मधुप ब्रज-बीथिनि माँझ बहायौ ।।
अति कृपालु आतुर अबलनि कौं, ब्यापक अगह गहायौ ।
समुझि सूर सुख होत स्रवन सुनि, नेति जु निगमन गायौ ।।९१।।

परी पुकार द्वार गृह-गृह तैं, सुनौ सखी इक जोगी आयौ ।।
पवन सधावन, भवन छुड़ावन, रवन-रसाल गोपाल पायौ ।।
आसन बाँधि, परम ऊरध चित, बन्नत न तिनहिं कहा हित ल्यायौ ।
कनक बेलि, कामिनि ब्रजबाला, जोग अगिनि दहिबे कौं धायौ ।।
भव-भय हरन, असुर मारन हित, कारन कान्ह मधुपुरी छायौ ।
जादव मैं ब्रज एकौ नाहीं, काहैं उलटौ जस बिथरायौं ।।
सुथल जु स्याम स्याम मैं बैठौ, अबलनि प्रति अधिकार जनायौ ।
सूर बिसारी प्रीति साँवरे, भली चतुरता जगत हँसायौ ।।९२।।

देन आए ऊधौ मत नीकौ ।
आवहु री मिलि सुनहु सयानी, लेहु सुजस कौ टीकौ ।।
तजन कहत अंबर आभूषन, गेह नेह सुत ही कौ ।
अंग भस्म करि सीस जटा धरि, सिखबत निरगुन फीकौ ।।
मेरे जान यहै जुवतिनि को, देत फ़िरत दुख पी कौ ।
ता सराप तैं भयो स्याम तन, तउ न कहत डर जी कौ ।।
जाकी प्रकृति परी जिय जैसी, सोच न भली बुरी कौ ।
जैसे सूर ब्याल रस चाखै, मुख नहिं होत अमी कौ ।।९३।।

(ऊधौ) नैंकु सुजास हरि कौ स्रवननि सुन ।
कंकन काँच, कपूर करर सम, सुख, दुख, गुन औगुन ।।
नाम उनहिं कौ सुनत गेह तजि, जाइ बसन नर कानन ।
परम हंस बहुतक देखियत हैं, आवत भिच्छा माँगन ।।
बालि, कपिन कौ राउ, सँहार्यौ, लोक-लाज डर-डारी ।
सूपनखाँ की नाक निपाती, तिय बस भए मुरारौ ।।
बलि, सो बाँधि पताल पठायौ, कीन्हे जज्ञ्य बनाइ ।
सूर प्रीति जानी नइ हरि की, कथा तजी नहिं जाइ ।।९४।।

ऊधौ स्याम सखा तुम साँचे ।
कौ करि लियौ स्वाँग बीचहिं तैं, वैसहिं लागत काँचे ।।
जैसी कही हमहिं आवत ही, औरनि कहि पछिताते ।
अपनौ पति तजि और बतावत, मेहमानी कछु खाते ।।
तुरत गमन कीजै मधुबन कौं, इहाँ कहा यह लाए ।
सूर सुनत गोपिनि की बानी, ऊधौ सीस नवाए ।।९५।।

ऊधौ बेगि मधुवन जाहु ।
जोग लेहु सँभारि अपनौ, बेचियै जहँ लाहु ।।
हम बिरहिनी नारि, हरि बिनु कौन करै निबाहु ।
तहीं दीजै मूल पूरै, नफा तुम कछु खाहु ।।
जौ नहिं ब्रज मैं बिकानौ, नगर नारि बिसाहु ।
सूर वै सब सुनत लैहैं, जिय कहा पछिताहु ।।९६।।

ऊधौ और कछू कहिबै कौं ?
मन मानै सोऊ कहि डारौ, हम सब सुनि सहिबे कौं ।।
यह उपदेस आजु लौं ऐसौ, काननि सुन्यौ न देख्यौ ।
नीरस कटुक तपत अति दारुन, चाहत हम उर लेख्यौ ।।
निसि दिन बसत नेंकु नहिं निकसत, हृदय मनोहर ऐन ।
याकौ यहाँ ठौर नाहीं है, लै राखौ जहँ चेन ।।
ब्रजवासी गोपाल उपासी, हमसौं बातैं छाँड़ि ।
सूर जोग-धन राखि मधुपुरी, कुबिजा के घर गाड़ि ।।९७।।

ऊधौ कहौ कहन जौ पारौ ।
नाहीं बलि कछु दोष तिहारौ, सकुचि साध जनि मारौ ।।
नाहीं ब्रज बसि नंदलाल कौ, बाल-बिनोद निहारौ ।

नाहीं रास रसिक-रस चाख्यौ तोड़ि लई सो डार्‌यौ ।।
जौ नहिं गयौ सूर प्रीतम सँग, प्रान त्यागि तन न्यारौ ।
तौ अब बहुत देखिबै सुनिबैं, कहा करम सौं चारौ ।।९८।।

जाहु जाहु ऊधौ जानें हौ ।
जैसे हरि तैसे तुम सेवक, कपट चतुरई सानें हौ ।।
निरगुन ज्ञान कहाँ तुम पायौ कौन सीख ब्रज आनें हौ ।
यह उपदेस देहु लै कुबिजहिं, जाकैं रूप लुभानें हौ ।।
कहँ लगि कहौं जोग की बातैं बाँचत नैन पिराने हौ ।
सूरदास-प्रभु हम सब खोटी, तुम तो बारह बाने हौ ।।९९।।

ऊधौ जाहु तुमहिं हम जानें ।
स्याम तुमहिं ह्याँ कों नहिं पठयौ तुम हो बीच भुलाने ।।
ब्रजनारिनि सौं जोग कहत हो, बात कहत न लजानें ।
वड़े लोग न बिवेक तुम्हारे एसे भए अयानें ।
हमसौं कही लई हम सहि कै, जिय गुनि लेहु सयाने ।
कहँ अबला कह दास दिगंबर मष्ट करौ पहिचानें ।।
साँच कहौं तुमको अपनी सौं बूझति बात निदानें ।
सूर स्याम जव तुमहिं पठायौ तब नैंकहुँ मुसकाने ।।१००।।

जोग उलटि लै जाहु (ऊधौ) भजिहैं नंदकिसोर ।
हमहि तहाँ लै जाहु (ऊधौ) जहाँ बसैं चित चोर ।।
मोहन मूरति साँवरी चित मैं रही समाइ ।
देखो ऊधो न्याउ कै जोग कियौ क्यौं जाइ ।।
पूरन पूरन तुम कहो ह्वाँ पूरन ह्याँ कौन ।
ऊधौ जौ जिय जानि कै देत जरे पर लौन ।।
जोगहिं जोग मिलाइयै हम या जोग अजोग ।
ऊधौ करनी सार है आपु जोग यह जोग ।।
मधुर वचन जे तुम कहौ ते हम चित न समाहिं ।
ऊधौ जोगहि न छुऐं छुऐं तो प्रेम लजाहिं ।।
हमैं आसा कृष्न की, देखैं जीवन प्रान ।
सूरदास-प्रभु साँवरो, नागर चतुर सुजान ।।१०१।।

कहति कहा ऊधौ सौं बौरी।
जाकौं सुनति, रहै हरि के ढिग स्याम सखा यह सो री ?
कहा कहति री मैं पत्याति नहिं, सुनी तुही कहनावति ।।
हमको जोग सिखावन आए यह तेरे मन आवति ।।
करनी भली भलेई जानैं, कुटिल कपट की बानि।
हरि कौ सखा नहीं री माई, यह मन निहचै जानि।
कहाँ रास-रस कहाँ जोग धरि, इतने अंतर भाषत ।।
सूर सबै तुम भई बावरो, याकी पति कह राखत ।।१०२।।

ऐसेई जन धूत कहावत
मोकौं एक अचंभौं आवत यामैं वै कछु पावत ।।
बचन कठोर कहत कहि दाहत अपनौ महत गवावत ।
ऐसी प्रकृति परी काहू की जुवतिनि ज्ञान बतावत ।।
आपुन निलज रहत नख सिख लौं एते पर पुनि गावत ।
सूर करत परसंसा अपनी हारेहुँ जीति कहावत ।।१०३।।

ऐसे जन बेसरम कहावत।
सोच बिचार कछु इनकैं नहिं कहि डारत जो आवत ।।
अहि के गुन इनमें परिपूरन यामैं कछु न पावत ।
लघुता लहत महत करि यौ हँसि नारिनि जोग वतावत ।।
ब्रज में हीन भऐ अब जैहैं अनतहुँ ऐसेहिं गावत ।
सूर स्वभाव पयो जिहिं जैसौ सो कैसे बिसरावत ।।१०४।।

प्रकृति जो जाकैं अँग परी।
स्वान पूँछ कोउ कोटिक लागै सूधी कहु न करी ।।
जैसे काग भच्छ नहिं छाँड़े जनमत जौन घरी।
धोए रंग जात नहिं कैसेहुँ ज्यौं कारी कमरी ।।
ज्यौं अहि डसत उदर नहिँ पूरत ऐसी धरनि धरी।
सूर होइ सो होइ सोच नहिँ तैसेइ एऊ री ।।१०५।।

ऊधौ होउ आगे तैं न्यारे।
तुम देखत तन अधिक दहत है, अरु नैननि के तारे ।।
अपनौ जोग सैंति किन राखहु, इहाँ देत कत डारे।

सो को जो अपने सुख खैहै, मीठे तजि फल खारे ।।
हम गिरिधर के नाम गुननि बस, और काहि उर धारे ।
सूरदास हम सब एकै मत, तुम सब खोटे कारे ।।१०६।।

जाहु जाहु आगे तैं ऊधौ, हौं तौ पति राखति हौं तेरी ।
काहे कौं अब रोष दिखावत देखत आँखि बरति है मेरी ।
तुम जु कहत संतत हैं गोविँद, सुनियत हैं कुबिजा उन घेरी ।
दोउ मिले तैसेई तैसे, वै अहीर, वह कंस की चेरी ।।
तुम सारिखे बसीठ पठाए, कहिऐ कहा बुद्धि उन केरी ।
सूर-स्याम वह सुधि बिसराई, देत फिरत ग्वालनि सँग हेरी ।।१०७।।

समुझि न परति तिहारी ऊधौ ।
ज्यौं त्रिदोष उपजैं जक लागत, बोलत बचन न सूधो ।।
आपुन कौ उपचार करौ अति तब औरनि सिख देहु ।
बड़ौ रोग उपज्यौ है तुमकौं भवन सबारैं लेहु ।।
ह्वाँ भेषज नाना भाँतिन के, अरु मधु-रिपु से बैद ।
हम कातर डरपतिं अपनै सिर यह कलंक है खेद ।।
साँची वात छाँड़ि अलि तेरी झूठी को अब सुनिहै ।
सूरदास मुक्ताहल भोगी, हंस ज्वारि क्यौं चुनिहै ।।१०८।।

हम अलि गोकुलनाथ अराध्यौ ।
मन, क्रम, वच हरि सौं धरि पतिव्रत प्रेम-जोग तप साध्यौ ।।
मातु पिता हित, प्रीति, निगम पथ तजि, दुख सुख भ्रम नाख्यौ ।
मानऽपमान परम परितोषी, सुस्थल थिति मन राख्यौ ।।
सकुचासन कुल सील करषि करि जगत बंध करि बंदन ।
मौनऽपवाद पवन आरोधन, हित क्रम काम-निकंदन ।।
गुरु-जन कानि अगिनि चहुँ दिसि, नभ तरनि ताप बिनु देखे ।
पिवत धूम उपहास जहाँ तहँ, अपजस स्रवन अलेखे ।।
सहज समाधि सारि,बपु वानक निरखि, निमेष न लागत ।
परम ज्योति प्रति अंग माधुरी, धरतिं यहै निसि जागत ।।
त्रिकुटि संग भ्रूभंग, तराटक, नैन नैन लगि लागैं ।
हँसनि प्रकास सुमुख कुंडल मिलि चंद सूर अनुरागैं ।।
मुरली अधर स्रवन धुनि सो सुनि सबद अनाहद कानैं ।
बरषत रस रुचि बचन संग सुख पद आनंद समानैं ।।

मंत्र दियौ मन जात भजन लगि ज्ञान ध्यान हरि ही कौ ।
सूर कहौ गुरु कौन करै अलि कौन सुनै मत फीकौ ।।१०९।।

मैं मन मोल गुपालहिं दीन्हौ ।
अंबुज बदन रसिक गिरिधर कौं रूप नयन निरखन कौं लीन्हौ ।।
इन तौ कर गहि लियौ आपनौ उन तौ बातैं कछू न कीन्हौ ।
वै लै गए चुराइ मोहि कैं इन चितवन चितवत पल छीनौ ।।
अब वैं पलक न देत अपुन तैं इन जान्यौ यातें भयौ हीनौ ।
सूरदास मन मोहन पिय तैं तोरि सनेह विधातैं दीनौ ।।११०।।

ऊधौ हम आजु भई बड़ भागी
जिन अँखियनि तुम स्याम बिलोके ते अंखियाँ हम लागीं ।।
जैसे सुमन बास लै आवत, पवन मधुप अनुरागी ।
अति आनंद होत है तैसें अंग अंग सुख रागी ।।
ज्यौं दरपन मैं दरस देखियत, दृष्टि परम रुचि लागी ।
तैसे सूर मिले हरि हमकौं बिरह-बिथा तन-त्यागी ।।१११।।

बिलग जनि मानौ हमरी बात ।
डरपतिं बचन कठोर कहत अलि, मति बिनु पति उठि जात ।।
जो कोउ कहै जरे कछु अपनैं फिरि पाछें पछितात ।
जो प्रसाद पावत तुम ऊधौ कृष्न नाम लै खात ।।
मन जु तिहारो हरि चरननि तर अचल रहत दिन प्रात ।
सूर स्याम तैं जोग अधिक है कत कहि आवै बात ।।११२।।

(अलि हौं) कैसे कहौं हरि के रूप रसहिं ।
अपने तन मैं भेद बहुत विधि रसना जानै न नेन दसहिं ।।
जिन देखे ते आहिं वचन बिनु जिनहिं बचन दरसन न तिसहि ।
बिनु बानी ये उमँगी प्रेम जल सुमिरि-सुमिरि वा रूप जसहिं ।।
बार-बार पछितात यहै कहि कहा करौं जो विधि न बसहिं ।
सूर सकल अंगनि की यह गति क्यौं समुझावैं छपद पसुहिं ।।११३।।

हम तौ सब बातनि सचु पायौ ।
गोद खिलाइ पिवाइ देह पय पुनि पालनै झुलायौ ।।
देखति रही फनिग की मनि ज्यौं गुरुजन ज्यौं न भुलायौ ।
अब नहिं समुझति कौन पाप तैं बिधना सो उलटायौ ।।

बिनु देखैं पल-पल नहिं छन-छन, ये ही चित ही चायौ ।
अबहिं कठोर भए ब्रजपति-सुत, रोवत मुँह न धुवायौ ।।
तब हम दूध दही के कारन, घर-घर बहुत खिझायौ ।
सो अब सूर प्रगट ही लाग्यो, योगऽरू ज्ञान पठायौं ।।११४।।

सो को जिहिं नाहीं सचु पायौं, बलि गुपाल कैं राज ।
ऊधौ इहै संपदा हरि की, आव सबकैं काज ।।
धनुष तोरि गज मारि मल्ल मथि, किए निडर जदुबंस ।
इन औरौ अमरनि सुख दीन्हौं, करषि केस सिर कंस ।।
कुबिजहिं रूप दियौ नंदनंदन, माली कौं हित काम ।
उग्रसेन बसुदेव देवकी, आने अपने धाम ।।
दीन दयाल दयानिधि मोहन, हैं हमारे इक आस ।
सूर-स्याम हरिहैं जु कृपा करि, इन नैननि की प्यास ।।११५।।

मधुकर कहिऐ काहि सु नाइ ।
हरि बिछुरत हम जिते सहे दुख, जिते बिरह के घाइ ।।
बरु माधो मधुवन ही रहते, कत जसुदा कै आए ।
कत प्रभु गोप-वेष ब्रज धरि कै, कत ये सुख उपजाए ।।
कत गिरि धरयौ इद्र मद मेट्यौ, कत बन रास वनाए ।
अब कहा निठुर भए अबलनि कौं, लिखि जोग पठाए ।।
तुम परवीन सबै जानत हौ तातैं यह कहि आई ।
अपनी को चालै सुनि सूरज, पिता जननि बिसकाई ।।११६।।

कहौ तौ दुख अपनौं सुनाऊं ।
जुवतिनि सौं कहि कथा जोग की सामग्री कहै पाऊं ।।
ऊधो कह सृंगी अरू सेली केती भस्म जराऊँ ।
सोलह सहस सुंदरी काजैं मृगछाला कहँ पाऊँ ।।
रूप न रेख वरन वपु जाके कैसे ध्यान धराऊँ ।।
सूरदास स्वामी बिनु मुख तैं कहौ काके गुन गाऊँ ।।११७।।

ऊद्धव-वचन

जानि करि वावरी जनि होहु ।
तत्व भजैं वैंसी ह्वै जैहौ, पारस परसैं लोहु ।।
मेरौ वचन सत्य करि मानौ, छाँड़ौ सबकौ मोहु ।
तौ लगि सब पानी की चुपरी, जौ लगि अस्थित दोहु ।।

अरे मधुप ! बातैं ये ऐसी; क्यौं कहि आवति तोह ।
सूर सुबस्ती छाड़ि परम सुख, हमैं बतावत खोह ।।११८।।

गोपी-वचन

कहिबैं जिय न कछू सक राखौ ।
लाँबी मेलि दई है तुमकौं, बकत रहौ दिन आखौं ।।
जाकी बात कहौ हमकौं, सूधौं कहौ को काँधी ।
तेरो कहो पवन को बुस भयो, बह्यो जात ज्यौं आँधी ।।
कत स्रय रत सुनत को ह्याँ है, होत जु वन कौ रोयो ।।
सूर इते पर समुझात नाहीं, निपट दई कौ खोयौ ।।११९।।

तुम तौ कहत संदेसौ आनि ।
कहा कहैं वा नंदनंदन सौं, होत नाहीं हित हानि ।।
जुगुति मुकुति किहिं काज हमारैं, जदपि महा सुख खानी ।
सनी सनेह स्याम सुंदर सौं, हिलि मिलि कै मन मानि ।।
सोहत लोह परसि पारस कौं, ज्यौं सुबरन वर वानि ।
पुनि वह कहा चारु चुंबक सौं, लटपटाइ लपटानि ।।
रूप रहित निगुन नीरस नित, निगमहु परत न जानि ।
सूरजदास कौन बिधि तासौं अब कीजै पहिचानि ।।१२०।।

मधुकर भली सुमति यह खोई
हाँसी होन लगी है ब्रज मैं, जागहिं राखहु गोई ।।
आतम ब्रह्म लखावत डोलत, घट घट व्यापक जोई ।
चाँपे काँख फिरत निरगुन गुन, इहाँ न गाहक कोई ।।
प्रेम-कथा सोई पै जानै, जा पै बीती होई ।
तू नीरस एती कह जानै, बूझि देखियै लोई ।।
बड़ौ दूत तू बड़ी ठौर कौ, बड़ी बुद्धि सु बुड़ोई ।
सूरदास पूरो दै षटपद, कहत फिरत है सोई ।।१२१।।

ऊधौ हम हैं हरि की दासी ।
काहे कौं कटु बचन कहत हौं, करत आपनी हाँसी ।।
हमरे गुनहि गाँठि किन बाँधौ, हम कह कियौ बिगार ।
जैसी तम कीन्ही सो सबही, जानत है संसार ।।
जो कुछ भल-बुरी तुम कहिहौ, सो सब हम सहि लैहैं ।
आपन कियौ आपही भुगतहिं, दोष न काहू दैहैं ।।

तुम तौ बड़े बड़े कुल जनमे, अरु सबके सरदार।
यह दुख भयौ सूर के प्रभु सौं, कहत लग वन छार ॥१२२॥

ऊधौ हरि गुन हम चकडोर।
गुन सौं ज्यौं भावै त्यौं फेरौ, यहै बात कौ ओर ॥
पैंड़ पैंड़ चलियै तौ चलियै, ऊबट रपटै पाइँ।
चकडोरी की रीति यहै फिरि, गुन हीं सौं लपटाइ ॥
सूर सहज गुन ग्रंथि हमारैं दई स्याम उर माँहि।
हरि के हाथ परैं तौ छूटै, और जतन कछु नाहिं ॥१२३॥

मधुप कहि जानत नाहीं बात।
फूंकि-फूंकि हियरौ सुलगावत, उठि न इहाँ तैं जात ॥
जिहिं उर बसत जसोदा-नंदन, निरगुन कहाँ समात।
कत भटकत डोलत पुहुपनि कौं, पान करत किन पात ॥
जदपि सकल बेली बन विहरत, बसत जाइ जलजात।
सूरदास ब्रज मिलवन आए, दासी की कुसलात ॥१२४॥

मधुप तुम्हारी बात अटपटी, सुनि आवति है हाँसी।
कहिधौं कौन अंग अबलनि सौं, कथत जोग अविनासी ॥
तिनकौ कहा आन सौं नातौ, जे हैंघर की दासी।
अपने प्रान प्रेम पोषन लगीं, मीन नीर लौं बासी ॥
नेम न तजत तजत बरु तन कौं, बधिक न छोरत फाँसी।
सूरदास गोपाल दरस विनु, क्यौं जीवैं ब्रजवासी ॥१२५॥

मधुकर छाँड़ि अटपटी बातैं।
फिरि-फिरि बार-बार सोइ सिखवत, हम दुख पावतिं जातैं ॥
हम दिन देति असीस प्रात उठि, वार खसौ मत न्हातैं।
तुम निसि दिन उर अंतर सोचत, ब्रज जुवतिनि की घातैं ॥
पुनि-पुनि तुमहिं कहत कत आवै, कछुक सकुच है नातैं।
सूरदास जे रँगीं स्याम रँग, फ़िर न चढ़ै रँग यातैं ॥१२६॥

एक बात दुहुँ भाँति अटपटी, कहि अलि कहा बिचारैं।
हरि मधुपुरी रहे जौ थिर ह्वै, हम दिन क्यौं करि टारैं ॥
ब्रज-बनिता गति और भई है, पूरब दसा निहारैं।
सुखकर सब प्रतिकूल भए हैं, क्यौं हरि इत पगु धारैं ॥

मधुर सकल खग कटुक बदत हैं, चंद अगनि अनुसारैं।
सुमन बान सम, गुहा कुंज गृह, धूम मरुत तन जारै।।
पलट भयौ ब्यौहार देखियत, को धौं दुख तैं तारै।
समाधान नहिं होत किहूँ बिधि, करत बहुत उपचारैं।।
हम सी बहुंत बहुत या ब्रज मैं, कहियौ नंद कुमारैं।
सूरदास प्रभु तौलौं रहियौ, जौ लौं दुरति निवारैं।।१२७।।

क्यौं मन भानत है इन बातनि।
पाए जान सकल गुन मधुकर, वेइ साँवरे गातनि।।
प्रथम प्रेम निसिहू न तजत अब, सकुचत हौ जलजातनि।
नीरस जानि निकट नहिं आवत, देखि पुराने पातनि।।
सुनियत कथा काग कोकिल की, कपट रँग की रातनि।
निसि दिन स्रम सेवा कराइ उड़ि, अंत मिले पितु मातनि।
वेनु वजाइ सुधाकर हरि मुख, बन बोली अधरातनि।
अलि रति लोभ तजत नहिं इक छिन, पठै सकत नहिं प्रातनि।।
वालि जीति जिन बंधन किए, लुब्धक की सी घातनि।
को पतियाई सु धौं सूरज कहि, संकरषन के भ्रातनि।।१२८।।

उलटी रीति तिहारी ऊधौ, सुनै सो ऐसी को है।
अलप बयस अबला अहीरि सठ तिनहिं जोग कत सोहै।।
बूची खुभी, आँधरी काजर, नकही पहिरै बेसरि।
मुड़ली पटिया पारौ चाहै, कोढ़ी लावै केसरि।।
बहिरी पति सौ मतौ करै तौ, तैसोई उत्तर पावै।
सो गति होइ सबै ताकी जो, ग्वारिनि जोग सिखावै।।
सिखई कहत स्याम की बतियाँ, तुमकौं नाहीं दोष।
राज काज तुमतैं न सरैंगौ, काया अपनी पोष।।
जाते भूलि सबै मारग मैं, इहाँ आनि का कहते।
भली भई सुधि रही सूर, नतु मोह धार मैं बहते।।१२९।।

सौंति धरौ यह जोग आपनौं ऊधौ पाइँ परौं।
कहँ रस-रीति, कहाँ तन-सोधन, सुनि सुनि लाज मरौं।।
चंदन छाँड़ि बिभूति बतावत, यह दुख कौन जरौं।
सगुन रूप जु रहत उर अंतर, निरगुन कहा करौं।।
निसि दिन रसना रटत स्याम गुन, का करि जोग भरौं।

नासा कर गहि ध्यान सिखावत, बेसरि कहाँ धरौं ।।
मुद्रा न्यास अंग आभूषन, पतिब्रत तैं न टरौं ।
सूरजदास यहै ब्रत मेरैं, हरि पल नहिं बिसरौं ।।१३०।।

मधुकर जुवती ज़ोग न जानैं ।
एक पतिब्रत हरि रस जिनकैं, और हृदै नहिं आनैं ।
जिनके रँग रस रस्यौ रैनि-दिन, तन-मन सुख उपजायौ ।।
जिन सरवस हरि लियौ रूप धरि, वहै रूप मन भायौ ।
तू अति चपल आपनैं रस कौ, या रस मरम न जानैं ।।
पूछौ सूर चकोर चंद, चातक घन केवल मानैं ।।१३१।।

मधुकर हम अजान मति भोरी ।
यह मत जाइ तहाँ उपदेसौ, नागरि नवल किसोरी ।।
कंचन कौ मृग कौनैं देख्यौ, किन बाँध्यौ गहि डोरी ।
कहि धौं मधुप वारि तैं माखन कौनैं भरी कमोरी ।।
बिनुहीं भीत चित्र किन कीन्हौ, किन नभ घाल्यौ झौरी ।
कहौ कौन पै कढ़त कनूका, जिन हठि भुसी पछोरी ।।
निरगुन ज्ञान तुम्हारौ ऊधौ, हम अबला मति थोरी ।
चाहतिं सूर स्याम मुख चंदहिं, अंखिया तृषित चकोरी ।।१३२।।

ऊधौ कैसे हैं वे लोग ।
करि बहु प्रेम गह्यौ अविवेकहिं, लिखिलिखि पठवत जोग ।।
कीजै कहा नहीं बस काहू, व्यापत विरह-बियोग ।
सूरदास प्रभु मिलौ कृपा करि, गोपिनि व्यापत रोग ।।१३३।।

ऊधौ काल चाल औरासी ।
मन हरि मदन गुपाल हमारौ, बोलत बोल उदासी ।।
अब हम कहा करैं एते पर, जोग कहत अविनासी ।
गुप्त गोपाल करी रस लीला, हम लूटी सुख रासी ।।
नैंन उमंगि चले हरि के हित, बरसत हैं बरषा सी ।
रसना सूर स्याम के रस बस, चातक हू तैं प्यासी ।।१३४।।

मधुकर ब्रज कौ बसिबौ नीकौ ।
बछरा धेनु चरावत बन मैं, कान्ह सबनि कौ टीकौ ।।
बृंदावन मैं होत कुलाहल, गरजत उर मुरली कौ ।

ठाढौ जाइ कदम की छहियाँ, माँगत दान मही कौ ।।
उपजत प्रेम प्रीति अंतरगत, गावत जस हरि पी कौ ।
सूरदास प्रभु इतनोइ लेखौ, प्रान हमारे जी कौ ।।१३५।।

अँखियाँ हरि दरसन की भूखीं ।
कैसें रहतिं रूप-रस राँची, ये बतियाँ सुनि रूखी ।।
अवधि गनत, इकटक मन जोवत, तब इतनौ नहिं झूखीं ।
अब यह जोग सँदेसौ सुनि-सुनि, अति अकुलानी दूखीं ।।
बारक वह मुख आनि दिखावहु, दुहि पय पिवत पतूखी ।
सूर सु कत हठि नाव चलावत, ये सरिता हैं सूखी ।।१३६।।

अँखियाँ हरि दरसन की प्यासी ।
देख्यौ चाहतिँ कमलनैन कौं निसि-दिन रहतिँ उदासी ।।
आए ऊधौ फिरि गए आँगन, डारि गए गर फाँसी ।
के सरि तिलक मोतिनि कीमाला, बृंदावन के बासी ।।
काहू के मन की कोउ जानत, लोगनि के मन हाँसी !
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस कौं, करवत लैहौं कासी ।।१३७।।

हमरे प्रथमहि नेह नैन कौ ।
वह रस रूप नीर कहँ पैयत, यह पय ज्ञानऽरु बैन कौ ।।
जानतिँ लोचन भरि नहिं देखे, तन रस कोटिक मैन कौ ।
तू बकवाद करै केतौ ही, नहि सुख निमिषहु रैन कौ ।।
कह जानैं रस-सागर की गति, षट् पद बंसज ऐन कौ ।
सूरदास-प्रभु इतने कोमल, अलि उपज्यौ दुख दैन कौ ।।१३८।।

नैननि उहै रूप जो देखौं ।
तौ ऊधौ यह जीवन जग कौ साँच सुफल करि लेखौं ।।
लोचन चपल चारु खंजन, मन-रंजन हृदय हमारे ।
सुरँग कमल मृग मीन मनोहर, सेत अरुन अरु कारे ।।
रत्न जटित कुंडल स्रवननि वर परति कपोलनि झाँईं ।
मनु दिनकर प्रतिबिंब मुकुर महँ, ढूँढ़त यह छबि पाई ।।
मुरली अधर बिकट भौंहैं करि, ठाढ़ौ होन त्रिभंग ।
मुक्त माल उर नील-सिखर तैं, धसी धरनी जनु गंग ।।
और वेष को कहै वरनि सब, अँग-अँग केसरि खौर ।
देखैं बनै, कहत रसना सौं, सूर बिलोकत और ।।१३९।।

नैननि नंद-नंदन ध्यान ।
तहाँ यह उपदेस दीजै, जहाँ निरगुन ज्ञान ॥
पानि पल्लव रेख गनि गुन, अवधि बिबिध बिधान ।
इते पर इन कटुक बचननि, क्यों रहैं तन प्रान ॥
चंद कोटि प्रकास मुख, अवतंस कोटिक भान ।
कोटि मन्मथ वारि छबि पर, निरखि दीजत दान ॥
भृकुटि कोटि कोदंड रुचि, अवलोकनी संधान ।
कोटि वारिज बक्र नैन कटाच्छ कोटिक वान ॥
मनि कंठ हार, उदार उर, अतिसय वन्यौ निरमान ।
संख, चक्र गदा धरे कर पद्म सुधा निधान ॥
स्याम तनु पट पीत की छबि करै कौन बखान ।
मनहु नृत्यत नील-घन मैं, तड़ित देती भान ॥
रास-रसिक गुपाल मिलि, मधु-अधर करती पान ।
सूर ऐसे स्याम बिनु, को इहाँ रच्छक आन ॥१४०॥

ऊधौ इन नैननि नेम लियौ ।
नंद-नँदन सौं पतिव्रत राख्यौ, नाहिंन दरस बियौ ॥
चंद चकोर स्वाति सौं चातक, जैसें बँध्यौ हियौ ।
ऐसैंही इन नैननि इकटक, हरि सौं प्रेम दियौ ॥
आए पुहुप-ज्ञान लै इन दृग, मधुपनि रुचि न कियौ ।
हरि-मुख-कमल-अमी-रस सूरज, चाहत वहै पियौ ॥१४१॥

ऊधौ नैननि यह व्रत लीन्हौ ।
स्वाति बिना ऊसर सब भरियत, ग्रीव रंध्रमत कीन्हौ ॥
मुरली गरज तात मुकता तनु मेघ ध्यान जल दीन्हौ ।
वरु ये प्रान जाइँ ऐसैं ही, वचन होइँ क्यौं हीनौ ॥
तुम आए लै जोग सिखावन, सुनत महा दुख दीनौ ।
कैसैं सूर अगोचर लहियै, निगम न पावत चीनौ ॥१४२॥

जब तैं सुंदर बदन निहार्‌यौ ।
ता दिन तैं मधुकर मन अटक्यौ, बहुत करी निकरै न निकार्‌यौ ॥
मातु, पिता, पति, बंधु, सुजन नहिं, तिनहूँ कौ कहिबौ सिर धार्‌यौ ।
रही न लोक लाज मुख निरखत, दुसह क्रोध फीकौ करि डार्‌यौ ॥

ह्वैबौ होइ सु होइ कर्मबस, अब जी कौ सब सोच निवार्‍यौ।
दासी भईं जु सूरदास-प्रभु, भलौ पोच अपनौ न बिचार्‍यौ ॥१४३॥

माई मेरे नैननि भेद दियौ।
ता दिन तैं उन स्याम मनोहर, चित बित चोरि लियौ ॥
जैसैं कनक कटोरी मदिरा, आरतवंत पियौ।
बिसरो देह गेह सुख संपति, पर बस प्रान कियौ ॥
तजि ब्रज बास चले मधुबन कौं, हरि बिनु बृथा जियौ।
सूरदास बिछुरत नहिं दरक्यौ, बज्र समान हियौ ॥१४४॥

हरि मुख निरखि निमेष बिसारे।
ता दिन तैं ये भए दिगंबर, इन नैंननि के तारे ॥
तजी सीख सब सास ससुर की, लाज जनेऊ जारे।
घूँघट घर छाँड़े बन बीथिनि, अह निसि रहत उघारे ॥
सहज समाधि रूप रुचि कारन, टरत न टक तैं टारे।
ताकैं बीच बिघन करिबे कौं, मातु पिता पचिहारे ॥
कहत सुनत समुझत मन महियाँ, ऊधौ वचन तुम्हारे।
सूरदास ये हटक न मानत लोचन हठी हमारे ॥१४५॥

नैंननि निपट कठिनई ठानी।
जा दिन तैं बिछुरे नँद-नंदन, ता दिन तैं नहिं नैंकु सिरानी ॥
पलक न लावत रहत ध्यान धरि, बारंबार ढुरावत पानी।
लाल गुपाल मिले ऊधौ, मैं करमहीन कछु वै नहि जानी ॥
समुझि-समुझि अनुहार स्याम की, अति सुन्दर वर सारँग पानी।
सूरदास ये मोहि रहे अति, हरि मूरति मन माहँ समानी ॥१४६॥

हरि बिनु पलक न लागति मेरी।
पात-पात बृंदावन ढूँढ़्यौ, कुंज गली सब हेरी ॥
हम दुखिया दुख ही कौं सिरजी, जनम जनम की चेरी।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस कौं, भई भसम की ढेरी ॥१४७॥

ऊधौ क्यौं राखौं ये नैन।
सुमिरि सुमिरि गुन अधिक तपत हैं, सुनत तुम्हारे बैन ॥
ये जु मनोहर बदन इंदु के, सादर कुमुद चकोर।
परम तृषा-रत सजल स्याम-घन तन के चातक मोर ॥
मधुप मराल जु पद पंकज के, गति-बिलास जल मीन।

चक्रवाक दुति-सनि दिनकर के, मृग मुरली आधीन ।।
सकल लोक सूनौ लागत है, बिनु देखे वह रूप ।
सूरदास-प्रभु नंद-नँदन के नख सिख अंग अनूप ।।१४८।।

और सकल अंगनि तैं ऊधौ, अँखियाँ अधिक दुखारी ।
अतिहिं पिराति सिराति न कबहूँ, बहुत जतन करि हारी ।।
मग जोबत पलकौ नहिं लावति विरह विकल भइँ भारी ।
भरि गइ विरह बयारि दरस बिनु, निसि दिन रहति उघारी ।।
ते अलि अब ये ज्ञान सलाकैं, क्यौं सही सकति तिहारी ।
सूर सु अंजन आँजि रूप रस, आरति हरहु हमारी ।।४९।।

स्याम वियोग सुनौ हो मधुकर, अँखियाँ उपमा जोग नहीं ।
कंज, खंज, मृग, मीन होहिं नहिं, कवि ज़न वृथा कहीं ।।
कंजनहूँ की लगति पलक-दल, जामिनि होति जहीं ।
खंजनहूँ उड़ि जात छिनक मैं, प्रीतम जहीं तहीं ।।
मृग होते रहते सँग ही सँग चंद-बदन जितहीं ।
रूप सरोवर के बिछुरे कहुँ, जीवत मीन मही ?
ये झरना सी झरत सदा हैं, सोभा सकल बही ।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, अब कत साँस रही ।।१५०।।

उपमा नैन न एक रही ।
कवि जन कहत कहत सब आए, सुधि करि नाहिं कही ।।
कहि चकोर विधु-मुख विनु जीवत, भ्रमर नही उड़ि जात ।
हरि-मुख कमल कोष बिछुरे तैं, ठाले कत ठहरात ।।
ऊधौ वधिक ब्याध ह्वै आए, मृग सम क्यौं न पलात ।
भागि जाहिं बन सघन स्याम मैं, जहाँ न कोऊ घात ।।
खंजन मन-रंजन न होहिं ये, कबहुँ नहीं अकुलात ।
पंख पसारि न होत चपल गति, हरि समीप मुकुलात ।।
प्रेम न होइ कौन बिधि कहियै, झूठैं हीं तन आड़त ।
सूरदास मीनता कछू इक, जल भरि कबहुँ न छाँड़त ।।१५१।।

ऊधौ इन नैननि अंजन देहु ।
आनहु क्यौं न स्याम रंग काजर, जासौं जुर्यौ सनेहु ।।
तपत रहति निसि बासर मधुकर, नहिं सुहात बन गेहु ।
जैसें मीन मरत जल बिछुरत, कहा कहौं दुख एहु ।।

सब विधि बानि ठानि करि राख्यौ, खरि कपूर कौ रेहु।
बारक स्याम मिलाइ सूर सुनि क्यौं न सुजस जग लेहु ।।१५२।।

नैना नाहिंनैं ये रहत।
जदपि मधुप तुम नंद-नँदन कौं, निपटहिं निकट कहत ।।
हृदै माँझ जौ हरिहि बतावत, सीखौ नाहिं गहत।
परी जु प्रकृति प्रगट दरसन की, देख्यौइ रूप चहत ।।
यह निरगुन उपदेस तुम्हारौ, सुनैं न सह्यौ परत।
सूरदास-प्रभु बिनु अवलोके, कैसेंहु सुख न लहत ।।१५३।।

अब अलि नैननि प्रकृति परी।
हरि मुख कमल बिना निरखे तैं, रहत न एक घरी ।।
सूखे सर सरोज संपुट भए, कौन अधार जिऐं।
मधु-मकरंद पियत मधुकर ते, कैसैं गरल पिऐं ।।
तुमहूँ जात प्रेम के लालच, कानि सूल जिय जानि।
तन त्यागे नीकौ लागत पै, सहत न परसन-पानी ।।
हरि हित बारि कहूँ ब्रज बरषन, बारिज करै बिकास।
सूर अंबु लौं जरत मरत नहिं, करत भँवर की आस ।।१५४।।

पूरनता इन नैननि पूरे।
तुम पुनि कहत सुनति हम समुझति, येही दुख अति मरत बिसूरे ।।
हरि अंतरजामी सब बूझत, बुद्धि बिचारि सू बचन समूरे।
वै हरि रतन रूप-सागर के, क्यौं पाइयै खनावत घूरे ।।
रे अलि चपल मोद-रस लंपट, कटु संदेस कथत कत चूरे।
कहँ मुनि ध्यान कहाँ ब्रज-बासिनि कैसें जात कुलिस कर चूरे ।।
देखि बिचारि प्रगट सरिता सर, सीतल सजल स्वाद रुचि रूरे।
सूर स्वाति की बूँद लगो जिय, चातक चित लागत सब झूरे।।१५५।।

ऊधौ अँखियाँ अति अनुरागी।
इकटक मग जोवतिं अरु रोवतिं, भूलेहुँ पलक न लागी ।।
बिनु पावस पावस करि राखी, देखत हौ बिदमान।
अब धौं कह कियौं चाहत हौ, छाँड़ौ निरगुन ज्ञान ।।
तुम हौ सखा स्याम सुन्दर के, जानत सकल सुभाइ।
जैसैं मिलैं सूर के स्वामी, सोई करहु उपाइ ।।१५६।।

मधुकर सुनौ लोचन बात।
रोक राखे अंग अंगनि, तऊ उड़ि-उड़ि जात ।।
ज्यों कपोत वियोग व्याकुल, जात है तजि धाम।
जात यौं दृग गिरि न आवत, बिना दरसन स्याम ।।
मूँदि नैन कपाट पल दै, किए घूँघट ओट।
स्वाति-सुत ज्यौं जात कतहूँ, निकसि मनि नग फोट ।।
स्रवन सुनि जस रहत हरि कौ, मन रहत धरि ध्यान।
रहति रसना नाम रटि-रटि, कंठ करि गुन-गान ।।
कछुक दियौ सुहाग इनकौं, तौ सबै ये लेत।
सूर स्याम बिना बिलोकैं, नैन चैन न देत ।।१५७।।

मधुकर ये नैना पै हारे।
निरखि निरखि मग कमलनैन के, प्रेम मगन भए भारे ।।
ता दिन तैं नींदौ पुनि नासी, चौंकि परे अधिकारे।
सुपन तुरी जागत पुनि वेई, बसत जु हृदय हमारे ।।
यह निरगुन लै ताहि बतावहु, जानै याकी सारे।
सूरदास गोपाल छाँड़ि, को, चूसै टेंटा खारे ।।१५८।।

अँखियाँ अब लागी पछितान।
जब मोहन उठि चले मधुपुरी, तब क्यौं दीन्हे जान ।।
पंथ चलै संदेस न आनै, धीरज धरैं न प्रान।
जा दिन तैं बिछुरे नंद-नँदन, अँग अँग लागे बान ।।
ऊधौ अब तुम जाइ सुनावहु, आवैं सारंगपान।
सूरदास चातकि भइँ गोपी, अंतरगति की जान ।।१५९।।

कमलनैन कान्हर की सोभा, नैननि तैं न टरै।
ऊधौ आए जोग सिखावन, को जंजाल करै ।।
जब मोहन गाइनि लै आवत, ग्वालनि संग घरै।
बलदाऊ अरु संग सखा सब, कहि कैसैं बिसरै ।।
बंसीबट ज़मुना तट ठाढ़े, मुरली अधर धरै।
सुख समूह बिनोद जे कीन्हे, को इहिं ढरनि ढरै ।।
ब्रजबासी सब भए उदासी, को संताप भरै।
सूरदास के प्रभु बिनु ऊधौ, को तन तपत हरै ।।१६०।।

आँखिनी तैं छिनक कान्ह करि सकैं न न्यारे।
कहाँ रहैं नैंना जौ निकसि जाहिं तारे।।
निकसत नहिं अंग तैं हरि, जतननि करि हारे।
फैलि जाइ अंग जैसें, नसनि के निकारे।।
जब तैं अलि वचन सूर कूर से उचारे।
तब तैं नहिँ रहत, बहत अँसूअनि के तारे।।१६१।।

स्याम राम कौ संगी यह अलि, कीजत कह सन्यास।
मोहन नागर नायक की मनि तजी और की आस।।
कर्म-सूत्र ठाने अरु सुनियत, रसना संधि प्रकास।
भए बिदा ब्रज प्रेम नेम के ठोंकि हाथ गहि नास।।
इतने भएँ नैन नहिं मानत, प्रथम परे जे पास।
टेक न छाँड़त सूर अजहुँ लौं, बीच बसीठ दुभास।।१६२।।

सुंदर स्वाम के सँग आँखि।
प्रथम ऊधौ आनि दै हम, सगुन डारैं नाखि।।
द्वै तीन सप्त अनंत जे स्रुति, कहैं सुम्रिति भाषि।
हृदय विद्या, ज्ञान, धर्म सुलोचननि अभिलाषि।।
जहाँ, जहं किए केलि हरि पिय, सर सु चकई पाँखि।
हारि हेरि अहेरिया हरि, रहीं झुकि झुकि झाँखि।।
राति ज्यौं अक्रूर दिन अलि, मदन की मधु माखि।
कमल कुमुदिनि इंदु उड़गन, मिलन सूरज साखि।।१६३।।

कहियौ मधुप जाइ तुम हरि सौं मेरौ मन अटक्यौ नैननि लेखैं।
यहै दोष दै दै झगरत हैं, निरखत मुख क्यौं लगीं निमेषैं।।
ते अब सब इन पै भरि चाहत, विधि जो लिखे दरस सुख रेखैं।
कै तौ मोहि बताई देहु अब, लगी पलक जड़ जाके पेखैं।।
इहिं विधि अनुदिन जुरत जतन करि, गनत गए अँगुरिनि अवसेसैं।
सूरदास सुनि इन झगरनि तैं, नहिं चित छुटत बदन बिनु देखैं।।१६४।।

या जुवती के गोरस कौं हरि, इक दिन बहुत अरे।
ऊधौ वे बातैं क्यों बिसरति, छाँड़ि न हठहिं परे।।
ता दिन कौं देखी यह अंचल, ऐंचत ओप भरे।
आपु सिखाइ ग्वाल सबहिनि कौं, न्यारे रहे खरे।।१६५।।

सो मुरति नैननि मैं लगि रही, अँग अँग चपल परे।
सूर स्याम देखैं सचु पइयै, राखि सँदेस धरे ।।१६६।।

सखी री मथुरा मैं द्वै हंस।
वे अक्रूर और ये ऊधौ, जानत नीकैं गंस ।।
ये दोउ नीर गँभीर पैरिया, इनहिं वधायौ कंस।
इनके कुल ऐसी चलि आई, सदा उजागर बंस ।।
अब इन कृपा करी ब्रज आए, जानि आपनो अँस।
सूर सु ज्ञान सुनावत अबलनि, सुनत होत मति-भ्रंस ।।१६७।।

मनौ दोउ एकहिं मते भए।
ऊधौ अरु अक्रूर बधिक मति, ब्रज आखेट ठए ।।
वचन फाँस बाँधे मृग माधौ, उन रथ लाइ लए।
इनहीं हेरि मृगी गोपी सब, सायक-ज्ञान हए ।।
जोग अगिनि की दवा देखियत, चहु दिसि लाइ दए।
अब धौं कहा कियौ चाहत हैं, करि उपचार नए ।।
परमारथी परम कैतव चित, विरहिनि प्रेम रए।
कैसैं जिएँ सूर के प्रभु बिनु, चातक मेघ गए ।।१६८।।

मनौ गढ़े दोउ एकहि साँचे ।
नख सिख कमलनैन की सोभा, एक भृगु लता बाँचे ।।
दारु-जात के से गुन इनमैं, ऊपर अंतर स्याम।
हम जु तपतिं उर अधिक प्रीति कै, बचन कहत निहकाम ।।
ये सखि असित देह धरे जेते, ऐसेई सब जानि।
सूर एक तैं एक आगरे वा मथुरा की खानि ।।१६९।।

सब खोटे मधुबन के लोग।
जिनके संग स्याम सुंदर सखि, सीखे हैं अपजोग।
आए हैं ब्रज के हित ऊधौ, जुवतिनि कौ लै जोग।
आसन, ध्यान नैन मूंदे सखि, कैसैं कढ़ैं वियोग ।।
हम अहीरि इतनी का जानैं, कुबिजा सौं संजोग।
सूर सुवैंद कहा लै कीजै, कहैं न जानै रोग ।।१७०।।

मधुबन लोगनि को पतियाइ।
मुख औरै अंतरगति औरै, पतियाँ लिखि पठवत जु बनाइ ।।

ज्यों कोइल-सुत काग जियावै, भाव भगति भोजन जु खवाइ।
कुहुकि कुहुकि आऐं बसंत रितु, अंत मिलै अपने कुल जाइ।।
ज्यौं मधुकर अंबुज-रस चाख्यौ, बहुरि न बूझै बातैं आइ।
सूर जहाँ लगि स्याम गात हैं, तिनसौं कीजै कहा सगाइ।।१७०।।

तुम अलि स्यामहिं जनि पतियाहु।
बहुरोचक इन कपट कहानी, तजे किए तैं ब्याहु।।
सुरपति, असुर, बिप्र जीते ब्रज, कित कित दुख निमिष निवारी।
ते अब कहि पठवत ये बातैं जोग की हृदय बिदारी।।
करनी कान्ह करी जग जानी, कुल गुन आन सँभारे।
सूर सुदेस होत नहिं गारुड़, कुटिल बिकट अहि कारे।।१७१।।

माई मधुपनि की यह रीति।
नीरस जानि तजत छिन भीतर, नवल कुसुम रस प्रीति।।
तिनहीं के संगिन कौं कैसैं, चित आवत परतीति।
हमहिं छाँड़ि बिरमहिं कुबिजा संग, आए न रिपु रन जीति।।
जनि पतियाहु मधुर सुनि बातैं, लागे करन समीति।
ऐसी संगति सूर स्याम की, ज्यौं भुस पर की भीति।।१७२।।

मधुबन सब कृतज्ञ धरमीले।
अति उदार परहित डोलत हैं, बोलत बचन सुसीले।।
प्रथम आइ गोकुल सुफलक-सुत, लै मधरिपुहिं सिधारे।
उहाँ कंस ह्याँ हम दीननि कौं, दूनौं काज सँवारे।।
हरि कौ सिखे सिखावन हमकौं, अब ऊधौं पग धारे।
ह्वाँ दासी रति की कीरति कै, इहाँ जोग बिस्तारे।।
अब तिहिं बिरह समुद्र सबै हम, बूड़ीं चहु तन हीं।
लीला सगुन नाव ही सुनु अलि, तिहिं अवलम्ब रहीं।।
अब निरगुनहिं गहैं जुवतीजन, पारहिं कहा गईं।
सूर अक्रूर छपद के मन मैं, नाहिन त्रास दई।।१७३।।

हमकौं नीकैं समुझि परी।
जिन लगि हुती बहुत उर आसा, सोउ बात निबरी।।
व सुफलक-सुत ये सखि ऊधौ, पढ़े एक परिपाटी।

उन वैसी कीन्हीं इन ऐसी, रतन छोरि दियौ माटी ।।
ऊपर मृदु भीतर जु कुलिस सम, देखत के अति भोरे ।
जोइ जोइ आवत वा मथुरा तें, एक डार के तोरे ।।
यह मैं पहिलैं ही कहि राखी, असित न अपने हौंहि ।
सूर काटि जौ माथौ दीजै, चलें आपनी गौंहि ।।१७४।।

ऊधौ ऐसे काम न कीजै ।
एकहि रंग रँगे दोऊ, धोइ स्वेत करि लीजै ।।
फिरि-फिरि दुख अवगाहि हमारे, हम सब करी अचेत ।
कित पट पर गोता मारत हौ, आप भूड़ के खेत ।।
आपुन कपट, कपट कल जनम्यो, कहा भलाई जानै ।
फोरत बाँस काटि दाँतनि सों, बार-बार ललचानैं ।।
छाँड़ि हेत कमलिनि सौं अपनौ, तू कित अनतहिं जाइ ।
लंपट, ढीठ बहुत अपराधी, कैसें मन पतियाइ ।।
यहै जु बात कहति हैं तुम सौं, इहिं ब्रज फिरि मति आवै ।
एक वार समुझावहु सूरज, अपनौ ज्ञान सिखावैं ।।१७५।।

(ऊधौ) प्रेम भक्ति रहित निरस जोग कहा गायौ ।
निठुर बचन अबलनि सौं, कहे कहा पायौ ?
जिहिं नैननि कमलनैन, मोहन मुख हेर्‌यो ।
मूँदन ते नैन कहत, कौन ज्ञान तेर्‌यौ ।।
तामैं सुनि मधुकर, हम कहा लेन जाहीं ।
जामैं प्रिय प्राननाथ, नंद-नँदन नाहीं ।।
जिनके तुम सखा साधु, कहौ बात तिनकी ।
जीवतिं कहि प्रेम-कथा, दासी हम उनकी ।।
निरगुन अबिनासी मत, आनि भाष्यौ ।
सूरदास जीवन-धन, कान्ह, कहाँ राख्यौ ।।१७६।।

(ऊधौ) प्रेम गएं प्रान रहै, कौन काज आवै ।
जैसें ससि निसा गऐं, सोभा नहिं पावै ।।
बिबिध खग जु एक रूप, बोलत मृदु बानी ।
नैन अछत चातक की, प्रीति जगत जानि ।।
औरै जग जीवन कौ, नाम न कोउ जानै ।

एक प्रेम लीन मीत, कीरति जग बखानै ।।
अति सुवास सुमन सबै, देखत जिय भावैं ।
वै सु प्रेम पंकज कौ, सब तजि कित गावैं ।।
जिन नैननि मोहन मुख, कमल-नैन हेरौ ।
मूँदौ ते नैन कहत, कौन ज्ञान तेरौ ।।
अविनासी निर्गुन कहा, ब्रजहिं आनि भाष्यौ ।
सूरदास जीवन-धन स्याम, कहाँ राख्यौ ।।१७७।।

जनि चालहि अलि बात पराई ।
नहिं कोउ सुनत न समुझत ब्रज मैं, नई कीरति सब जाति हिराई ।।
जानें समाचार सुख पाए, मिलि कुल की आरति बिसराई ।
भले संग बसि भई भली मति, भले ठौर पहिचानि कराई ।।
मीठी कथा कटुक सी लागति, उपजत है उपदेस खराई ।
उलटौ न्याउ सूर के प्रभु कौ, बही जाति माँगत उतराई ।।१७८।।

याकी सीख सनै ब्रज को रे ।
जाकी रहनि कहनि अनमिल अलि, कहत समुझियत थोरे ।।
आपुन पद-मकरंद सुधा-रत, हृदय रहत नित बोरे ।
हमसौं कहत बिरह-स्रम जैहै, गगन कूप खनि खोरैं ।।
धान कौ गाँव पयार तैं जानौ, ज्ञान विषय रस भोरे ।
सूर सु बहुत कहे न रहै रस, गूलर कौ फल फौरे ।।१७९।।

उधौ जोग सिखावन आए, अब कैसैं धीरज धरौं ।।
जोरि-जोरि चित जोरि जुरान्यौ, जोर्यौ जोरि न जान्यौ ।
तब धौं जोग कहाँ हो ऊधौ, जब यह ज़ोग दृढ़ान्यौ ।।
उन हरि हमसौं प्रीति जु कीन्ही, जैसैं मीनऽरु पानी ।
तलफि तलफि जिय निकसन लाग्यौ, पानी पीर न जानी ।।
निसि बासर मोहिं पलक न लागै, कोटि जतन करि हारी ।
ज्यौं भुवंग तजि गयौ केंचुली, सो गति भई हमारी ।।
एक समय हरि अपने हाथनि, करनफूल पहिराए ।
अब कैसैं माटी के मुद्रा, मधुकर हाथ पठाए ।।
वेनौ सुभग गुही अपने कर, चरननि जावक दीन्हौ ।
कहा कहौं वा स्याम सुन्दर सौं, निपट कठिन मन कीन्हौ ।।
चोवा चंदन और अरगजा, जा सुख मैं हम राखी ।

अब तन कौं हम भस्म चढ़ावैं, तुम मधुकर हौ साखी ।
तुम जु बसत हौ मथुरा नगरी, हम जु बसतिं इहिं गाँउँ ।
ऊधौ हरि सौं जाइ कहिजै, प्रान तजैं कै ठाउँ ।।
प्रीतम प्यारे प्रान हमारे, रहे अधर पर आई ।
सूरदास हरि जू के आगैं, कौन कहै दुख जाइ ।।१८०।।

बिरहिनि क्यौं धीरज मन धरैं ।
वह चितवनि, वह चलनि मनोहर, संत समाधि टरैं ।।
दसन वज्र दुति, बदन लाल मृदु, ससि गन पुंज हरे ।
खंजन नैन किधौं अलि बारिज, कछू न समुझि परे ।।
उज्ज्वल स्याम अरुन चंचलता, मुनि मन निरखि हरैं ।
सूरदास प्रभु देखि थकित भइ, को स्तुति सिंधु तरैं ।।१८१।।

ऊधौ जोग सिखावन आए ।
सृंगी भस्म अधारी मुद्रा, दै ब्रजनाथ पठाए ।।
जौ पै जोग लिख्यौ गोपिनि कौं, कत रस रास खिलाए ।
तबहीं क्यौं न ज्ञान उपदेस्यौ, अधर सुधा-रस प्याए ।।
मुरली सब्द सुनत बन गवनीं, सुत, पति गृह बिसराए ।
सूरदास सँग छाँड़ि स्याम कौ, हमहिं भए पछिताए ।।१८२।।

आए जोग सिखावन पाँड़े ।
परमारथी पुराननि लादे, ज्यौं बनजारे टाँड़े ।
हमरे गति-पति कमल-नयन की, जोग सिखैं ते राँड़े ।।
कहौ मधुप कैसे समाहिंगे, एक म्यान दो खाँड़े ।।
कहु षट्पद कैसैं खैयतु है, हाथिनि कैं सँग गाँड़े ।
काकी भूख गई बयारि भषि, बिना दूध घृत माँड़े ।।
काहे कौं झाला लै मिलवत, कौन चार तुम डाँड़े ।
सूरदास तीनौ नहिं उपजत, धनिया, धान, कुम्हाँड़े ।।१८३।।

वहुत दिन गए ऊधौ, चरन-कमल सुख नहीं ।
दरस हीन दुखित दीन, छिन-छिन बिपदा सही ।।
रजनी अति प्रेम पीर, बन गृह मन धरै न धीर ।
बासर मग जोवत उर, सरिता बही नैन-नीर ।।
नलिनी जनु हेम घात, कंपित तन कदलि पात ।

लोचन जल पावस भयौ, रही री कछु समुझि बात ।।
जौ लौं रही अवधि आस, दिन गनि घट रही स्वास ।
अब वियोग बिरहिनि तन, तजि है कहि सूरदास ।।१८४।।

ज्ञान बिन कहुँवै सुख नाहीं ।
घट-घट व्यापक दारु अगिनि ज्यौं, सदा बसै उर माहीं ।।
निरगुन छाँड़ि सगुन कौं दौरति, सु धौं कहौ किहिं पाहीं ।
तत्व भजौ जौ निकट न छटै, ज्यौं तनु तैं परछाहीं ।।
तिहि तैं कहौ कौन सुख पायौ, जिहिं अब लौं अवगाहीं ।
सूरदास ऐसैं करि लागत, ज्यौं कृषि कीन्हे पाही ।।१८५।।

ऊधौ कहौ सु फेरनि कहिऐ ।
जौ तुम हमैं जिवायौ चाहत अनबोले ह्वै रहिऐ ।।
प्रान हमारे घात होत हैं, तुम्हरे भाऐं हाँसी ।
या जीवन तैं मरन भलौ है, करवत लैहैं कासी ।।
पूरब प्रीति सँभारि हमारी, तुमकौं कहन पठायौ ।
हम तौ जरि बरि भस्म भईं तुम, आनि मसान जगायौ ।।
कै हरि हमकौं आनि मिलावहु, कै लै चलिये साथै ।
सूर स्याम बिनु प्रान तजति हैं, दोष तुम्हारे माथैं ।।१८६।।

मधुकर कहा सिखावन आयौ ।
ए तौ नैन रूप रस राँचे, कह्यौ न करत परायौ ।।
जोग जुगति हम कछू न जानैं, कछु ब्रह्म ज्ञानौ ।
नव किसोर मोहन मृदु मूरति, तासौं मन उरझानौ ।।
भली करी तुम आए ऊधौ, देखौ दसा बिचारी ।
दाउँ उपाउ मिलाइ सूर प्रभु, आरति हरौ हमारी ।।१८७।।

मधुकर कहा कियौ अब चाहत ।
हम तौं भईं चित्र की पुतरी, सुन्न सरोरहिं दाहत ।।
हमसौं तुमसौं बैर कहा अलि, स्याम अजान भुराहत ।
झारि झूरि मन कन तौ लै गए, बहुरि पयारहिं गाहत ।।
अब तौ है मारुत कौ गहिबौ, बहु स्रम करि का लेहौ ।
सूरज जौ उन हमहिं हते तौ, अपनौ कीन्हौ पैहौ ।।१८८।।

मधुकर अब यह आइ रही ।
बारिध जोग अपार अगम कौ, निगम न थाह लही ।।
बुधि बिवेक बोहित चढ़ि स्रम करि, तौ सिव चेत परी ।
जीवन अति सुकुमार अधीरज, जुगुति न जात तरी ।।
अब निरास कछु चलै न आवै लहरनि उठै समाइ ।
भ्रामक भँवर भेद दिखियत है, मनसा तहाँ न जाइ ।।
गुन अवलंब कहैं नहिं कौऊ, निरगुन तुमहुँ सुनावहु ।
प्रेम प्रतीति प्रीति जिनहीं मन, कित आधार छँड़ावहु ।।
साधन किए लाल मन मानिक, हीरा रतन अमोल ।
प्रेम वृच्छ पर चारि सदा फर, निरभय अमित अडोल ।।
सुमिरन ध्यान आस छाया करि, मन मोहन प्रभु नागर ।
दुस्तर तरहिं सूर क्यौं अबला, चख जल सरिता सागर ।।१८९।।

ऊधौ तुम अपनौ जतन करौ ।
हित की कहत कुहित की लागति, कत वेकाज ररौ ।।
जाइ करौ उपचार आपनो, हम जु कहति हैं जी की ।
कछुवै कहत कछुक कहि आवत, धुनि दिखियत नहिं नीकी ।।
साधु होइ तिहिं उत्तर दीजै, तुमसौं मानी हारि ।
यह जिय जानि नंद-नंदन तुम, इहाँ पठाए टारि ।।
मथुरा गहौ वेगि इन पाइनि, उपज्यौ है तन रोग ।
सूर सु बैद वेगि टोहौ किन, भए मरन के जोग ।।१९०।।

कह्यौ तुम्हारौ लागत काहैं ।
कोटिक जतन कहौ जो ऊधौ, हम न बहकिहैं वाहैं ।।
काहे कौं अपनैं जिय भूलत, करि करि मन की लाहैं ।
यह भ्रम तौ अबहीं भजि जैहै, ज्यौं पयार के गाहैं ।।
कासी के लोगनि लै सिखावहु, जे समुझैं या माहैं ।
सूर स्याम बिहरत ब्रज भीतर, जीजत हैं मुख चाहैं ।।१९१।।

आपु देखि पर देखि रे मधुकर, तब औरनि सिख देहु ।
बीतैगी तबहीं जानैगौ, महा कठिन है नेंहु ।।
मन जु तुम्हारौ हरि चरननि है, तन लै गोकुल आयौ ।
नंद-नँदन के बिछुरे, कहि कौनैं सचु पायौ ।।
गोकुल रहहु जाहु जानि मथुरा, झूठौ माया मोहु ।
गोपी कहैं सूर सुनि ऊधौ, हमसे तुमसे होहु ।।१९२।।

गोबिंद के बिछुरे तैं ऊधौ जानी बिरह की बात।
हौं सूखी बहु भाँति गात अति, ज्यौं तरुवर के पात॥
भूल्यौ भोजन भाव सफल कृत, बचत न नैंकु सुहात।
उड़ुगन गिनत जाम चारौ निसि, क्रम-कम करि जु बिहात॥
जे गुरुजन के वचन न मानत, ते ऐसेइ डहकात।
ये दुख मो पै न टरत बिरहिनी, जे बीतत मो गात॥
वे दिन दसा बीति गइ लेखे, पल-पल जुग सम जात।
सहज बहत लोचन जल सरिता, सूर बुड़त उतरात॥१६३॥

तू अलि कहा पर्यौ है पैंड़े।
ब्रज तू स्याम अजा भयौ हमकौं, यहऊ बचत न वैंड़े॥
यह उपदेस संत नहिं भाए, जो चढ़ि कहौ बरैंड़े।
राखति जतन जसोदा-नंदन हृदय माँझ सब मैंड़े॥
छाँड़ि राज मारग यह लीला, कैसैं चलहिं कुपेंड़े।
या आदर पर अजहूँ बैठ्यौ, टरत न सूर पलैंड़े॥१६४॥

घर ही के बाढ़े रावरे।
नाहिन मीत-वियोग बस परे, अनब्यौंगे अलि बावरे॥
बरु मरि जाइ चरैं नहिं तिनुका, सिंह को यहै स्वभाव रे।
स्रवन सुधा-मुरली के पोषे, जोग जहर न खवाव रे॥
ऊधौ हमहिं सीख कह दैहौ, हरि बिनु अनत न ठाँव रे।
सूरजदास कहा लै कीजै, थाही नदिया नाव रे॥१६५॥

तुम अलि कासौं कहत बनाइ।
बिनु समुझें हम फिरि-फिरि बूझतिं, बारक बहुरौ गाइ॥
कहु किहिं गमन कियौ स्यंदन चढ़ि, सुफलक-सुत के संग।
किहिं बधि रजक लिए नाना पट, पहिरे अपने अंग॥
किहिं हति चाप निदरि गज निज बल, किहिं मल्लनि मथि जाने।
उग्रसेन बसुदेव देवकी किहिंऽब निगड़ तैं आने॥
काकी करत प्रसंसा निसि दिन, कौनैं घोष पठाये।
किहिं मातुल हति कियौ जगत जत, कौन मधुपुरी छाए॥
माथै मोर मुकुट उर गुंजा, मुख मुरली कल बाजै।
सूरदास जसुदा नँद-नंदन, गोकुल कान्ह बिराजै॥१६६॥

हमकौ हरि की कथा सुनाउ।
ये आपनी ज्ञान गाथा अलि, मथुरा ही ले जाउ।।
नागरि नारि भलैं समझैंगी, तेरौ वचन वनाउ।
पा लागौं ऐसी इन बातनि, उनही जाइ रिझाउ।।
जौ सुचि सखा स्याम सुंदर कौ, अरु जिय मैं सति भाउ।
तौ बारक आतुर इन नैननि, हरि मुख आनि दिखाउ।।
जौ कोउ कोटि करै कैसिहुँ बिधि, बल विद्या व्यवसाउ।
तउ सुनि सूर मीन कौं जल विनु, नाहिंन और उपांउ ।।१९७।।

ऊधौ वानी कौन ढरैंगौ, तौंसौं उत्तर कौन करैंगौ।
या पाती के देखत हीं अब, जल सावन कौ नैन ढरैंगौ।।
बिरह-अगिनि तन जरत निसा-दिन, करहिं छुवत तुव जोग जरैंगौ।
नैन हमारे सजल हैं तारे, निरखत ही तेरौ ज्ञान गरैंगौ।।
हमहिं वियौगऽरु सोग स्याम कौ, जोग रोग सौं कौन अरैंगौ।
दिन दस रहौ जु गोकुल महियां, तव तेरौ सब ज्ञान मरैंगौ।।
सिंगी सेल्ही भसमऽरु कंथा, कहि अलि काके गरैं परैंगौ।
जे ये लट हरि सुमननि गूँधी, सीस जटा अब कौन धरैंगौ।।
जोग सगुन लै जाहु मधुपुरी ऐसे निरगुन कौन तरैंगौ।
हमहिं ध्यान पल छिन मोहन कौं, विनु दरसन कछुवै न सरैंगौ।।
निसि दिन सुमिरन रहत स्याम कौ, जोग अगिनि मैं कौन जरैंगौ।
कैसेहु प्रेम नेम मोहन कौं, हित चित तैं हमरै न टरैंगौ।।
नित उठि आवत जोग सिखावन, ऐसी बातनि कौन भरैंगौ।
कथा तुम्हारी सुनत न कोऊ, ठाढ़े ही अब आप ररैंगौ।।
वादिहिं रटत उठत अपने जिय, को तोसों बेकाज लरैंगौ।
हम अँग अँग स्याम रँग भीनी, को इन बातनि सूर डरैंगौ।। १९८।।

(ऊधौ) हरि बिनु ब्रज रिपु बहुरि जिए।
जे हमरे देखत नंद-नँदन, हति हति हुते सु दूरि किए।।
निसि कौ रूप बकी वनि आवति, अति भय करति सु कंप हिए।
तापहिं तैं तन प्रान हमारे, रबिहूं छिनक छंड़ाइ लिए।।
उर ऊँचे उछ्वास तृनावर्त, तिहिं सुख सकल उड़ाइ दिये।
कोटिक काली सम कालिंदी, परसत सलिल न जात पिए।।
बन बक रूप अघासुर सम गृह, कतहूँ तौ न चितै सकिए।
कैसी कठिन करम कैसौ बिनु, काकौ सूर सरन तकिए।।१९९।।

ऊधौ तुम ब्रज की दसा बिचारौ ।
ता पाछैं यह सिद्ध आपनी, जोग कथा विस्तारौ ।।
जा कारन तुम पठए माधौ, सो सोचौ जिय माहीं ।
केतिक बीच बिरह परमारथ, जानत हौ किधौं नाहीं ।।
तुम परवीन चतुर कहियत हौ, संतत निकट कहत हौ ।
जल बूड़त अवलंब फेन कौ, फिर-फिर कहा कहत हौ ।
वह मुसकान मनोहर चितवनि, कैसैं उर तैं टारौं ।
जोग जुक्ति अरु मुक्ति परम निधि, वा मुरली पर वारौं ।।
जिहिं उर कमल-नयन जु बसत हैं, तिहिं निरगुन क्यौं आवै ।
सूरदास सो भजन बहाऊँ, जाहि दूसरौ भावै ।।२००।।

ऊधौ कहँ की प्रीति हमारैं । अजहुँ रहत तन हरि के सिधारैं ।
छिदि छिदि जात बिरह सर मारैं । पुरि पुरि आवत अवधि बिचारैं ।।
फटतन हृदय संदेस तुम्हारें । कुलिस तैं कठिन धुकत दोउ तारे ।।
वरषत नैन महा जल धारैं । उर पषान विदरत न विदारैं ।।
जीवन मरन भए दोउ भारे । कहियत सूर लाज पति हारे ।।२०१।।

ऊधौ इतने मोहि सतावत ।
कारी घटा देखि वादर की, दामिनि चमकि डरावत ।।
हेम-सुता-पति कौ रिपु व्यापै, दधि सुत रथ न चलावत ।
अंबू खंडन सब्द सुनत ही, चित चकृत उठि धावत ।।
कंचन पुर पति कौ जो भ्राता, ता प्रिय वलहिं न आवत ।
संभू सुत कौ जो वाहन है, कुहुकै असल सलावत ।।
जद्यपि भूषन अंग बनावतिँ, सो भुजंग ह्वै धावत ।
सूरदास बिरहिनि अति ब्याकुल, खगपति चढ़ि किन आवत ।२०२।

हमकौं तुम बिनु सबै सतावत ।
कहियौ मधुप चतुर माधौ सौं तुमहूँ सखा कहावत ।।
जाकौ तन हरि हर्यौ दीन सुनि, कुल सरनागत दीन्हीं ।
सोइ मारत करवारि धारि कर, हमकौं कानि न कीन्हीं ।।
काढ़ि सिंधू तैं सिव कर सौंप्यौ, गुनहगार की नाईं ।
सो ससि प्रकट प्रधान काम कौ, चहुँ दिसि देत दुहाई ।।
अमरनाथ अपराध छमा करि, पीठ ठोंकि मुकरायौ ।
सो अब इँद्र कोप जलधर लै, ब्रज-मंडल पर छायौ ।।

पच्छ पुच्छ सिर धारि सिखनि के, इहिँ बिधि दई बड़ाई।
तिन अब बोलि छोलि तन डार्यौ, उपल खौर की नाईँ॥
बच्छ चोरि अलि स्वच्छ पच्छ करि, तिनहूँ कोप जनायौ।
परी जो रेख ललाट अधिक सुख, मेटि दुकार बनायौ॥
कौन-कौन सौं बिनती कीजै, कही जितक कहि आई।
सूर स्याम अपने या ब्रज की, इहि बिधि कानि घटाई॥२०४॥

ऊधौ यह हित लागत काहैं।
निसि दिन नैंन तपत दरसन कौं, तुम जु कहत हिय माहैं॥
पलक न परत चहूँ दिसि चितवतिँ, बिरहानल के दाहैं।
इतनी आरति काहैं न मिलहीं, जौ पै स्याम इहाँ हैं॥
पा लागौं ऐसीहि रहन दै, अवधि आस जल थाहैं।
जनि बोरहि निरगुन समुद्र मैं, बहुरि न पैहैं चाहैं॥
जासौं उपजी प्रीति रीति अलि, तासौं बनै निबाहैं।
सूर कहा करैं पपीहा, एते सर सरिता हैं॥२०५॥

ह्याँ तुम कहत कौन की बातैं।
अहो मधुप हम समुझति नाहीं फिरि बूझति हैं तातैं॥
को नृप भयौ कंस किन मार्यौ, को बसुद्यौ-सुत आहि।
ह्याँ जसुदासुत परम मनोहर, जीजतु है मुख चाहि॥
दिन प्रति जात धेनु बन चारन, गोप सखनि कैं संग।
वासर गत रजनी मुख आवत, करत नैंन गति पंग॥
को अविनासी अगम अगोचर, को बिधि बेद अपार।
सूर वृथा बकवाद करत कत, इहिं ब्रज नंदकुमार॥२०६॥

कहत अलि मोहन मथुरा राजा।
नेव अक्रूर बदत बंदी तुम, गावत हौ नृप-साजा॥
सुरभी जूथ जाम स्रम चारत, अरु तकि जात अहीर।
या अभिमान आन उर कबहूँ, नहिं जानत परपीर॥
गुन अनुरूप समान भेषता, मिले दुआदस बानी।
मधुबन देस कान्ह कुबिजा सँग, बनी सूर पटरानी॥२०७॥

कहा जौ, राजा जाइ भयौ।
हमकौं कहत और की औरै, पायौ भेव नयौ॥
अबलौं तौ छोटे अँग भोजन, घर-घर माँगि लयौ।

कैसैं सह्यौ जात हम पै यह, जोग जु पठै दयौ ।।
बन-बन धेनु चराइ ग्वाल सँग, मथि-मथि पियौ घयौ ।
सूरज प्रभु अब ब्रज बिसरायौ, उन यह मतौ दयौ ।।२०८।।

ऊधौ हरि काहे के अंतरजामी ।
अजहुँ न आइ मिलत इहिं अवसर, अवधि बतावत लामी।।
अपनी चोप आइ उड़ि बैठत, अलि ज्यौं रस के कामी ।
तिनकौ कौन परेखौ कीजै, जे हैं गरुण के गामी ।
आई उघरि प्रीति कलई सी, जैसी खाटी आमी ।
सूर इते पर अनखनि मरियत, ऊधौ पीवत मामी ।।२०९।।

मधुकर यह जानी तुम साँची ।
पूरन ब्रह्म तुम्हारौ ठाकुर, आगैं माया नाची ।।
यह इहिं गाउँ न समुझत कोऊ, कैसौ निरगुन होत ।
गोकुल ओट परे नंद-नंदन, वहै तुम्हारौ पोत ।।
को जसुमति ऊखल सौं बाँध्यौ, को दधि माखन चोरे ।
किन ये दोऊ रूख हमारे, जमला अर्जुन तोरे ।।
को लै बसन चढ़्यौ तरु साखा, मुरली मनु आकरषे ।
को रस रास रच्यौ बृंदाबन, हरषि सुमन सुर बरषे ।।
जौ डाकौ तौ कत बिनु बूड़े, काहै जीभि पिरावत ।
तब जु सूर प्रभु गए क्रूर लै, अब क्यौं नैन सिरावत ? २१०।।

निरगुन कौन देस कौ बासी ?
मधुकर कहि समुझाइ सौंह दै, बूझतिँ साँच न हाँसी ।।
को है जनक, कौन है जननी, कौन नारि, को दासी ?
कैसे बरन, भेष है कैसी, किहिं रन में अभिलाषी ?
पावैगौ पुनि कियौ आपनौ, जो रे करैगौ गाँसी ।
सुनत मौन ह्वै रह्यौ बावरौ, सूर सबै मति नासी ।।२११।।

ऊधौ हम हरि कत बिसराए ।
एक द्यौस बृंदाबन भीतर, कर करि पत्र डसाए ।।
सुमिरि-सुमिरि गुन ग्राम स्याम के, नैन सजल ह्वै आए ।
बिछुरे पलक किते दिन बीते, प्रीतम भये पराए ।।

विकल पंथ जोवतिँ हम निसि दिन, कित बिरहिनि बिरमाए ।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु, मदन के ताप सताए ।।२१२।।

वे, हरि बातैं क्यौं बिसरीं ।
आवत राधा पंथ चरन-रज, हित सौं अंक भरी ।।
भाँति-भाँति किसलय कुसुमावलि, सेज्या सोभ करीं ।
निमिष-वियोग होत तन तलफत, ज्यौं जल बिनु मछरी ।।
सुरति स्रमित स्यामा रस-रंजित सोवति रंग भरी ।
आपुन कुसुम-व्यंजन कर लीन्हे, करत मरुत लहरी ।।
गोचारन मिस जात सघन बन, मुरली अधर धरी ।
नाद-प्रनालि प्रवेस घोष मैं, रिझवत तिय सिगरी ।।
प्रकृति पुरुष तामैं ताकौ सँग, सूर प्रगट जस री ।
ऊधौ सुनत-गुनत मन बिथकित, सुफलित करंन-घरी ।।२१३।।

ऊधौ अब चित भए कठोर ।
पूरब प्रीति बिसारी गिरिधर, नूतन राँचे और ।।
जनम-जनम की दासी तुम्हरी, नागर नंद-किसोर ।
चितवन बान लगाए मधुकर, निकसि गए दुहुँ ओर ।।
जब हरि मधुबन कौं जु सिधारे, धीरज धरत न ठौर ।
सूरदास चातक भईं गोपी, कहाँ गए चित चोर ।।२१४।।

ऊधौ हमरौ कछू दोष नहिं, वै प्रभु निपट कठोर ।
हम हरि नाम जपति हैं निसि-दिन, जैसैं चंद चकोर ।।
हम दासी बिन मोल की ऊधौ, ज्यौं गुड़िया बिनु डोर ।
सूरदास-प्रभु दरसन दीजै, नाहीं मनसा और ।।२१५।।

मधुकर उनकी बात हम जानी ।
कोऊ हुती कंस की दासी, कृपा करी भइ रानी ।।
कुबिजा नाऊँ मधुपुरी बैठी, लै सुबास मनमानी ।
कुटिल कुचील जन्म की टेढ़ी, सुन्दरि करि घर आनी ।।
अब वह नवल बधू ह्वै बैठी, ब्रज की कहति कहानी ।
सूर स्याम अब कैसैं पैयै, जिनसौं मिलि सयानी ।।२१६।।

कहियौ ठकुराइति हम जानी ।
अब दिन चारि चलहु गोकुल मैं, सेबहु आइ बहुरि रजधानी ।।
हमकौं हौंस बहुत देखन की संग लियैं कुबिजा पटरानी ।

पहुनाई ब्रज को दधि माखन, बड़ौ पलँग, अरु तातौ पानी ।।
तुम जनि डरौ उखल तौ तोर्‌यौ, दाँवरिहू अब भई पुरानी ।
वह बल कहाँ जसोमति कैं कर, देह रावरैं सोच बुढ़ानी ।।
सुरभी बाँटि दई ग्वालनि कौं, मोर-चंद्रिका सबै उड़ानी ।
सूर नंद जू के पालागौं, देखहु आइ राधिका स्यानी ।।२१७।।

बरु उन कुबिजा भलौ कियौ ।
सुनि-सुनि समाचार ये मधुकर, अधिक जुड़ात हियौ ।।
जिनके तन मन प्रान रूप गुन हर्‌यौ, सु फिरि न दियौ ।
तिन अपनौ मन हरत न जान्यौ, हँसि-हँसि लोग जियौ ।।
सूर तनक चंदन चढ़ाइ उर, श्रीपति बस जु कियौ ।
और सकल नागरि नारिनि कौं, दासी दाउँ लियौ ।।२१८।।

ऊधौ अब कछु कहत न आवै ।
सिर पर सौति हमारैं कुबिजा, चाम के दाम चलावै ।
कछु इक मंत्र कर्‌यौ चंदन मैं, तातैं स्यामहिँ भावै ।
अपनैं ही रँग रचे साँवरे, सुक ज्यौं बैठि पठावै ।।
तब जो कहत असुर की दासी, अब कुल बधू कहावै ।
नटिनी लौं कर लिए लुकटिया, कपि ज्यौं नाच नचावै ।।
टूट्यौ नातौ या गोकुल कौ, लिखि लिखि जोग पठावै ।
सूरदास-प्रभु हमहिं निदरि, दाढ़े पर लोन लगावै ।।२१९।।

देखौ माई इहिँ कुबिजा हम जारी ।
किरचक चंदन दै बिरमाए, हम तन करी निनारी ।।
कत हम संखचूड़ तैं राखी, दावानलहिँ उबारी ।
एक सँदेसौ कहियौ ऊधौ, प्रान तजतिं ब्रजनारी ।।
कत हम सिरजीं चतुर विधाता, कत गढ़ि छोलि सँवारी ।
सूरदास-प्रभु जल के सुत ज्यौं, क्यौं बिरहिनि तन गारी ।।२२०।।

ऊधौ जानी रे मैं जानी ।
राजा भए तिहारे ठाकुर, अरु कुबिजा पटरानी ।।
भली भई जु सुनी नई बतियाँ, मोहन मुख की बानी ।
सूरदास मधुबन के बासी, कबतैं भए गुरु ज्ञानी ।।२२१।।

ऊधौ यहै अचंम्भौ बाढ़।
आपु कहाँ ब्रजराज मनोहर, कहाँ कूबरी राढ़ ॥
जिंहि छिन करत कलोल संग रति, गिरिधर अपनी चाढ़।
काटत हैं परजंक ताहिँ छिन, कै धौँ खोदत खाढ़ ॥
किधौँ सदा विपरीत रचत हैं, गहि-गहि आसन गाढ़।
सूर स्याम भए हरि, बाँधत, माँस खाइ, गल हाड़ ॥२२२॥

सुनि-सुनि ऊधौ आवति हाँसी।
कहँ वै ब्रह्मादिक के ठाकुर, कहाँ कँस की दासी ॥
इंद्रादिक की कौन चलावै, संकर करत खवासी।
निगम आदि बंदीजन जाके, सेष सीस के बासी ॥
जाकैं राम रहति चरननि तर, कौन गनै कुबिजा सी।
सरदास-प्रभु दृढ़ करि बाँधे, प्रेम-पुंज की पासी ॥२२३॥

तबतैं बहुरि दरस नहिँ दीन्हौ।
ऊधौ हरि मथुरा कुबिजा गृह, वहै नेम ब्रत लीन्हौ ॥
चारि मास बरषा कैं आगम, मुनिहुँ रहत इक ठौर।
दासी-धाम पवित्र जानि कै, नहिँ देखत उठि और ॥
ब्रजवासी सब ग्वाल कहत हैं, कत ब्रज छाँड़ि गये।
सर सगुनई जात मधुपुरी, निर्गुन नाम भये ॥२२४॥

कुब्ररी कौ न्याउ री जासौँ गोबिंद बोलैँ।
वै त्रैलोकनाथ चाहत हैं, काहैं न ऐंड़ी डोलै ॥
जिनसौँ कृपा करी नंद-नँदन, क्यौँ नहिं करति कलोलै।
कारौ कुटिल कपट अति कान्हर, अँतर ग्रंथि न खोलै ॥
हम बौरी बकबाद करति, हैं, वृथा आरति यह जोलै।
दीपक देखि पतंग जरत ज्यौँ, मीन सुजल बिनु भोलै ॥
प्रीति पुरातन पारि जिनहिँ सौँ, नेह कसौटी तोले।
सूर स्याम उपहास चल्यौ ब्रज, आप आपने टोले ॥२२५॥

काम गँवारी सौँ पर्‌यौ।
रूपहीन कुलहीन कूबरी, तासौं मन जु ढर्‌यौ ॥
उनकौ सदा सुभाउ सलिल कौ, खोरनि खार झर्‌यौ।
सकुच्यौ नहीँ जानि ऊँचौ तन, उमँगि तहँउँ पसर्‌यौ ॥

फेरे फिरत असुर-दासी के जनु जड़ भाँड़ धर्‍यौ ।
सूरदास गोपाल रसिक मनि अकरन करन कर्‍यौ ।।२२६।।

काहे कौं गोपीनाथ कहावत ।
जौ मधुकर वै स्याम हमारे, क्यौं न इहाँ लौं आवत ।।
सपने की पहिचानि मानि जिय हमहिं कलँक लगावत ।
जो पै कृष्न कूबरी रीझे, सोइ किन बिरद बुलावत ।।
ज्यौं गजराज काज के औरै, औरै दसन दिखावत ।
ऐसैं हम कहिबे सुनिबे कौं, सूर अनत बिरमावत ।।२२७।।

कहियत कुबिजा कृष्न निवाजी ।
छुवत अटपटी चाल गई मिटि, नवसत कँचुकि साजी ।।
मिली जाइ आगै दरवाजैं, दै चंदन ठग बाजी ।
पायौ सुरति सुहाग सबनि कौ, बिमल प्रीति उपराजी ।।
सुफल भयौ पछिलौ तप कीन्हौ, लखि सुरूप रति भाजी ।
जग के प्रभु बस किये सूर, सिर सकल सुहागिनि गाजी ।।२२८।।

बैद मिल्यौ कुबिजा कौं नीकौ ।
कबहूँ छुवत न पानि पानि सौं, उपकारी नितही कौ ।।
चल्यौ जु चलन नगर नारिनि मैं, रोग न रह्यौ कहीं कौ ।
बनी तिहारी उनकी ऊधौ, आयौ जस को टीकौ ।।
रँग पर रँग लग्यौ रे मधुकर, मधुप भयौ जु तहीं कौ ।
सूरदास-प्रभु समुझि न देखौ, मँगनी चढ़ौ चही को ।।२२९।।

बाजी ताँति राग हम बूझौ ।
नृप हति छाँड़ि सकल ब्रज बनिता, कान्ह कूबरी रीझौ ।।
अपुन जाइ मधुपुरी छाए, जोग लिखत हम सूझो ।
दासी लै पटरानी कीन्ही, कौन न्याव यह बूझौ ।।
घर-घर माखन चोरत डोलत, तिनके सखा तुम ऊझौ ।
सूर परेखौ काकौ कीजै, बाप कियौ जिन दूजौ ।।२३०।।

साँवरौ साँवरी रैनि कौ जायौ ।
आधी राति कंस के त्रासनि, बसुद्यौ गोकुल ल्यायौ ।।
नंद पिता अरु मातु जसोदा, माखन मही खवायौ ।
हाथ लकुट कामरि काँधे पर, बछरुन साथ डुलायौ ।।

कहा भयौ मधुपुरी अवतरे, गोपीनाथ कहायौ ।
ब्रज वधुअनि मिलि साँट कटीली, कवि ज्यौं नाच नचायौ ।।
अब लौं कहाँ रहे हो ऊधौ, लिखि-लिखि जौग पठायौ ।
सूरदास हम यहै परेखौ, कुबरी हाथ बिकायौ ।।२३१।।

ऊधौ जाके माथैं भाग ।
बिलपत छाँड़ि सकल गोपीजन, चेरी चपल सुहाग ।।
आए जोग की बेलि लगावन, काटि प्रेम कौ बाग ।
कुबिजा कौ पटरानी कीन्ही, हमैं देत बैराग ।।
लौंडी की डौंड़ी जग बाजी, वढ़्यौ स्याम अनुराग ।
निलज भए दोऊ खेलत हैं, बारहमासी फाग ।।
जोरी भली बनी है उनकी, राजहंस अरु काग ।।
सूरदास प्रभु ऊख छाँड़ि कै, चतुर चचोरत आग ।।२३२।।

ऊधौ जू जाइ कहौ दूरि करैं दासी ।
गोकुल की नागरी सब नारि करैं हाँसी ।।
हेम काँच, हंस काग खरि, कपूर जैसौ ।
कुबिजा अरु कमल-नैन, संग बन्यौ ऐसौ ।।
जाति हीन, कुल, बिहीन, कुबिजा वै दोऊ ।
ऐसेनि कैं संग लागै, सूर तैसौ सोऊ ।।२३३।।

ऊधौ कहा हमारी चूक ।
वे गुन ये अवगुन सुनि हरि के, हदय उठति है हूक ।।
बिनही काज छाँड़ि गए मधुवन, हम घटि कहा करी ।
तन, मन, धन आतमा निवेदन, सौं उन चितहिं धरी ।।
रीझे, जाइ सुंदरी कुविजा, इहिं दुख आवति हाँसी ।
जद्यपि कूर, कुरूप, कुदरसन, तद्यपि हम ब्रजबासी ।।
एते ऊपर प्रान रहत घट, कहौ कौन सौं कहियँ ।
पूरव कर्म लिखे विधि अच्छर, सूर सबै सो सहियै ।।२३४।।

स्याम कौ यहै परेखौ आवै
तब वह प्रीति चरन जावक सिर, अब कुबिजा मन भावै ।।
तब कत पानि धर्‌यौ गोबरधन, कत ब्रज विपति छँड़ावै ।
अब वह रूप अनूप कृपा करि, नैननि क्यौं न दिखावै ।।
तब कत वेनु अधर धरि मोहन, लै लै नाम बुलावै ।

अरु कत लाड़ लड़ाइ राग, रस, हँसि हँसि कंठ लगावै ।।
जे सुख संग समीप रैनि-दिन, तिन कत जोग सिखावै ।
जिहि मुख अमृत पियौ रसना भरि, तिहि क्यौं विषहि पियावै ।।
कर मीड़ति पछिताति मनहि मन, क्रम क्रम करि समुझावै ।
सोइ सुनि सूरदास अब बिरहिनि, इहि दुख दुख अति पावै ।।२३५।।

यह अलि हमैं अँदेसौ आवै ।
कौन गुनाह जोग लिखि पठयौ, सो तू कहि समुझावै ।।
जे अंग रचे बसन आभूषन, कैसे भस्म चढ़ावैं ।
कबरी केस सुमन गहि राखे, सो क्यौं जटा बनावै ।।
सब बिपरीत कहत तू हमसौं, सो कैसैं चित आवै ।
सुंदर स्याम कमल दल लोचन, सूरदास मोहिं भावै ।।२३६।।

यह संदेस कहत हौ ऊधौ, कहौ कौन पै पाए ।
करियत हैं अनुमान एक मन, इहिं मिस हौ ह्याँ आये ।।
हरि जू प्रथम नंद-जसुमति गृह, नान लाड़ लड़ाए ।
उर उच्छंग कन्हैया लै लै, माखन खान सिखाए ।।
सुबल श्रीदामा के सँग सब, ब्रज बीथिनि बीथिनि धाए ।
कछु इक जान भए खेलन तब, गोधन संग पठाए ।।
बेनु मधुर धुनि बोलत थेइ थेइ संगहिं नाच नचाए ।
जल थल नित नूतन लीला करि, केते जुग बिरमाए ।।
इहिं बिधि बिबिध कुतूहल, छन-छन किए आपने भाए ।
कब मधुबन चले कब मार्यौ रिपु, वचन अचंभ जनाए ।।
पाछे रहे सुनत मोहन प्रिय, उझकि उरस्थल लाए ।
सूरदास-प्रभु बूझत बतियाँ, सखियनि सैन बताए ।।२३७।।

मेरैं जिय यहै परेखौ आवै ।
सरबस लूटि हमारौ लीन्हौ, राज कूबरी पावै ।।
तापै एक सुनौ री अजगुत, लिखि-लिखि जोग पठावै ।
सूर कुटिल कुबिजा के हित कौं, निर्गुन बेद सुनावै ।।२३८।।

ऊधौ आवै यहै परेखौ ।
जब बारे तब आस बड़े की, बड़े भऐं यह देखौ ।।
जोग, जज्ञ, तप, नेम, दान, ब्रत, यहै करत तब जात ।

क्यौं हूँ बालक बढ़ै कुसल सौं, कठिन मोह की बात ।
करी जु प्रगट कपट पिक कीरति, आपु काज लगि तीर ।
काज सरैं उड़ि मिले आपु कुल, कहा बायस की पीर ।
जहँ जहँ रहौ राज करौ तहँ-तहँ, लेहु कोटि सिर भार ।
यहै असीस सूर प्रभु सौं कहि, न्हात खसै जनि बार ।।२३९।।

हरि ब्रज कबहिं कह्यौ है आवन ।
वेगि सु बचन सुनाइ मधुप मोहिं, बिरह बिथा बिसरावन ।।
हौं यह बात कहा जानौं पिय जात, मधुपुरी छावन ।
पछिली चूक समुझि उर अंतर, अब लागी पछितावन ।।
सब निसि सूर सेज भई बैरिनि, ससि सीरौ तन तावन ।
कब वै अंचल उर कर गहिहैं, दुसह वियोग नसावन ।।२४०।।

कमल नैन की अवधि सिरानी, अजहूँ भवौ न आवन ।
निसि-बासर हौं सगुन मनावति, मिलहु कृपा करि भावन ।।
सबै स्वदेस बिदेसी आए, बृच्छ पखेरू छावन ।
मानौ बिरह बिवाहन आयौ, क्रीड़ा मंगल गावन ।।
ता महँ मोर घटा घन गरजहिं, संग मिले तिहिं सावन ।
भरि भादों वे छाइ घोषपति, नारिन दुख बिसरावन ।।
बिनु देखे कल परै न इक छिन, वह मूरति चित चावन ।
सूरदास प्रभु ठानी ऐसी, बैरी कंस ज्यौं रावन ।।२४१।।

तुम्हारी प्रीति किधौं तरवारि ।
दृष्टि धार धरि हती जु पहिलै, घायल सब ब्रजनारि ।।
गिरी सुमार खेत वृंदावन, रन मानी नहिं हारि ।
बिह्वल बिकल सँभारति छिनु-छिनु, वदन सुधा निधि वारि ।।
अब यह यह कृपा जोग लिखि पठयौ, मनसिज करी गुहारि ।
कछु इक सेष बच्यौ सूरज प्रभु, सोउ जनि डारहु मारि ।।२४२।।

ऊधौ तुम ब्रज मैं पैठ करी ।
लै आये हौ नफा जानि कै, सबै बस्तु अकरी ।।
हम अहीर माखन मथि बेचैं, सगुन टेक पकरी ।
यह निरगुन निरमोल गाठरी, अब किन करत घरी ।।

यह ब्यौपार उहाँ जु समातौ, हुती बड़ी नगरी।
सूरदास गाहक नहि कोऊ, देखियत गरे परी ॥२४३॥

जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहै।
मूरी के पातनि के बदलैं, को मुक्ताहल दैहै॥
यह ब्यौपार तुम्हारौ ऊधौ, ऐसैं ही धर्यौ रैहै।
जिन पै तैं लै आए ऊधौ, तिनहीं के पेट समैहै॥
दाख छाँड़ि कै कटुक निबौरी, को अपनें मुख खैहै।
गुन करि मोही सूर सावरैं, को निरगुन निरबैहै ॥२४४॥

मीठी बातनि मैं को लीजै।
जौ पै वै हरि होहिं हमारे, करन कहैं सोइ कीजै॥
जिन मोहन अपनैं कर काननि, करनफूल पहिराए।
तिन मोहन माँटी के मुद्रा, मधुकर हाथ पठाए॥
एक दिवस बेनी बृंदाबन, रचि पचि बिबिध बनाइ।
ते अब कहत जटा माथे पर, बदलौ नाम कन्हाइ॥
लाइ सुगन्ध बनाइ अभूषन, अरु कीन्ही अरधंग।
सो वै अब कहि-कहि पठवत हैं भसम चढ़ावन अंग॥
हम कहा करैं दूरि नँद-नँदन, तुम जु मधुप मधुपाती।
सूर न होहिं स्याम के मुख की, जाहु न जारहु छाती ॥२४५॥

ऊधौ कहत न कछू बनै।
अधरामृत आस्वादिनि रसना, कैसैं जोग सनै॥
जिहिं लोचन अवलोके नख-सिख, सुन्दर नंद-तनै।
ते लोचन क्यौं जाहिं और पथ, लै पठये अपनै॥
रागिनि राग तरंग जानि चित, जे स्रुति मुरलि सुने।
ते स्रुति जोग-सँदेस सुनत, कित काँकर मेलि हने॥
सूरदास स्याम मोहन के, गुन-गान भेद गुनें।
कनकलता तैं उपज न मुकता, षटपद रंग चुनें ॥२४६॥

ऊधौ भूलि भलैं भटके।
कहत कही कछु बात लड़ैतैं, तुम ताही अटके॥
देख्यौ सकल सयान तिहारौ, लीन्हें छरि फटके।
तुमहिं दियौ बहराइ इतहिं कौं, वै कुबिजा अटके॥
लीजौ जोग सँभारि आपनौ, जाहु तहीं टटके।
सूर स्याम तजि कोउ न लैहै, या जोगहिं कटुके ॥२४७॥

ऊधौ तुम हौ निकट के बासी ।
यह निरगुन लै तिनहिं सुनावहु, जे मुड़िवा बसैं कासी ॥
मुरलीधरन सकल अँग सुन्दर, रूप-सिंधु की रासी ।
जोग बटोरे लिए फिरत हौ, ब्रजवासिन की फाँसी ॥
राजकुमार भलैं हम जाने, घर मैं कंस की दासी ।
सूरदास जदुकुलहिं लजावत, ब्रज मैं होति है हाँसी ॥२४८॥

ऊधौ तुम जु निकट के बासी
यह परमारथ बूझि कहौ किन, नाम बड़ौ की कासी ॥
जोग न ज्ञान ध्यान अवराधन, साधन मुक्ति उदासी ।
आन प्रकार कहा रुचि मानहिं, जे गोपाल उपासी ॥
परमारथी जहाँ लौं जेते, बिरहिनि के दुखदाई ।
सूरदास-प्रभु रँगी प्रेम-रँग, जारहिं जोग-सगाई ॥२४९॥

मधुप विराने लोग बटाऊ ।
दिन दस रहे आपने स्वारथ, तजि फिरि मिले न काऊ ॥
प्रथम सिद्धि हमकौं हरि पठइ, आयौ जोग अगाऊ ।
हमकौं जोग, भोग कुविजा कौ, उहिं कुल यहै सुभाऊ ॥
जान्यौ प्रेम नंद-नंदन कौ, कीजै कौन उपाऊ ।
सूर स्याम कौं सरवस दीन्हौं, प्रान रहौं कै जाऊ ॥२५०॥

बटाऊ होहिं न काके मीत ।
संग रहत सिर मेलि ठगौरी, हरत अचानक चीत ॥
मोहे नैन रूप दरसन के, स्रवन मुरलिका गीत ।
देखत ही हरि लै जु सिधारे, बाँधि पिछौरी पीत ॥
याहि तैं झुकति, यहै मग चितवति, सुख जु भए बिपरीत ।
सूरदास बरु भली पिंगला, आसा तजि परतीत ॥२५१॥

ऊधौ प्रीति नई नित मीठी ।
आपुन जाइ मधुपुरी छाए, हमकौं जोग बसीठी ॥
काटे ऊपर लौन लगावत, लिखि-लिखि पठावत चीठी ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस विनु, जरि बरि भईं अँगीठी ॥२५२॥

दिन-दिन प्रीति देखियत थोरी ।
सुनहु मधुप मधुबन बसि, मधुरिपु कुल मरजादा छोरी ॥

गोकुल की मनि त्रिभुवन नायक, दासी सौं रति जोरी ।
तापर लिखि लिखि जोग पठावत, बिसरी माखन चोरी ।।
काकौ मान परेखौ कीजै, बँधी प्रेम की डोरी ।
सूरदास बिरहिनी बिरह जरि, भईं साँवरी गोरी ।।२५३।।

जा दिन तैं गोपाल चले ।
ता दिन तैं ऊधौ या ब्रज के, सब स्वभाव बदले ।।
घटे अहार बिहार हरष हित, सुख सोभा गुन गान ।
ओज तेज सब रहित सकल बिधि, आरति असम समान ।।
बाढ़ी निसा, बलय आभूषन, उर-कंचुकी उसास ।
नैंननि जल अंजन अँचल प्रति, आवन अवधि की आस ।।
अब यह दास प्रगट या तन की, कहियौ जाइ सुनाइ ।
सुरदास-प्रभु सो कीजौ जिहिं, बेगि मिलहिं अब आइ ।।२५४।।

सुनि रे मधुकर चतुर सयानें ।
सुख की सौंज उठी ता दिन तैं पठए स्याम बिनानें ।।
नैंननि तेज गयौ ता दिन तैं, सावन ज्यौं बरषानें ।
उर तैं हास बिलास दोऊ मिलि, ये दुरि कहूँ लुकानें ।।
ता दिन तैं पंछी भए बैरी, भाषा बैर बुलानें ।
बन के बास निवास सकल ये, भए भयानक बानें ।।
मोहन प्रान हरे ता दिन तैं, फेरि न यह गति आनें ।
बिरह अनँग अनल तन दाहत, को या परिहिं जानें ।।
अब ये अँक देखियत ऐसे, रहे जु चित्र लिखानें ।
सूर सजीवन होहिं सु नव तन, रूप माधुरी सानें ।।२५५।।

हमारी पीर न हरि बिनु जाइ ।
जौ सोऊँ तौ मोहिं हरि मिलैं, जागे तैं अति दाइ ।।
कमलनैंन मधुपुरी सिधारे, हमहिँ न संग लगाइ ।
अब यह बिथा कौन बिधि भरियै, कोऊ देइ बताइ ।।
उन्मद जोबन आनि ठाठि कै, कैसैं रोकौ जाइ ।
सूरदास-स्वामी के मिलिबैं, तन की तपति बुझाइ ।२५६।।

हमारी नाहिं जानत पीर ।
हास बिलास प्रेम रस रहि गयौ, वा जमुना के तीर ।।
जा दिन तैं ऊधौ हरि बिछुरे, प्रान धरत नहिं धीर ।

हमरी विथा जाइ तुम कहियौ, सूखीं सकल सरीर ।।
जो पाती तुम आनि दई है, देखि चल्यौ दृग नीर ।
सूरदास प्रभु आनि मिलावहु, प्रान रहैं बलवीर ।।२५७।।

गोपालहिं बारे ही की टेव ।
जानति नहीं कहाँ तैं सीखे, चोरी के छल छेव ।।
तब कछु दूध दह्यौ लै खाते, करि रहतीं हम कानि ।
कैसैं सही परति अब हम पै, मन मानिक की हानि ।।
ऊधौ नंद-नंदन सौं कहियौ, राजनीति समुझाइ ।
राजहु भये तजत नहिं लोभहिं, जोग नहीं जदुराइ ।।
बुधि बिवेक अरु बचन चातुरी, पहिलै लई चुराइ ।
सूरदास प्रभु के गुन ऐसे, कासौं कहिऐ जाइ ।।२५८।।

बिसरति क्यौं गिरिधर की बातैं ।
अवधि आस लगि रह्यौ, मधुप, मन, तजि न गयौ घट तातैं ।।
हरि कैं बिरह छीन भइँ ऊधौ, दोउ दुख परे सँघातैं ।
तन-रिपु काम, चित्त रिपु लीला, ज्ञान गम्य नहिं तातैं ।।
स्रवन सुन्यौ चाहत गुन हरि कौ, जो वै कथा पुरा तैं ।
लोचन रूप ध्यान धर्यौ निसि-दिन, कहौ घटै को कातैं ।।
ज्यौं नृप प्रान गए सुत अपनैं, राँचि रह्यौ जो जातैं ।
सूर सुमति तो ही पै उपजै, हरि आवैं मथुरा तैं ।।२५९।।

उधौ कहौ हमैं क्यौं बिसरैं, श्री गुपाल सुखदाई ।।
सुंदर बदन नैन देखे बिनु, निसि दिन कछु न सुहाई ।।
अति सुरूप सोभा की सींवा, अखिल लोक चतुराई ।
मृदु मुसकान रोम आनंदत, कह लौं करैं बड़ाई ।।
जिन हम काज धर्यौ कर गिरिवर, बहुत विपति बिसराई ।
सोइ इहिं देह हमारैं मन बसि, सूरदास बलि जाई ।।२६०।।

ऊधौ कुलिस भई यह छाती ।
मेरौ मन रसिक लग्यौ नँदलालहिं, झखत रहत दिन राती ।।
तजि ब्रज लोग पिता अरु जननी, कंठ लाइ गए काँती ।
ऐसे निठुर भए हरि हमकौं, कबहुँ न पठई पाती ।।

पिय-पिय कहत रहै जिय मेरौ, ह्वै चातक की जाती।
सूरदास-प्रभु प्रानहिं राखौ, ह्वै करि बूँद सिवाती ।।२६१।।

हम तौ कान्ह केलि को भूखी।
कहा करैं लै निर्गुन तुम्हरौ, बिरहिनि बिरह बिदूषी ।।
कहियै कहा यहै नहिं जानत, कहौ जोग किहि जोग।
पालागौं तुमहीं से वा पुर, बसत बावरे लोग ।।
चंदन, अभरन, चोर चारु बर, नकु आपु तन कीजै।
दंड, कमंडल, भसम, अधारी, तब जुवतिनि कौं दीजै ।।
सूर देखि दृढ़ता गोपिन की, ऊधौ दृढ़ ब्रत पायौ।
करी कृपा जदुनाथ मधुप कौं, प्रेमहिं पढ़न पठायौ ।।२६२।।

तुमहिं मधुप गोपाल दुहाई।
कबहुँक स्याम करत ह्याँ कौ मन, किधौं प्रीति बिसराई ।।
सोई बात कहौ किन साँची, छाँड़ौ दुसह दुराई।
कहि कब हरि आवैंगे ऊधौ, करैं केलि सुखदाई ।।
हम अबला, अज्ञान, अल्प मति, बरजत प्रीति लगाई।
करहु कृपा जन सूर आपने, वारक दरस दिखाई ।।२६३।।

(ऊधौ) कबहुँ सुरति करैं कान्ह तुम्हारे।
हरि-मुख कमल नैन ये मधुकर बिलसत रहत हमारे ।।
तब वह कृपा केलि बृंदावन, निमिष न होत निनारे।
सो चरनारबिंद बिनु देखैं, द्यौस अनेक सिधारे ।।
तुम सँदेस लै आए ऐसौ, बचन बान कर मारे।
सूरदास-प्रभु तन दावानल, रहे हुते, फिरि जारे ।।२६४।।

उद्धव वचन

गोपी सुनहु हरि संदेस।
कह्यौ पूरन ब्रह्म ध्यावहु, त्रिगुन मिथ्या भेष ।।
मैं कहौं सो सत्य मानहु, सगुन डारहु नाखि।
पंच त्रय-गुन सकल देही, जगत ऐसौ भाषि ।।
ज्ञान बिनु नर-मुक्ति नाहीं, यह विषय संसार।
रूप-रेख, न नाम जल थल, बरन अबरन सार ।।
मातु पितु कोउ नाहिँ नारी, जगत मिथ्या लाइ।
सूर सुख-दुख नहीं जाकैं, भजौ ताकौं जाइ ।।२६५।।

गोपी-वचन

ऐसी बात कहौ जनि ऊधौ ।
कमलनैन की कानि करति हैं आवत बचन न सूधौ ।।
बातनि ही उड़ि जाहिं और ज्यौं, त्यौं नाहीं हम काँची ।
मन, बच, कर्म सोधि एकै मत, नंद-नँदन रँग-राँची ।।
सो कछु जतन करौ पालागौं, मिटै हियै की सूल ।
मुरली धरहिं आनि दिखरावहु, ओढ़े पीत दुकूल ।।
इनहीं बातनि भए स्याम तनु, मिलवत हौ गढ़ि छोलि ।
सूर बचन सुनि रह्यौ ठगौसौ, बहुरि न आयौ बोलि ।।२६६।।

मधुकर समुझि कहौ किन बात ।
पर मद पिये मत्त न हूजिअत, काहे कौं इतरात ।।
वीच जो परै सत्य सो भाषै, बोलै सत्य स्वरूप ।
मुख देखे कौ न्याउ न कीजें, कहा रंक कह भूप ।।
कछुवै कहत कछू मुख निकसत, पर निंदक व्यभिचारी ।
ब्रज बनितनि कौ जोग सिखावत, कीरति आनि पसारी ।।
हम जानै जु भंवर रस भोगी, जोग जुगुति कहँ पाई ।
परम गुरू सिर मूँड़ि बापुरे, कर मुख छार लगाई ।।
यहै अनीति विधाता कीन्हीं, तौ वै पूछत नाहीं ।
जौ कोउ पर हित कूप खनावै, परे सु कूपहि माहीं ।।
तब अक्रूर अबै हौ ऊधौ, दुहुँ मिलि छाती जारी ।
सूर सोइ प्रभु अंतरजामी, कासौं कहँ पुकारी ।।२६७।।

फिरि फिरि कहा वनाअत बात ।
प्रात काल उठि खेलत ऊधौ घर-घर माखन खात ।।
जिनकी बात कहत तुम हमसौं, सो है हमसौं दूरि ।
ह्याँ हैं निकट जसोदा-नंदन, प्रान सजीवन मूरि ।।
बालक संग लिऐं दधि चोरत, खात खवावत डोलत ।
सूर सीस नीचौ कत नावत, अब काहैं नहिं बोलत ।।२६८।।

तुम्ह कहि आवत उधौ बात !
या ब्रज मैं कोउ जानत नाहीं, जोग कथा उत्पात ।।
हम तो जोग जुगुति जिय सीखौ, स्यौ सिंगार अरबिंद ।
तातैं जीवन मुक्त भईं हम, भेंटति हैं गोबिंद ।।

जोगी जरै मरै उटि सीसी, निरगुन क्यौं ठहरात।
तातैं सगुन सुरूप सिंधु तजि, दृग भरमन नहिं जात।।
निरगुन सगुन सूर-प्रभु आगैं, जाइ मधुपुरी भाषि।
जोई भलौ सोइ ब्रज पैहौ, तुम्हें हमारी साखि।।२६९।।

फिरि-फिरि कहा सिखाबत मौन।
बचन दुसह लागत अलि तेरे, ज्यौं पजरे पर लौन।।
सृंगी, मुद्रा, भस्म, त्वचां मृग, अरु अवराधन पौन।
हम अबला अहीरि सठ मधुकर, धरि जानहिं कहि कौन।।
यह मत जाइ तिनहिं तुम सिखवहु, जिनहिं आजु सब सोहत।
सूरदास कहुँ सुनी न देखी, पोत सूतरी पोहत।।२७०।।

रहि रहि देख्यौ तेरौ ज्ञान।
सुफल-सुत सरबस्व लै गयौ, तू करत अब न्यान।।
बृथा करत अपलोक लावत, कहत यह संदेस।
डरपि कातर होहु जनि कहुँ, कहत बैन बलेस।।
जोग मत अति बिसद कीरति, होहिं बांछित काम।
सदा तनमयता भरे हैं, वे पुरुष तुम धाम।।
चरन कंज सुबास लै लै, जियतिं ऐसी रीति।
कहत तिनसौं धूम घूटन, नाहिं चालन प्रीति।।
अजहुँ नाहिन कहि सिरानौ, यह कथा कौ छेउ।
सूर धोखा तनक हो हम, देखि लीन्हौ तेउ।।२७१।।

ऊधौ हमहिं न जोग सिखैयै।
जिहिं उपदेस मिलैं हरि हमकौं, सो ब्रत नेम बतैयै।।
मुक्ति रहौ घर बैठि आपनें, निर्गुन सुनि दुख पैयै।
जिहिं सिर केस कुसुम भरि गूँदे, कैसैं भस्म चढ़ैयै।।
जानि जानि सब मगन भई हैं, आपुन आपु लखैयै।
सूरदास-प्रभु सुनहु नवौ निधि, बहुरि कि इहिं ब्रज अइयै।।२७२।।

हम तौ तबहिं तैं जोग लियौ।
जबही तैं मधुकर मधुबन कौं, मोहन गौन कियौ।।
रहित सनेह सिरोरुह सब तन, श्री खँड भसम चढ़ाए।
पहिरि मेखला चीर पुरातन, फिरि-फिरि फेरि सियाए।।

श्रुति ताटंक मेलि मुद्रावलि, अवधि अधार अधारी ।
दरसन भिच्छा माँगत डोलति, लोचन पात्र पसारी ।।
बाँधे बेनु कंठ सिंगी, पिय, सुमिरि सुमिरि गुन गावत ।
करतल बेंत दंड डर डरत न, सुनत स्वान दुख धावत ।।
रहत जु चित्त उदास फिरतिं बन, बीथिन दिन अरु राति ।
बारक आवत कुटुँब जातरा, सोउ अब न सुहाति ।।
भोग भुगति भूलें नहिं भावत, भरीं विरह बैराग ।
गोरख सब्द पुकारत आरत, रस रसना अनुराग ।।
भोगी को देखत इहिं ब्रज मैं, जोग देन जिहिं आए ।
जानी सिद्धि तुम्हारे सिध की, जिन तुम इहाँ पठाए ।।
परम गुरू रतिनाथ हाथ सिर, दियौ मंत्र उपदेस ।
चतुर चेटकी मथुरानाथ सौं, जाइ करौ आदेस ।।
सूर सुमति प्रभु तुम्हहिं लखायौ, सोई हमरैं ध्यान ।
अलि चलि औरै ठौर दिखावहु, अपनौ फोकट ज्ञान ।।२७३।।

ऊधौ करि रहीं हम जोग ।
कहा एतौ वाद ठान्यौ, देखि गोपी भोग ।।
सीस सेली-केस, मुद्रा, कान-बीरी बीर ।
बिरह भस्म चढ़ाइ बैठीं, सहज कंथा चीर ।।
हृदय सिंगी टेर मुरली, नैन खप्पर हाथ ।
चाहतीं हरि दरस भिच्छा, देहिं दीनानाथ ।।
जोग की गति जुगति हम पैं, सूर देखौ जोइ ।
कहत हम सौं करन जोग, सु जोग कैसौ होइ ।।२७४।।

ब्रज मैं जोग करत जुग बीते ।
बिना स्याम सुंदर के सजनी, मदन दूत तन जीते ।।
ज्यौं-ज्यौं निठुर बचन सुनियत हैं, जरत हमारे पीते ।
अब किन सुरति करैं गोकुल की, क्यौं त्यागी हम जी तैं ।।
सरबस दयौ स्याम कैं कारन, हम अपनौ तब ही तैं ।
सूरजदास हमारे लोचन, भए कान्ह बिनु रीतैं ।।२७५।।

ऊधौ जोग तबहिं तैं जान्यौ ।।
जा दिन तैं सुफलक सुत कैं सँग, रथ ब्रजनाथ पलान्यौ ।।
ता दिन तैं सब छोह मोह गयौ, सुत पति हेत भुलान्यौ ।

तजि माया संसार सबनि कौं, ब्रज-जुवतिन ब्रत ठान्यौ ।।
नैन मूँदि, मुख मौन रही धरि, तन तप तेज सुखान्यौ ।
नंद-नँदन मुरली मुख धारैं, वहै ध्यान उर आन्यौ ।।
सोइ रूप जोगी जिहिं भूले, जो तुम जोग बखान्यौं ।
ब्रह्मा हू पचि मुए ध्यान करि, अंतहु नहिं पहिचान्यौ ।।
कहौ सु जोग कहा लै कीजै, निरगुन जो नहिं जान्यौ ।
सूर वहै निज रूप स्याम कौ, है मन माहँ समान्यौ ।।२७६।।

ए अलि कहा जोग मैं नीकौ ।
तजि रस रीति नंद-नँदन की, सिखवत निरगुन फीकौ ।।
देखत सुनत नाहिं कछु स्रवननि, जोति-जोति करि धावत ।
सुँदर स्याम कृपालु दयानिधि, कैसैं हौं बिसराबत ।।
सुनि रसाल मुरली को सुर धुनि, सुर मुनि कौतुक भूले ।
अपनी भुजा ग्रीव पर मेली, गोपिन के मन फूले ।।
लोक कानि कुल के भ्रम छाँड़े, प्रभु सँग घर बन खेली ।
अब तुम सूर खवाबन आए, जोग जहर की वेली ।।२७७।।

ऊधौ किहिं बिधि कीजै जोग ।
जे रस रसौं स्याम सुंदर के, ते क्यौं सहैं वियोग ।।
पूछहु जाइ चकोर चंद-हित, दरसन जो सुख पावत ।
चातक स्वाति बूँद चित बाँध्यौ, जलनिधि मनहिं न आवत ।।
अरु रस-कमल सिलीमुख जानत, कंटक सूल सहै जो ।
जानैं रसिक मैंन बिछुरन दुख, मरतहुँ प्रीति लहै जो ।।
तुमहूँ रसिक कहावत मधुकर, आपु स्वारथी जैसौ ।
कहा करैं ये सूर प्रेम-बस, बिनु हित जीवन कैसौ ।।२७८।।

ऊधौ तुम क्यौं नहिं जोग करौ ।
ऐसी सिद्धि छाँड़ि कित डोलत, औरन सीख धरौ ।।
हरि कौ रूप सु रूप अनूपम, यही हमारैं ध्यान ।
निसि बासर नहिं टरत हृदय तैं, ब्रज के जीवन-प्रान ।।
कहा भयौ जौ निकट बसत हौ, हरि के सखा कहावत ।
तन तजि सूर ज्ञान उर रोहत, यह नीरस किहिं भावत ।।२७९।।

ऊधौ जोग-जोग कहत, कहा जोग कीऐं।
स्याम सुंदर कमल-नैन, बसौ मेरे जीऐं।।
जोग जुगुति साधन तप, जोगि जुग सिरायौ।
ताकौ फल सगुन मूर्ति, प्रगट दरस पायौ।।
मकराकृत कुंडल छबि, राजति सु कपोलैं।
मोर मुकुट पीत बसन बाँसुरि कर बोलैं।।
ऐसे प्रभु गुन-निधान, दरस देखि जीजै।
राम-स्याम निधि-पियूष, नैननि भरि पीजै।।
जाकौ अयन जल मैं, तिहि अनल कैसैं मावै।
सूरज-प्रभु निधान, गुन निरगुन क्यौं गावै।।२८०।।

ऊधौ हम कह जानैं जोग।
नंद-नँदन कारन जिन छाँड़यौ, कुल लज्जा अरु लोग।।
को आसन सम बैठैं ऊधौ, प्रान वायु को साधै।
को धरि ध्यान धारना मधुकर, निरगुन पथ आराधै।।
काके जिय मैं नेम तपस्या, काकै मन संतोष।
काकै सब आचार फलौ बरु, को चाहत हैं मोष।।
निसि दिन कछु चित चेत न जानौ, नंद-नँदन की आस।
को खनि कूप मरै बालू थल, छाँड़ि सूर सरि पास।।२८१।।

मधुकर स्याम हमारे ईस।
तिनकौ ध्यान धरैं निसि बासर, औरहिं नवै न सीस।।
जोगिनि जाइ जोग उपदेसहु, जिनके मन दस-बीस।
एकै चित एकै वह मूरति, तिन चितवतिं दिन तीस।।
काहें निरगुन ज्ञान आपनौं, जित कित डारत खीस।
सूरदास-प्रभु नँदनंदन बिनु, हमरे को जगदीस।।२८२।।

जोग की गति सुनत मेरैं, अंग आगि बई।
सुलगि तन हम जरति हीं, तुम आनि फूँकि दई।।
भोग कुबिजा कूबरी कौ, कौन बुद्धि भई।
सिंह भख तजि चरत तिनुका, सुनी बात नई।।
ध्यान धरतिं न टरतिं मूरति, त्रिबिधि ताप तई।
सूर हरि की कृपा जापर, सकल सिद्धि मई।।२८३।।

जोग ज्ञान की बातैं ऊधौ, तुमही पै बनि आईं ।
स्रोता कंठ कुसुम की माला, वक्ता लइ ठकुराई ।।
वैं ज्ञानी गुरु सब जग जानत,जिन दासी रति पाई ।
कनक-रतन रथ ऊपर चढ़ि कै, संग चले ब्रज धाई ।।
तुम तौ परम साधु उपदेसक, कथनी कथत बनाई ।
हम हरिनी नैनी की संगति, ज्ञान पंथ मैं गाई ।।
याकौ मरम न जानत कछु वैं, कहि सुंदरि समुझाई ।
सूरदास प्रभु सौं कहियौ जब, बैठैं सभा जुराई ।।२८४।।

जोग जुगुति जद्यपि हम लीनी, लीला काकौं देहौ ।
उलटि जाहु मथुरा मधुकर तुम, बूझि बेगि ब्रज ऐहौ ।
रास समय कालिंदी के तट, तब तुव बचन न माने ।
यह को सुनै कुपथ की बतियाँ,प्रभुहिं पराये जाने ।।
नगर बसत गुन ज्ञान बढ़त, पै मूलहु बिरर्यौ ज्ञान ।
चारि बाहु पद भए मधुपुरी, खरे सुहाये कान ।।
आपुन फेरि कियौ दिखियत है, तुम भूलौ हम भूलति ।
सूर स्याम बल्लभ बेली बिनु, दरस सलिल उन्मूलति ।।२८५।।

मधुकर रह्यौ जोग लौं नातौ ।
कतहिँ बकत है काम काज बिनु, होहि न ह्याँ तैं हातौ ।।
जब मिलि-मिलि मधुपान करत हे, तब तू कहि धौं कहा तौ ।
अब आयौ निरगुन उपदेसन, जो नहि हमहिं सुहातौ ।।
काँचे गुन करि तृनहिं लपेटत, लै बारिज कौ ताँतौ ।
मेरे जान गह्यो चाहत हौ, फेरि कि मैंगल मातौ ।।
यह लै देहु सूर के प्रभु कौ, आयौ जोग जहाँ तौ ।
जब चहिहैं तब माँगि पठैहैं, जो कोउ आवत जातौ ।।२८६।।

ऊधौ जोग किधौं यह हाँसी ।
कीन्हीं प्रीति हमारे ब्रज सौं, दई प्रेम की फाँसी ।।
तुम हौ बड़े जोग के पालक, संग लए कुबिजा सी ।
सूरदास सोई पै जानै, जा उर लागै गाँसी ।।२८७।।

ऊधौ जो हरि जोग सिखावत ।
जोग जगुति बुधि ज्ञान प्रगट करि, कहि कहि कहा बतावत ।।
बिद्या दान दुराइ स्रवन मैं, गुप्त मंत्र गुरु देत ।

हम गोकुल वै मधुबन माधौ, होत सँदेसनि खेत।।
जौ हरि कृपा करी दोननि पै, तौ ह्याँ लगि पग धारैं।
करि उपदेस क्यौं न दृढ़ हमकौं, फिरि ब्रजनाथ सिधारैं।।
दरसन पाइ परसि पद पावन, प्रथम पवित्र करैं।
तौ फल सिद्धि होइ सूरज, गुरु माथैं हाथ धरैं।।२८८।।

सतगुरु-चरन भजे बिनु बिद्या, कहु कैसैं कोउ पावै।
उपदेसक हरि दूरि रहे तैं, क्यौं हमरे मन आवै।
जो हित कियौ तौ अधिक करहि किन, आपुन आनि सिखावैं।
जोग बोझ तैं चलि न सकैं तौ, हमहीं क्यौं न बुलावैं।।
जोग ज्ञान मुनि नगर तजे बरु, सघन गहन बन धावैं।
आसन मौन नेम मन संजम, बिपिन मध्य बनि आवैं।।
आपुन कहैं करैं कछु औरै, हम सबहिनि डहकावै।
सूरदास ऊधौ सौं स्यामा, अति संकेत जनावैं।।२८९।।

जोग बिधि मधुबन सिखिहैं जाइ।
मन-बच-कर्म सपथ सुनि ऊधौ, संगहिं चलौ लिवाइ।।
सब आसन, रेचक अरु पूरक, कुंभक सीखहिं भाइ।
बिनु गुरु निकट सँदेसनि कैसैं, यह अवगाह्यौ जाइ।।
हम जो करत देखिहैं कुबिजहिं, तेई करब उपाइ।
श्रद्धा-सहित ध्यान एकहिं सँग, कहत जाहिं जदुराइ।।
सूर-सुप्रभु की जापर रुचि है, सो हम करिहैं आइ।
आज्ञा-भंग करैं हम क्यौं करि, जौ पतिब्रत बिनसाइ।।२९०।।

जोग सँदेसौ ब्रज मैं लावत।
थाके चरन तुम्हारे ऊधौ, बार-बार के धावत।।
सुनिहै कथा कौन निरगुन की, रचि पचि बात बनावत।
सगुर सुमेर प्रगट देखियत, तुम तृन की ओट दुरावत।।
हम जानतिं परपंच स्याम के, बातनि ही बौरावत।
देखी सुनी न अबलगि कबहूँ, जल मथि माखन आवत।।
जोगी जोग अपार सिंधु मैं, ढूँढ़ेहू नहिं पावत।
ह्याँ हरि प्रगट प्रेम जसुमति कैं, ऊखल आपु बँधावत।।
चुप करि रहौ ज्ञान ढकि राखौ, कत हौ बिरह बढ़ावत।
नंदकुमार कमल-दल लोचन, कहि को जाहि न भावत।।

काहे कौं विपरीत बात कहि, सबके प्रान गवाँवत ।
सोहत कित सूरज अबलनि कौं, निगम नेति जिहि गावत ।।२९१।।

सुनियत ज्ञान कथा अलि गावत ।
जिहि मुख सुधा बेनु रस पूरत, यह ब्रत तिनहिं सुनावत ।।
जहँ लीला रस सखी समाजहिं, कहत कहत दिन जात ।
बिधना फेर कियौ अब दिखियत, तहँ षट्पद समुझात ।।
बिद्यमान रस रास लड़ैते, कत मन इत अरुझात ।
रूप रहित कछु बदत बदन तैं मति कोउ ठग भरकात ।।
साधुवाद स्रुति सार जानि कोउ तन मन कित विसरात ।
नंद-नंदन कर कमल सुमिरि छबि, मुख ऊपर परसात ।।
एक एक तैं सबै सयानी, ब्रज सुंदरि न सँख्यात ।
सूर स्याम रस-सिंधु-कामिनी, नहिं वह दसा हिरात ।।२९२।।

ब्रज की वात भई अब न्यारी ।
तिहिं सुंदरि मधि जोग गाइयतु, जहँ गावत गिरिधारी ।।
रिपु रन मारि रहे सब दिसि त्यौं, भिच्छु कथा बिस्तारी ।
सूर व्यथित दिन सकुचि कुमुदिनी, निसि हेमंत प्रजारी ।।२९३।।

मधुकर यह निहचै हम जानी ।
खोयौ गयौ नेह नग उनपै, प्रीति काथरी भई पुरानी ।
पहिलैं अधर सुधा रस सींचे, कियौ पोष बहु लाड़ लड़ानी ।
बहुरौ खेल कियौ सिसु कैसौ, गृह रचना ज्यौं चलत पिछानी ।।
ऐसे हित की प्रीति दिखाई, पन्नग कँचुरी ज्यौं लपटानी ।
बहुरौ सुरति लई नहिं जैसैं, भ्रमर लता त्यागत कुँभिलानी ।।
बहुरंगी जित जाइ तितहिं सुख, इक रगी दुख देह दिझानी ।
सूरदास पसुधनी चोरि कै, खायौ चाहत चारा-पानी ।।२९४।।

मधुकर कहि कैसैं मन मानै ।
जिनकौं इक अनन्य ब्रत सूझै, क्यौं दूजौ उर आनै ।।
यह तौ जोग स्वाद अलि ऐसौ, पाइ सुधा खरि सानै ।
कैसैं धौं यह बात पतिब्रता, सुनै सठ पुरुष बिरानै ।।
जैसैं मृगिनी ताकि बधिक दृग, कर कोदंड गहि तानै ।
हिंसा करि पोषत तन-मन सुख, उर अपराध न आनै ।।

बड़े बिचित्र कुबिजा रँग रंगे, हम निर्गुन लिखि ठानै ।।
सूरज स्याम सगुन रतिमानी, मधुप प्रान जनि छानै ।।२९५।।

कहाँ लौं राखै मन मैं धीर।
सुनौ मधुप अपने इन नैनन्नि, बिनु देखैं बलवीर ।।
घर आँगन न सुहात रैन-दिन, भूले भोजन चीर।
दाहत देह चंद-चंदन सुख, औरौ मलय समीर ।।
छिन-छिन वहै सुरति, आवति, जब चितवति जमुना तीर ।
सूरदास गढ़ि रहे हिये मैं, सुंदर स्याम सरीर ।।२९६।।

(ऊधौ) इन बतियनि कैसे मन दीजै ।
बिनु देखे वा स्याम सुंदर के, पल पल ही तन छीजै ।।
जो कर आनि हमारैं दीनौं, सो अपने कर लीजै ।
बाँचि सुनावहु लिख्यौ कहा है, हम बाँचत यह भींजै ।।
बड़ौ मतौ है जोग तिहारे, सो हमरैं कह कीजै ।
अच्छर चारिक आनि सुनावहु, तिनहिं आस करि जीजै ।।
उर की सूल तबै भल निकसै, नैन बान जौ कीजै ।
सूरदास प्रभु प्रान तजन्नि हौं, मोहन मिलैं तौं जीजै ।।२९७।।

बिनु हरि क्यौं राखैं मन धीर ।
एक बेर हरि-दरस दिखावहु, सुंदर स्याम सरीर ।
तुम जु दयाल दयानिधि कहियत, जानत हौ पर पीर ।
बिछुरैं प्रान, नाथ ब्रज आवैं, कत हम कत जदुबीर ।।
मत अपजस आनौ सिर अपनैं, कठिन मदन की पीर ।
सूरदास प्रभु मिलन कहत हे, रबितनया के तीर ।।२९८।।

ऊधौ मन नहिं हाथ हमारैं ।
रथ चढ़ाइ हरि संग गए लै, मथुरा जबहिं सिधारे ।।
नातरु कहा जोग हम छाँड़हि, अति रुचि कै तुम ल्याए ।
हम तौ झँखति स्याम की करनी, मन लै जोग पठाए ।।
अजहुँ मन अपनौ हम पावैं, तुम तैं होइ तौ होइ ।
सूर सपथ हमैं कोटि तिहारी, कही करैंगी सोइ ।।२९९।।

मन तो मथुरा हीं जु रह्यौ ।
तब कौ गयौ बहुरि नहिं आयौ. गड़नि गुपाल गह्यौ ।।

इन नैननि कौं मर्म न जान्यौ, किन भेदिया कह्यौ ।
राख्यौ हुतौ चोरि चित अंतर, हरि सोइ सोध लह्यौ ।।
आये ओल मिलावन ऊधौ, मनि दै लेहु मह्यौ ।
निरगुन साटि गोपालहिं चाहत, क्यौं दुख जात सह्यौ ।।
इहिं आधार आजु लौं यह तन ऐसैं ही निबह्यौ ।
सोई लेत छुड़ाइ सूर अब चाहत हृदय दह्यौ ।।३००।।

कहा भयौ हरि मथुरा गए ।
कहि ऊधौ कसे सचु पावत, तन दोउ भाँति भए ।।
इहाँ अटक अति प्रेम पुरातन, ह्वाँ निज नेह नए ।
ह्वाँ कहियत है राज-काज बस, ह्याँ कर वेनु लए ।।
कह गथ हाथ पर्‌यौ सुफलक-सुत, यह ठग ठाठ ठए ।
अब क्यौं कान्ह रहत गोकुल बिनु, लोगनि के सिखए ।।
राजा राज करत गृह अपनैं, माथैं छत्र दए ।
चिरजीवौ अब सूर नंदसुत, जीजत मुख चितए ।।३०१।।

अपनी सी करत कठिन मन निसि दिन ।
कहि कहि कथा मधुप समुझावत, तदपि न रहत नंदनंदन बिनु ।।
स्रवन सँदेस नयन बरषत जल, मुख बतियाँ कुछ और चलावत ।
भाँति अनेक धरत मन निठुरइ, सब तजि सुरति वहै जिय आवत ।
कोटि स्वर्ग सम सुख अनुमानत, हरि समीप समता नहिं पावत ।
थकित सिंधु नौका के खग ज्यौं, फिरि फिरि फ़ेरि वहै गुन गावत ।।
जेइ-जेइ बात बिचारतिं अंतर, तेइ-तेइ अधिक अनल उर दाहत ।
सूरदास परिहरि न सकत तन, बारक बहुरि मिल्यौई चाहत ।।३०२।।

मधुकर ह्याँ नाहीं मन मेरौ ।
गयौ जु संग नंदनंदन के, बहुरि न कीन्हौ फेरौ ।।
उन नैननि मुसकानि मोल लै, कियौ परायौ चेरौ ।
जाकैं हाथ पर्‌यौ ताही कौ, बिसर्‌यौ बास बसेरौ ।।
को सीखे ता बिनु सुनि सूरज, जोग जु काहू केरौ ।
मंदौ पर्‌यौ सिधाहू अनत लै, यह निरगुन मत तेरौ ।।३०३।।

मुक्ति आनि मंदे मैं मेली ।
समुझि सगुन लै चले न ऊधौ, यह तुम पै सब पुँजी अकेली ।।

कै लै जाहु अनत ही बेंचौ, कै लै राखु जहाँ विष बेली ।
याहि लागि को मरै हमारैं, वृंदावन चरननि सौ ठेली ।।
धरे सीस घर-घर डोलत हौ, एकै मति सब भईं सहेली ।
सूरदास गिरिधरन छबीलौ, जिनकी भुजा कंठ धरि खेली ।।३०४।।

ऊधौ मन तौ एकहि आहि ।
सो तौ हरि लै संग सिधारे, जोग सिखावत काहि ।।
सुन सठ कुटिल बचन रस लपट, अबलनि तन धौं चाहि ।
अब काहे कौं लोन लगावत, बिरह-अनल कैं दाहि ।।
परमारथ उपचार कहत हौ, बिरह-व्यथा है जाहि ।
जाकौं राजरोग कफ ब्यापत, दह्यौ खवावत ताहि ।।
सुंदर स्याम सलोनो मूरति, पूरि रही हिय माहि ।
सूर ताहि तजि निरगुन सिंधुहिं, कौन सकै अवगाहि ।।३०५।।

ऊधौ मन न भए दस बीस ।
एक हुतौ सो गयौ स्याम सँग, को अवराधै ईस ।
इंद्री सिथिल भईं केसव बिनु, ज्यौं देही बिनु सीस ।
आसा लागि रहति तन स्वासा, जीवहिं कोटि बरीस ।।
तुम तौ सखा स्याम सुंदर के, सकल जोग के ईस ।
सूर हमारैं नंदनँदन बिनु, और नहीं जगदीस ।।३०६।।

ऊधौ जो मन होत बियौ ।
तौ तुम्हरे निरगुन की दीजै, सो बोधना न दीयौ ।।
एक जो हुतौ मदन मोहन की, सो छबी छीन लियौ ।
अब वा रूप रासि बिनु मधुकर, कैसैं परत जियौ ।।
जो तुम कह्यौ सोई सिर ऊपर, सूर स्याम पठयौ ।
नाहिंन मीन जियत जल बाहर, जौ घृत मैं सजियौ ।।३०७।।

ऊधौ यह मन और न होई ।
पहिलैं ही चढ़ि रह्यौ स्याम रँग, छुटत न देख्यौ धोइ ।।
कैतव बचन छाँड़ि अलि हमसौं, सोइ कहौ जो मूल ।
जोग हमहिं ऐसौ लागत ज्यौं, तुहिं चंपे कौ फूल ।।
अब क्यौं मिटति हाथ की रेखैं, कहौ कौन बिधि कीजै ।
सूर स्याम-मुख आनि दिखावहु, जिहिं देखैं दिन जीजं ।।३०८

मधुकर मो मन अधिक कठोर ।
बिगसि न गयौ कुंभ काँचे लौं, बिछुरत नंद-किसोर ।।
हम तैं भली जलचरी बपुरी, अपनौ नेह निबाह्यौ ।
जलतैं बिछुरि तुरत तन त्याग्यौ, पुन जल ही कौं चाह्यौ ।।
जौ हम प्रीति रीति नहिं जानतिं, तौ ब्रजनाथ तजीं ।
हमरे प्रेम नेम की ऊधौ, सब रस रीति लजी ।।
अचरज एक सुनौ हो ऊधौ, जल बिनु मीन रह्यौ ।
सूरदास-प्रभु अवधि आस लगि, मन बिस्वास गह्यौ ।।३०९।।

मधुकर ये मन बिगरि परे ।
समुझत नहीं ज्ञान गीता कौ, मृदु मुसकानि अरे ।।
हरि-पद-कमल बिसारत नाहीं, सीतल उर सँचरे ।
जोग गँभीर कूप आँधे सौ, ताहि जु देखि डरे ।।
बाँकी भौंह वक्र दृग राँचे, तातैं वक्र परे ।
सूधे होत न स्वान पूँछ ज्यौं, पचि पचि बैद मरे ।।
कमल नैन अनुराग भाग भरि, अमी रस गलित गरे ।
सूरदास हम ऐसैंहि रहिहैं, कान्ह वियोग भरे ।।३१०।।

इहिं उर माखन चोर गड़े ।
अब कैसैं निकसत सुनि ऊधौ, तिरछै ह्वै जु अड़े ।।
जदपि अहीर जसोदा-नंदन, कैसैं जात छँड़े ।
ह्वाँ जादौपति प्रभु कहियत हैं, हमैं न लगत बड़े ।।
को बसुदेव-देवकी नंदन, को जानै को बूझै ।
सूर नंदनंदन के देखत, और न कोऊ सूझै ।।३११।।

मन मैं रह्यौ नाहिंन ठौर ।
नंद-नँदन अछत कैसैं, आनिये उर और ।।
चलत चितवत दिवस जागत, स्वप्न सोवत राति ।
हृदय तैं वह मदन मूरति, छिन न इत उत जाति ।
कहत कथा अनेक ऊधौ, लोग लोभ दिखाइ ।
कह करौं मन प्रेम पूरन, घट न सिंधु समाइ ।।
स्याम गात सरोज आनन, ललित मृदु मुख हास ।
सूर इनकैं दरस कारन, मरत लोचन प्यास ।।३१२।।

ऊधौ यह मन डौर न आवै।
बिलपत लोचन हरि दरसन कौं, मारग कौन बतावै।
बीति गए जुग ढूँढ़त बन बन, कठिन स्याम की बाट।
नहिं बनि आयौ जो हम ठाटौ, भयौ कुठारन ठाट।।
हमकौं छाँड़ि गए सुखरासी, लीन्ही कुबिजा ढूँढ़।
सूरदास प्रभु आग चचोरत, छाँड़ि ऊख कौ मूँढ़।।३१३।।

मधुकर स्याम हमारे चोर।
मन हरि लियौ तनक चितवनि मैं, चपल नैन की कोर।।
पकरे हुते हृदय उर अंतर, प्रेम प्रीति कैं जोर।
गए छँड़ाइ तोरि सब बंधन, दैं गए हँसनि अँकोर।।
चौंकि परीं जागत निसि बीती, दूत मिल्यौ इक भौंर।
सूरदास-प्रभु सरबस लूट्यौ, नागर नवल-किसोर।।३१४।।

अलि ब्रजनाथ कछू करौ।
जा कारन यह देह धरी है, तिहिं कैं लेखे परौ।।
प्रथमहिं अरपि दियौ हम सरबस, बिरहिनि यौंहि जरौ।
कोटि मुकुति वारौं मुसुकनि पर, बपुरौ जोग सरौ।।
सूर सगुन बाँट्यौ गोकुल मैं, अब निरगुन ओसरौ।
ताकी छटा छार कँठहरिया, ब्रज जानौ दुसरौ।।३१५।।

ऊधौ भली करी गोपाल।
आपुन तौ हरि आवत नाहीं, बिरमि रहे इहिं काल।।
चंदन, चंद हुते तब सीतल, कोकिल सब्द रसाल।
अब समीर पावक सम लागत, सब ब्रज उलटी चाल।।
हार, चीर कंचुकि कंटक भये, तरनि तिलक भयौ भाल।
सेज सिंह, गृह तिमिर कंदरा, सर्प सुमन की माल।।
हम तौ न्याइ इतौ दुख पावैं, ब्रज बसि गोपी ग्वाल।
सूरदास स्वामी सुख सागर, भोगी भँवर भुवाल।।३१६।।

सब दिन एकहिं से नहिं होते।
तब अलि ससि सीरौ अब तातौ, भयो बिरह जरि मोतें।।
तब षट मास रास-रस-अंतर, एकहु निमिष न जाने।
अब औरै गति भई कान्ह बिनु, पल पूरन जुग माने।।

कहा मति जोग ज्ञान साखा स्रुति, ते किन कहे घनेरे ।
अब कुछ और सुहाइ सूर नहिं, सुमिरि स्याम गुन केरे ।।३१७।।

हमकौं इती कहा गोपाल ।
नंद कुमार कमल दल लोचन, सुंदर बाहु बिसाल ।।
इक ऐसैंही बिरह रही लटि, बिनु घन स्याम तमाल ।
तापर अलि पठये हैं सिखवन, अबलनि उलटी चाल ।।
लोचन मूँदि ध्यान चित चितवत, धरि आसन मृगछाल ।
क्यौं सहि जाइ जरे पर चूनौ, दूनौ दुख तिहिं काल ।।
डारि न दिये कमल-कर तैं गिरि, दबि मरतीं तिहिं काल ।
सूर स्याम अब यह न बूझियै, बिछुरि करी बेहाल ।।३१८।।

सुरति जब होति है वह बात ।
सुनौ मधुप वा बेदन की गति, मन जानै की गात ।।
रोकैं रहत नहीं उर अंतर, कहैं नहीं कहि जात ।
भई रीति हठि उरग छछूँदरि, छाँड़े बनै न खात ।।
याही भाँति सदा इहि ब्रज मैं, बीतत है दिन रात ।
सूरदास प्रभु की मिलि-बिछुरनि, सुमिरि-सुमिरि पछितात ।३१९।।

यह बात हमारे कौन सुनै ।
जिन चाह्यौ हरि रूप सुरति करि, भूलि अँगारनि को चुनै ।।
ह्याँ सेवनि की ठौर न देखति, तातैं सुनि मन मैं गुनै ।
केमुक बिरह बयारि पैन की, बैठे ठाढ़े को धुनै ।।
तब उन भाँतिनि लाड़ लड़ाये, अब बूझियै न यह उन ।
बालि छाँड़ि कै सूर हमारैं, अब नरवाई को लुनै ।।३२०।।

ऊधौ बात कही नहिं जाइ ।
मदन गुपाल लाल के बिछुरे, प्रान रहे मुरझाइ ।।
जब स्यंदन चढ़ि गवन कियौ हरि, फिरि चितए गोपाल ।
तबहीं परम कृतज्ञ सबै उठि, संग लगीं ब्रजबाल ।।
अब यह औरै सृष्टि बिरह की, बकत बाइ बौरानी ।
तिनसौं कहा देत फिरि उत्तर, तुम हौ पूरन ज्ञानी ।।
अब सो साधन घट का कीजै, क्यों उपजै परतीति ।
सूरदास कछु बरनि न आवै, कठिन बिरह की रीति ।।३२१।।

मधुकर जौ तू हितू हमारौ ।
तौ प्यावहि हरि वदन सुधा-रस, छाँड़ि जोग-जल खारौ ।
सुनि सठ नीति सुरभि पय-दायक, क्यौं जु लेति हल भारौ ।।
जे भय भीत होहिं स्रक देखैं, क्यौंऽव छुबहिं अहि कारौ ।
निज कृत समुझि बेनु दसनन हति, धाम सजत नहिं हारौ ।।
ता बल अछत निसा पंकज भ्रमि, दल कपाट नहिं टारौ ।
रे अलि चपल मोद-रस लपट, कतहिं बकत बेकाज ।।
सूर स्याम छबि क्यौं बिसरति है, नखसिख अग बिराज ।३२२।।

हमारे बोल बचन परतीति ।
सुनि ऊधौ हम नाहिंन जानति, तुम्हरे गाँव की रीति ।।
हमरे प्रीतम तुम जु लै गए, आवन कह्यौ रिपु जीति ।
तुम्हरे बोलनि कौन पतीजै, ज्यौं भुस पर की भीति ।।
आवत अवधि बजी हरि हम सौं, सोऊ गई ब्यतीति ।
सूरदास प्रभु मिलहु कृपा करि, सुमिरि पुरातन प्रीति ।।३२३।।

ऊधौ जो तुम हमहिं सुनायौ ।
सो हम निपट कठिनई हठ करि, या मन कौ समुझायौ ।।
जुक्ति जतन करि जोग अगह-गहि, अपथ पँथ लौ लायौ ।
भटकि फिर्‌यौ बोहित के खग लौं, पुनि हरि ही पै आयौ ।।
हमकौं सब अनहित लागत है, तुम सब हितहिं जनायौ ।
सुरसरिता जल होम किए तैं, कहा अगिनि सचु पायौ ।।
अब सोई उपाय उपदेसौ, जिहिं जिय जाइ जिवायौ ।
बारक मिलहिं सूर के स्वामी, कीजै अपनौ भायौ ।।३२४।।

ऊधौ हरि कहियै प्रतिपालक ।
जे रिपु तुम पहिलैं हति छाँड़े, बहुरि भए मम सालक ।।
अघ, बक, बकी तृनावर्त, केसी, ए सब मिलि ब्रज घेरत ।
सूनौ जानि नंदनंदन बिनु, बैर आपनौ फेरत ।।
अरु अपनौ परिहास मेटिबैं, इंद्र रह्यौ करि घात ।
सत्वर सूर सहाइ करै को, रही छिनक की बात ।।३२५।।

ऊधौ तुम जानत गुप्तहिं चारि ।
सब काहू के मन की बूझत, बाँधे मूड़ फिरत ठगवारी ।।
पीत धुजा उनकी मनरंजन, लाल धुजा कुबिजा व्यभिचारी ।

जस की धुजा स्वेत ब्रज बाँधे, अपजस की ऊधौ पै कारी ।।
वैं तो प्रेमपुंज मन रंजन, हमतौ सीस जोग ब्रतधारी ।
सूर सपथ मिथ्या, लँगराई, ए बातैं ऊधौ की प्यारो ।।३२६।।

ऊधौ अब नहिं स्याम हमारे ।
मथुरा गए पलटि से लीन्हे, माधौ मधुप तुम्हारे ।।
अब मोहिं आवत यह पछितावौ, क्यौं गुन जात बिसारे ।
कपटी कुटिल काक अरु कोकिल, अंत भए उड़ि न्यारे ।।
करि करि मोह मगन ब्रजवासी, प्रेम प्रान धन वारे ।
सूर स्याम कौ कौन पत्यैहै, कुटिल गात तन कारे ।।३२७।।

(ऊधौ) जाहु कहा बूझैं कुसलात ?
जाकै ज्ञान न होइ सो मानै, कही तिहारी बात ।।
कारे नाम रूपहूँ कारे, संग सखा सब गात ।
जौ पै भले होहिं कहुँ कारे, वदलि सुता लै जात ?
हमकौं जोग भोग कुबिजा कौं, काके हियैं समात ।
सूरजदास-प्रीति करि पाले, तेऊ अब पछितात ।।३२८।।

सखी री स्याम सबै इक सार ।
मीठे वचन सुहाए वोलत, अंतर जारनहार ।।
भँवर कुरंग काक अरु कोकिल, कपटिन की चटसार ।
कमलनैन मधुपुरी सिधारे, मिटि गयौ मंगलचार ।।
सुनहु सखी री दोष न काहू, जो बिधि लिख्यौ लिलार ।
यह करतूति उनहीं की नाहीं, पूरब बिबिध बिचार ।।
कारी घटा देखि बादर की, सौभा देति अपार ।
सूरदास सरिता सर पोषत, चातक करत पुकार ।।३२९।।

मधुकर स्याम कहा हित जानै ।
कोऊ प्रीति करै कैसेहूँ, वह अपनी गुन ठानै ।।
देखौ या जलधर की करनी, बरसत पोषै आनै ।
चातक सदा चरन कौ सेवक, दुखित बिना जल पानै ।।
भँवर भुजंग काक कोकिल कौं, कबिगन कपट बखानै ।
सूरदास सरबस जौ दीजै, कारौ कृतहिं न मानै ।।३३०।।

तिनहिं न पतीजै री जे कृतहिं न मानै ।
ज्यौं भौंरा रस चाखि चाहि कै, तहाँ जाइ जहँ नव तन जानै ।।
कोइल काक पालि कह कीन्हौ, मिले कुलहिं जब भए सयाने ।
सोइ बात भइ नंद महर की, मधुबन तैं माधौ जौ आने ।।
तब तौ प्रेम बिचारि न कीन्हौ, होत कहा अबकैं पछिताने ।
सूरदास जे मन के खोटे, अवसर परैं जाहिँ पहिचाने ।।३३१।।

कहा होत अबके पछिताने ।
खेलत खात हँसत एकहि सँग, हम न स्याम गुन जाने ।।
को बसुदेव कौन के थापे, को है साखि उन आने ।
सो बतलाइ देउ ऊधौ हमैं, तुमहूँ निपट सयाने ।।
सुनियत कथा काग कोकिल की, मन महँ कपट समाने ।
सूर समै रितुराज बिराज्यौ मिलि निज कुल पहिचाने ।।३३२।।

मधुकर कह कारे की न्याति ।
ज्यौं जल मीन कमल मधुपनि की, छिन नहिँ प्रीति खटाति ।।
कोकिल कपट कुटिल बायस छलि, फिरि नहिँ उहिँ बन जाति ।
तैसैंहि रास केलि रस अँचयौ, बैठि एक ही पाँति ।।
सुत हित जोग जग्य ब्रत कीजत, बहु बिधि नीकी भाँति ।
देखौ अहि मन मोह मया तजि, ज्यौं जननी जनि खाति ।।
तिनकौ क्यौं मन बिस्मय कीजै, औगुन लौ सुख साँति ।
तैसेइ सूर सुने जदुनंदन, बजी एक ही ताँति ।।३३३।।

स्याम सखी कारेहु मैं कारे ।
तिनसौं प्रीति कहा कहि कीजे, मारग छाँड़ि सिधारे ।।
लोक चतुरदस बिभव कहत हैं, पदुम-पत्र जल न्यारे ।
सरवर त्यागि बिहंग उड़ैं ज्यौं, फिरि पाछैं न निहारे ।।
तब चित चोरि भोरि ब्रजवासिनि, प्रेम नेम ब्रत टारे ।
लै सरबस नहिं मिले सूर-प्रभु, कहियत कुलट बिचारे ।।३३४।।

ऐसे नंदराइ के बारे ।
इतननि जनि पतियाइ सखी री, जेते हैं तन कारे ।
खेलत रंग संग बृंदावन, निमिष न होत निनारे ।
पहिलैं सुख दारुन भए हमकौं, दै जु गए दुख भारे ।।

उर ऊपर भींजत सारँग-रिपु, नैन-नीर बहु ढारे ।।
सूरदास-प्रभु बेगि मिलहु किन, टरत नहीं दुख टारे ।।३३५।।

ऐसी कारेन की रीति ।
मन दै सरबस हरत परायो, करत कपट की प्रीति ।।
ज्यौं षट्पद अंबुज के दल मैं, बसत निसा रति मानि ।
दिनकर उदय अनत उड़ि बैठत, फिरि न करत पहिचानि ।।
भवन भुजंग पटारी पाल्यौ, जैसैं जननी तात ।
कुल करतूति तजत नहिं कबहूँ, सहजहि डसि भजि जात ।।
कोकिल, काग, कुरंग, स्याम घन, हमसिं न देखे भावत ।
सूरदास अनुहारि स्याम की, फिरि-फिरि सुरति करावत ।।३३६।।

मधुकर देखि स्याम तन तेरौ ।
या मुख की सुनि मीठी बातैं, डरपत है मन मेरौ ।।
काहैं चरन छुवत रस लंपट, बरजत हीं बे काज ।
परसत गात स्रवत कुच कुंकुम, यहऊ करि कछु लाज ।।
बुधि बिबेक बल बचन चातुरी, सरबस चितैं चुरायौ ।
ऐसौ धौं उन कहा बिचार्‌यौ, जा लगि तू ब्रज आयौ ।।
अब कहि किहि आसा गावत हौ, हम आगैं यह गीत ।
सूर इते सौं बार कहा है, जो पै त्रिगुन अतीत ।।३३७।।

मधुप तुम देखियत हौ अति कारे ।
कालिंदी तट पार बसत हौ, सुनियत स्याम सखा रे ।।
मधुकर, चिकुर, भुअंग, कोकिला, अवधि नहीं दिन टारे ।
वैं अपने सुख ही के राते, तजियत यह अनुहारे ।।
कपटी, कुटिल, निठुर, निरमोही, दुख दै दूरि सिधारे ।
बारक बहुरि कबहुँ आवहुगे, नैननि साध निवारे ।।
उनकी सुनै सो आप बिगोवै, चित चोरत बटपारे ।
सूरदास-प्रभु क्यौं मन मानै, सेवक करत निनारे ।।३३८।।

तुम अलि बातनि बैर बढ़ावत ।
कारे रूप ज्ञान उपदेसत, मुदित कहत हौ गावत ।।
बेद पुरान जानि मान्यौ जल, जलनिधि लौं नहिं भावत ।
चातक उदय और जौ जाँचे, तौ कुल आन कहावत ।

सुनि जड़ जीव नेह के कारन, वपु सौं निज सुख मानत ।
सोइ अब सूर मैन की करनी, जग जस प्रगट वखानत ।।३३९।।

भूलति हौ कत मीठी बातनि ।
ए तौ अलि उनही के संगी, चंचल चित साँवरे गातनि ।।
वै मुरली धुनि जग मन मोहत, इनकी गुंज सुमन मधु पातनि ।
ए षट्-पद, वै द्विपद-चतुर्भुज, काहू भाँति भेद नहिं भ्रातनि ।।
वे नव निसि मानिनि गृह बासी, एउ बसत निसि नव जल जातनि ।
वे उठि प्रात अनत मन रंजत, ये उड़ि करत अनत रस रातनि ।।
स्वारथ निपुन सद्य रस भोगी, जनि पतियाहु बिरह-दुख-दातनि ।
वे माधौ ए मधुप सूर कहि, दुहुँ मैं नाहिंन कोउ घटि घातनि ।।३४०।।

मधुकर ये सुनि तन मन कारे ।
कहूँ न सेत सिद्धताई तन परखे अंग तिहारे ।।
कीन्हौ कपट कुंभ बिच पूरन, पय मुख प्रगट उघारे ।
बाहर देखि मनोहर दरसत, अंतरगत जु ठगारे ।।
अब तुम चले ज्ञान बिष ब्रज दै, हरन जु प्रान हमारे ।
ते क्यौं भले होहि सूरज-प्रभु, रूप बचम कृत कारे ।।३४१।।

बिलग जनि मानौ ऊधौ कारे ।
वह मथुरा काजर की ओबरी, जे आवैं ते कारे ।।
तुम कारे सुफलक सुत कारे, कारे कुटिल सँवारे ।
कमलनैन की कौन चलावै, सबहिनि मैं मनियरे ।।
मानौ नील माट तैं काढे, जमुना आइ पखारे ।
तातैं स्याम भई कालिंदी, सूर स्याम गुन न्यारे ।।३४२।।

ऊधौ तुम सब साथी भोरे ।
मेरे कहैं बिलग जनि मानहु, कोटि कुटिल लै जोरे ।।
वे अक्रूर कृत जिनके, रीते भरि, भरि ढोरे ।
आपुन स्याम स्याम अंतर मन, स्याम काम मैं बोरे ।।
तुम मधुकर निरगुन निजु नीके, देखे फटकि पछोरे ।
सूरदास कारेन की संगति, को जावै अब गोरे ।।३४३।।

(ऊधौ) कह बूझत तन की दुबराई ।
यह थोरी जौ जियत रही हैं, बिछुरत कुँअर कन्हाई ।।

जब ही कृपा नंद-नंदन की, मिलि रस रास खेलाई ।
अब अदया देखति जादौपति, पाती लिखि जु पठाई ।।
कौन जोग लै आए ऊधौ, कैसैं जीजै माई ।
सूरज स्याम-बिरह की वेदन, मो पै सही न जाई ।।३४४।।

ऊधौ हम दूवरी बियोग ।
प्रीतम हते सो उठि गए मधुबन, रहे बटाऊ लोग ।।
जो तुम बूझहु ब्यथा हमारी, कहे वनैं तुम आगैं ।
देह-बिहार सिंगार न भावै, मन तरसै हरि काजैं ।।
कारी घटा देखि अँधियारी, सारँग सब्द न भावे ।
दिवस रैनि मैं बिरह सतावै, कब गुपाल घर आवैं ।।
सूरदास-स्वामी मनमोहन, अब करि गए अनाथ ।
मन क्रम बचन उहाँइ बसत हैं, जहाँ बसत जदुनाथ ।।३४५।।

ऊधौ यह हरि कहा कर्‍यौ ।
राज-काज चित दियौ साँवरैं, गोकुल क्यौं बिसर्‍यौ ।
जौ लौं रहे घोष मैं, तौलौं संतत सेवा कीन्ही ।
छिन इक परस भएं ऊखल सौं, बहुत मानि जिय लीन्ही ।।
अब किन कोटि बरैं ब्रजनायक, अनतहिं राजकुमारी ।
कहियौ नंद पिता कहँ पैहैं, कहँ जसुमति महतारी ।।
कहँ गोधन, कहँ गोपबृंद सब, कहँ माखन कौ खइवौ ।
सूरदास अब सोइ करौ जिहिं, होइ कान्ह कौ अइबौ ।।३४६।।

जदपि मैं बहुतै जतन करे ।
तदपि मधुप हरि-प्रिया जानि कैं, काहुँ न प्रान हरे ।।
सौरभ-जुत सुमननि लै निज कर, सतत सेज धरे ।
सनमुख सहति सरद ससि सजनी, ताहु न अंग जरे ।।
मधुकर, मोर, कोकिला, चातक, सुनि-सुनि स्रवन भरे ।
सादर ह्वै निरखति रतिपति दृग, नैंकु न पलक परे ।।
निसि-दिन रटति नंद-नंदन कौं, उर तैं छिन न टरे ।
अति आतुर गुन सहित चमू सजि, अंगनि सर सँचरे ।।
जानत नहीं कौन गुन इहिं तन, जातैं सब बिडरे ।
सूरदास सकुचनि श्रीपति की, सुभटनि बल बिसरे ।।३४७।।

जिहि दिन तजी ब्रज की भीर ।
कहौं ए अलि लेखि तुममौं, सखा सुन्दर धीर ॥
काम नृप ससि नेव अबलनि, दुर्ग दूत समीर ।
बिपिन सेना साजि नव-दल, बदत बंदी कीर ॥
लता लघु जनु कुसुम कर सर, कली कोटि तुनीर ।
वरन बान वसंत कर लै, बधत है आभीर ॥
मध्य द्रुम हैं फूल मानौ, कवच चित्रित चीर ।
कुंभ कुंजर विटप भरी, चँवर चारु मईर ॥
चमू चंचल चलति नाहीं, रही है पुर तीर ।
समर मारू कीट की रट, सहति त्रिया अधीर ॥
जन्म जातक व्याधि व्यापक, कहौं कासौं पीर ।
सूर रसिक सिरोमनिहिं बिनु, जरत जमुना नीर ॥३४८॥

हरि बिछुरन की सूल न जाइ ।
बलि-बलि जाऊँ मुखारबिंद की, वह मूरति चित रहो समाइ ॥
एक समै बृंदाबन महियाँ, गहि अंचल मेरी लाज छड़ाइ ।
कबहुँक रहसि देत आलिंगन, कबहुँक दौरि बहोरत गाइ ॥
वै दिन ऊधौ बिसरत नाहीं, अंबर हरे जमुन-तट जाइ ।
सूरदास-स्वामी गुन सागर, सुमिरि सुमिरि राधै पछिताइ ॥३४९॥

मोहन माँग्यौ अपनौ रूप ।
इहिं ब्रज बसत अँचे तुम बैठीं, ता बिनु उहाँ निरूप ॥
मेरौ मन, मेरे अलि लोचन, लै जु गए धपि धूप ।
ता ऊपर तुम लैन पठाए, मनौ धर्‌यौ करि सूप ॥
अपनौ काज सँवारि सूर सुनि, हमैं बतावत कूप ।
लेवा-देइ धराधरि मैं है, कौन रंक को भूप ॥३५०॥

पठवत जोग कछू जिय लाज न ।
सुनियत जंत्र ताँत तैं जानी, कपट राग रुचि बाजन ॥
जिय गहि लई क्रूर के सिखऐं, मोह होत नहिं राजन ।
सब सुधि परी बचन कन टोए, ढके रहौ मुख भाजन ॥
यह नृप नीति रहौ कौनेंहु जुग, नेह होत जस-आजन ।
ताहूँ तजी सुरति नहिं आवत, दुख पाए जन माजन ॥

करि दासी दुलहिनि भए दूलह, फिरत ब्याह के साजल ।
सूर बड़े भुव-भूप कंस हते, वा कुबिजा के काजन ।।३५१।।

सँदेसनि बिरह-बिथा क्यौं जानि ।
जब तैं दृष्टि परी वह मूरति, कमल-बदन की काँति ।।
अब तौ जिय ऐसी बनि आई, कहौ कोउ किहुँ भाँति ।
जो वह कहै सोइ सो सुनि सखि, जुग बर रैनि बिहाति ।।
जौलौं नहिं भेंटौं भुज भरि हरि, उर कंचुकि न सुहाति ।
सूरदास-प्रभु कमल-नयन बिनु, तलफति अरु अकुलाति ।।३५२।।

सँदेसनि क्यौं निघटति दिन राति ?
कबहुँक स्याम कमल-दल लोचन, ब्रज मिलिहैं उहिं भाँति ।।
खंजरीट, मृग, मीन, मधुप मिलि, उपमा कौं अकुलात ।
सहस भाँति अर्पित कीन्हे सब, एकौ चित न सुहात ।।
बार-बार मैं बरज्यौ ग्वालिनि, अपने मारग जात ।
सूरदास-प्रभु संतत हित तैं, कहे सुनत नहिं बात ।।३५३।।

सँदेसनि सुनत प्रीति गति जानी ।
चातक स्वाति बूँद लौं, सागर भरे देखियत पानी ।।
दिन-दिन मोह बँध्यौ सुक नल ज्यौं, बंसी धुनि कल कीन्ही ।
उरझयौ मन पठयौ हम देखन, यही सुरति हम लीन्ही ।।
निरगुन के ऐसे गुन सुमिरत, सुनि अलि सखा सनेही ।
जिय हरि लियौ कौन ऐसौ हित, सूर सुपोषत देही ।।३५४।।

गोपालहि लै आवहू मनाइ ।
अब की बार कैसैंहू ऊधौ, करि छल-बल चतुराइ ।।
दीजौ उनहिं उरहनौ मधुकर, सनैं-सनैं समुझाइ ।
जिनहिं छाँड़ि मथुरा तुम आए, ते कहा करैं जदुराइ ।।
बार-बार हौं बहुत कहा कहौं, बिनती बहुत बनाइ ।
पाँइ पकरि सूरज प्रभु ल्यावहु, नंद की सौंहैं दिवाइ ।।३५५।।

ऊधौ स्याम इहाँ लै आवहु ।
ब्रजजन चातक मरत पियासे, स्वाति बूँद बरषावहु ।।
ह्याँ तैं जाहु बिलंब करौ जनि, हमरी दसा जनावहु ।
घोष सरोज भयौ है संपुट, ह्वै दिनकर बिगसावहु ।।

जौ ऊधौ हरि इहाँ न आवहिं, तौ हमैं उहाँ बुलावहु ।
सूरदास-प्रभु हमहिं मिलावहु, तौ तिहुँपुर जस पावहु ।।३५६।।

कहहु कहा हम तैं बिगरी ।
कौनैं न्याउ जोग लिखि पठए, हँसि सेवा कछुवै न करी ।।
पाषँड प्रीति करी नंद-नंदन, अवधि अधार हुती सो टरी ।
मुद्रा जटा ऊधौ लै आए, ब्रज-बनिता पहिरौ सगरी ।।
जाति सुभाउ मिटै नहिं सजनी, अंत तऊ उबरी-कुबरी ।
सूरदास-प्रभु वेगि मिलहु अब, नातरु प्रान जात उगरी ।।३५७।।

बिरही कहँ लौं आपु सँभारै ।
जव तैं गंग परी हरि पग तैं, बहिबौ नहीं निवारै ।।
नैननि तै बिछुरे जु भ्रमत है, ससि अजहूँ तन गारै ।
रोम ते बिछुरि, कमल कंटक भए, सिंधु भए जल छारै ।।
बैन तैं बिछुरि, अबिधि बिधिहूँ भई, बेदहिं को निरुवारै ।
सूरदास जे सव अँग बिछुरीं, तिनहिं कौन उपचारै ।।३५८।।

बहुत दिन बीते हरि बिनु देखैं ।
गनतहिं गनत गई सुनि सजनी, कर अँगुरिनि की रेखैं ।।
अब यह बिरह अमर जु करी हम, बिसरी नैन निमेषैं ।
हौं डरपति सुनि सूरदास जनि, पारहिं उनहिं के लेखैं ।।३५९।।

ऊधौ जू त्रिभंगी छबि फेरि नहीं दीठी ।
देख्यौ चाहैं नैन मेरे, मूरति वह मीठी ।।
काहैं तुम करत मधुप, ऐसियै बसीठी ।
मानत नहिं बातैं मन, लागति हमैं सीठी ।।
सूरदास-प्रभु सौं यह, कहियौ तुम ढीठी ।
सेवाहूँ करत कितहिं, दीन्ही है पीठी ।।३६०।।

ऊधौ भली भई ब्रज आए ।
बिधि कुलाल कीन्हे काँचे घट ते तुम आनि पकाए ।।
रँग दीन्हौ हो कान्ह साँवरें, अँग-अँग चित्र बनाए ।
पातैं गरे न नैन नेह तैं, अवधि अटा पर छाए ।।
ब्रज करि अँवा जोग ईधन करि, सूरती आनि सुलगाए ।
फूंक उसास बिरह प्रजरनि सँग, ध्यान दरस सियराए ।।

भरे सँपूरन सकल प्रेम-जल , छुवन न काहूँ पाए ।
राज काज तैं गए सूर-प्रभु, नंद-नँदन कर लाए ।।३६१।।

ऊधौ भली करी ह्याँ आए ।
तुम देखे जनु माधौ देखे, दुख त्रै ताप नसाए ।।
नँद जसुदा कौ नात न छूटत, वेद-पुराननि गाए ।
हम अहीरि तुम अहिर लाख दस, निरगुन कहा कहाए ।।
तब इहिं घोष खेल बहु खेले, ऊखल भुजा बँधाए ।
सूरदास-प्रभु इहै सूल जिय, बहुरि न दरस दिखाए ।।३६२।।

ऊधौ कहि मधुबन की रीति ।
राजा होइ जदुनाथ तिहारे, कहा चलाई नीति ।।
निसिकर करत दाह दिनकर लौं, हुतौ सदा ससि सीत ।
पूरब पवन कह्यौ नहिं मानत, गयौ सहज बपु जीति ।।
कंस काज कुबिजा कैं मार्यौ, भई निरतर प्रीति ।
सूर बिरह ब्रज भलौ न लागत, जहीं ब्याह तहँ गीति ।।३६३।।

हरि बिनु नाहिंन परत रह्यौ ।
उत गिरि दुर्गम इत दव दारुन, क्यौं दुख जात सह्यौ ।।
उठत जु बिरह धूम पावक झर, बरि-बरि बायु बह्यौ ।
जारि-जारि फिरि फूँकि प्रजारत, पलकनि हृदय दह्यौ ।।
जद्यपि घृत आए लैं ऊधौ, जोग सँदेस कह्यौ ।
तद्यपि भस्म न होति सूर सुनि, चलत गोपाल चह्यौ ।।३६४।।

माधौ जू नैंकु दिखाई देहु ।
या तनु मैं तैं ताके बदले, जो चाहौ सो लेहु ।।
भूली फिरति ठगी सी तव तैं, बिनु बल मति गुन गेहु ।
जब तैं इन अपराधी नैननि, बरजत कियौ सनेहु ।।
कहियौ जाइ मधुप पा लागौं, बिरह कियौ तन खेहु ।
सूरदास-प्रभु प्रान पथिक कौ, तुमहिं निहोरौ एहु ।।३६५।।

एक बार ब्रज आइकै, हरि दरसन देते ।
तन की तपत मिटाइ कै, जग मैं जस लेते ।।
सुख समीप जननी किए, अवगुन भए तेते ।
मधुकर कौं बेली भई, बिनु गाहक केते ।।

छाँड़नहार जु हरि भए, कछुवै गुन देते।
सूरदास हम कह कियौ, कंचन कसि लेते ॥३६६॥

(ऊधौ जौ) हरि आवहिं तौ प्रान रहैं।
आवत जात उलटि फिरि बैठत, जीवत अवधि गहैं॥
जब वे दाम उखल सौं बाँधे, बदन नवाइ रहे।
चुभि जु रही नवनीत चोर छबि, भुलति न ज्ञान कहे॥
तिनसौं ऐसी क्यौं कहि आवति, जिन कुल त्रास सहे।
सूर स्याम गुन-रस निधि तजि कै, क्यौं यह घट निबहै॥३६७॥

जब लगि ज्ञान हृदै नहिं आवै।
तब लगि कोटि जतन करै कोऊ, बिनु विवेक नहिं पावै॥
विना बिचार सबै सुपनौ सौ, मैं देख्यौ जग जोइ।
नाना दारु बसै ज्यौं पावक, प्रगट मथे तैं होइ॥
तुमहीं कहत सकल घट व्यापक, और सबहिं तैं नियरे॥
नख सिख लौं तन जरत निसा दिन, निकसि करत किन सियरे॥
साँची बात सबै वोलत हौ, मुख मैं मेले तुरसी।
सूर सु औषध हमैं. बतावहु, पितजुर ऊपर गुरसी॥३६८॥

तुम जु कहत हरि हृदय रहत हैं।
कैसैं होइ प्रतीति मधुप सुनि, ये इतनी जु सहत हैं॥
वासर रैनि कठिन बिरहागिनि, अंतर प्रान दहत हैं।
प्रजरि प्रजरि मनु निकसि धूम अति, नननि नीर बहत हैं॥
कठिन अवज्ञा होति देह दुख, मरजादा न गहत है।
कहि अब क्यौं मानैं मन सूरज, ये बातैं जु कहत है॥३६९॥

जौ पै हिरदै माँझ हरी।
तौ कहि इती अवज्ञा उनपै, कैसैं सही परी॥
तव दावानल दहन न पायौ, अब इहिं बिरह जरी।
उर तैं निकसि नंद-नंदन हम, सीतल क्यौं न करी॥
दिन प्रति नैन इंद्र जल बरषत, घटत न एक घरी।
अति ही सीत भीत तन भींजत, गिरि अंचल न धरी॥
कर-कंकन दरपन लै देखौ, इहिं अति अनख मरी।
क्यौं अब जियहिं जोग सुनि सूरज, बिरहिनि बिरह भरी॥३७०॥

तुम घट ही मैं स्याम बताए।
लीजै सँभारि सकल सुख अपने, रास रंग जे पाए॥
जौ समदृष्टि आदि निर्गुन पद, तौ कत चित्त चुराए।
मोहन बदन बिलोकि मानि रुचि, हँसि हँस कंठ लगाए॥
हम मति-हीन अजान अल्प बुधि, तुम अनुभो पद ल्याए।
सूरदास तिहिं बनिज कौन गुन, मूलहु माँझ गँवाए॥३७१॥

इन बातनि के मारैं मरियत।
निरगुन ज्ञान मधुप लै आए, बिनु गुपाल कैसैं निस्तरियत॥
सबै अटपटी कहै रे मधुकर, सुनि देखी मधुबन की नीति।
कौन हाल हमरैं ब्रज बीतत, जानत नहीं बिरह की रीति॥
बुझी अगिनि बहुरौ सुलगाई अंतर गति बिरहानल जारत।
सूरदास स्वामी सुख सागर, मिलि काहैं न तन ताप निवारत॥३७२॥

बातैं कहत बनाइ-बनाइ।
रंचक बिरह हुतौ इहिं गोकुल, मधुकर मेट्यौ आइ।
कमलनैन मोहन की लीला, रहति रही गुन गाइ।
ओछी पूँजी हरै जु तस्कर, रंक मरै पछिताइ॥
भली करी हमकौं लै आए, पठए जोग सिखाइ।
सूरदास स्वामी यह घाली, निरगुन कथा सुनाइ॥३७३॥

ऐसौ जोग न हम पैं होइ।
आँखि मूदि कह पावैं ढूँढ़े, अँधरे ज्यौं टकटोइ॥
भसम लगावत कहत जु हमकौ, अंग कुंकुमा धोइ।
सुनि कै बचन तुम्हारे ऊधौ, नैना आवत रोइ॥
कुंतल कुटिल मुकुट कुंडल छवि, रही जु चित मैं पोइ।
सूरज-प्रभु बिनु प्रान रहै नहिं, कोटि करौ किन कोइ॥३७४॥

ऊधौ तौ हम जोग करैं।
जौ हरि बेगि मिलैं अब हमकौं, वैसे वेष धरैं॥
कर मुरली उर गुंजनि माला, वाल बच्छ लिए संग।
वैसेहिं दान जु मागैं हम पै, बाढ़ै अति रस-रंग॥
वैसेई हम मान करैंगी, वै गहि चरन मनावैं।
यातैं भली कहा सूरज जौ, स्याम जोग धरि पावैं॥३७५॥

जोग भलौ जौ मोहन पावैं।
कहि सति भाव कपट तजि ऊधौ, तौ निहचै चित लावैं।
करैं तपस्या बिधि संजोगी, एक ध्यान धरि ध्यावैं।
मन कर हाथ आपनैं राखैं, चित्त न कहूँ डुलावैं।।
एकै सूर कठिन लागत है, नैंना जौ ढंग आवैं।
हैं रस-रसे साँवरे हरि के, सो रस जौ बिसरावैं।।३७६।।

मधुकर कह्यौ सँदेस सिधारौ।
बिनु उपदेस सहजहीं जोगी, सुधरि रह्यौ ब्रज सारौ।।
जाकौ ध्यान धरत गौरीपति, जोग जुक्ति करि हारौ।
सो हरि बसत सदा उर अंतर, नैंकु टरत नहिं टारौ।।
यह उपदेस आपनौ ऊधौ, राखौ ढाँपि सँवारौ।
सूर स्याम जानत हैं जी की, जो निज हितू हमारौ।।३७७।।

ऊधौ हमहिं कहा समुझावहु।
पसु-पंछी सुरभी ब्रज की सब, देखि स्रवन सुनि आवहु।।
त्रिन न चरत गो, पिवत न सुत पय, ढूँढत बन-बन डोलैं।
अलि कोकिल दै आदि बिहंगम, भाँति भयानक बोलैं।।
जमुना भई स्याम स्यामहिं बिनु, इंदु छीन छय रोगी।
तरुवर पत्र-वसन न सँभारत, बिरह बृच्छ भए जोगी।।
गोकुल के सब लोग दुखित हैं, नीर बिना ज्यौं मन।
सूरदास-प्रभु प्रान न छूटत, अवधि आस मैं लीन।।३७८।।

हमसौं उनसौं कौन सगाई।
हम अहीर अबला ब्रजवासी, वै जदुपति जदुराई।।
कहा भयौ जु भए जदुनंदन, अब यह पदवी पाई।
सकुच न आवत घोष बसत की, तजि ब्रज गए पराई।।
ऐसे भए उहाँ जादौपति, गए गोप बिसराई।
सूरदास यह ब्रज कौ नातौ, भूलि गए बलभाई।।३७९।।

प्रीति करि निरमोहि हरि सौं, काहि नहिं दुख होई।
कपट की करि प्रीति कपटी, लै गयौ मन गोई।
सींचि आल मजीठ जैसे, निठुर काटी पोइ।
हमरे मन की सोइ जानै, जाहि बीती होइ।।

काल कर तैं राखि लीन्ही, इंद्र गर्व जु खोइ।
सूर गोपिनि ऊधौ आगैं डहकि दीन्हौ रोइ ।।३८०।।

ऊधौ तुम यह मति लै आए।
इक हम जरति खिझावन आए, मानौ सिखै पठाए ।।
तुम उनके वै नाथ तुम्हारे, प्रान एक इक सारे।
मित्र के मित्र सजन के सज्जन, तातैं कहति पुकारै ।।
रे सुनि मूढ़ जरति अबलनि कौं, पर दुख तू नहिं जानै।
निपट गँवार होइ जो मूरख, सो तेरी बातैं मानै ।।
हम रुचि करी सूर के प्रभु कौं, दूजौ मन न सुहाइ।
उलटि जाहु अपनैं पुर माहीं, बादिहिं करत लराइ ।।३८१।।

हरि मुख देखैं ही परतीति।
जौ तुम कोटि भाँति परमोधौ, जोग ध्यान की रीति ।।
नाहीं कछू सयान ज्ञान मैं, यह नीकैं हम जानैं।
कहौ कहा कहिऐ अनभव कौं, कैसैं मन मैं आनैं ।।
यह मन एक, एक वह मूरति, भृंगी कीट समानै।
सूर सपथ दै ऊधौ पूछौ, इहिं विधि कौन सयानैं ।।३८२।।

(ऊधौ) बात तिहारी को सुनै।
हरि-पद-पंकज मन मधुकर गह्यौ, मन बिनु बात न कछू बनै ।।
जोग जुगुति बिस्तार बड़ौ है, ऐसौ ठौर नहीं अपनैं।
ब्रज-बासिन इतनोइ हियौ है, कृष्न वसत संकोच बनै ।।
तहाँ जाहु जहँ बैठे जोगी, इहाँ काम-रस रह्यौ धुनै।
हम जु अहीर कृष्न मदमाते, मूरख सौं क्यौं मंत्र बनै ।।
जो तुम जानत तप करि पायौ, मौन रहौ तुम घर अपनैं।
घर-घर फिरत पुकारत ल्यौ-ल्यौ, ताही वस्तु कौ मोल हनै ।।
भूख न प्यास नींद गइ हरि बिनु, पति, सुत गृह की कौन गनै।
माया और छूटि गइ ममता, अधिक कहा लौं लोग बनै ।।
सो हरि प्रान, प्रान तैं बल्लभ, मोहन की लीला अगनै।
आवत है तौ कहौ सूर प्रभु, नहीं रहौ तुम मौन बनै ।।३८३।।

तौ हम मानैं बात तुम्हारी।
अपनौ ब्रह्म दिखावहु ऊधौ, मुकुट पितांबर धारी ।।
भनिहैं तब ताकौ सब गोपी, सहि रहिहैं बरु गारी।

भूत समान बतावत हमकौं, डारहु स्यामं बिसारी ।।
जे मुख सदा सुधा अँचवत हैं, ते बिष क्यौं अधिकारी ।
सूरदास-प्रभु एक अंग पर, रीझि रहीं ब्रजनारी ।।३८४।।

बातनि को परतीति करै ।
को अब कमलनैन मूरति तजि, निरगुन ध्यान धरै ।।
जो मत बेद कहत जुग बीते, रूप रेख बिनु जानें ।
सो मत मूढ़ कहत अबलनि सौं, नाहिं सो हृदै समानें ।।
जिहिं रस काज देव मुनि-चिंतत, ध्यान पलक नहिं आवत ।
सोई रस सूर गाइ ग्वालनि सँग, मुरली लै कर गावत ।।३८५।।

नहीं हम निरगुन सौं पहिचानि ।
मन मनसा रस-रूप सिंधु मैं, रही अपुनपौ सानि ।।
जदपि आनि उपदेसत ऊधौ, पूरन ज्ञान बखानि ।।
चित चुभि रही मदन मोहन की, चितवनि मृदु मुसकानि ।
जुर्‌यौ सनेह नंद-नंदन सौं, तजि परिमिति कुलकानि ।
छूटत नहीं सहज सूरज प्रभु, दुःख-सुख लाभ कि हानि ।।३८६।।

(ऊधौ) जौ कोउ यह तन फेरि बनावै ।
तौऊ नंद-नँदन तजि मधुकर, और न मन मैं आवैं ।।
जौ या तन की त्वचा काटि कै, लै करि दुंदुभि साजै ।
मधुकर उतंग सप्त सुर निकसैं, कान्ह-कान्ह करि बाजै ।।
निकसैं प्रान परैं जिहि माटी, द्रुम लागैं तिहिं ठाम ।
अब सुनि सूर पत्र, फल, साखा, लेत उठैं हरि नाम ।।३८७।।

ऊधौ जाइ बहुरि मुनि आवहु, कह्यौ जो नंदकुमार ।
यह न होइ उपदेस स्याम कौ, कहत लगावन छार ।।
निरगुन जोति कहाँ उन पाई, सिखवत बारंबार ।
काल्हिहिं करत हुते हमरे अँग, अपनैं हाथ सिंगार ।।
व्याकुल भई गोपालहिं बिछुरैं, गयौ गुन ज्ञान सँभार ।
तातैं जो भावै सो बकत हौ, नाहिन दौष तुम्हार ।।
बिरह सहन कौं हम सिरजी हैं, पाहन हृदय हमार ।
सूरदास अंतरगति मोहन, जीवन प्रान अधार ।।३८८।।

ऊधौ जोग बिसरि जनि जाहु ।
बाँधौ गाँठि छूटि परिहै कहुँ, फिरि पाछैं पछिताहु ।।

ऐसी बहुत अनूपम मधुकर, मरम न जानै और ।
ब्रज बनितनि के नहीं काम की, है तुम्हरेई ठौर ।।
जो हित करि पठयौ मनमोहन, सो हम तुमकौं दीनौ ।
सूरदास ज्यौं बिप्र नारियर, करहों बदन कीनौ ।।३८९।।

ज्ञान जोग अबलनि अहीरि सौं कहत न आवै लाज ।
ऊधौ सखा स्याम के कहियत, पठए हौ बेकाज ।।
जा लायक जो बात होइ सो, तैसियै तासौं कहिऐ ।
बीना नाद सँगीत सुधानिधि, मूढ़हिं कहा सुनैऐ ।।
हम जानी बिचारि पठऐ हौ, सखा अंग परबीन ।
सुख दैहौ मोहन कहि बतियाँ, करत जोग आधीन ।।
मुरली अधर मोर की पाँखैं, जिन यह मूरति देखी ।
सोऽब कहा जानैं निरगुन कौं, भीति चित्र अवरेखी ।।
पा लागौं तुम बड़े सयाने, अनबोले ही रहियौ ।
सिखए जोग सूर के प्रभु के, उनहीं सौं फिरि कहियौ ।।३९०।।

ऊधौ कह्यौ तिहारौ कीन्हौ ।
जिहिं-जिहिं भाँति सिखावन दीन्हौ, सोइ बिचारन लीन्हौ ।
नैन मूँदि धरि ध्यान निरंतर, मन देख्यौ दौराइ ।
अरुझि रह्यौ नंदलाल प्रेम रस, निमिष न इत उत जाइ ।।
जो हम हाथ आवते जानतिं, लेतीं सीस चढ़ाइ ।
यह लै देहु ताहि फिरि मधुकर, जिन पठए हित गाइ ।।
मेरे जान सूर के प्रभु तौ, फेरि न लैहैं ओऊ ।।
देखियत परी तिहारे माथैं, यह हाँसी दुख दोऊ ।३९१।।

ऊधौ काहे कौं भक्त कहावत ।
जु पै जोग लिगि पठयौ हमकौं, तुमहुं न भस्म चढ़ावत ।।
शृंगी मुद्रा भस्म अधारी, हमहीं कहा सिखावत ।
कुबिजा अधिक स्याम की प्यारी, ताहिं नहीं पहिरावत ।।
यह तौ हमकौं तबहिं न सिखयौ, जब तैं गाइ चरावत ।
सूरदास-प्रभु कौं कहियौ अब, लिखि लिखि कहा पठावत ।।३९२।।

(ऊधौ) ना हम बिरहिनि ना तुम दास ।
कहत सुनत घट प्रान रहत हैं, हरि तजि भजहु अकास ।।

बिरही मीन मरै जल बिछुरैं, छाँड़ि जियन की आस ।
दास भाव नहिं तजत पपीहा, बरषत मरत पियास ।।
पंकज परम कमल मैं बिहरत, बिधि कियौ नीर निरास ।
राजिव रवि कौ दोष न मानत, ससि सौं सहज उदास ।।
प्रगट प्रीति दसरथ प्रतिपाली, प्रीतम कैं बनबास ।
सूर स्याम सौं दृढ़ ब्रत राख्यौ, मेटि जगत उपहास ।।३६३।।

ऊधौ बिनति सुनौ इक मेरी ।
जब कै बिछुरी गए नँद-नँदन, काम के दल रहे घेरी ।।
देखौ हृदै बिचारि तुमहिं अब, प्रीति रीति सब केरी ।
जहँ जाकी निधि तहँ सब सौंपैं, ज्यौं मृग नाद अहेरी ।।
वै दस मास रतन रस बस तैं, ससि बिनु रैनि अँधेरी ।
सूरदास स्वामी कब आवहिँ, बास करन ब्रज फेरी ।।३६४।।

मधुकर कहा प्रवीन सयाने ।
जानत तीनि लोक की महिमा, अबलनि काज अयाने ।।
जे कच कनक कटोरा भरि-भरि, मेलत तेल फुलेल ।
तिन केसनि क्यौं भस्म चढ़ावत, होरी केसे खेल ।।
जिन केसनि कबरी गुहि सुंदर, अपनैं हाथ बनाई ।
तिनकौ जटा कहा नीकी है, कहु कैसैं कहि आई ।।
जिन स्रवननि ताटंक खुभी, ओ करनफूल खुटलाऊ ।
तिन स्रवननि कसमीरी मुद्रा, लै लै चित्र झुलाऊ ।।
भाल तिलक, काजर चख, नासा नकबेसरि नथ फूली ।
ते सब तज हमरे मुख मेलत, उज्ज्वल भस्मी खूली ।।
जिहि मुख गीत सुभाषित गावतिं, करतिं जु हास बिलास ।
तिहिं मुख मौन गहे क्यौं जीजै, घूंटत ऊरध स्वास ।।
कंठ सुमाल हार मुकता के हीरा रतन अपार ।
ताही कंठ बाँधिबे कारन, सिंगी जोग सिंगार ।
कंचुकि झीनि झीनि पट सारी, चंदन सरस सुछंद ।
अब कंथा एकै अति गुदरी, क्यौं उपजी मतिमंद ।।
ऊधौ उठौ सबै पा लागैं, देख्यौ ज्ञान तुम्हारौ ।
सूर सु प्रभु मुख फेरि देखिहैं, चिरजियौ कान्ह हमारौ ।।३६५।।

हमतौ दुहूँ भाँति फल पायौ ।
जौ गोपाल मिलैं तौ नीकौ, नतरु जगत जस छायौ ।।

कहँ हम या गोकुल की गोपी, बरनहीन घटि जाति।
कहँ वै श्री कमला के बल्लभ, मिलि बैठीं इक पाँति ।।
निगम ज्ञान मुनि ध्यान अगोचर, ते भए घोष निवासी।
वा ऊपर अब कहौ देखि धौं, मुक्ति कौन की दासी ।।
जोग कथा ऊधौ पालागौं, मति कहौ बारंबार।
सूर स्याम तजि आन भजै जो, ताकी जननी छार ।।३६६।।

मोहिं अलि दुहूँ भाँति फल होत।
तब रस अधर लेति ही मुरली, अब भई कुबिजा सौत ।।
तुम जु जोग मत सिखवन आए, भस्म चढ़ावन अंग।
इन बिरहिनि मैं कहुँ तुम देखी, सुवन गुहाए मंग ।।
काननि मुद्रा पहिरि मेषला, धरे जटा जु अधारी।
ह्याँ हैं तरल तर्यौना काकैं, अरु तनसुख की सारी ।।
परम वियोगिनि रटत रैनि-दिन, धरि मन मोहन ध्यान।
तुम तौ चलौ वेगि मधुबन कौ, जहाँ जोग कौ ज्ञान ।।
निसि-दिन जीजत हैं या ब्रज मैं, देखि मनोहर रूप।
सूर जोग लै घर घर डोलौ, लेहु-लेहु ज्यौं सूप ।।३६७।।

ऊधौ मथुरा हीं लै जाहु।
आरति हरौ स्रवन नैननि की, मेटहु उर कौ दाहु ।।
बुधि बल बचन जहाज बाहँ गहि, बिरह-सिंधु अवगाहु।
पार लगावहु मधुरिपु कैं तट, चंद तज्यौ जनु राहु ।।
देखहिं जाइ रूप कुबिजा कौ, सहि न सकत यह दाहु।
जीवन जनम सुफल करि लेखहिं, सूर सबनि उत्साहु ।।३६८।।

लै चलि ऊधौ अपनैं देस।
मदनगुपाल मिलन मन उमह्यौ, कौन बसै ह्याँ जदपि सुदेस ।।
वह मूरति मो हृदै बसति है, मुरलि अधर-पुट कुंतल केस।
कुंडल लोल तिलक मृगमद रुचि, गावत नृत्यत नटवर बेस ।।
कहा करौं मोपै रह्यौ न जाइ छिन, सब सुखदायक बसत विदेस।
सूरज स्याम मिलन कब ह्वै है, दूरि गमन ब्रजनाथ नरेस ।।३६९।।

सब तैं वहै देस अति नीकौ।
जहँ वै मदन गुपाल हमारे, तहँ जाइ दुख जी कौ ।।

सुंदर कमल बदन मुरली-धुनि, कित सुख सब्द सुनायौ ।
तब तैं थक्यौ मधुप मन उहँई बहुरि न उर मैं आयौ ।।
जैसैं देह स्वास बिनु औरैं, त्यौं ब्रज लागत फीकौ ।
कहि किहिं जतन प्रान राखैं, बिनु सूर स्याम प्रिय जी कौ ।।४००।।

ऊधौ लै चल लै चल ।
जहँ वे सुंदर स्याम बिहारी, हमकौं तहँ लै चल ।।
आवन-आवन कहि गए ऊधौ, करि गए हमसौं छल ।
हृदय की प्रीति स्याम जू जानत, कितिक दूरि गोकुल ।।
आपुन जाइ मधुपुरी छाए, उहाँ रहे हिलि मिल ।
सूरदास स्वामी के बिछुरैं, नैननि नीर प्रबल ।।४०१।।

गुप्त मते की बात कहौं, जो कहौ न काहू आगैं ।
कै हम जानैं कै हरि तुमहूँ, इतनी पावहिं माँगैं ।।
एक बेर खेलत बृंदाबन, कंटक चुभि गयौ पाइँ ।
कंटक सौं कंटक लै काढ़्यौ, अपनैं हाथ सुभाइ ।।
एक दिवस विहरत बन भीतर, मैं जु सुनाई भूख ।
पाके फल वै देखि मनोहर, चढ़े कृपा करि रूख ।।
ऐसी प्रीति हमारी उनकी, बसतैं गोकुल बास ।
सूरदास-प्रभु सब बिसराई, मधुबन कियौ निवास ।।४०२।।

ऊधौ कत ये बातैं चाली ।
कछु मीठी कछु मधुरी हरि की, ते उर-अंतर साली ।।
तब ये बेला सींचि स्याम घन, अपनी करि प्रतिपाली ।
अब ये बेली सूखति हरि बिनु, छाँड़ि गये बनमाली ।।
जबहीं कृपा हुती जदुपति की, सँग रस रास सुखाली ।
सूरदास-प्रभु तब न मुईं हम, जीवहिं बिरह की जाली ।।४०३।।

ऊधौ यहै विचार गहौ ।
कै तन गएँ भलौ मानैं, कै हरि ब्रज आइ रहौ ।।
कानन देह विरह दौ लागी, इंद्री जीव जरैं ।
बुझैं स्याम-घन प्रेम कमल मुख, मुरली बूँद परैं ।।
चरन सरोवर माँहि मीन मन, रहत एक रस रीति ।
तुम निरगुन बारू पर डारत, सूर कौन यह नीति ।।४०४।।

ऊधौ हम लायक सिख दीजै ।
यह उपदेस अगिनि तैं तातौ, कहौ कौन विधि लीजै ।।
तुमहीं कहौ इहाँ ईतननि मैं, सीखनहारी को है ।
जोगी जती रहित माया तैं, तिनहीं यह मत सोहै ।।
कहा सुनत बिपरीति लोक मैं, यह सब कोऊ कैहै ।
देखौ धौं अपने मन सब कोऊ, तुमहीं दूषन दैहै ।।
स्रक-चंदन बनिता बिनोद-रस, क्यौं बिभूति बपु माँजैं ।
सूरदास सोभा क्यौं पावत, आँखि आँधरी आँजैं ।।४०५।।

ऊधौ तुम हौ चतुर सुजान ।
हमकौं तुम सोई सिख दीजौ, नंद-सुवन की आन ।।
आमिष है भोजन हित जाकौं, सो क्यौं सागहि मान ।
ता मुख सेम पात क्यौं परसत, जा मुख खाए पान ।।
किंगरी स्वर कैसैं सचु मानत, सुनि मुरली की तान ।
सुख तौ ता दिन होइ सूर ब्रज, जा दिन आवैं कान्ह ।।४०६।।

ऊधौ कहि न सकति इक बात ।
जोग सुनत उर ऐसी लागत, ज्यौं तरु टूटे पात ।।
दधि अरु भात हाथ करि लेते, लै कुंजनि मैं खात ।।
अब सुनियत है धोती पहिरे, चढ़े खराऊँ न्हात ।।
अरु कुबिजा पटरानी कीन्ही, कूबर पै इतरात ।।
कहौ तौ जाइ उहाँ हौं झगरौं, दै कूबर पर लात ।।
कुल की लाज कहाँ लौं राखौं, सुनि सुनि हृदय दुखात ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौं, गुन मेटे फल जात ।।४०७।।

जा दिन स्याम मिलैं सोइ नीकौ ।
जोतिष निगम पुरान बड़े ठग, फाँसत जे जिय ही कौ ।।
जौ बूझौ तौ ऊतर दीजै, बिनु बूझैं रस फीकौ ।
अपनैं-अपनैं ठौर सबै गृह, हरन भयौ क्यौं सी कौ ।।
सुनि रे मधुप मूढ़ ब्रज आयौ, लै अपजस कौ टीकौ ।
चातक मीन कमल घन चाहत, कब मन करत अमी कौ ।।
भद्रा भली, भरनि भय हरनी, चलत मेष अरु छींकौ ।
सूर धरम धरि लाल गुनै जौ, तौ प्रेमी कौड़ी कौ ।।४०८।।

(ऊधौ) हम लायक हमसौं कहौ ।
बात बिचारि सुहाती कहिऐ, कै अनबोल रहौ ।।
भली कहैं तुमकौं अति सोभा, अरु पदवी सु लहौ ।
यह विपरीति बूझियैं तुमकौं, जूवा सुरभि नहौ ।।
एते पर फिरि-फिरि सिखवत हौ, दृढ़ करि जोग गहौ ।
सूर कहै अलि पूरौ दीजे, बातनि ही न बहौ ।।४०६।।

कबहूँ ऐसी बात कहौ ।
तजहु सोच मिलिहैं नँदनंदन, हित करि दुखहिं दहौ ।।
तुम हरि समाधान कौं पठए, हमसौं कहन सँदेस ।
आनि अधिक आरति उपजाई, कहि निरगुन उपदेस ।।
इक अति निकट रहत हौ उनकैं, जानत सकल सुभाइ ।
सोइ करहु जिहिं पावहिं दरसन, मेटहु अगम उपाइ ।।
हम किंकरी कमललोचन की, बस कीन्ही मृदु हास ।
सूरदास अब क्यौं बिसरत है, नख-सिख अंग बिलास ।।४१०।।

सब जल तजे प्रेम के नातैं ।
चातक स्वाति बूँद नहिं छाँड़त, प्रगट पुकारत तातैं ।।
समुझत मीन नीर की बातैं, तऊ प्रान हठि हारत ।
सुनत कुरंग प्रेम नहिं त्यागत, जदपि ब्याध सर मारत ।।
निमिष चकोर नैन नहिं लावत, ससि जोवत जुग बीते ।
ज्योति पतंग देखि बपु जारत, भए न प्रेम घट रीते ।।
कहि अलि क्यौं बिसरतिं वे बातैं, संग जु करि ब्रजराज ।
कैसैं सूर स्याम हम छाँड़ैं, एक देह के काज ।।४११।।

मधुकर मधु माधव की बानी ।
अरथ सुनत ही प्रान हमारे, सम सनेह घृत सानी ।।
जैसै दीपक तेल तूल बल, अति दीपति परकासै ।
रूप लोभ जोतिहिं दरसत ही ,कीट कृपन तन नासै ।।
जैसैं मीन छीन आमिष रस, ग्रसत बाँस अनियारे ।
अटकत कंटक कुटिल हृदय मैं, तब नहिं जात निकारे ।।
जैसैं नाद सुनाइ पारधी, धन कुरंग कौ मोहै ।
कठिन बान संधान तुरत ही, तीखे सर उर पोहै ।।
जैसैं ठग खवाइ मद-मोदक, पथिकनि कौं सुख दीन्हौ ।

रस बिस्वास बढ़ाइ चाइ सौं, प्रान सहित गथ लीन्हौ ।।
ऐसे मधुकर हरि जी हमसौं, कपट प्रीति बिस्तारी ।
रस की ऊँख उखारि सूर प्रभु, बई बिरह की बारी ।।४१२।।

ऊधौ को हरि हितू हमारे ।
वै राजा ह्वै रहे मधुपुरी, दासी कहत दुलारे ।।
तब लौं आस हुती आवन की, सुने न बचन तिहारे ।
केहिं कै रूप आनि उर अंतर, जोग जुगुति गहि डारे ।
नृप अभिमान जानि छाँड़यौ ब्रज, कित अहीर बेचारे ।
मार्‌यौ कंस काज कुबिजा के, सूर कहावत भारे ।।४१३।।

ऊधो जौ हरि हितू तुम्हारे ।
तौ तुम कहियौ जाइ कृपा करि, ए दुख सबै हमारे ।।
तन तरिवर उर स्वास पवन मैं, बिरह दवा अति जारे ।
नहिं सिरात नहिं जात छार ह्वै, सुलगि-सुलगि भए कारे ।।
जद्यपि प्रेम उमँगि जल सींचे, बरषि-बरषि घन हारे ।
जौ सींचे इहिं भाँति जतन करि, तौ एतैं प्रतिपारे ।।
कीर कपोत कोकिला चातक, बधिक बियोग बिडारे ।
क्यौं जीवैं इहिं भाँति सूर प्रभु, ब्रज के लोग बिचारे ।।४१४।।

हमैं तौ इतनैं ही सौं काज ।
कैसैंहू अलि कमलनैन कौ, लै आवहु ब्रज आज ।।
और अनेक उपाइ तुम्हारैं, करौ सकल सुख राज ।
कैसैं वै निबहत अबलनि पै, कठिन जौग के साज ।।
नख-सिख सुभग स्याम दरसन बिनु, जीवन जनम बृथा जु ।
सूरदास मन रहत कौन बिधि, बदन बिलोकैं बाजु ।।४१५।।

अब हरि कौन के रस गिधे ।
सकत नहिं निखारि ऊधौ, बदरी ज्यौं ससि बिंधे ।।
बार तिहिं बन बन डुलाईं, तजि सकल कुल-कानि ।
अंध करि अब छाँड़ि गए हम, बिनु लकुट बिनु पानि ।।
जतन गुन निरगुन भए सब, मरन की अभिलाष ।
बिना चरन-सरोज देखै, जरै देह जु राख ।।

परीं फंद वियोग सूनें, तजति कुमुद निवास ।
बिना पुष्कर मीन कैसैं, जियें सूरजदास ।।४१६।।

अब हरि कंसे कै हैं रहत ।
सुनि यह दसा दुसह गोकुल की, ऊधौ का जु कहत ।।
देखि सखी करुना अति इनकी, उलटे चरन गहत ।
तुमकौं चाहि अधिक करि माई, अँखियाँ आँसु बहत ।।
सुनियत है यह बात जु पर दुख, नाहीं कबहुँ सहत ।
उपजी परम प्रतीति सूर यह, दुसह दई सु लहत ।।४१७।।

हरि ठाकुर लोगनि सौं ऊधौ, कहि काहे की प्रीति ।
जौ कीजै तौ ह्वै है जलधर, रवि की ऐसी रीति ।।
जैसैं मीन कमल चातक कौ, ऐसैं दिन गए बीति ।
तरफत, जरत, पुकारत निसि-दिन, नाहिंन ह्याँ कछु नीति ।।
मन हठि पर्‌यौ कबंध जुद्ध ज्यौं, हारेहुँ मानत जीति ।
रुकत न प्रेम-समुद्र सूर-प्रभु, बारू ही की भीति ।।४१८।।

को गोपाल कहाँ के वासी, कासौं हैं पहिचानि ।
तुम धौं जोग कौन के सिखए, इहाँ कहत हौ आनि ।।
अपनी चोप मधुप उड़ि बैठत, भोर भलौ रस जानि ।
पुनि वह बेलि बढ़ौ कै सूकौ, वाहि कहा हित हानि ।।
प्रथम बेनु धुनि करत हरत मन, राग रागिनी ठानि ।
पुनि वह ब्याध बिसास-बिबस करि, हनत बिषम सर तानि ।।
पुनि वह ब्याध विसास-विबस करि, हनत बिषम लर तानि ।।
पय प्यावत पूतना सँहारी, छले जु बलि से दानि ।
सूपनखा नासिका निपाती, सूर सदा यह बानि ।।४१९।।

मधुकर कौन मनायौ मानै ।
अविनासी अति अगम तुम्हारौ, कहा प्रीति रस जानै ।।
सिखवहु जाइ समाधि जोग रस, जै सब लोग सयाने ।
हम अपनै ब्रज ऐसहिं रहिहैं, बिरह बाइ बौराने ।।
जागत सोवत सपन रैन दिन, उहै रूप परवानैं ।
बालमुकुंद किसोरी लीला, सोभा सिंधु समाने ।।
जिनके तन मन प्रान सूर सुनि, मृदु मुसकानि बिकाने ।

परी जु पयनिधि अल्प बूँद जल, सु पुनि कौन पहिचानै ॥४२०॥

अब तौ जोर कटक कौ पायौ।
बाजी ताँत राग पहिचान्यौ, जो निरगुन लिख ल्यायौ ॥
जोगी जहाँ होइ अगवानी, तुंबा तहाँ बुवावै ।
जाकैं कुल जैसी चलि आई, तैसी रीति चलावै ॥
कुबिजा जहाँ होइ पटरानी, तुमसे होइँ वजीर ।
सूरदास ब्रज-जुवतिनि ऊपर, क्यौं करौ उपचीर ॥४२१॥

हरि-सुत हरि के तन आहि ।
ह्याँ को कहै कौन की बातैं,ज्ञान ध्यान कौ काहि ॥
को मुख भ्रमर तासु जुवती की, को जिन कंस हते ।
हमरे तौ गोपति-सुत अधिपति, वनति न औरनि तैं ॥
मोरज रंध्र रूप रुचिकारी, चितै चितै हरि होत ।
कबहूँ कर करनी समेति लै, नैकु मान कै सोत ॥
ता रिपु समै संग सिसु लीन्हें, आवत है तन घोष ।
सूरदास स्वामी मन मोहन, कत उपजावत दोष ॥४२२॥

अब हरि और भए हैं माई, वसति इतनियैं दूरि ।
मधुकर हाथ सँदेसौ पठयौ, चतुर चातुरी चूरि ॥
रूप रासि सब गुन की परिमिति, स्याम सजीवन मूरि ।
तिनसौं कहत मनहिं मन समुझहु, है सबहीं भरि पूरि ॥
इक सुनि सूर ऐसहीं या तन, रहीं बिरह झकझूरि ।
तापर छपद कियौ चाहत है, कोइलाहू तैं धूरि ॥४२३॥

अब अलि सुनत स्याम की बात ।
नूतन नेह कियौ कुबिजा सन, तज्यौ पुरातन नात ॥
परसत जाइ कपट स्वारथ तजि, कमल कोष निसि बासी ।
भ्रमत भ्रमर सुख और सुमन सँग, मधुप एक इक रासी ॥
इती दूरि मुख अवधि बदी निज, सोऊ भई न साँची ।
कीजति कहा प्रतीति सँदेसनि, सूर बिरह को काँची ॥४२४॥

कहा कौऊ जानै पर पीर ।
नंद नँदन कैं बिछुरे सखि री, जेती सरीर ॥

कहि-कहि कथा मधुप समुझावत, मन राखहु धरि धीर ।
नैन मीन कैसैं सचु पावत, बिनु हरि-दरसन-नीर ।।
जोग समाधि कहा हम जानैं, ब्रजवासिनी अहीर ।
सोइ कीजै ज्यौं मिलहिं सूर प्रभु, बहुरि तरंगिनि तीर ।।४२५।।

हम तिय मृतक जियत ससि साखी ।
तुम अलि रवि हित कमल बिसेषी हरे बिकल मधु माखी ।।
मुरली अधर सुधा धुनि सुनि, सुख संच्यौ स्रवन दुवार ।
मधुहारी अक्रूर वधिक मुख, अवधि लगाई छार ।।
मन कौ बिरह नैन कह जानैं, स्रुति मत तुही सुनावै ।
सूर भस्म अँग लगी कुटिलता, तउ जोगै गुन गावै ।।४२६।।

हमकौं दुःख भईँ ये सेजैं ।
ऊधौ कमल नयन की बतियाँ छिदि-छिदि जातिं करेजैं ।।
बृंदाबन गोबर्धन यह बन, फिरि-फिरि सुरति दिवावैं ।
जिहि निसि जहाँ स्याम खेलत है, वल सँग गऊ चरावैं ।।
देखे वनै पखान महूरी, मोरपखा मनि गुंज ।
सूरदास-प्रभु स्याम खिलौना, सकल प्रेम के पुंज ।।४२७।।

हमरी सुरति लेत नहि माधौ ।
तुम अलि सब स्वारथ के गाहक, नेह न जानत आधौ ।।
निसि लौं रमत कोष अभ्यंतर, जो हित कहौ सो थोरी ।
भ्रमत भोर सुख और सुमन सँग, कमल देत नहिं कोरी ।।
राका रास मास रितु जेती, रजनि प्रीति नहिं थाही ।
बैस-संधि-सुख तज्यौ सूर हरि, गए मधुपुरी माहीं ।।४२८।।

(कैसे जीवैं) ऊधौ हरि परदेस रहे
गरजि गरजि धन बरषन लागे, नदिया नार बहे ।।
कहि पठयौ मधुपुरी सखी री, मेरे हुतैं चरन गहै ।
बासर गए निहारत मारग, चातक रैनि डहै ।।
कासौं कहौं तपत मन निसि-दिन, को यह पीर लहै ।
हमहूँ किन लै जाहिं सूर-प्रभु को ब्रज बिपति सहै ।।४२९।।

अब कैसैं ब्रज जात बस्यौ ।
हृदय दहत जमुना बिनु देखे, जहाँ-जहाँ नँदलाल हँस्यौं ।।

तब बै धेनु रहतिं प्रमुदित चित, प्रभुहिं बिमुख तृन दंत कस्यौ ।
ते अब बिलख बदन कृस डोलतिं, मनहू निकट के हरि दरस्यौ ।।
नैन नीर मोचति सोचति हैं, खंजरीट जल पवन खस्यौ ।
सूरदास विनु ललित गोपालहिं, गौकुल कुल अहि बिरह डस्यौ ।।४३०।।

हरि हमकौं यौं काहैं बिसारी ।
प्रेम तरँग बूड़त ब्रजवासी, तरत स्याम सौं इहाँ री ।।
रिपु माधव, पिक वचन, सुधाकर, मरुत मंद गति भारी ।
सहि न सकति अति बिरह त्रास तन, आगि सलाकनि जारी ।।
ज्यौं जल थाकें मीन कहा करै, त्यौं हरि मेलि अडारी ।
बिनै अधोमुख नैन सूर-प्रभु, कहियो विपति हमारी ।।४३१।।

जौ पै इहै हुती उनकैं मन ।
तौ तब कमलनैन हम कारन, कहा किए वै जतन ।।
बिष-जल, ब्याल, बरुन, बरषानल, अखिल असुभ हति राखे ।
संतत संग रहत काहू मिस, निठुर बचन नहिं भाषे ।।
उन बिपदनि कुंचित जौ करते, तौ नहिं जीवित रहतीं ।
बिधि बस नाव बहुरि फिरि मिलती, इतौ बिलँब कत सहतीं ।।
कहिऐ कहा जु सब जानत हैं, या तनु की गति ऐसी ।
सूरदास-प्रभु हित सूचित कैं, बेगि प्रगटबी तैसी ।।४३२।।

मधुकर दीन्ही प्रति दिनाई ।
बातनि सुहृद कर्म कपटी के, चलनि चोर के भाई ।।
प्रेम बीच बघ-बार सुधा-रस, अधर माधुरी प्याई ।
सो अब जाइ खग्यौ उर अंतर, ओषधि कछु न बसाई ।।
गरल दान देते बरु नीकौ, सावधान ह्वै खाई ।
कै मारे कै काज सरै पै, दुःख न देख्यौ जाई ।।
कहि मारे सो सूर कहावै, मित्र-द्रोह न भलाई ।
सूरदास ऐसे अलि जग मैं, तिनकी गति नहिं गाई ।।४३३।।

मोहन सौं मुख बनत न मोरे ।
जिन नैननि मुख चंद बिलोक्यौ, ते नहिं जात तरनि सौं जोरे ।।
मुनि मन मंडल जोग कमठ बिनु, मंदर भार सहत कहि कोरे ।
बँधत नहीं है कमल के बधन, कुंजर क्यौंऽब रहत बिनु तोरे ।।

नीलांबुज, तन नील, बसन, मनि, चितै न जात धूम के भोरे ।
सूर भृंग जे कमल के बिरही, चंपक बन लागत चित थोरे ।।४३४।।

ऊधौ यह न होइ रस रीति ।
सोऊ सठ जो कमलनयन की, कहत बात बिपरीति ।।
सत जुग सुनत प्रगट गुन गावत, कहि कुबिजा के मीत ।
सोधि न परत भरे भाजन मैं, जो टोहै इक सीत ।।
तुम उपदेस नीति लै आए, हुती या ब्रजहिं अनीत ।
देह नेंह पहिलैं मन बाँध्यौ, सूर स्याम के गीत ।।४३५।।

बिलग हम मानैं ऊधौ काकौ ।
तरसत रहे बसुदेव देवकी, नहिं हित मातु पिता कौ ।।
काके मातु पिता को काकौ, दूध पियौ हरि जाकौ ।
नंद जसोदा लाड़ लड़ायौ, नाहिं भयौ हरि ताकौ ।।
कहियौ जाइ बनाइ बात यह, को हित है अबला कौ ।
सूरदास-प्रभु प्रीति है कासौं, कुटिल मोत कुबिजा कौ ।।४३६।।

उघरि आए कान्ह कपट की खानि ।
सरबस हर्‌यौ बजाइ बाँसुरी, अब छाँड़ी पहिचानि ।।
जिन पय पियत पूतना मारी, दालव करी न हानि ।
बलि छलि बाँधि पताल पठाए, नैंकु न कीन्ही कानि ।।
जैसैं बधिक अधिक मृग बिधवत, राग-रागिनी ठानी ।
अवधि आस परतीति ओट दे, हनत बिषम सर तानि ।।
जैसैं नाटसल टरत न उर तैं, त्यौं ऊधौ तुम जानि ।
सूरदास-प्रभु कौं जो भावैं, आयसु माथैं मानी ।।४३७।।

जीवन मुख देखे कौ नीकौ ।
दरस, परस दिन राति पाइयत, स्याम पियारे पी कौ ।।
सूनौ जोग कहा लै कीजे, जहाँ ज्यान है जी कौ ।
नैननि मूँदि मूँदि कह देखौ, बँधौ ज्ञान पोथी कौ ।।
आछे सुंदर स्याम हमारे, और जगत सब फीकौ ।
खाटी मही कहा रुचि मानै, सूर खवैया घी कौ ।।४३८।।

मधुकर को मधुबनहिं गयौ ।
काकैं कहैं सँदेसौ ल्याए, किन लिखि लेख दयौ ।।

को बसुदेव देवकीनंदन, को जदुबंस उजागर ।
ह्याँ तिनसौं पहिचानि न काहू, फिरि लै जैयै कागर ।।
गोपीनाथ राधिका बल्लभ, जसुमति कुँअर कन्हाई ।
दिन प्रति लेत दान बृंदाबन, दूनी रीति चलाई ।।
मधुकर तुम हौ चतुर सयाने, कहत और की ओर ।
सूर सपथ काहू बहकायौ, कै भूले वह ठौर ।।४३९।।

नेह न होइ पुरानो रे अलि ।
जल प्रवाह ज्यौं सोभा-सागर, नित नव तन ब्रजनाथ इहाँ बलि ।।
जीवत हैं आनंद रूप रस, बिनु प्रतीति क्यौं मीन चढ़ै थल ।
अमी अगाध सिंधु सर विहरत, पीवतहू न अघात इते जल ।।
दिन-दिन बढ़त नीर नलिनी ज्यौं, स्याम रंग मैं नैन रहे रलि ।
सूर गुपाल प्रीति जिय जाकैं, छूटति नाहिंन नेह सती सलि ।।४४०।।

अपने सगुन गोपालहिं माई इहिं विधि काहैं देति ।
ऊधौ की इन मीठी बातनि, निर्गुन कैसैं लेति ।।
धर्म,अर्थ, कामना सुनावत, सब सुख मुक्ति समेति ।
काकी भूख गई मन लाड़, सो देखहु चित चेति ।।
जाकौ मोक्ष बिचारत बरनत, निगम कहत हैं नेति ।
सूर स्याम तजि को भुस फटकै, मधुप तुम्हारे हेति ।।४४१।।

हमरी सुधि भूली अलि आए ।
अब कछु कान्ह कहत हैं औरै, समुझि सखा गुन गाए ।।
निज स्वारथ रस रीति समुझ उर, बिकल निमेष न चाहे ।
कहतहिं सुगम सबै कोउ जानत, कठिन हेत निरबाहे ।।
अब परतीति बात को मानैं, कहत हैं स्याम पराए ।
कब लौं चले कपट कौ नातौ, सूर सनेह बनाए ।।४४२।।

मधुकर हम सब कहा करैं ।
पठए हौ गोपाल हेत करि, आयसु तैं न टरैं ।।
रसना उर वारौं ऊधौ पर, इहिं निरगुन कैं साथ ।
यह पै नैकु बिलग जनि मानहु, अँखियाँ नाहिंन हाथ ।।
कौन भाँति गुन कहौं तिहारे, चित कौं धरि धरावौं ।
महा विचित्र नीर बिनु नौका, जल बिनु मीन जियावौं ।।

सेवा हीन अपूरब दरसन, कब आवैंगे फेरि ।
सूरदास प्रभु सौं यौं कहियौ, केरा पास ज्यौं बेरि ।।४४३।।

रे अलि जनम करम गुन गाइ ।
हम अनुरागिनि जसुमति-सुत की, नीरस कथा न भाइ ।।
कैसैं कर गवरधन धार्‌यौ, कैसैं केसी मार्‌यौ ।
काली दमन कियौ कैसैं, अरु बक कौ बदन बिदार्‌यौ ।।
किहिं बिधि नंद महोत्सव कीन्हौ, किहिं विधि गोपी धाई ।
पट-भूषन नाना भाँतिनि के, जुवती-जन पहिराई ।।
दधि-माखन-भाजन कैसैं करि, गोप सखा लै आए ।
बन की धातु चित्र अँग कीन्हे, नाचत भेष सुहाए ।।
गृह बन कछु न सुहात स्याम बिनु, जुग सम बीतत जाम ।
सूर मरहिंगी बिकल बियोगनि, रटि-रटि माधौ नाम ।।४४४।।

मधुप आए जोग गथ लै, हाँसि औ दुख को सहै ।
दंड मुद्रा भस्म कंथा मृग त्वचा, आसन दहै ।।
स्याम तैं कोउ निठुर नाहीं, सखा जिन के रावरे ।
जरे ऊपर लौन लावहिं, कौन तिनतैं बावरे ।।
स्याम के गुन कह बखानौं, जल बँधे जिन थल किए ।
संग खेल खिलाइ हमकौं, सोच तौ इतने दिए ।।
एक दिन बैकुंठवासी, रास बृंदावन रच्यौ ।
सोइ सुरूप विलोकि माधौ, आइ इहिं विधि तन सँच्यौ ।।
सरद जामिनि इंदु सोभा, लाज तजि कुंजन गईं ।
बाँसुरी के सब्द सुनि-सुनि, वधिक की मृगिनी भईं ।।
साँवरी सी मदन मूरति, हृदय माहीं रमि रही ।
और तौ कछु चित न आवत, कठिन ब्रत दृढ़ करि गही ।।
मंदभागिनि करमहीनी, दोष काहि लगाइयै ।
प्रानपति सौं नेह कीन्हौ, भाग लिखौ सु पाइयै ।।
हम न जान्यौ जनम ऐसौ, रैनि कौ सुपनौ भयौ ।
अंजली जल घटत जैसें, तैसैं ही यह तन गयौ ।।
वैद आगैं भेद कैसौ, छेद तौ छाती किए ।
प्रान दिए हम जगत जानत, सुख सबै कुबिजा लिए ।।
जोग जप तप ध्यान पूजा, यह हृदै नहिं आवई ।

सुधा-रस जिन स्वाद चाख्यौ, तिन्है और न भावई ॥
ज्ञान दृढ़ तप ध्यान पूजा, हरि चरन जिनके हिएँ ।
बिमुख हैं जे सूर स्वामी, फल कहा तिनकै जिएँ ॥४४५॥

उद्धव-बचन

वे हरि सकल ठौर के बासी ।
पूरन ब्रह्म अखंडित मंडित, पंडित मुनिनि बिलासी ॥
सप्त पताल ऊरध अध पृथ्वी, तल नभ बरुन बयारी ।
अभ्यंतर दृष्टी देखन कौं, कारन रूप मुरारी ॥
मन बुधि चित अहँकार दसेंद्रिय प्रेरक थंभनकारी ।
ताकैं काज वियोग बिचारत, ये अबला- ब्रजनारी ॥
जाकौं जैसौ रूप मन रुचै, सो अपबस करि लीजै ।
आसन बैसन ध्यान धारना, मन आरोहन कीजै ॥
षट दल अट द्वादस दल निरमल, अजपा जाप जपाली ।
त्रिकुटी संगम ब्रह्म द्वार भिदि, यौं मिलिहैं बनमाली ॥
एकादस गीता स्रुति साखी, जिहि बिधि मुनि समुझाए ।
ते सँदेस श्रीमुख गोपिनि कौं, सूर सु मधुप सुनाए ॥४४६॥

देखि रे प्रगट द्वादस मीन ।
ऊधौ एक बार नँदलाल राधिका, आवत सखी सहित रस भीन ॥
गए नव कुंज, कुसुमनि के पुंज, करैं अलि गुंज, सुख हम लवलीन ।
षट उडुगन, षट मनिधरहू राजत हैं, चौबिस धातु चित्र केहि कीन ॥
षट इंदु द्वादस पतंग मनु मधुप सुनि, खग चौवन माधुरि रस पीन ।
द्वादस बिंब, सौ बानवे बज्र कन, षट दामिनि, जलजनि हँसि दीन ॥
द्वादस धनुष द्वादसै विषका मोहन मन षट चिबुक चिन्ह चित चीन ।
द्वादस ब्याल अधोमुख झूलत, मानौ कंज दल सौबीस बंसीन ॥
द्वादसै मृनाल द्वादस कदली खंभ, द्वादस दारिम सुमन प्रवीन ।
चौबिस चतुस्पद ससि सौबीस मधुकर, अंग अंग रस कंज नवीन ।
नील नीलैं मिली घटा दामिनि मनौ, सब सिंगार सोभित हरि हीन ।
फिरि फिरि चक्र गगन मैं अमी बतावत, जुवती जोग मौन कहु कीन ॥
बचन रचन रसरास नंदनदन तैं, जोग पौन हिरदै लवलीन ।
नंद जसुदा दुखित गोपी ग्वाल गोसुत, मलिन दिन ही दिन दुखीन ॥
बकी बका सकटा तृना केसी बृषभ, बिन गोपाल बैर इन कीन ।
ऊधौ परैं पाइँ सूरज प्रभु मिलाइ, आरति हरैं भईं तन छीन ॥४४७॥

मधुकर ल्याए जोग संदेसौ ।
भली स्याम कुसलात सुनाई, सुनतहिं भयौ अँदेसौ ।
आस रही जिय कबहुँ मिलन की, तुम आवत ही नासी ।
जुवतिनि कहत जटा सिर वाँधौ, तौ मिलिहैं अबिनासी ।।
तुमकौं जिन गोकुलहिं पठाए, ते बसुदेव कुमार ।
सूर स्याम हमतैं कहुँ न्यारे, होत न करत बिहार ।।४४८।।

मधुकर बादि बचन कत बोलै ।
आपुन चपल चपल कौ संगी, चपल चहूँ दिसि डोलै ।।
इन वातनि कौ कौन पत्येहै, अंतर कपट न खोलै ।
कंचन काँच कपूर कटु खरी, एकहि सँग क्यौं तोलै ।।
अब अपनी सी हमहिं सिखावत, मति भूलहु यह जोलै ।
सूर स्याम बिनु रटत बिरहिनि, बिरह दाग जनि छोलै ।।४४९।।

ऊधौ सुनत तिहारे बोल ।
ल्याए हरि कुसलात धन्य तुम, घर घर पार्‍यो गोल ।।
कहन देहु कह करै हमारौ, बरु उठि जैहै झोल ।
आवत ही याकौ पहिचान्यौ, निपटहिं ओछौ तोल ।।
जिनकैं सोच नहीं कहिबे कौ, ये बहु गुननि अमोल ।
जानी जाति सूर हम इनकी, बतचल चंचल लोल ।।४५०।।

मीठी बात हमारे आगैं, बार-बार अलि कहा सुनावहु ।
हमहिं खिझाइ आपु पति खोवत, यामैं कहौ कहा तुम पावहु ।।
कहौ न जाइ नगर नारिनि सौं, वै सुनिहैं उनकौं समुझावहु ।
ब्रजबासिनी अहीरि बिरहिनी, तिन आगै तुम काहे गावहु ।।
लोचन गए स्याम सँग ही सँग, बड़े चतुर तौ उनहिं बुलावहु ।
सूर चकोर चंद्र दरसन तजि, कैसे जियै तरनि दरसावहु ।।४५१।।

मधुकर कहा करन ब्रज आए ।
जोग ज्ञान हमकौं परमोधन, हरि तौ नहीं पठाए ।।
जिहिं मुख मुरली धरि अद्‌भुत सुर, गानू बजाइ रिझाए ।
तिहिं मुख स्याम कहैंगे ऐसे, यह तौ तुमहिं बनाए ।।
अंग अंग आभूषन अपने, कर करि हमहिं बनाए ।
सूरदास-प्रभु कैसै तुम कर, कंथा जोरि पठाए ।।४५२।।

मधुकर तू काहैं उठि धायौ ।
और बेर कबहूँ नहिं देख्यौ, हरि जासूसी आयौ ॥
हमरै कहा देखिहै रे तू, अपनौ ही मन सोधौ ।
स्याम स्याम तन सबै एक से, वै अक्रूर तुम ऊधौ ।
तू तौ बहुत पुहुप कौ लंपट, वे कुबिजा गृह-बासी ॥
ह्याँ तौ उनकौ कछू न बिगर्‌यौ, सूर सदा हिय-बासी ॥४५३॥

क्यौं अलि गवन कियौ मथुरा, तैं कहि धौं कौन विचार ।
जनियत है सोई मुख मृदु छबि, देखत नंद-कुमार ॥
सभा समिति गुन ज्ञान ध्यान मैं, नहिं ब्रज भजन प्रकार ।
यह सूच्छम पथ घोष नारि कौ, तुम सिर जदुकुल भार ॥
कहा बूझियत प्राननाथ बिनु, सोधि बचन स्रुति सार ।
सुनि-सुनि मुख झूठनि के झूठनि, पढ़त बड़ौ विस्तार ॥
इहाँ जोग अरु अगम अगोचर, सैलधरन आधार ।
सूरदास सुख कहँ लौं कहिऐ, आवै अतिथि आकार ॥४५४॥

कहा कहत रे मधु मतवारे ?
आयौ धाइ जोग उपदेसन, प्रेम भजन गहि डारे ॥
जिहिं मुख सुधा स्याम रस अँचवत, अब पीवैं जल खारे !
यह अक्रूरहु तैं अति खोटौ, डरति जु हौं अहि कारे ॥
हम जान्यौ यह स्याम सखा है, यह तौ औरै न्यारे ।
सूर कहा याके मुख लागत, कौन याहि अब गारे ॥४५५॥

ऊधौ कहा कहत बिपरीत ।
जुवतिनि जोग सिखावन आए, यह तौ उलटी रीति ॥
जोतत धेनु दुहत पय वृष कौ, करन लगे जु अनीति ।
चक्रवाक ससि कौं क्यौं जानै, रवि चकोर कहँ प्रीति ॥
पाहन तरैं सोलह सौ बूड़े, तौ हम मानैं नीति ।
सूर स्याम प्रति अँग माधुरी, रही गोपिका जीति ॥४५६॥

उत्तर कत न देत अलि नीच ?
ग्रीषम तेज सहित क्यौं बेली बढ़ी कमल-कर सींच ॥
मुरली अधर-सुधा-रस आनन, दै पोषी दिन रात ।
अब ये काम धाम-दासी के, सुरति-रीति की बात ॥

समुझी, स्याम करी स्वारथ की, रचि गुन कपटी साज ।
सूर एक राखत जो नाता, जगत कहत ब्रजराज ।।४५७।।

सुनि उत्तर किन दै रे मधुकर, बात सखी आनन की ?
निकट रहत यातैं बूझति हौं, कथा चलत कानन की ।।
कैसैं बेष रहत मन-मोहन, कौन प्रिय प्रानन की ।
को छबि निरखत बदन-कमल की, कासौं मन मानन की ।।
तुम अक्रूर, बसुदेव, देवकी, सभा भरी ज्ञानन की ।
क्यौं करि सकै बिषय-जल तीरथ, काहु चितै चानन की ।।
कहिहौं सबै प्रान नायक सौं, तुम्हरे गुन गानन की ।
सूर सुनत फीकौ भयौ जोग जु, गोपी मन ध्यानन की ।।४५८।।

मधुकर जाहि कह्यौ करि मेरौ ।
पीत बसन तन स्याम लाज करि, राखति परदा तेरौ ।।
इहि ब्रज कौं उपदेसन आयौ, कत जु रह्यौ करि डेरौ ।
इते मान ये सखी महा सठ, छाँड़ति नाहीं घेरौ ।।
ऐसी बात कहौ तुम तिनसौं, होइ जु कहिबै लायक ।
इहाँ जसोदा कुँअर हमारे, छिन-छिन प्रति सुखदायक ।।
जौ तू पुहुप पराग छाँड़ि कै, करै ग्राम बसि बास ।
तौ हम सूर यहौ करि देखैं, निमिष न छाँड़ै पास ।।४५६।।

ऊधौ हमरी सौं तुम जाहु ।
यह गोकुल पूनौ कौ चंदा, तुम ह्वै आए राहु ।।
ग्रह के ग्रसे गुसा परगास्यौ, अब लौं करि निरबाहु ।
सब रस लै नँदलाल सिधारे, तुम पठए बड़ साहु ।।
जोग बेचि के तंदुल लीजै, बीच बसेरे खाहु ।
सूरदास जबहीं उठि जैहौ, मिटिहै मन कौ दाहु ।।४६०।।

ऊधौ कहत बात ह्वै ढीठ ।
मोहन क्यौं न होइँ निरमोही, तुमसे संग बसीठ ।।
मधुबन नाम फँदा करि राख्यौ, रचे सकल ठग ईठ ।
स्रवन सुनत ऐसौ लागत है, गरल कहत ज्यौं मीठ ।।
अति सुकुमारि कूबरी रीझे, मति कोउ लावै दीठ ।
सूर स्याम यातैं नहिं आवत, समुझि दई ब्रज पीठ ।।४६१।।

ऊधौ, मौन साधि रहे।
जोग कहि पछितात मन-मन, बहुरि कछु न कहे।।
स्याम कौं यह नहीं बूझै, अतिहिं रहे खिसाइ।
कहा मैं कहि-कहि लजानौ, नार रह्यौ नवाइ।।
प्रथम हौ कहि बचन एकै, रह्यौ गुरु करि मानि।
सूर-प्रभु मोकौं पठायौ, यहै कारन जानि ।।४६२।।

कहा न कीजै अपने काजैं।
दिन दस एसैंहू करि देखौ, जौ हरि मिलै जोग के साजैं।।
माथैं जटा पहिरि उर कंथा, ल्यावहु भस्म अंग मुख माजैं।
सिंगी दंड मेखला सेली, लोचन मूँदि रहौ बिनु आँजैं।।
सनमुख ह्वै सर सहौ सयानी, नाहिंन बचत आजु के भाजैं।
जोग बिरह के बीच परम दुख, मरियत है इहिँ दुसह दुराजैं।।
ऊधौ कहैं सत्य करि मानहु, बृथा बदति सजनी बेकाजैं।
ज्यौं जमुना-जल छाँड़ि सूर-प्रभु, लीन्हे बसन तजी कुल लाजैं।४६३।

कहा मति दीन्ही हमहिं गुपाल।
आवहु री सखि सब मिलि सौधैं, जौ पावैं नँदलाल।।
घर बाहर तैं बोलि लेहु सब, जावदेक ब्रज-बाल।
कमलासन बैठहु री माई, मूँदहु नैन बिसाल।।
षटपद कही सोउ करि देखी, हाथ कछू नहिं आई।
सुन्दर स्याम कमल दल लोचन, नैंकु न देत दिखाई।।
फिरि भईं मगन बिरह सागर मैं, काहूँ सुधि न रही।
पूरन प्रेम देखि गोपिनि कौ, मधुकर, मौन गही।।
स्रवननि सुनि पुनि धुनि चातक की, प्रान पलटि तन आए।
सूर सु अबकैं टेरि पपीहा, बिरही मरत जिवाए ।।४६४।।

मधुकर भलैंहि आए बीर।
दरस दुर्लभ सुलभ पाए, जानिहौ पर पीर।।
कहत बचन बिचार बिनु बहु, सोधिहौ मन माहिं।
प्रानपति की प्रीति उधौ, है कि हमसौं नाहिं।।
कौन तुमसौं कहै मधुकर, कहत जोग जु नाहिं।
प्रीति की कछु रीति न्यारी, जानिहौ मन माहिं।।
नैन नींद न परै निसी-दिन, बिरह दाढ़ी देह।

कठिन निरदै नंद कैं सुत, जोरि तोर्‌यौ नेह ।।
कौन तुमसौं कहै मधुकर, गुप्त प्रगटित बात ।
सूर के प्रभु क्यौं बनै, जौ करै अबला घात ।।४६५।

मधुकर भली करी तुम आए ।
वै बातैं कहि कहि या दुख मैं, ब्रज के लोग हँसाए ।।
मोर मुकुट मुरली पीतांबर, पठबहु सौंज हमारो ।
आपुन जटाजूट, मुद्रा धरि, लीजै भस्म अधारी ।।
कौन काज बृन्दावन कौ सुख, दही भात की छाक ।
अब वै स्याम कूबरी दोऊ, बनैं एक ही ताक ।।
वै प्रभु बड़े सखा तुम उनके, जिनकैं सुगम अनीति ।
या जमुना जल कौ सुभाव यह, सूर बिरह की प्रीति ।।४६६।।

ऐसे मधुप की बलि जाउँ ।
मधुबन की बातै कहीं, लै लै हरि नाउँ ।।
जाकौ रूप सब्द नीकौ, प्रिय के गुन गावै ।
जद्यपि यह प्रेम-हीन, बहुरौ समुझावै ।।
स्रवन कथा हित हमारैं, सुनि सुनि नित जीजै ।
सूरज प्रभु आवैंगे, इन जान न दीजै ।।४६७।।

ऊधौ ते कत चतुर कहावत ।
जे नहिं जानैं पीर पराई, ह्वै सरबज्ञ जनावत ।।
जो पै मीन नीर तैं बिछुरैं, को करि जतन जिवावत ।
प्यासे प्रान जात जल बिनु, तिहिं सुधा-समुद्र बतावत ।।
हम बिरहिनी स्याम सुन्दर की, तुम निरगुनहिँ गहावत ।
जोग भोग, रस रोग, सोग सुख, जाने जगत सुनावत ।।
ये दृग मधुप सुमन सब परिहरि, कमल-बदन रस भावत ।
सोवत जागत सुपन रैन-दिन, वह मूरति मन ध्यावत ।।
कहि कहि कपट सँदेसनि मधुकर, कत बकवाद बढ़ावत ।
कूर कुटिल कपटी चित अंतर, सूरदास कवि गावत ।।४६८।।

मधुकर समुझायौ सौ बेरनि ।
अहौ मधुप निसि-दिन मरियत है, कान्ह कुँवर औसेरनि ।।
चित चुभि रही मनोहर मूरति, चपस दृगनि की हेरनि ।

तन मन लियौ चुराइ हमारौ, वा मुरली की टेरनि ।।
बिसरति नाहिं सुभग भुज सोभा, पीतांबर की फेरनि ।
कहत न बनै कान्ह कामरि छबि, बन गैयनि की घेरनि ।।
तुम प्रवीन ह्वै हमहिं बतावत, आँखि मूँदि भट भेरनि ।
नंदकुमार छाँड़ि को लैहै, जोग दुखनि का घेरनि ।।
जहाँ न परम उदार नंद-सुत, मुकुति परौ किन झेरनि ।
सूर रसिक बिनु क्यौं जीजतु है, निरगुन कठिन करेरनि ।।४६९।।

काहे कौं रोकत मारग सूधौ ।
सुनहु मधुप निरगुन कंटक तैं, राजपंथ क्यौं रूँधौ ।।
कै तुम सिखि पठए हौ कुबिजा, कह्यौ स्यामघनहूँ धौ ।
वेद पुरान सुमृति सब ढूँढ़ौ, जुवतिनि जोग कहूँ धौ ।।
ताकौ कहा परेखौ कीजै, जानै छाँछ न दूधौ ।
सूर मूर अक्रूर गयौ ले, व्याज निबेरत ऊधौ ।।४७०।।

तुम तौ अपनै ही मुख झूठे ।
निरगुन छबि हरि बिनु क्यौं पावै, ज्यौं आँगुरी अँगूठे ।।
निकट रहत पुनि दूरि बतावत, हौ रस माहँ अपूठे ।
द्वै तरंग द्वै नाव पाँव धरि, ते कहि कौन न मूठे ।।
हमकौं मिले बरष द्वादस, दिन चारिक तुमसौं तूठे ।
सूर आपने प्राननि खेलैं, ऊधौ खेलैं रूठै ।।४७१।।

ऊधौ बूझति हैं अनुमान ।
देखियत नाहिं जतन जीबे कौ, इतहि बिरह उत ज्ञान ।।
इतहिं चंद चंदन समीर मिलि, लागत अनल निधान ।
उत निरगुन अवलोकन मन कौ, कठिन निरोधन प्रान ।।
इत भूषन भय करत अँग कौ, सब निसि जागि बिहान ।
उत कहुँ सुन्न समाधि कछू नहिं, गूढ़ जोग कौ ज्ञान ।।
दुसह दुराज नृपति बड़े दोऊ, दुख कौं उभै समान ।
को राखै सूरज इहिं अवसर, कमलनयन बिनु आन ।।४७२।।

मधुकर राखि जोग की बात ।
कहि कहि कथा स्याम सुंदर की, सीतल करि सब गात ।।
जे निरगुन गुन-हीन गनैगो, सुनि सुंदरि अकुलात ।

दीरघ नदी नाव कागर की, किहिँ देख्यौ चढ़ि जात ।।
हम तन हेरि चितैं आपनौ पट, देखि पसारहि लात ।
सूरदास बास बन बसि कै, कैसैं कल्प बिहात ।।४७३।।

जोग सौं कौनैं हरि पाए ।
निज आज्ञा तप कियौ बिधाता, कब रस रास खिलाए ।।
जोग-जुगुति संकर आराधी, परम तत्त्व लव लाए ।
भुज धरि ग्रीव कबहिँ नँद-नंदन, हिलि-मिलि कल सुर गाए ।।
बृकदालब्य महारिषि कबहूँ, तृन छाया न कराए ।
बरषत दुखित जानि नँद-नंदन, कब गिरिवर कर छाए ।।
अति तप पुंज बिप्र दुर्बासा, दुर्बा तृन नित खाए ।
चक्र सुदर्सन तपत महामिनु, कब सुख अनल समाए ।।
बहु तप कियौ मारकंडे द्विज, आइ सिंधु भरमाए ।
सप्त कल्प बीते कब कहि हरि, बरुन पास मुकराए ।।
भक्त-बिरह-कातर करुनामय, बेद निरंतर गाए ।
को है जोग सुनत ह्याँ ऊधौ, सूर, स्याम मन भाए ।।४७४।।

हमरैं कौन जोग बिधि साधै ।
बटुआ, झोरी, दंड, अधारी, इतननि को आराधै ।।
जाकौ कहूँ थाह नहिं पैयै, अगम अधार अगाधै ।
गिरिधर लाल छबीले मुख पर, इते बाँध को बाधै ।।
सुनु मधुकर जिनि सरबस चाख्यौ, क्यौं सचु पावत आधै ।
सूरदास मानिक परिहरि कै, छार गाँठि को बाँधै ।।४७५।।

जिहि तन गोकुलनाथ भज्यौ ।
ऊधौ हरि बिछुरत तैं बिरहिनि, सो तन तबहिं तज्यौ ।।
अब या औरै सृष्टि बिरह की, बकत बाइ बौरानी ।
तिनसौं उत्तर कहा देत हौ, तुम तौ पूरन ज्ञानी ।।
जब स्यंदन चढ़ि गमन कियौ हरि, फिरि चितयौ गोपाल ।
तबहीं परम कृतज्ञ प्रान संग, उठि लागे तिहिँ काल ।।
अब औसान घटत कहि कैसैं, उपजी मन परतीति ।
सूरदास कछु कहत न आवै, कठिन बिरह की रीति ।।४७६

(मधुप) बार बार काहे कौं, और कथा कहत ।
प्रभु की परतीति गएँ, नाहिंन कछु रहत ।।

पवन, तेज अरु आकास, पृथ्वी अरु पान्यौ ।
तामैं तैं नंद-नंदन, कहाँ घालि सान्यौ ।।
कमल-नयन स्याम सुंदर कौनैं नहिं भावै ।
ताकौं तू गुप्त करै, आनै कछु गावै ।।
सूर नंद-सुत दयाल, लीला-बपु-धारी ।
निरगुन तैं सगुन भए, संतन हितकारी ।।४७७।।

कहिऐ तासौं होइ बिवेकी ।
एतौ अलि उनही के सँगी, अपनी गौं के टेकी ।।
ऐसी को ठाली बैठी हैं, तुमसौं मूड़ झुरावै ।
झूठी बात तुसी-सी बिन कन, फटकत हाथ न आवै ।।
ऐसी बात कहौ तुम उनसौं, जो नहिं जानै बूझैं ।
सूरदास-प्रभु नंद-नंदन बिनु, देखैं और न सूझैं ।।४७८।।

ऊधौ निरगुनहिं कहत तुमहीं सो लेहु ।
सगुन मूरति नंद-नँदन, हमहिँ आनि देहु ।
अगम पंथ परम कठिन, गौन तहाँ नाहिँ ।
सनकादिक भूलि फिरे, अबला कहँ जाहिँ ।।
पंच तत्व प्रकृति परे, अपर कैसैं जानी ।
मन बच अरु कर्म रहित, बेदहु की बानी ।।
कहिऐ जो निबहे की, अकथ न कहुँ सोही ।
सूर स्याम मुख सुचंद, जुवती नलिनि मोही ।।४७९।।

ऊधौ सूधैं नैंकु निहारौ ।
हम अबलनि कौ सिखवत आए, सुन्यौ सयान तिहारौ ।
निरगुन कहौ कहा कहियत है, तुम निरगुन अति भारी ।
सेवत सुलभ स्याम सुंदर कौं, मुक्ति लही हम चारी ।।
हम सालोक्य, सरूप, सायुज्यौं, रहतिँ समीप सदाई ।
सो तजि कहत और की औरै, तुम अलि बड़े अदाई ।।
हम मूरख तुम बड़े चतुर हौ, बहुत कहा अब कहिऐ ।
बे ही काज फिरत भटकत कत, अब मारग निज गहिये ।।
तुम अज्ञान कतहिँ उपदेसत, ज्ञान रूप हमहीं ।
निसि दिन ध्यान सूर प्रभु कौ अलि, देखत जित तितहीं ।।४८०।।

ऊधौ कोउ नाहिंन अधिकारी ।
लै न जाहु यह जोग आपनौ, कत तुम होत दुखारी ।।
यह तौ बेद उपनिषद मत है, महा पुरुष व्रतधारी ।
हम अबला अहीरि ब्रज-वासिनि, नाहीं परत सँभारी ।।
को है सुनत कहत हौ कासौं, कौन कथा बिस्तारी ।
सूर स्याम कैं संग गयौ मन, अहि काँचुली उतारी ।।४८१।।

ऊधौ राखियै यह बात ।
कहत हौं अनगढ़ी अनहद, सुनत ही चपि जात ।।
जोग अलि कुषमांड जैसौ, आज मुख न समात ।
वार-बार न भाषियै, कोउ अमृत तजि विष खाय ?
नैंन प्यासे रूप-जल के, दिएँ नाहिँ अघात ।
सूर-प्रभु यन हर्‌यौ जब लगि, नाहिँ तन कुसलात ।।४८२।।

ऊधौ औरै कथा कहौ ।
तजिऐ ज्ञान सुनत तावत तन, बरु गहि मौन रहौ ।।
रुचि द्रुम प्रीति-रीति नैननि जल, सींचि ध्यान झर लागी ।
ताकैं प्रेम फल सुक मन लावत, स्याम सुरँग अनुरागी ।।
ग्रीषम अलि आए उपजी ब्रज, कठिन जोग रबि हेरौ ।
वन मुरझात सूर को राखै, मेह नेह बिनु तेरौ ।।४८३।।

कै तुमसौं छूटै लरि ऊधौ, कै रहियै गहि मौन ।
इक हम जरीं, जरे पर जारत, बोलि बिगूचै कौन ।।
एकै अँग मिले दोउ कारे, कावौ मन पतिआइ ।
तुमसी होइ सो तुमसौं बौलै, लैहै जोगहिँ आइ ।।
जा काहू कौं जोग चाहिए, सो लै भस्म लगावै ।
जिहिँ उर ध्यान नंदनंदन कौ, तिहिं क्यौं निरगुन भावै ।।
कहौ सँदेस सूर के प्रभु कौ, यह निरगुन अँधियारौ ।
अपनौ बोयौ आप लुनौ तुम, आपै ही निरवारौ ।।४८४।।

कहा रस बरियाई की प्रीति ।
जौ न गड़े उर अंतर ऊधौ, भुस पर की सी भीति ।।
नैन बैन अरु हृदय मिलत तन, बाढ़त प्रेम प्रतीति ।
ए दोउ हँस होत जब सन्मुख, लेत मनहिँ मन जीति ।।

ऊधौ यहै सँदेसौ कहियौ, मधुबन कैसी रीति ।
सूरदास सोई जन जानै, गई जिनहिँ मैं बीति ।।४८५।।

जो पै यहै प्रेम की बात ।
तौ ऊधौ तुम निकट रहत कत, निरखि साँवरौ गात ।।
बात कहत भरि लेत नैन-जल, सुरति करत अकुलात ।
जौ घट-घट हरि रहत निरंतर, कतहिँ मधुपुरी जात ।।
सगुन प्रीति ऐसी प्रतिपालत, दुखित होत अति गात ।
तुम निरगुन सौं प्रीति करत नित, सूर समुझि पछितात ।।४८६।।

मधुकर जनि मधुबन तन देखौ ।
कछुक दिवस औरौ ब्रज बसिकै, जनम सुफल करि लेखौ ।
कहा जाइ लैहौ ह्याँ, जामैं राज काज की बात ।
बाल कुमार किसोर निरखि ह्याँ, घर-घर माखन खात ।।
तुम निरगुन नित कहत निरंतर, निगम बखानत नीति ।
प्रकट रूप-मद-मत्त नैन क्यौं, छाँड़ैं दरसन प्रीति ।
सिब बिरंचि सनकादिक मुनि जन, सुनियत जाकौ ध्यावत ।
सूर सोइ प्रभु ग्वाल-सुतनि सँग, गोधन वृंद चरावत ।।४८७।।

ऊधौ लहनौ अपनौ पैयै ।
सोइ होइ जो रच्यौ बिधाता, और और न दोष लगैयै ।।
कीजै कहा कहत नहिँ आवै, सोचि हृदै पछितैयै ।
मोहन सौं वर कुबिजा पायौ, हमकौं जोग बतैयै ।।
आज्ञा होइ सोइ पै कीजै, बिनती यहै सुनैयै ।
सूरदास-प्रभु तृषा बड़ी अति, दरसन-सुधा पियैयै ।।४८८।।

ऊधौ धनि तुम्हारौ ब्यौहार ।
धनि वै ठाकुर धनि तुम सेवक, धनि हम बर्तनहार ।।
काटहु अंब बबूर लगावहु, चंदन की करि बारि ।
हमकौं जोग भोग कुबिजा कौ, ऐसी समुझ तुम्हारि ।।
तुम हरि पढ़े चातुरी बिद्या, निपट कपट चटसार ।
पकरौ साह चोर कौ छाँड़ो, चुगलनि कौ इतबार ।।
समुझि न परै तिहारी मधुकर, हम ब्रज नारि गँवार ।
सूरदास ऐसी क्यौं निबहै, अंध धुंध सरकार ।।४८९।।

(ऊधौ) खरी जरी हरि-सूलनि की।
कुंज कलोल किए बन ही, सुधि बिसरी उन फूलनि की ।।
तब हौं आनि अंक भरि लीन्ही, देखि छाँहँ नव मूलनि की ।।
अब वह प्रीति कहाँ लौं वरनौं, वा जमुना-जल कूलनि की ।।
वह छवि छाके हैं अति लोचन, बाहैं गहि-गहि झूलनि की ।
खरकति है वह सूर हिये में, माल दई मोहिं फूलनि की ।।४६०।।

हरि बिनु इहिं विधि है ब्रज रहियतु ।
पर पीरहि तुम जानत ऊधौ, तातैं तुमसौं कहियतु ।
चंदन चंद-किरनि पावक सम, इन मिलि कै तन दहियतु ।
रजनी जाति गनत ही तारे, जतन नहीं निरबहियत ।।
बासर हू या बिरह-सिंधु कौ, क्यौंहू पार न लहियत ।
फिरि-फिरि वहै अवधि अवलंबन, बूड़त ज्यौं तृन गहियत ।।
एक जु हरि दरसन की आस, ता लगि यह दुख सहियत ।
मन क्रम बचन सपथ सुनि सूरज, और नहीं कछु चहियत ।।४६१।।

हरि बिनु एसी बिधि ब्रज जीजै ।
कज्जल बरषि-बरषि उर ऊपर, सारँग-रिपु जल भीजे ।।
तारापति-अरि के सिर ठाढ़ी, निमिष चैन नहिं कीजै ।
बायस-अजा सव्द की मिलवनि, याही दुख तन छीजै ।।
चौथै चंद जात गोपिनि कौं, मधुप राखि जस लीजै ।
सूरदास प्रभु वेगि कृपा करि, प्रगट दरस हम दीजै ।।४६२।।

हमारे जीवन-धन कृष्ण मुकुंद ।
परम उदार कृपानिधि कोमल, पूरन परमानंद ।।
निठुर बचन सुनि फटत हियौ यह, रहि रे अलि मति मंद ।
ब्रज-जुवतिनि कौं सुगत जनावत, जोग जुगुति दुख दंद ।।
यह तौ जाइ उनहिं उपदेसहु, सनकादिक स्वच्छंद ।
बारक हम दरस दिखरावहु, सूर स्याम नँदनंद ।।४६३।।

वै बातैं जमुना तीर की ।
कबहुँ सुरति करत हैं मधुकर, हरन हमारे चीर की ।।
लीन्हे बसन देखि ऊँचे द्रुम, रबकि चढ़न बलबीर की ।
देखि-देखि सब सखी पुकारतिं, अधिक जुड़ाई नीर की ।।

दोऊ हाथ जोरि करि माँगैं, ध्वाई नंद अहीर की ।
सूरदास-प्रभु सब सुख-दाता, जानत हैं पर पीर की ।।४६४।।

अब हरि क्यौं बसैं, गोकुल गवईं ।
बसत नगर नागर लोगनि मैं, नइ पहिचानि भई ।।
इक हरि चतुर हुते पहिलैं हीं, अब उन गुरु सिखई ।
हम सब गर्व गँवारि जानि जड़ , अधपर छाँड़ि दई ।।
ऊधौ मुख जोवत कुबिजा कौ, हम सब बिसरि गईं ।
याहि तैं चतुर सुजान सूर-प्रभु, ग्वाली सँग न लई ।।४६५।।

प्रेम न रुकत हमारे बूतैं ।
किहिं गयंद बाँध्यौ सुनि मधुकर, पदुम नाल के काँचे सूतैं ?
सोवत मनसिज आनि जगायौ, पठै सँदेस स्याम के दूतैं ।
बिरह-समुद्र सुखाइ कौन बिधि, रंचक जोग अगिनि के लूतैं ।।
सुफलक सुत अरु तुम दोऊ मिलि, लीजै मुकुति हमारे हूतैं ।
चाहति मिलन सूर के प्रभु कौं, क्यौं पतियाहिं तुम्हारे धूतैं ।।४६६।।

यह कछु नाहिं नेह नयौ ।
मधुप माधौ सौं जु इहिं ब्रज, बिधि तैं प्रथम भयौ ।।
बीज मन, माली मदन, उर आलबाल बयौ ।
प्रेम-पय सींच्यौ अहर-निसि, सुभ जवारि जयौं ।।
इते स्रम तन स्यामसुंदर, बिमल बृच्छ बढ़्यौ ।
मुरलि मुख छवि पत्र साखा, दृग द्विरेफ चढ़्यौ ।।
कमल तजि तन रुचत नाहीं, आक कौ आमोद ।
सूर जोग न बचन परसहि, बिनु गुपाल बिनोद ।।४६७।।

ऊधौ अब हम समुझि भई ।
नंदनँदन के अंग-अंग- प्रति, उपमा न्याय दई ।।
कुंतल कुटिल भँवर भामिनि वर, मालति भुरै लई ।
तजत न गहरु कियौ तिन कपटी, जाती निरस भई ।।
आनन इंदु बिमुख संपुट तजि, करषे तैं न नई ।
निर्मोही नव नेह कुमुदिनी, अंतहु हेम हई ।।
तन-घन-सजल सेइ निसि-वासर, रटि रसना छिजई ।
सुर बिवेक-हीन चातक मुख, बूदौ तौ न स्रई ।।४६८।।

ऐसौ एक कोद कौ हेत ।
जैसैं बसन कुसुम रँग मिलि कै, नैंकु चटक पुनि सेत ।।
जैसैं करनि किसान बापुरो, नव नव बाहैं देत ।
एतेहूँ पर नीर निठुर भयौ, उमँगि आपु ही लेत ।।
सब गोपी पूछहिं ऊधौ सौं, सुनियौ बात सचेत ।
सूरदास-प्रभु जन तैं बिछुरे, ज्यौं कृत राई रेत ।।४९९।।

मुख देखे की कौन मिताई ।
जैसैं कृपनहिं दान माँगनौ, लालच लीन्हे करत बड़ाई ।।
प्रीतम सो जो रहै एक रस, निसि बासर बढ़ि प्रेम सवाई ।
चित मैं और कपट अंतरगति, ज्यौं फल खीर नीर चिकनाई ।।
तब वह करी नंदनंदन अलि, बन बोली रस-रास खिलाई ।
अब यह केतिक दूरि मधुपुरी, ज्यौं उड़ि मधुप बेलि तजि जाई ।।
जोग सिखाए क्यौं मन मानै, क्यौं जु ओस कन प्यास बुझाई ।
सूरदास उदास भईं हम, पाषँड प्रीति उघरि सब आई ।।५००।।

मधुकर मन, सुनि जोग डरै ।
तुमहूँ चतुर कहावत अतिषौं, इतौ न समुझि परै ।।
औरौ सुमन अनेक सुगंधित, सीतल रुचि जु करै ।
क्यौं तुमकौं अलि बिना सरोजहिं, उर अंतर न अरै ।।
दिनकर महा प्रताप पुंज बल, सबकौ तेज हरै ।
क्यौं न चकोर छाँड़ि मृग-अंकहिं, वाकौ ध्यान धरै ।।
उलटौइ ज्ञान सकल उपदेसत, सुनि-सुनि हृदै जरै ।
जंबू बृच्छ कहौ क्यौं लंपट, फल बर अंब करै ।।
मुक्ता अबधि तराल प्रान मम, जौ लगि ताहि चरै ।
निघटैं निपट सूर ज्यौं जल बिनु, ब्याकुल मीन मरै ।।५०१।।

ऊधौ सुनहुँ नैकु जो बात ।
अबलनि कौं तुम जोग सिखावत, कहत नहीं पछितात ।।
ज्यौं ससि बिना मलीन कुमुदिनी, रबि बिनुहीं जलजात ।
त्यौं हम कमलनैन बिनु देखे, तलफि-तलफि मुरझात ।।
जिन स्रवननि मुरलि सुर अँचयौ, मुद्रा सुनत डरात ।
जिन अधरनि अमृत-फल चाख्यौ, ते क्यौं कटु फल खात ।।

कुंकुम चंदन घसि तन लावतिं, तिहिं न बिभूति सुहात ।
सूरदास प्रभु बिनु हम यौं हैं, ज्यौं तरु जीरन पात ।।५०२।।

ऊधौ जोग जोगहिं देहु ।
हम अबुधि कह जोग जानैं, सपथ हमसौं लेहु ।।
चंद उदय चकोर चाहै, मोर चाहै मेहु ।
हमहुँ चाहैं मदन मूरति, स्याम संग सनेहु ।।
दंड मुद्रा भसम कंथा, को करे बन गेहु ।
लाइ चंदन अगर केसर, क्यौं चढ़ावैं खेहु ।।
स्याम गात सरोज आनन, करत पावक येहु ।
सूर अब तौ दरस दुर्लभ, रह्यौ बचन सनेहु ।।५०३।।

ऊधौ जोग जोग हम नाहीं ।
अबला सार-ज्ञान कह जानैं, कैसैं ध्यान धराहीं ।।
तेई मूँदन नैन कहत हौ, हरि मूरति जिन माहीं ।
ऐसी कथा कपट की मधुकर, हमतैं सुनी न जाहीं ।।
स्रवन चीरि सिर जटा बँधावहु, ये दुख कौन समाहीं ।
चंदन तजि अंग भस्म बतावत, बिहर-अनल अति दाहीं ।।
जोगी भ्रमत जाहि लगि भूले, सो तौ है अप माहीं ।
सूर स्याम तैं न्यारी न पल-छिन, ज्यौं घट तैं परछाहीं ।।५०४।।

ऊधौ कहि बातयै सोहती ।
जाहि ज्ञान सिखावन तुम आए, सो कहि ब्रज मैं को हती ।।
अंतहुँ सिख तुम सुनहू हमारी, कहियत बात बिचारि ।
फुरत न बचन कछु कहिवे कौं, रहे सोचि पचि हारि ।।
देखियत हौ करुना की मूरति, सुनियत हौ पर पीरक ।
सोइ करौ ज्यौं मिटै हृदै कौ दाहु, परै उर सीरक ।।
राजपंथ तैं टारि बतावत, ऊजर कुचल कुपैंड़ौ ।
सूरदास सो समाइ कहाँ लौं, छेरी बदन कुम्हैड़ो ।।५०५।।

मधुकर निरगुन ज्ञान तिहारौ ।
तीच्छन तेज तपस्या यामैं, कापै जात जु धारौ ।।
हम अबला मति की सब भोरी, सहज गुपाल उपासी ।
मन रमि रही मनोहर मूरति, को सुमरै अविनासी ।।

मन मैं मोहन रूप बिराजत, हृदय मनोहर मूरति ।
न्यारी होति न चित तैं कबहूँ। छिन पल घरी महूरति ।।
अंग-अंग छबि बसी साँवरी, खाली ठौर न कोऊ ।
जौ कहुँ ठौर जोग कौ होतौ, लै धरतीं हम सोऊ ।।
खेलत सौंह करी नँदनंदन, हमसौं कछु न दुरायौ ।
निसि दिन रह्यौ समीप हमारैं, जोग मत्र कहँ पायौ ।
रस की रीति साँवरौ बूझै, बिरह जोग नहिं जानै ।
परमारथ की बात सुनै नहि, छुवत प्रेम की खानै ।।
उन पापी हमहीं कौ पठयौ, अनत नहीं सुख बाँटौ ।
सूरदास प्रभु सीख बतावैं, सहद लाइ कै चाटौ ।।५०६।।

हम तौ नंद-घोष के बासी ।
नाम गुपाल जाति कुल गोपक, गोप गुपाल उपासी ।।
गिरिवर धारी गोधन चारी, वृंदावन अभिलाषी ।
राजा नंद जसोदा रानी, सजल नदी जमुना-सी ।।
मीत हमारे परम मनोहर, कमलनैन सुख-रासी ।
सूरदास-प्रभु कहौं कहाँ लौं, अष्ट महा-सिधि दासी ।।५०७।।

यह गोकुल गोपाल-उपासी ।
जे गाहक निरगुन के ऊधौ, ते सब बसत ईस-पुर कासी ।।
जद्यपि हरि हम तजी अनाथ करि, तदपि रहति चरननि रस-रासी ।
अपनी सीतलता नहिं छाँड़त, जद्यपि बिधु भयौ राहु-गरासी ।।
किहिं अपराध जोग लिखि पठवत, प्रेम भगति तैं करत उदासी ।
सूरदास ऐसी को बिरहिनि, माँगि मुक्ति छाँड़ै गुन-रासी ।।५०८।।

ब्रज जन सकल स्याम ब्रत-धारी ।
विना गुपाल और जिहिं भावै, तिहिं कहियै व्यभिचारी ।।
जोग मोट सिर बोझ आनि तुम, कत धौं घोष उतारी ।
इतनिक दूरि जाहु चलि कासी, जहाँ बिकति है प्यारी ।।
यह संदेस सुनै को मधुकर, प्रीति अनन्य हमारी ।
जो रस-रीति करी हरि हमसौं, सो क्यौं जाति बिसारी ।।
महा मुक्ति कोऊ नहिं बूझै, जदपि पदारथ चारी ।
सूरदास स्वामी मनमोहन मूरति की बलिहारी ।।५०९।।

ऊधौ अब कोउ कछू कहौं ।
जैसैं होइ सु होइ सबै किन, हरि की प्रीति रहौ ।।
जप तप संजम नेम धरम की, नदिया जाइ बहौ ।
जोग जुगुति किहिं काज हमारैं, आपुहिं लै निबहौ ।।
इक हम जरतिं बिरह की जारी, तुम कत दहन दहौ ।
सूरदास-प्रभु नैंकु मिलावहु, जग मैं सुजस लहौ ।।५१०।।

कह लै कीजै बहुत बड़ाई ।
अति अगाध स्रुति बचन अगोचर, मनसा तहाँ न जाई ।।
जाकैं रूप न रेख बरन बपु, संग न सखा सहाई ।
ता निरगुन सौ नेह निरंतर, क्यौं निवहै री माई ।।
जल बिनु तरँग चित्र बिनु भीतिहिं, बिनु चेतहिं चतुराई ।
अब या ब्रज मैं नई रीति, इन ऊधौ आनि चलाई ।।
मन हरि लियौ माधुरी मूरति, रोम-रोम अरुझाई ।
स्याम सुभग तन सुंदर लोचन, सूर निरखि बलि जाई ।।५११।।

ऊधौ कछुक समुझि परी ।
तुम जु हमकौं जोग ल्याये, भली करनी करी ।।
इक बिरह जरि रहीं हरि कैं, सुनत अतिहिं जरीं ।
जाहु, जनि अब लोन लावहु, देखि तुमहिं डरीं ।।
जोग पाती दई तुमकौं, बड़े चतुर हरी ।
आनि आस निरास कीन्हो, सूर सुनि हहरी ।।५१२।।

कहत अलि तेरैं मुख बातौ ।
कमल नैन की कपट कहानी, सुनत भयौ तन तातौ ।।
कत ब्रजराज काज गोकुल के,सबै किए गहि नातौ ।
तब नहिं निमिष वियोग सहत उर, करत काम नहिं हातौ ।।
मधुबन जाइ कान्ह कुबिजा सँग, मतिं भूली सुधि सातौ ।
ज्यौं गज जूथ नैंकु नहि बिछुरत, सूर मदन मदमातौ ।।५१३।।

दिन-दिन तोरन लागे नातौ ।
मधुबन बसि गोपाल पियारे, प्रेम कियौ हठि हातौ ।।
सीतलता उर कहूँ न दीसति, सब ब्रज लागत तातौ ।

नंदलाल गोकुल आवन की, चालत नाहिन बातौ ।।
पहिली प्रीति कितै गइ सजनी, मन न रहत बहरातौ ।
सूरदास प्रभु के बिछुरे तैं, भूलि गईं सुधि सातौ ।।५१४।।

मधुकर सुनि मोहन कौ नातौ ।
राखि समीप सदा सुख दीन्हौ, अब हमसौं कियौ हातौ ।।
ज्यौं चातक व्रत नेम धारि कै, जल बरषत रहै प्यासौ ।
जाइ नहीं सर दूजे क्यौं हूँ, स्वाति बूँद की आसौ ।।
ज्यौं पतंग तन-मन-धन अरपै, प्रेम सहित मरि जानै ।
नैंकु न प्रीति धरै चित अंतर, दीपक दया न आनै ।।
जासौं हित ताकी गति ऐसी, यह अँदेस मन माहीं ।
सूरदास हरि प्रान हमारे, हरि री हम कछु नाहीं ।।५१५।।

तुम अलि कमलनैन के साथी ।
देखत भले, काज औसर होत धूम के हाथी ।
सुंदर स्याम गंड मदऽलंकृत, श्रम-जल-कन छबि छाजै ।
जोग ज्ञान दोउ दसन भोग रद, करिनी कुंभ बिराजै ।।
जब सिसु हते कुमार असुर हति, यातैं प्रीतम जानें ।
अब भए जाइ बिबस दासी के, ब्रज तैं प्रगट परानें ।।
करि कै कपट तुच्छविद्या बस, भग्न करत अँग भट ज्यौं ।
सूर अवधि पढ़ि मंत्र सजीवन, मारि जियावत नट ज्यौं ।।५१६।।

ऐसौ सुनियत द्वै बैसाख ।
देखति नहीं ब्यौंत जीवे कौ, जतन करौ कोउ लाख ।।
मृगमद मलय कपूर कुमकुमा, केसर मलियै साख ।
जरत अगिनि मैं ज्यौं घृत नायौ, तन जरि ह्वै है राख ।।
ता ऊपर लिखि जोग पठावत, खाहु नीम, तजि दाख ।
सूरदास ऊधौ की बतियाँ, सब उड़ि बैठीं ताख ।।५१७।।

जानी ऊधौ की चतुराइ ।
बार बार तुम कहत अध्यातम, पावत कौन बड़ाई ।।
जौ तुम कहत अगाध अगोचर, हरि रस तज्यौ न जाई ।
क तुम कहत उक्ति अपनी तैं, कै तुम कहत कहाई ।।

बाहर भीर ध्यान सगुन बिनु, सुनियत दूरि भलाई।
सूरदास-प्रभु बिरह जरी हैं, बिनु पावक दव लाई ॥५१८॥

जानी ऊधौ की चतुराई।
ब्रजमंडल की दसा देखि कै, कथा न वै बिसराई ॥
परम प्रिया हथ देखन पठए, कहि गति जोग बनाई।
इनकौ आन भाव बिछुरन कौ, लै बातनि हम लाई ॥
कहा कह्यौ हरि, कहा सुनौ इन, कह लीला मुख गाई।
जद्यपि बिबुध बड़े जदुकुल के, नैंकु न बड़ी बड़ाई ॥
गुन महिमंत सदा श्रीपति के, मुक्ति पुरी अत्रगाई।
नहिं देखी ब्रज बन की लीला, सूर स्याम लरिकाई ॥५१९॥

मधुकर बात तिहारी जानी।
पालागौं मुख मौन गहौ अब, कटुक लगति है बानी ॥
जो पै स्याम रहत घट, तौ कत विरह विथा न परानी।
झूठी बातनि क्यौं मन मानत, चलमति अलप गियानी ॥
जोग जुगुति की नीति अगम, हम ब्रजवासिनि कह जानैं।
सिखवहु जाइ जहाँ नटनागर, रहत प्रेम लपटाने ॥
दासी घेरि रहे हरि तुम ह्याँ, गढ़ि-गढ़ि कहत बनाई।
निपट निलज्ज अजहुँ न चलत उठि, कहत सूर समुझाई ॥५२०॥

ऊधौ जानि पर्‌यौ सयान।
नारियनि कौं जोग लाए, भले जान सुजान ॥
निगम नहिं जिहिं पार पायौ, कहत सोई ज्ञान।
नैन त्रिकुटी जोरि संगम, जिहिं करत अनुमान ॥
पवन धरि रवि तन निहारत, मनहिं राखत मारि।
सूर सो मन हाथ नाहीं, गयौ संग विसारि ॥५२१॥

इहिं बिधि पावस सदा हमारैं।
पूरब पवन स्वास उर ऊरध, आनि मिले इकठारैं ॥
बादर स्याम सेत नैननि मैं, बरषि आँसु जल ढारैं।
अरुन प्रकास पलक दुति दामिनि, गरजनि नाम पियारैं ॥
चातक दादुर मोर प्रकट ब्रज, बसत निरंतर धारैं।
ऊधव ये तब तैं अटके ब्रज, स्याम ररे हित टारैं ॥

कहिए काहि सुनै कत कोऊ, या ब्रज के ब्यौहारैं।
तुमही सौं कहि-कहि पछितानी, सुर बिरह के धारैं ।।५२२।।

जौ पै कोउ मधुबन लौं जाइ।
पतिया लिखी स्याम सुंदर कौं, कंकन देहौ ताइ
नैन-नीर सारँग रिपु भींजत, जुग सम रैनि बिहाइ।
अब यह भवन भयौ पावक सम, हरि बिनु मोहिं न सुहाइ ।।
पछिली प्रीति कहा भइ ऊधौ, मिलते बेनु बजाइ।
सुरदास-प्रभु प्रान गए तैं, कहा करौगे आइ ।।५२३।।

वै गोपाल कहाँ गए, मेरे मन के चोर।
जौ कोउ उनसौं सुधि कहै, देऊँ प्रान अकोर ।।
छिन आँगन छिन भवन मैं, छिन मीड़ौं हौं हाथ।
बिरह बिथा तन अधिक है, मोहीं कछु न सुहात ।।
वेइ द्रुम बेली वेइ लता, वैई हैं सब अंग।
एक लाल गिरिधर बिना, फीके भए सब रंग ।।
वास गई, सोभा गई, अरु कुम्हिलाने फूल।
सूरदास प्रभु तुम बिना, उकठे सब जर मूल ।।५२४।।

तुम जु दयाल दयानिधि कहियत, जानत हौ पर-पीर।
बिछुरे प्रान-नाथ ब्रज ऐहैं, कित हम कित जदुबीर ।।
मत अपजस आनौ सिर अपने, कठिन मदन की पीर।
सूरदास प्रभु मिलन कहत है, रबि तनया के तीर ।।५२५।।

ऊधौ कोकिल कूजत कानन।
तुम हमकौं उपदेस करत हौ, भस्म लगावत आनन ।।
औरौ सिखौ सखा सँग लै लै, टेरत चढ़े पखानन।
बहुरौ आइ पपीहा कैं मिस, मदन हनत निज बानन ।।
हमतौ निपट अहीरि बावरी, जोग दीजिऐ जानन।
कहा कथत मासी के आगैं, जानत नानी नानन ।।
तुम तौ हमैं सिखावन आए, जोग होइ निरवानन।
सूर मुक्ति कैसैं पूजति है, वा मुरली के तानन ।।५२६।।

ऊधौ हरि के औरै ढंग ।
जहं न अनँग-रस रूप नेह कौ, तहँ दइ गति जु अनंग ।।
जो अनंग बपु, असुर दासिका, सो भइ नूतन अंग ।
आपु विषमता तजि दोउ सम, बानक ललित त्रिभंग ।।
मनौ मरीचि देखि तन भूल्यौ, भू पथ सुरभि कुरंग ।
तजि कुसुमाकर कंकट बन भ्रमि, नहिं कीन्हौ भ्रूभंग ।।
कनक बेलि सत दल सिर मंडित, दृढ़ तर लता लवँग ।
स्यामा-सदन बिसारि भजे पुर, चंचल नारि पलंग ।।
ते सुख बहुत बहुत पावैंगे, जे करिहँ अँग संग ।
काके होहिँ जो नहिं गोकुल के, सूरज-प्रभु श्रीरंग ।।५२७।।

ऊधौ हम दोउ कठिन परीं ।
जौ जीवैं तौ मुनि जड़ ज्ञानी, तन तजि रूप हरी ।।
गुन गावैं तौ सुक सनकादिक, लीला धाइ फिरि ।
आसा अवधि बिचारि रहैं तौ, धरम न ब्रज सुँदरी ।।
सखी मंडली सब जु सयानी, बिरहा प्रेम भरि ।
सोक सिंधु तरिवे कौं नौका, जे मुख मुरलि-धरी ।।
निसि बासर अति रहत निरंकुस, मातौ मदन करी ।
ढाहैगौ सब धाम सूर जो, चितै न हरि केसरी ।।५२८।।

उधौ बात सुनौ इक नैसी ।
प्रेम-बान की चोट कठिन है, लगी होइ कहौ कत ऐसी ।।
तुमकौं खोरि कहा कहि दीजै, आनि कहत हौ बातैं जैसी ।
जानै कहा बाँझ ब्यावर दुख, जातक जनै न पीर है कैसी ।।
हम बावर आनि बौरावत, कहत न तुम्हैं बूझियै ऐसी ।
सूरजदास न्याइ कुबिजा कौ, सरबस लेइ हमारौ वैसी ।।५२९।।

जाकैं लागी रोइ सु जानै ।
हौं कासौं समुझाइ कहति हौं, मधुकर लोग सयाने ।।
बन कुसुमावलि देखि बसत हौ, नित्य सदा रस-भोगी ।
भली बुरी कछु समुझत नाहीं, अनदेखे के जोगी ।।
बूझौ जाइ जिनहिं तुम पठए, को यह पीर सँहारी ।
कीजै कहा होइ जौ ऐसी, चंद चकोरहिं जारी ।।

तुम बड़े लोग बड़े के संगी, भाग बड़े गृह आए।
कीज कृपा दास सूरज कौं, जौ जदुनाथ पठाए ।।५३०।।

जासौं लगन लगी होइ।
कठिन पीर सरीर ब्यापै, जानिहै पै सोइ ।।
विरह बाइ बबूर बिरवा, गए हैं हरि बोइ।
उठत अँग अनंग चिनगी, दृगनि सींचौ रोइ ।।
मधुप हरि सौं जाइ कहियौ, मति बिसारैं मौंइ।
सूर जैसें मीन जल विनु, गति हमारी सोइ ।।५३१।।

ऊधौ उदित भए दुख तरनि।
ब्रज-बेली सब सूखन लागौं, बात कही नँद-घरनि ।।
कुमुद-बदन कुम्हिलात सबनि के, गइयनि छाँड़ी चरनि।
सुख संपति बिति गई सबनि की, अँखियनि लागी झरनि ।।
देखैं चारु चंद मुख सीतल, बिन क्यौं मिटिहै जरनि।
सुत सनेह सूरज-प्रभु जसुमति, परति जु फिरि-फिरि धरनि ।।५३२।

(ऊधौ) पूछति हैं ते बावरी।
गोकुल तज्यौ कूबरी कारन, नेह न होत जोरावरी ।।
जैसी वैयै तौसोइ लुनियै, काहैं करत दुरावरी।
ज्यों गजराज काज के औसर, औरै दसन दिखावरी ।।
वै तौ कुविजा असुर की दासी, हम जु सुहागलि रावरी।
सूरदास प्रभु पारस परसैं, लोहौ कनक बराबरी ।।५३३।।

हरि जु सुनियत मधुबन छाए।
संग लिऐं कुबिजा दुलहिनि कौं, करत फिरत मन भाए ।।
भोग भुगति दासी कौं दीन्हौ, अरु सृंगार सुहाए।
हमकौं जोग जगुति लिखि मोहन, मधुकर हाथ पठाए ।।
कहा करैं कित जाहिं सखी री, प्रीतम भए पराए।
सूर निठुर निरमोही कहा कियौ, फिरि नहिं गोकुल पाए ।।५३४।।

मधुकर देखौ दीन दसा।
इती बात तुमसौं कहियत है, जौ तुम स्याम सखा ।।
जे कारे ते सबै कुटिल हैं, मृतकनि के जो हता।

तुम बिरहिनी-बिरह दुख जानत, कहियौ गूढ़ कथा ।।
मन बस भयौ स्रवन सुनि मुरली, कुंज निकुंज बसा ।
अब तौ एक न भए सूर-प्रभु घर बन लोग हँसा ।।५३५।।

जैसौ कियौ तुम्हारैं प्रभु अलि, तैसौ भयौ ततकाल ।
ग्रंथित सूत धरत तिहिं ग्रीवा, जिहिं धरते बनमाल ।।
टेर तेत श्रीदामा द्रुम चढ़ि, सरस बचन गोपाल ।
ते अब स्रवन अक्रूर प्रमुख सब, कहत कंस-कुल-साल ।।
कोमल नील कुटिल अलकाबलि, रेखा राजति भाल ।
तहँ अब लगत धूम बेदी कौ, पूजा भस्म कपाल ।।
जहँ मनि काँकर सुधा, सरस-जल, सत-दल कमल बिसाल ।
ऐसे सर लागैं सुनि सूरज, फंदा न्याइ मराल ।।५३६।।

बिरचि मन बहुरि राँचौ आइ
टूटी जुरै बहुत जतननि करि, तऊ दोष नहिं जाइ ।।
कपट हेत को प्रीति निरंतर, नाथि चुषाई गाइ ।
दूध फाटि जैसैं ह्वै काँजी, कौन स्वाद करि खाइ ।।
केरा पास जु बैरि निरंतर, हालत दुख दै जाइ ।
स्वाति बूँद ज्यौं परै फनिक-मुख, परत बिषै ह्वै जाइ ।।
एती केती तुम जो उनकी, कहत बनाइ बनाइ ।
सूरदास दिगँबरपुर तैं, रजक कहा ब्यौसाइ ।।५३७।।

ऊधौ तुम हौ अति बड़ भागी ।
अपरस रहत सनेह तगादैं, नाहिन मन अनुरागी ।।
पुरइनि पात रहत जल भीतर, ता रस देह न दागी ।
ज्यौं जल माहँ तेल की गागरि, बूँद न ताकौं लागी ।।
प्रीति नदी मैं पाऊँ न बोर्‌यौ, दृष्टि न रूप परागी ।
सूरदास अबला हम भोरी, गुर चाँटी ज्यौं पागी ।।५३८ ।

हमतैं हरि कबहूँ न उदास ।
रास खिलाइ पिलाइ अधर रस, क्यौं बिसरत ब्रज बास ।।
तुमसौं प्रेम कथा कौ कहिबौ, मनौ काटिबौ घास ।
बहिरौ तान-स्वाद कह जनै, गूँगौ बात मिठास ।।
सुनि री सखी बहुरि हरि ऐहैं, वह सुख वहै बिलास ।
सूरदास ऊधौ अब हमकौं, भए तेरहौं मास ।।५३९।।

तेरौ बुरौ न कोऊ भानै ।
रस की वात मधुप नीरस सुनि, रसिक होइ सो जानै ।।
दादुर वसै निकट कमलनि के, जनम न रस पहिचानै ।
अलि अनुराग उड़त मन वाँध्यौ, घैर सुनत नहि कानै ।।
सरिता चली मिलन सागर कौं, कूल सबै द्रुम भानै ।
कायर बकै लोह तैं भागै, लरै सो सूर बखानै ।।५४०।।

हम सब जानति हरि की घातैं ।
तुम जु कहत वै राज करत नहिं, जनता हौ कछु कातैं ।।
मारे कंस सुरनि सुख दीन्हौ, असुर जरे सिर-पा तैं ।
उग्रसेन बैठारि सिंहासन, लोग कहत कुल नातैं ।।
तप तैं राज, राज तैं आगे, तुम सब समुझत बातैं ।
सूर स्याम इहिं भाँति सयाने, हमसौं मिलवत सातैं ।।५४१।।

जान्यौ नंद-सुवन कौ हेत ।
राजनीति की रीति सुनौ हो चरत बारि चर खेत ।।
जिनके संग बिहार किए, ते जोग सँदुसौं देत ।
इन वातनि सोई पे भूले, जाके मन नहिँ चेत ।।
रीझे कंस-दासी पर, सुधि ब्रज-बधू न लेत ।
सूरदास मनि-भूषन ऊपर, संख धरत हैं सेत ।।५४२।।

ऊधौ है तू हरि के हित कौ ।
हम निरगुन तबही तैं जान्यौ, गुन मेट्यौ जब पितु कौ ।।
समुझहु नैकु स्रवन दै सुनियै, प्रगट बखानौ नित कौ ।
कूप रतन-घट कहि क्यौं निकसै, बिनु गुन बहुतै बित कौ ।।
पूरनता तौ तबहीं बूड़ीं, संग गए लै चित कौ ।
हम तौं खिझहिं सूर मुनि षट्पद, लोग बटाऊ हित कौ ।।५४३।।

मधुकर अनरुचि कैसे गावै ।
चौपद होइ ताहि समुझैये, षटपद को समुझावै ।।
मुख औरै अंतरगति औरै, औरै ज्ञान दृढ़ावै ।
दारु काटि अलि सदन संचरे, सतपत्रहिं न सतावै ।
ल्याये जोग बेँचिवे करना, ब्रज मैं नाहिं बिकावै ।
सूरदास ऐसौ को गाहक, लै सिवपुरी पठावै ।।५४४।।

आयौ घोष बड़ौ ब्यौपारी ।
खेप लानि गुरु ज्ञान जोग की, ब्रज मैं आनि उतारी ।।
फाटक दै कै हाटक माँगत, भोरौ निपट सुधारी ।
धुरही तैं खोटौ खायौ है, लिये फिरत सिर भारी ।
इनकैं कहे कौन डहकावे, ऐसी कौन अनारी ।
अपनौ दूध छाँड़ि को पीवै, खारे कूप कौ बारी ।।
ऊधौ जाहु सावरैं ह्याँ तैं, बेगि गहरु जनि लावहु ।
मुख मागौ पैहौ सूरज-प्रभु, साहुहिं आनि दिखावहु ।।५४५।।

ऊधौ जोग कहा है कीजतु ।
ओढ़ियत है कि बिछैयत है, किधौं खैयत है किधौं पीजत ।।
कीधौं कछू खिलौना सुन्दर, की कछु भूषन नीकौ ।
हमरे नंद-नँदन जो चहियतु, मोहन जीवन जो कौ ।।
तुम जु कहत हरि निगुन निरंतर, निगम नेति हैं रीति ।
प्रगट रूप की रासि मनोहर, क्यौं छाँड़े परतीति ।।
गाइ चरावत गए घोष तैं, अबहीं हैं फिरि आवत ।
सोई सूर सहाइ हमारे, बेनु रसाल बजावत ।।५४६।।

ऊधौ जान्यौ ज्ञान तिहारौ ।
जानै कहा राज-गति लीला, अंत अहीर बिचारौ ।।
भली भई हम सबै अयानी, स्यानी सौं मन मान्यौ ।
लाज लए प्रभु आवत नाहीं, ह्वै जु रहे खिसियानौ ।।
लै आवौ हम कछू न कैहैं, मिलिहैं प्रान पियारे ।
ब्याहौ बीस धरौ दस कुबिजा अंतहुँ स्याम हमारे ।।
सुनि री सखी कछू नहिं कहियै, माधौ आवन दीजै ।
सूरदास-प्रभु आन मिलैं जौ, हाँसी करि करि लीजै ।।५४७।।

मधुकर तुम हौ स्याम सखाई ।
पा लागौं यह दोष बकसियौ, सनमुख करति ढिठाई ।।
कौनैं रंक सम्पदा बिलसी, सोवत सपनैं पाई ।
किहिं सोने की उड़त चिरैया, डोरा बाँधि उड़ाई ।।
धाम धुवाँ के कहौ कौन के, कौनैं धाम उठाई ।
किहिं अकास तैं तोरि तरैया, आनि धरे धरनाई ।।
ओलनि की माला कर अपनैं, कौनैं गूँथि बनाई ।

किहिँ कागद की तरनी कीन्ही, कौन तरयौ सर जाई ।।
कौनैं अबला नैन मूँदि कै, जोग समाधि लगाई ।
इहिँ उर आन रूप देखन की, आगि उठि अनखाई ।।
सुनि ऊधौ तुम फिरि-फिरि गावत, यामैं कौन बड़ाई ।
सूरदास-प्रभु ब्रज जुवतिनि कौ, प्रेम कह्यौ नहिँ जाई ।।५४८।।

मधुकर पीत बदन किहिं हेत ।
जनियत है मुख पांहु रोग भयौ, जुवतिनि कौं दुख देत ।।
रस-मय तन मन स्याम राम कौ, जो उचरै संकेत ।
कमल नयन के बचन सुधा-सम, करन घूँट भरि लेत ।।
कुत्सित कटु बायक सायक से, को बोलत रस-खेत ।
इनहिं चातुरी लोग बापुरे, कहत धरम की सेत ।।
माथे परौ जोग पथ ताकैं, वक्ता छपद समेत ।
लोचन ललित कटाच्छ मोच्छ बिनु महिमा जिऐं निकेत ।।
मनसा बाचा और कर्मना, स्याम सुंदर सौं हेत ।
सूरदास मन की सब जानत, हमरे मनहिं जितेत ।।५४९।।

मन की मनही माँझ रही ।
कहिए जाइ कौन पै ऊधौ, नाहीं परत कही ।।
अवधि अधार आस आवन की, तन मन बिथा सही ।
अब इन जोग संदेसनि सुनि-सुनि, बिरहिनि बिरह दही ।।
चाहति हुतीं गुहारि जितहि तैं, उत तैं धार बही ।
सूरदास अब धीर धरहिं क्यौं, मरजादा न लही ।।५५०।।

तुमहिं दोष नहिं हम अति बौरी । रूप निरखि दृग लागे ठौरी ।।
चित चुराइ लियौ मूरति सो री । सुभग कलेवर कुंकुम खौरी ।
गुंज माल उर पीत पिछौरी । गहत सोइ जु समात अँकौरी ।।
सूर स्याम सौं कहि इक ठौरी । यह उपदेस सुनैं ते औरी ।।५५१।।

स्याम तुम ठग सौं प्रीति करी ।
काटे नाक पिछौरे पोंछत, तातैं सब सुधरी ।।
ह्याँ ऊधौ काहे कौं आए, कौन सी अटक परी ।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु, सब पाती उबरी ।।५५२।।

ऊधौ नूतन राज भयौ।
नए गुपाल नई कुबिजा बनी, नूतन नेह ठयौ।।
नए सखा जोरे जादव-कुल, अरि नृप कंस हयौ।
नूतन नारि नए पुर कीन्हौ, तिन अपनाइ लयौ।।
बिसरे रास बिलास कुंज सब, अपनी जाति गयौ।
सूरदास प्रभु बहुत बटोरी, दिन-दिन होत नयौ।।५५३।।

अब तुम कापर कपट बनावत।
नाहिंन कंस कान्ह नहिं गोकुल, को पठवत, कहँ आवत।।
जिन मोहन बंशी बारिज कर, सुख तन सींचि वढ़ायौ।
सो पुनि ऊधौ कर कारन क्यौं, जोग कुठार पठायौ।।
यह इतनौ मानुष हूँ जानै, जिनकै है मति थोरी।
धोखें ही बिरवा लगाइ कै, काटत नाहिं वहोरी।।
वै प्रवीन अति नागर ऊधौ, जानि परस्पर प्रेम।
कैसे कैं पठवत वै आवत, टारन कौ हित नेम।।
स्वर्गहुँ गए कंस अपराधी, पर्‍यौ हमारैं खोज।
दृष्टि टारि, ध्यानहुँ तैं टारत, वाउ सर्वनि कौ चोज।।
विद्यमान आए जे छल करि, तिन अपनौ फल पायौ।
ह्याँ हैं हृदै सूर के स्वामी, बनत न स्वाँग वनायौ।।५५४।।

अपने स्वारथ के सब कोउ।
चुप रहौ मधुप रस-लंपट, तुम देखे अरु ओऊ।।
जो कछु कह्यौ कह्यौ चाहत हौ, कहि निरवारौ सोऊ।
अब मेरैं मन ऐसियै षटपद, होनी होउ सु होऊ।।
तब कत रास रच्यौ बृंदावन, जौ पै ज्ञान हुतोऊ।
लीन्हे जोग फिरत जुवतिनि मैं, बड़े सुपत तुम दोऊ।।
छुटि गयौ मान परेखौ रे अलि, हृदै हुतौ वह जोऊ।
सूरदास-प्रभु गोकुल बिसरयौ, चित चितामनि खोऊ।।५५५।।

कहत कत परदेसी की वात।
मंदिर अरध अवधि वदि हमसौं, हरि अहार चलि जात।।
ससि रिपु बरष, सूर रिपु जुग बर, हर-रिपु कीन्हौ घात।
मघ पंचक लै गयौ साँवरौ, तातैं अति अकुलात।।

नखत, वेद, ग्रह, जोरि अर्ध करि, सोइ बनत अब खात ।
सूरदास बस भईं बिरह के, कर मोंजैं पछितात ।।५५६।।

ऊधौ जानी न हरि यह बात ।
बैठै रथ ऊपर चढ़ि भोरहिं, हँसत मधुपुरी जात ।।
सुफलक-सुत मिलि ठग ठान्यौ है, साधु वेष मन घात ।
जेते बड़े धरम-धुज मानी, संग प्रेम-पथ पात ।।
जदुकुल मैं दोउ संत सबै कहै, तिनके ये उतपात ।
एकनि हरे प्रान गोकुल के, अपर जौग कुसलात ।।
जद्यपि सूर प्रताप स्याम कौ, दानव दुष्ट दुरात ।
तद्यपि भवन-भाव नहिं ब्रज बिनु, खोजौं दीपैं सात ।।५५७।।

हम अलि कैसे कै पतियाहि ।
बचन तुम्हारे हृदै न आवत, क्यौं करि धीर धराहिं ।।
वपु आकार बेष नहिं जाकैं, कौन ठौर मन लागैं ।
क्यौं करि रहै कंठ मैं मनियाँ, बिना पिरोये धागै ।।
तुमही कहत आहि वह निरगुन, कहा सरै तिहिं काज ।
सूरजदास सगुन मिलि मोहन रोम-रोम सुख राज ।।५५८।।

मधुकर जानत है सब कोऊ ।
जैसे तुम अरु सखा तुम्हारे, गुननि आगरे दोऊ ।।
सुफलक-सुत कारे नख-सिख, तैं कारे तुम अरु ओऊ ।
सरबस रहत करत अपने सुख, कोउ कितौ गुन होऊ ।।
प्रेम कृपन थोरे बित बपुरौ, उबरत नाहीं सोऊ ।
सूर सनेह करै जो तुमसौं, सो पुनि आपु बिगोऊ ।।५५९।।

मधुकर कहियत चतुर सयाने ।
तैसे तुम तैसेइ वै ठाकुर, एकहि मोल बिकाने ।।
पहिली प्रीति पिवाइ सुधा रस पाछैं, जोग बखाने ।
ज्यौं ठग मीठी कहि संतोषत, फिर प्राननि गहकानै ।।
एक समय पंकज-रस बस ह्वै, दिनकर अस्त न जानै ।
यह गति भइ सूर ह्याँ हरि बिनु, हाथ मींजि पछितानै ।।५६०।।

मधुकर तुम रस लंपट लोग ।
कमल कोष बस रहत निरंतर, हमहिं सिखावत जोग ।।

अपनैं काज फिरत बन अंतर, निमिष नहीं अकुलात ।
पुहुप गऐं बहुरौ बल्लिन के, नैंकु निकट नहिं जात ।।
तुम चंचल वै चोर सकल अँग, बातनि को पतियात ।
सूर बिधाता दोउ रचे हैं, मधुप स्याम इक गात ।।५६१।।

मधुकर मीत नहीं संसार ।
जहँ जाकौ सुख लौस बढ़त है, तहँ ताकौ अनुसार ।।
तौ लौ निपट रहत अंबुज पर, हिमकर जनित तुषार ।
नैंसुक प्रभा प्रगट दिनकर की, तच्छन तजत बिहार ।।
मृदुल मल्लिका ऐसी सुनि अलि, कुसुम करत जिहिं भार ।
तिहिं मर्दन करि गंध लेत पुनि, सदन रचत टकसार ।।
नाना स्वाद करत नित भोजन, एकहिं दिवस अबार ।
तच्छन हस्त चरन गति सिथिलित, पंथ न पैंड़ पसार ।।
बिषयी भजत त्रिया अँग जबहीं, तब त्यागत उर हार ।
भोर भऐं निकसत अंतर करि, गिरि सरिता प्राकार ।।
कहि धौं कौन हेत हरि गोकुल, प्रगट कियौ अवतार ।
किनकैं हेत लई कर मुरली, अंग रूप सत-मार ।।
सूर स्याम ऐसी न बूझियै, जहँ नित अटल बिहार ।
बिरद घटत किहि कौ तुम देख्यौ, यह कछु करौ बिचार ।।५६२।।

मधुप रावरी यह पहिचानि ।
बास रस लै अनत बैठत, पुहुप की तजि कानि ।।
बाटिका बहु बिपिन जाकैं, एक वै कुम्हिलानि ।
तहाँ अगनित पुहुप फूले, कौन ताकैं हानि ।।
काम पावक जरत छाती, लौन लायौ आनि ।
जोग पाती हाथ दीन्ही, बिष लगायौ सानि ।।
सीस की मनि हरि जिनकी, कौन तिनकी बानि ।
निठुर ह्वै तुम सूर के प्रभु, ब्रज तज्यौ या जानि ।।५६३।।

को कहै हरि सौं बात हमारी ।
यह तौ हम तब तैं जिय जानी, जब तैं भए मधुप अधिकारी ।।
एक प्रकृति एकै कैतव गति, तिहि गुन ऐसी नहिँ जिय भावै ।
प्रगटे नित नव कंज मनोहर, ब्रज की सरक करन कित आवै ।।

जो नित-नव बेली-रस चाखत, अरु जाकी सब तैं गति न्यारी ।
ता अलि की संगति बसि मधुपुरि, सूरदास प्रभु सुरति बिसारी ।।५६४।।

ऊधौ तुम अति चतुर सुजान ।
जे पहिलैं मन रँग, अब न चढ़ै रँग आन ।।
ए दोऊ लोचन बिराट के, स्रुति कहैं एक समान ।
भेद चकोर कियौ ताहू मैं, बिधु प्रीतम रिपु भान ।।
बिरहिनि बिरह भजै पा लागौं, तुम हौ पूरन ज्ञान ।
दादुर जल बिनु जियै पवन भखि, मौन तजै हठि प्रान ।।
बरिज बदन नैन मेरे षट्पद, कब करिहैं मधुपान ।
सूरदास गोपिन परतिज्ञा, छुवहिं न जोग बिरान ।।५६५।।

ऊधौ बिरहौ प्रेम करे ।
ज्यौं विनु पुट पट गहत न रंग कौं, रंग न रसै परै ।।
ज्यौं घर दहै बी अंकुर गिरि, तौ सत फरनि फरै ।
ज्यौं घट अनल दहत तन अपनौ, पुनि पय अमी भरै ।।
ज्यौं रन सूर सहै सर सन्मुख, तौ रवि रथहुँ अरै ।
सूर गुपाल प्रेम-पथ चलि करि, क्यौं दुख-सुखनि डरै ।।५६६।।

मधुकर प्रीति किये पछितानी ।
हम जानी ऐसैंहि निवहैगी, उन कछु औरै ठानी ।।
वा मोहन कौं कौन पतीजै, बोलत मधुरी बानी ।
हमकौं लिखि जोग पठावत, आपु करत रजधानी ।
सूनी सेज सुहाइ न हरि बिनु, जागत रैनि बिहानी ।
जब तैं गवन कियौ मधुबन कौं, नैननि बरषत पानी ।।
कहियौ जाइ स्याम-सुन्दर कौं, अंतरगत की जानी ।
सूरदास प्रभु मिलि कै बिछुरे, तातैं भई दिवानी ।।५६७।।

हमारैं हरि हारिल लकरी ।
मनक्रम बचन नंद-नँदन उर, यह दृढ़ करि पकरी ।।
जगत सोवत स्वप्न दिवस-निसि, कान्ह-कान्ह जकरी ।
सुनत जोग लागत है ऐसो, ज्यौं करुई ककरी ।।
सु तौ ब्याधि हमकौं लै आए देखी सुनी न करी ।
यह तौ सूर नितहिं लै सौंपौ, जिनके मन चकरी ।।५६८।।

वात हमारी मानौ जौ तौ ।
आवन कह्यौ हुतौ हम जीवतिं, तातैं उनहीं कौ तौ ।।
एक बोल के लीन्हे अपनी खोई देही देवति ।
तातैं खरी मरतिं इहिँ ठाहर, वाही बचनहिँ सेवति ।।
इतनी कह्यौ करौ, धरि राखौ जोग आपने घर कौ ।
पैंज खैंचि मेटन आए हौ, तनक उजारौ खर कौ ।।
नंद-नँदन लै गए हमारी सब ब्रज-कुल की ऊब ।
सूर स्याम तजि और न सूझैं, ज्यौं खेरे की दूब ।।५६९।।

स्याम मुख खैं ही परतीति ।
जौ तुम कोटि जतन करि सिखवहु, जोग ध्यान की रीति ।।
नाहिंन कछू सयान ज्ञान मैं, यह हम कैसैं मानैं ।
कहौ कहा गहियै अनभव कौं, कैसैं उर मैं आनैं ।।
यह मन एक, एक वह मूरति, भृंगी कीट समानैं ।
सूर सपथ दै पूछौ ऊधौ, इहिं ब्रज लोग सयानैं ।।५७०।।

हरि हैं राजनीति पढ़ि आए ।
समुझी वात कहत मधुकर के, समाचार सब पाए ।।
इक अति चतुर हुते पहिलैं ही, अब गुरु ग्रंथ पढ़ाए ।
बढ़ी बुद्धि जानी जो उनकी, जोग संदेस पठाए ।।
ऊधौ भले लोग आगे कं परहित डोलत धाए ।
अब अपने मन फेर पाइहैं, चलत जु हुते चुराए ।।
ते क्यौं अनीति करैं आपुन, जे और अनीति छुड़ाए ।
राज धरम तौ यहै सूर, जो प्रजा न जाहिं सताए ।।५७१।।

अब हरि भलैं जाइ पढ़ि आए
अबलनि हूँ कौ जोग सिखाबन, तुम से गुनी पठाए ।।
जौ पै ऊधौ यही बतावत, रस मैं काहे न गाए ।
करी करतूति कहत नहिं आवै जोग नीति लै आए ।।
वै अक्रूर वेइ हरि ऊधौ, आन्यौ जोगहिं बाँचैं ।
हम तौ सूर तबहिं सचु पावैं, जौ फिरि गोकुल नाचैं ।।५७२।।

बारक मिलत कहा है होत ।
एते मान कहा उहिं कुबिजा, पाए हैं परि पोत ।।
इतनिक दूर भए कछु औरै, बिसर्‌यौ गोकुल गोत ।

कैसैं जियहि बदन बिनु देखे, बिरहिनि बिरह-निसोत ।।
आए जोग देन अबलनि कौं, सुरभि कंध बृष जोत ।
सूरदास-प्रभु तौ पै जीवहिं, देखहिं मुख उद्योत ।।५७३।।

बारक कान्ह करौ किन फेरौ ?
दरसन दै मधुबनहिं सिधारौ, मेरे लेखे सुख इतनौ बहुतेरौ ।।
भलेहिं मिले बसुदेव, देवकी, जननि जनक निज कुटुंब घनेरौ ।
किहिं अवलबि रहैं हम ऊधौ, देखि दुःख नंद जसुमति केरौ ।।
तुम बिन को अनाथ प्रति पालक, जाजरि नाव कुसंग सम्हेरौ ।
गए सिंधु को पार उतारै अब यह, सूर थक्यौ ब्रज बेरौ ।।५७४।।

कहा होत जो हरि हित चित धरि, एक बार ब्रज आवते ।
तरसत ब्रज के लोग दरस कौं, निरखि निरखि सुख पावते ।।
मुरली सब्द सुनावत सबहिनि, हरते तन की पीर ।
मधुरे वचन बोलि अमृत मुख, बिरहिनि देते धीर ।।
सब मिलि जग जस गावत उनकौ, हरष मानि उर आनत ।
नासत चिंता ब्रज बनितनि की, जनम सुफल करि जानत ।।
दुरी दुरा कौ खेल न कोऊ खेलत है ब्रज महियाँ ।
बाल दसा लपटाइ गहत हे, हँसि-हँसि हमरी बहियाँ ।।
हम दासी बिनु मोल की उनकी, हमहिं जु चित्त बिसारी ।
इत तैं उन हरि रमि रहे अब तौ, कुबिजा भई पियारी ।।
हिय मैं बातैं समुझि-समुझि कै, लोचन भरि-भरि आए ।
सूर सनेही स्याम प्रीति के, ते अब भए पराए ।।५७५।।

मधुकर नाहिन काज सँदेसौ ।
इहिं ब्रज कौनैं जोग लिख्यौ है, कोटि जतन उपदेसौ ।।
रवि के उदय मिलन चकई कौ, ससि कैं समै अंदेसौ ।
चातक क्यौं बन बसत बापुरौ, बधिकहिं काज बधे सौं ।।
नगर आहि नागर बिनु सूनौ, कौन जु काज बसे सौं ।
नगर आहि नागर बिनु सून, कौन जु काज बसे सौं ।
सूर सुभाव मिटै क्यौं कारैं, फनिकहिं काज डसे सौं ।।५७६।।

ऊधौ जोग जानै कौन ।
हम जुवति कह जोगं जानैं, जियत जाकौ रौन ।।

जोग हम पै होइ न आवै, धरि न आवै मौन ।
बाँधिहैं क्यौं मन पखेरू, साधिहैं क्यौं पौन ।।
पहिरि अंबर पाट के मृग-छाल ओढ़ै कौन ।
गुरु हमारे केबरी कर, मंत्र माला जौन ।
तदन-मोहन बिनु हमारैं, परै बातनि कौन ।
सूर-प्रभु कब आइहैं वे, स्याम दुख के दौन ।।५७७।।

ऊधौ हम वह कैसे मानैं ।
धूत धौल लंपट जैसे हरि, तैसे औरनि जानैं ।।
सुनत सँदेस अधिक तन कंपत, जनु कोउ उर तहँ आनै ।
जैसैं बधिक गवहिं तैं खेलत, अंत धनुहियाँ तानै ।।
निरगुन बचन कहहु जनि हमसौं, ऐसी करत न कानैं ।
सूरदास-प्रभु की हौं जानौं, कछू कहै कछु ठानैं ।।५७८।।

ऊधौ अब कछु कही न जाइ ।
रानी भई कूबरी दासी, कापै बरनी जाइ ।।
जोइ जोइ मंत्र कहत कुबिजा है, सोइ सोइ लिखत बनाइ ।
अंत अहीर प्रीति दासी सौं, मिटत न सहज सुभाइ ।।
छुटत नहीं गुन औगुन जाकौ, काहूँ जतन बनाइ ।।
सूर स्वभाव तजै नहिं कारौ, कीजै कोटि उपाइ ।।५७९।।

(ऊधौ) हरि हीं पै ऐसी बनि आवत ।
हम तौ भोग जनम नहिं जानतिं, तापर जोग सिखावत ।।
जौ पै कृपा तजी मन माहीं, मुख कहि कहा जनावत ।।
पावक बचन संदेस सुनत, उर सुलगि-सुलगि दब लावत ।।
रीझे तौ कुबिजा सी दासी, आपुहिं आपु हँसावत ।
परिमिति जानी सूर रावरी, तजि अमृत बिष भावत ।।५८०।।

बदले कौ बदलौ लै जाहु ।
उनकी एक हमारी द्वै, तुम बड़े जनैया आहु ।।
तुम अलि जानि हमहिं अति भोरी, सारौ चाहत दाउँ ।
अपनी बेर मुकर ह्वै भागत, हिये चौगुनो चाव ।।
अब तुम साखि बदौं तहँ जैयै, मेटौ उर कौ दाहु ।
सूरदास ब्यौहार निवेरहु, हम तुम दोऊ साहु ।।५८१।।

ऊधौ इहिं ब्रज बिरह बढ़्यौ।
घर-बाहर, सरिता, बन, उपवन देखहु द्रुमनि चढ़्यौ।।
दिन अरु रैन, सधूम भयानक, दिसि-दिसि तिमिर मढ़्यौ।
दुंद करत अति प्रबल होत पुर-पंथहुँ अनल दढ़्यौ।।
जरि नहिं भईं भस्म ताही छिन, जौ हरि नाम रढ़्यौ।
सूरदास-प्रभु नंद-नँदन बिनु नहिंन जात कढ़्यौ।।५८२।।

ऊधौ जौ तुम बात कही।
ताकौ कछू न उत्तर आवै, समुझि बिचारि रही।।
पा लागौं तुमहीं बूझति हौं, तुम पर बुधि उमही।
कैसैं सीतल होइँ पवन जल पियैं, बियोग दहीं।।
कुबिजा सौं पढ़ि तुमहिं पठाए, नागर नवल लहीं।
अब जोई पद देहिं कृपा करि, सोइ हम करैं सही।।
बिछुरत बिरह अगिनि नाहीं जरि, नैननि जल निबहीं।
अब सुनि सूल सहति सब सूरज, कुल मरजाद ढहीं।।५८३।।

मेरे लेखैं मधुवन वसत उजारि।
अपने कुल की कानि करति हौं, कासौं कहौं पुकारि।।
सहज भाव बूझहिं सब गोपी, क्यौं जीवहिं ब्रज-नारि।
आपुन जाइ मधुपुरी बैठे, हमैं चले जिय मारि।।
जोग जुगुति हमकौं लिखि पठयौ, मुद्रा भस्म अधारि।
सूरदास प्रभु कब धौं मिलौगे, लै गए प्रीति निवारि।।५८४।।

गयौ मिटि पतियाहू ब्यौहार।
मधुबन बसि मधु-रिपु सुनि मधुकर, छाँड़े ब्रज आभार।।
धरनीधर गिरिधर कर-धरि कै, मुरलीधर सुख सार।
अब लिखि जोग संदेसौ पठवत, ब्यापक अगम अपार।।
हाँसी अरु दुख सुनहु सखी सुठि, स्रवन दसा संचार।
सूर प्रान तन तजत न यातैं, सुमिरि अवधि आधार।।५८५।।

काहैं करति हौ संदेह।
ऊधौ के संदेसनि छाती होन चहत है बेह।।
जिनकैं बिरह रैनि औ वासर, बन समान भयौ गेहु।
तिन गुपाल कौं निकट बतावत, खोजि हृदैं मैं लेहु।।

जींवत रही आजु लौं सोचनि, अचरज मानहु एहु ।
रोकैं हियौ जु सूर पुरातन, कान्ह कुँवर कौ नेहु ।।५८६।।

ऊधौ हरि यह कहा बिचारी ।
सदा समीप रहत बृंदावन, करत बिहार बिहारी ।।
अब तौ रंग रँगे कुबिजा के, बिसरि गईं ब्रजनारी ।
कछु इक मंत्र कियौ उन दासी, तिहिं बिनोद अधिकारी ।।
दिन दस और रहौ तुम ब्रज मैं, देखौ दसा बिचारी ।
प्रान रहत हैं आसा लागे, कब आवैं गिरधारी ।।
तुम जो कहत जोग है नीकौ, कहौ कौन बिधि कीजै ।
हम तन ध्यान नंदनंदन कौ, निरखि-निरखि सो जीजै ।।
सुन्दर स्याम कंठ बैजंती, माथैं मुकुट बिरजै ।
कमलनैन मकराकृत कुंडल, देखत ही भव भाजै ।।
तातैं जोग न मन मैं आवै, तू नीके करि राखि ।
सूरदास स्वामी के आगैं, निगम पुकारत साखि ।।५८७।।

मधुकर आपुन होंहि बिराने ।
बाहर हेत हितू कहवावत, भीतर काज सयाने ।।
ज्यौं सुक पिंजर माहिं उचारत, ज्यौं ज्यौं कहत बखाने ।
छटत हीं उड़ि मिलै अपुन कुल, प्रीति न पल ठहराने ।।
जद्यपि मन नहिं तजत मनोहर, तद्यपि कपटी जाने ।
सूरदास-प्रभु कौन काज कौं, माखी मधु लपटाने ।।५८८।।

हरि तैं भलौ सुपति सीता कौ ।
जाकैं बिरह जतन ए कीन्हे, सिंधु कियौ बीता कौ ।।
लंका जारि सकल रिपु मारे, देख्यौ मुख पुनि ताकौ ।
दूत हाथ उन लिखि जु पठायौ, ज्ञान कह्यौ गीता कौ।।
तिनकौ कहा परेखौ कीजै, कुबिजा के मीता कौ ।
चढे सेज सातौं सुधि बिसरी, ज्यौं पीता चीता कौ ।।
करि अति कृपा जोग लिखि पठयौ, देखि डराई ताकौ ।
सूरजदास प्रीति कह जधैं, लोभी नवनीता कौ ।।५८९।।

सब सुख लै करि स्याम सिधारे ।
सुफलक-सुत कछु भली कीन्ही, बैठें ही अपडारे ।।

चलत पीत पट गहि नहिं राखे, यह जिया सोच हमारे ।
भूख नींद छुटि गई सुबासर, सुनहु न ऊधौ प्यारे ।।
मपा प्रलय तें कत ब्रज राख्यौ, कर धरि सैल उबारे ।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, क्यौं जु रहैं ये तारे ।।५६०।।

ऊधौ हम ब्रजनाथ बिसारे ।
जब तें गवन कियौ मधुबन कौ, चितवत लोचन हारे ।।
महा प्रलय तैं काहैं राखो, इंद्र त्रास प्रभु टारे ।
छूटत नहीं त्रास हिरदै तैं, तब न मुईं अबमारे ।।
अवधि बदी हरि ते सब बीतीं, आवन कहि जु सिधारे ।
सूरदास-प्रभु कब धौं मिलैंगे, लै गए प्रान हमारे ।।५६१।।

(पहिलैं) प्रीति करि कहा पोच लागे करन ।
ऊधौ कमल नयन सौं कहियौ, गोवरधन की धरन ।।
अब दै बिरह अनल लगे बारन, तब न दई दौ जरन ।
संकट बिपति परें पर राखे, लई प्रीति करि सरन ।।
तुम्हरी बाल दसा जनायक सुमिरि-सुमिरि अति झुरन ।
सूरज स्याम प्रान अब तजिहौं, बेगि दिखावहु चरन ।।५६२।।

प्रीति उहिं देस न कोऊ जानत ।
तू तौ बात कहत अलि ऐसी, बिथा नहीं पहिचानत ।।
जे गुपाल ब्रज मैं गृह-गृह तैं, दूध दही लै खात ।
ते अब दुःख देत ब्रजबासिनि, निठुर भए पुर जात ।।
सूर कुटिलता जे सुनियत हैं, लोग पुरातन गावत ।
नख-सिख लौं बिष रूप बसत, पै मधुबन नाम कहावत ।।५६३।।

तुम अलि बात नहीं कहि जानत ।
निरगुन कथा बनाइ कहत नहिं, बिरह बिथा उर आनत ।।
प्रफुलित कमल देखि उड़ि धावत, सब कुल संग लिए ।
और सुमन सौं मधु जाँचत हौ, फाटि न जात हिए ।।
चातक स्वाति बूँद कौ गाहक, सदा रहत इक रूप ।
कह जानै दादुर जल कौ ब्रत, सागर औ सम कूप ।।
बात कहौ अब ऐसी जासौं, ताकैं मन तुम भावहु ।
सूर बचन जैसौ उपदेसत, तैसौई तुम पावहु ।।५६४।।

कुटिल बिनु और न कोई आवै ।
तौ ब्रजराज प्रेम की बातैं, ताकैं हाथ पठावै ।।
प्रीति पुरातन सुमिरि साँवरे, सुरति संदेसे दीन्हे ।
ते अलि कहत और की औरै, स्रुति की मति उर लीन्हे ।।
एऊ सखा कह्यौ नहिं मानत, गहे जोग की टेक ।
ऐसे सूर बहुत मधुवन मैं, कहा दोष हरि एक ।। ५९५।।

बतिअनि सब कोऊ समुझाव ।
ऐसौ कउ नाहिं है प्रीतम, लै ब्रजनाथ मिलावै ।।
आयौ दूत कपट कौ वासी निरगुन ज्ञान बतावै ।
सखा हमारे स्याम मनोहर, नैननि भरि न दिखावै ।।
ज्ञान ध्यान कौ मरम न जानै, चतुरहिं चतुर कहावै ।
सूरदास सबही काहू कौं, अपनौ ही हित भावै ।।५९६।।

ऊधौ क्यौं बिसरत वह नेह ।
हमरैं हृदय आनि नंद-नँदन, रचि-रचि कीन्हे गेह ।।
एक दिवस गई गाइ दुहावन, वहाँ जु बरष्यौ मेह ।
लिए उड़ाइ कामरी मोहन, निज करि मानी देह ।।
अब हमकौं लिखि-लिखि पठवत हैं जोग जुगुति तुम लेहु ।
सूरदास बिरहिनि क्यौं जीवैं कौन सयानप एहु ।।५९७।।

बातनि क्यौं ब्रज-नाथ मिलन कौं बिसरत है अलि नेह ।
बंसी-नाद-स्वाद-रस लंपट, मानत नहिं स्रुति एह ।।
को मातुल बध कियौ मधुपुरी, को पति परिजन गेह ।
को ऊधौ को जोग निरूपन,नव-किसोर बिनु खेह ।।
कोट जतन जुगवौ बन बेली, बिनु सींचे बिनु मेह ।
हीरा हार चीर सौंधा मिलि, नीर बिना सब हेह ।।
कुंभज कुंभ समान ज्ञान पथ, बिनु गुन पानिप बेह ।
सूर स्याम-रस सहज माधुरी, रसकनि कौ अवलेह ।।५९८।।

(ऊधौ) नंद कौ गोपाल मोसौं गयौ तृन ज्यौं तोरि ।
मीन जल की प्रीति कीन्ही, नाहिं निबही ओर ।।
अबकैं जौ हम दरस पावैं, देहिं लाख करोर ।
हरि सौं हीरा खोइ कै हम, रही समुद्र झकोर ।।

ऊधौ हमरौ दोष नाहीं, वै जु निपट कठोर।
हम जपति हैं नाम निसि दिन, जैसैं चंद चकोर।।
दासी हम बिनु मोल की अलि, ज्यौं गुड़ी बस डोर।
सूर के प्रभु दरस दीजै, नहीं मनसा और ।।५९९।।

ऊधौ औरे कान्ह भए।
जब तैं यह ब्रज छाँड़ि मधुपुरी, कुबिजा धाम गए।।
कै वह प्रीति रीति गोकुल बसि, दुख सुख सब निरबाहत।
अब यह करत वियोग देह द्रुम, सुनत काम दव दाहत।।
जहँ स्वारथ तहं सगुन साँवरौ, निरगुन कपट सुनावत।
सूर सुमिरि ब्रजनाथ छापनै, कत न परेखौ आवत ।।६००।।

ऊधौ मन माने की बात।
दाख छुआरा छाँड़ि अमृत-फल, बिषकीरा बिष खात।।
ज्यौं चकोर कौं देइ कपूर कोउ, तजि अंगार अघात।
मधुप करत घर कोरि काठ मैं, बँधत कमल के पात।।
ज्यौं पतंग हित जानि आपनो, दीपक सौं लपटात।
सूरदास जाकौ मन जासौं, सोई ताहि सुहात ।।६०१।।

बातैं कहत सयाने की सी।
कपट तुम्हारौ प्रगट देखियत, ज्यौं जल नाये सीसी।।
हौं तौ कहत तिहारे हित की, एते मैं कत भरमत।
हमहूँ कृपा तिहारी तैं कछु थोरौं थोरौ मरमत।।
धाइ बसाइ गए सुफलक-सुत, नैकहु लागी बार न।
सूर कृपा करि आए ऊधौ, तापर टेवा टारन ।।६०२।।

ऊधौ ऐसी हम गुपाल बिनु। सबही तैं जैसें हरुवौ तृनु।।
सोचत गनत जाइ इहिं बिधि दिनु। जुग समान निसि होत एक छिनु।
कहियौ सूर सँदेस स्याम तिनु तिनु। राखौ प्रभु पोच बचन रिनु।।६०३।।

मधुकर तोहिं कौन सौं हेत।
जो पै चढ़त रंग तुव ऊपर, तौ पै होत स्याम तैं सेत।।
मोहन मनि नहिं उर मेली तैं, करि आयौं मुख प्रीति।
अति हठ ढीठ बसीठ स्याम कौ, हमैं सुनावत गीति।।

जौ कारिख तन मेट्यौ चाहत, कमल-बदन तन चाहि।
सूर गुपाल सुधा-रस मैं मिलि, या मन संग समाहि ।।६०४।।

ऊधौ सुनौ बिथा तुम तात।
पारधि मारि भाल क्यौं काढ़ै, है उरझ्यौ हृद गात ।।
ऐसैं बधिक मृगनि मारन कौं माथैं बाँधे पात।
सुंदर स्याम नाद बंसी कैं बधी काम-सर घात ।।
यह तौ पीर बिरहिनि जानैं, बहुत जियै दिन सात।
सूर स्याम अपने मारे कत, पूछत हैं कुसलात ।।६०५।।

जौ पै कृष्न हमहिं जिय भावत।
तौ सुनि मधुप जसोदानंदन, अबहीं गोकुल आवत ।।
जिन नैननि मोहन मुख निरख्यौ, निसि-दिन रूप बिचार्यौ।
तेई नैन रहत सूने गृह, प्रीति न हियौ बिदार्यौ ।।
जिहि तन आसन सैन, संग सुख, हरि समीप रुचि मानी।
तिहिं तन बिरह न छुटत सुमिरि गुन, नैकहुँ बिथा न जानी ।।
जिन स्रवननि सुनि बचन मनोहर, मुरली कल मुख बाजत।
तिन स्रवननि अब सुनहिं मधुपुरी, देत सँदेसनि लाजत ।।
अति प्रचंड यह मदन महाभट, जाहि सबै जग जानत।
सो मद-हीन दीन ह्वै बपुरौ, कोपि धनुष नहिं तानत ।।
सर सौरभ ससि अनिल त्रिबिध गुन, वैसियै प्रकृति निबाहत।
बिषम बिरह निजु जानि मानि मिति, ते या तनहिं न दाहत ।।
बन-बिलास, ब्रज-बास, राह-सुख, देखि-देखि सुचि पावत।
सूरदास बहुरौ बियोग-गति, कुकबि निलज ह्वै गावत ।।६०६।।

अब हरि औरै ही रँग राँचे।
तुम अलि सखा स्याम सुंदर के, मतौ सयानप काँचे ।।
बालापन तैं संग रहत हौ, सुन्यौ न एक पषानौ।
जैसे बास बसत है कोऊ, तैसौ होत सयानौ ।।
अरु अपने मुख तुम जु कहत हौ, प्रभु सबहीं भरि पूरि।
आवागमन करत हौ कापै, को लागत को दूरि ।।
जे उपमा पटतर लै दीजै, ते सब उनहिं न लायक।
जौ पै अलख रह्यौ चाहत, तौ बादि भए ब्रजनायक ।।

अरु जे बुद्धि सिखावहु हमकौं, ते सब हमहिं अलेखैं ।
सूर सुमनसा तब सुख मानैं, कमलनयन मुख देखैं ।।६०७।।

हरि बिनु जान लगे दिन ही दिन, । कैसैं कै राखैं प्रान कान्ह बिन ।।
करत सु जतन कहा छिन ही छिन । सिंह जीभ कैसें धरै हरे तृन ।।
जौ पै नहिं मानत जु बचन रिन । तौ का कहियै सूर स्याम सिन।।६०८।।

हरि दरसन कौं तलफत नैन ।
अरु जो चाहत भुजा मिलन कौं, स्रवन सुनन कौं बैन ।
जिय तलफत बन बिहरन कौं, तुम मिलि अरु सब सखियाँ ।।
कल न परत तुम बिनु हम इक-छिन, रोवतिं दिन अरु रतियाँ ।
जब तैं तुम हरि बिछुरे हम तैं, निसि-बासर नहिं चैन ।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस कौं, काग उड़ावतिं सैन ।।६०९।।

हमकौं नँद-नंदन कौ गारौ ।
इंद्र-कोप ब्रज बह्यौ जात हो, गिरि धरि सकल उबारौ ।।
राम कृष्न बल बदत न काहूँ निडर चराबत चारौ ।
सगरे बिगरे के सिर ऊपर बल कौ बीर रखवारौ ।।
तबहीं हमहिं भरोसौ आयौ केसि तृना जब मारौ ।
सूरदास प्रभु रंगभूमि मैं हरि जीत्यौ नृप हारौ ।।६१०।।

यहै प्रकृति परि आई ऊधौ अनुदिन या मन मेरैं ।
जौ कोउ कोटि जतन करौ कैसैंहु, फिरति नहीं मति फैरैं ।।
जा दिन तैं जसुदा गृह जनमैं, सुंदर कुँअर कन्हाई ।
ता दिन तैं वा दरस परस बिनु, और न कछु सुहाइ ।।
क्रीड़त हँसत कृपा अबलोकत, छिनु समान दिन जाते ।
परम तृप्ति सबही अँग होतो, लोचन पै न अघाते ।।
जागत सोवत सपन स्याम-घन, सुंदर तन अति भावै ।
सु कहि सूर ता कमल नैन बिनु, बातनि क्यौं बनि आवै ।।६११।।

ऐसी सुनियत हिरदै माहँ ।
याही में सब बात बूझिबी, चतुर सिरोमनि नाह ।।
आवन कह्यौ बहुत दिन लाए, करी पाछिली गाह ।
हमहिं छाँड़ि कुबिजहिं मन दीन्हौ, मेटि बेद की राह ।।

एते पर लिखि जोग पठावत, सिद्धि बतावत थाह ।
सूर स्याम अब ब्रज किन आवहु, दिन दस मानी साह ।।६१२।।

कहियै कहा कहत नहिं आवै, सोचनि हृदय पचैयै ।
मोहन सौ बर कुविजा पावै, हमकौं जोग बतैयै ।।
आज्ञा होइ सोइ लै कीजै, बिनती यहै सुनैयै ।
सूरदास-प्रभु तृषा बढ़ी अति, दरसन-सुधा पियैयै ।।६१३।।

इहिं डर बहुरि न गोकुल आए ।
सुनि री सखी हमारी करनी, समुझि मधुपुरी छाए ।।
अधरातक तैं उठि सब बालक, मोहिं टेरैंगे आइ ।
मातु पिता मोकौं पठवैंगे, बनहिं चरावत गाइ ।।
सूने भवन आइ रोकैंगी, दधि-चोरत नवनीत ।
पकरि जसोदा पै लै जैहैं, नाचहु गावहु गीत ।।
ग्वारिनि मोहिं बहुरि बाँधैंगी, कैतव बचन सुनाइ ।
वै दुख सूर सुमिरि मन ही मन, बहुरि सहै को जाइ ।।६१४।।

ऊधौ बेद बचन प्रमान ।
कमल-मुख पर नैन-खंजन, निरखि हैं क्यौं आन ।।
श्रीनिकेत, समेत सब गुन, सकल रूप निधान ।
अधर-सुधा पियाइ बिछुरे, पठै दीन्हौ ज्ञान ।।
दूरि नहीं कृपाल केसौ, ये जु हिये समान ।
निकरि क्यौं न गोपाल बोलत, दुखिन के दुख जान ।।
रूप-रेख न देखिऐ तहँ, स्वाद सब्द भुलान ।
इच्छु-दंड अडारि हरि गुन, गहत पानि बिषान ।।
बीतराग सुजान जोगिनि भक्त जननि निवास ।
निगम बानी मेटि, कहि क्यौं सकै सूरजदास ।।६१५।।

ऊधौ हम कत हरि तैं न्यारी ।
तब तौ बेद रिचा बौरानी, अब ब्रज-बास दुलारी ।।
तब हरि निरगुन अगम अगोचर, चले जु चाल हमारी ।
अब निज ध्यान हमारौ मोहन, उनहूँ हम न बिसारी ।।
चाम के दाम चलावत तुम तौ, कुबिजा के अधिकारी ।
सूर स्याम हम सब दिन एकै, भुरै लेहु दिन चारी ।।६१६।।

माधौ मन मरजाद तजी ।
ज्यौं गज मत्त जानि हरि तुमसौं, बात बिचारि सजी ॥
माथैं नहीं महावत सतगुरु, अंकुस ज्ञानहु टूट्यौ ।
धावत अध-अवनी आतुर तजि, साँकर सत्सँग छूट्यौ ।
इंद्री जूथ संग लिए विहरत, तृष्ना कानन माहिं ॥
क्रोध, सोच जल सौं रति मानी, काम भच्छ हित जाहि ।
और अधार नहीं कछु सूझत, भ्रम गहि गुहा रह्यौ ।
सूर स्याम के हरि करुनामय, कब नहिं बिरद गह्यौ ॥६१७॥

माधौ छाँड़ि दई पहिचानि ।
तब तैं बिरह कुटिल या गोकुल, कीन्हौ है निज खानि ॥
तनु गिरि जानि आनि अवनी उर, इहिं भय भीत रहे ।
गमन कान्ह छन-छन जु काम ससि-किरनि कुदार गहे ॥
रज अंजन जल नैंन द्वार ह्वै, रह्यौ हृदय भरि पूरि ॥
निकसत नाहिं उपाइ रतन ज्यौं, गयौ स्याम संग दूरि ॥
तुम सो बात और अलि भाषे, उलटि ध्यान बपु जीति ।
द्वै नृप लरत प्रजा इंद्री गति, सूर कौन यह नीति ॥६१८॥

सखी री पूरनता हम जानी ।
याही तैं अनुमान करति हैं, षट्पद से अगवानी ॥
प्रथमहिं गाइ ग्वाल सँग रहते, भए छाँछ के दानी ।
अब तौ राजनीति सुनियत है, कुबिजा सी पटरानी ॥
मन हरि लियौ बजाइ बाँसुरीं, अब ह्वै बैठे ज्ञानी ।
महा मल्ल मारत मन मोहन, काहे न संका आनी ॥
अर्ध निसा ब्रजनारि संग लै, बन-बसि लीला ठानी ।
सूरदास ये कलपति बनिता, कहैं कौन अब मानी ॥६१९॥

जनि कोऊ बस परौ पराऐं ।
सरबस दियौ आपनौ उनकौं, तऊ न कछू कान्ह के भाऐं ॥
सहज समाधि रहत जोगी ज्यौं, मुद्रा जटा बिभूति लगाऐं ।
राज करौ यह दान तुम्हारौ, जौ पै देत बहुत तरसाऐं ॥
ना जानौं अब भलौ मानिहैं, ऊधौ किहि बिधि नाचे गाऐं ।
सूरदास-प्रभु दरसन कारन, मानौ फिरति धतूरा खाऐं ॥६२०॥

ऊधौ अति ओछे की प्रीति ।
बाहर मिलत कपट भीतर यौं, ज्यौं खीरा की रीति ।।
मैं अपनौ अभिमान जानि कै, चंद चकोरी चीत ।
मन, बच, क्रम तन-मन सब अरप्यौ लोक लाज कुल जीत ।।
इतौ सँदेस कह्यौ हरि सौं तुम, हम जु तजी किहिं नीत ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौं, मग जोवत जुग बीत ।।६२१।।

जौ कोउ बिरहिनि कौ दुख जानै ।
तौ तजि सगुन साँवरी मूरति, कत उपदेसै ज्ञानै ।
कुमुद चकोर मुदित बिधु निरखत, कहा करै लै भानै ।
चातक सदा स्वाति कौ सेवक, दुखित होत बिनु पानै ।।
भौंर, कुरंग, काग कोइल कौं, कविजन कपट बखानैं ।
सूरदास जौ सरबस दीजै, कारे कृतहि न मानैं ।।६२२।।

स्याम बिनु क्यौं जीवैं ब्रजवासी ।
इहिं घट प्रान रहत क्यौं ऊधौ, बिछुरैं कुंज-बिलासी ।।
कुबिजा बर पायौ मोहन सौं, मानौ तप कियौ कासी ।
सूर स्याम कौ यहै परेखौ, इक दुख दूजै हाँसी ।।६२३।।

(ऊधौ) कैसैं जीवैं कमल नयन बिनु ।
तब तौ पलक लगत दुख पावत, अब जु बरष एकहु छिनु ।।
ज्यौं ऊजर खेरे की पुतरी, को पूजै को मानै ।
त्यौं हम बिनु गोपाल भइँ ऊधौ, कठिन-पीर को जानै ।।
तुम तैं होइ करौ सो ऊधौ, हम अबला बलहीन ।
सूर बदन देखैं हम जीवैं, ज्यौं जल पाऐं मीन ।।६२४।।

ऊधौ सुधि नाहीं या तन की ।
जाइ कहौ तुम कित हौ भूले, हमऽब भईं बन-बन की ।।
इक बन ढूँढि, सकल बन ढूँढे, बन बेली मधुबन की ।
हारी परीं वृंदाबन ढूँढ़त, सुधि न मिली मोहन की ।।
किए बिचार उपचार न लागत, कठिन बिथा भइ मन की ।
सूरदास कोउ कहै स्याम सौं, सुरति करैं गोपिनि की ।।६२५।।

लरिकाईं कौ प्रेम कहौ अलि कैसैं छूटत ।
कहा कहौं ब्रजनाथ चरित, अंतरगति लूटत ।।

वह चितवनि वह चाल मनोहर, वह मुसकानि मंद-धुनि गावनि।
नटवर-भेष नंद-नंदन कौ वह बिनोद, वह बन तैं आवनि ।।
चरन कमल की सौंह करति हौं, यह संदेस मोहिं विष लागत ।
सूरदास पल मोहिं न बिसरति, मोहन मूरति सोवत जागत ।। ६२६।।

हरि-रस तौ ब्रजवासी जानैं ।
वदन-सुधा-रस पियत मधुप ज्यौं, चरन-कमल रुचि मानैं ।।
ब्रह्म-लोक सिव-लोक नाहि सुख, निगम जु नेति बखानैं ।
सो रस गिरिवरधारी के सँग, जिह्वा सेष कहानैं ।।
नैन विसाल स्याम-सुन्दर के, खंजन भृकुटी तानैं ।
सूरदास प्रभु बलि सोभा की, मैन अवधि सकुचानैं ।।६२७।।

मधुकर यह सुख तुमतैं दूरि ।
देख्यौ, सुन्यौ न परस्यौ रंचक, उड़िहु न लागी धूरि ।
अब तौ जोग सिखावन आए, तजि हरि जीवन मूरि ।
चितवनि मंद-हँसनि, गति-परसनि, हृदय रही भरि पूरि ।।
मो मन जो घट होत तिहारे, मुक्ति चलै पग चूरि ।
मथुरा जाइ सूर-प्रभु पूछहिं, मरिहौ तबहिं बिसूरि ।।६२८।।

ह्याँ हरि जू बहु क्रीड़ा करी । सो तौ चित तैं जात न टरी ।।
ह्याँ पय पीवत बकी सँहार्यौ । सकट तृनावत ह्याँ हरि मार्यौ ।
बच्छासुर कौं इहाँ निपात्यौ । बका, अघा ह्याँ हरि जू घात्यौ ।।
हलधर मार्यौ धेनुक कौं इहाँ । देखौ ऊधौ हतौ प्रलँब जहाँ ।।
ह्याँ तैं ब्रह्मा बच्छ गयौ हरि । और किए हरि लागी न पल घरि ।।
ते सब राखे सैंति नरहरी । तब ह्याँ ब्रह्मा अस्तुति करी ।।
ह्याँ हरि काली उरग निकास्यौ । लग्यौ जरावन अनल सु नास्यौ ।।
बस्त्र हमारे हरि जू ह्याँ हरे । कहँ लगि कहियै जे कौतुक करे ।।
हरि, हलधर ह्याँ भोजन किए । बिप्र-तियनि कौं अति सुख दिए ।।
इहाँ गोवर्धन कर हरि धार्यौ । मघवा रिस तैं हमैं उबार्यौ ।।
सरदा-निसा मैं रास रच्यौ इहँ । सो सुख हम पै बरनि जात कहँ ।
बृषभासुर कौं इहाँ सँघार्यौ । भौमऽरु केसी इहाँ पछार्यौ ।।
ह्याँ हरि खेलत आँखि मिचाई । कहँ लगि बरनैं लीला गाई ।।
सुनि-सुनि ऊधौ प्रेम मगन भयौ । लोटत धर पर ज्ञान गरब गयौ ।।
निरखत ब्रज भू अति सुख पावै । सूरज-प्रभु गुन पुनि-पुनि गावै ।।६२९।।

(ऊधौ) ज्यौं करि कृपा पाउँ धारत हौ, त्यौं ही तुम्हैं जवाऊँ ।
मौन गहे तुम बैठि रहौ, हौं मुरली-सब्द सुनाऊँ ।।
अबहिं सिधारे बन गोचारन, हौं बैठी जस गाऊँ ।
निसि आगम श्रीदामा कैं सँग, नाचत प्रभुहिं दिखाऊँ ।।
को जानै द्विविधा सँकोच-बस, तुम डर निकट न आवैं ।
तब यह दुंद बढ़ै अति दारुन, सखियनि प्रान छुड़ावैं ।।
छिन न रहैं नँदलाल इहाँ बिनु, जौ कोउ कोटि सिखावै ।
सूरदास ज्यौं मन तैं मनसा, अनत कहूँ नहिं धावै ।।६३०।।

सखी री मो मन धोखैं जात ।
ऊधौ कहत रहत हरि मधुपुरी, गत आगत न थकात ।।
इत देखौं तौ आगे मधुकर, मत्त न्याय सतरात ।
फिरि चाहौं तौ प्राननाथ उत, सुनत कथा मुसुकात ।।
हरि साँचे ज्ञानी सब झूठे, जे निरगुन जस गात ।
सूरदास जिहिं सब जग डहक्यौ, ते उनकौ डहँकात ।।६३१।।

उद्धव-बचन

मैं ब्रजबासिन की बलिहारी ।
जिनके संग सदा क्रीड़त हैं, श्री गोबरधन धारी ।।
किनहूँ कैं घर माखन चोरत, किनहूँ कैं संग दानी ।
किनहूँ कैं सँग धेनु चरावत, हरि की अकथ कहानी ।।
किनहूँ कैं सँग जमुना कैं तट, बंसी टेरि सुनावत ।
सूरदास बलि-बलि चरननि की, यह सुख मोहिं नित भावत ।।६३२।।

हौं इन मोरनि की बलिहारी ।
जिनकी सुभग चंद्रिका माथैं, धरत गोबरधनधारी ।।
बलिहारी वा बाँस-बंस की, बंसी सी सुकुमारी ।
सदा रहती है कर जु स्याम कैं, नैकहुँ होति न न्यारी ।।
बलिहारी वा गुंज-जाति की, उपजी जगत उज्यारी ।
सुन्दर हृदय रहत मोहन कैं, कबहूँ टरत न टारी ।।
बलिहारी कुल सैल सरित जिहिं, कहत कलिंद-दुलारी ।
निसि दिन कान्ह अंग आलिंगन आपुनहूँ भई कारी ।।
बलिहारी वृंदावन भूमिहिं, सुतौ भाग की सारी ।
सूरदास-प्रभु नाँगे पाइनि, दिन प्रति गैया चारी ।।६३३।।

गोपी-बचन

अलि तुम जाहु फिरि उहिं देस ।
चीर हम करिहैं भगौहैं, सीख सिखि लवलेस ।
भाल लोचन चंद चमकनि, कठिन कंठहिं सेष ।
नाद, मुद्रा, भूति भारी, करैं राउर भेष ।।
उहाँ जाइ सँदेस कहियौ, जटा धारे केस ।
कौन कारन नाथ छाँड़ी, सूर इहै अँदेस ।।६३४।।

हम पर हेत किए रहिबौ ।
या ब्रज कौ ब्यौहार सखा तुम, हरि सौं सब कहिबौ ।।
देखे जात आपनी अँखियनि, या तन कौ दहिबौ ।
तन की बिथा कहा कहौं तुमसौं, यह हमकौं सहिबौ ।।
तब न कियौ प्रहार प्राननि कौ, फिरि फिरि क्यौं चहिबौ ।
अब न देह जरि जाइ सूर इनि नैननि कौ बहिबौ ।।६३५।।

स्वामी पहिलौ प्रेम सँभारौ ।
ऊधौ जाइ चरन गहि कहियैं, जी तैं हित न उतारौ ।।
जो तुम मधुवन राज काज भए, गोकुल हम न अधारौ ।
कमल-नयन सो चैन न देखौ, नित उठि गोधंन चारौ ।।
ये ब्रज-लोग मया के सेवक, तिनसौं क्यौं न बिहारौ ।
सूरदास-प्रभु एक बार मिलि, सकल बिरह दुख टारौ ।।६३६।।

अपनैं जिय सूरति किए रहिबौ ।
ऊधौ इतनी बिनय स्याम सौं, समय पाइ कहिबौ ।।
घोष बसत की चूक हमारी, कछू न चित गहिबौ ।
परम दीन जदुनाथ जानि कै, गुन बिचारि सहिबौ ।।
अबकी बेर दयालु दरस दै, दुख की रासि दहिबौ ।
सूरदास-प्रभु बहुत कहा कहैं, बचन लाज बहिबौ ।।६३७।।

जदुपति कौ संदेस सखी री कैसे कैऽब कहौं ।।
बिन ही कहैं आपने मन मैं, कब लगि सूल सहौं ।
जो कछु बात बनाऊँ चित मैं, रचि पचि सोचि रहौं ।।
मुख आनत ऊधौ तन चितवत, नवौ बिचार बहौं ।।
सो कछु सीख देहु मोहिं सजनी, जातैं धीर गहौं ।
सूरदास-प्रभु के सेवक सौं, बिनती करि निबहौं ।।६३८।।

कर कंकन तैं भुज टाड़ भई ।
मधुबन चलत स्याम मन मोहन, आवन अवधि जु निकट दई ।।
पूजत गौरि मनावत संकर, वासर निसि मोहिं गनत गई ।
पाती लिखत बिरह तन ब्याकुल, कागर ह्वै गयौ नीर मई ।।
ऊधौ मुख के बचनलि कहियौ, हरि की सूल नित-प्रति जु नई ।।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, मानौ बंसी मीन हई ।।६३९।।

इतनी बात अलि कहियौ हरि सौं, कब लगि यह मन दुख मैं गारैं ।
पथ जोहत तन कोकिल बरन भइँ, निसि न नींद पिय पियहिं पुकारैं ।।
जा दिन तैं बिछुरे नंद-नँदन अति दुख दारुन क्यौं निरवारैं ।
सूरदास प्रभु बिनु यह बिपदा, काकौ दरसन देखि बिसारैं ।।६४०।।

ऊधौ जू, कहियौ तुम हरि सौं जाइ, हमारे हिय कौ दरद ।
दिन नहिं चैन, रैन नहिं सोवति, पावक भई जुन्हाई सरद ।।
जबतैं लै अक्रूर गए हैं भई बिरह तन बाइ छरद ।
काम प्रबल जाके अति ऊधौ, सोचत भइ जस पीत-हरद ।।
सखा प्रवीन निरंतर हरि के, तातैं कहति हैं खोलि परद ।
ध्यावतिं रूप दरसा तजि हरि कौ, सूर मूरि बिनु होतिं मुरद ।।६४१।।

कहियौ मुख संदेस जु हरि कैं, हाथ दीजियौ पाती ।
समय पाइ ब्रज बात चालिबी, सुख ही माँझ सुहाती ।।
हम प्रतीति करि सरबस अरप्यौ, गन्यौ नहीं दिन राती ।
नंदनँदन यह जुगुति न होई, लै जु रहे मन थाती ।।
जौ तब साखि दीजतौ काहू, तौ अब कत पछिताती ।
सुरदास-प्रभु मुकर जानती, तौ सँग लीन्हे जाती ।।६४२।।

ऊधौ इक पतिया हमरी लीजै ।
चरन-लागि गोबिंद सौं कहियौ, लिखौ हमारौ दीजै ।।
हम तौ कौन रूप गुन आगरि, जिहिं गुपाल जू रीझैं ।
निरखत नैन-नीर भरि आग, अरु कंचुकि पट भींजैं ।।
तलफत रहतिं मीन चातक ज्यौं, जल विनु तृषा न छीजै ।
अति ब्याकुल अकुलातिं बिरहिनी, सुरति हमारी कीजै ।।
अँखियाँ खरी निहारतिं मधुवन, हरि-बिनु ब्रज बिष पीजै ।
सूरदास-प्रभु कबहिं मिलंगे, देखि देखि मुख जीजै ।।६४३।।

हम मति हीन कहा कछु जानैं, ब्रजवासिनी अहीर ।
वै जु किसोर नवल नागर तन, वहुत भूप की भीर ।।
बचन की लाज सुरत्ति करि राखौ, तुम अलि इतनौ कहियौ ।
भली भई जौ दूत पठायौ, इतनौ बोल निबहियौ ।।
एक वार तौ मिलौ कृपा करि, जौ अपनौ ब्रज जानौ ।
यहै रीति संसार सबनि की, कहा रंक कह रानौ ।।
हम अनाथ तुम नाथ गुसाईं, राखौ क्यौं नहिं सोई ।
षट रितु ब्रज पै आनि पुकारैं, सूरदास अब कोई ।।६४४।।

नंद-नँदन सौं इतनी कहियौ ।
जद्यपि ब्रज अनाथ करि डार्यौ, तद्यपि सुरति किए चित रहियौ ।।
तिनका-तर करहु जनि हम सौं, एक वास की लाज निबहियौ ।
गुन औगुननि दोष नहिं कीजतु, हम दासिनि की इतनी सहियौ ।।
तुम बिनु प्रान कहा हम करिहैं, यह अवलब न सुपनेहु लहियौ ।
सूरदास पाती लिखि पठई, जहाँ प्रीति तहँ ओर निबहियौ ।।६४५।।

ऊधौ इतनी जाइ कहौ ।
सबै बिरहिनि पा लागती है, मथुरा कान्ह रहौ ।।
भूलिहुँ जनि आवहु इहिं गोकुल, तपति तरनि ज्यौं चंद ।
सुंदर-बदन स्याम कोमल तन, क्यौं सहिहैं नँदनंद ।।
मधुकर, मोर, प्रबल पिक, चातक, बन उपवन चढ़ि बोलत ।
मनहु सिंह की गरज सुनत गो बच्छ दुखित तन डोलत ।।
आसन असन अनल बिष अहि-सम, भूषन बिबिध बिहार ।
जित तित फिरत दुसह द्रुम-द्रुम प्रति, धनुष धरे सत मार ।।
तुम हौ संत सदा उपकारी, जानत हौ सब रीति ।
सूर स्याम कौं क्यौं बोलैं ब्रज, बिनु टारे यह ईति ।।६४६।।

विनु गुपाल बैरिनि भईं कुंजैं ।
तब वै लता लगति तन सीतल, अब भईं बिषम ज्वाल की पुंजैं ।।
वृथा बहति जमुना, खग बोलत, वृथा कमल-फूलनि अलि-गुंजैं ।
पवन, पान, घनसार, सजीवन, दधि-सुत किरनि भानु भईं भुंजैं ।।
यह ऊधौ कहियौ माधौ सौं, मदन मारि कीन्हीं हम लुंजैं ।
सूरदास--प्रभु तुम्हरे दरस कौं, मग-जोवत अँखियाँ भईं छुंजैं ।।६४७।।

ऊधौ इतनी कहियौ बात ।
मदन गुपाल बिना या ब्रज मैं, होन लगे उतपात ।।
तृनावर्त, बक, बकी, अघासुर, धेनुक फिरि-फिरि जात ।
ब्योम, प्रलंब, कंस केसी इत, करत जिअनि की घात ।।
कालो काल-रूप दिखियत है, जमुना जलहिं अन्हात ।
बरुन फाँस फाँस्यौ चाहत है, सुनियत अति मुरझात ।।
इंद्र आपने परिहँस कारन, बार-बार अनखात ।
गोपी, गाइ, गोप, गोसुत सब, थर-थर काँपत गात ।।
अंचल फारति जननि जसोदा, पाग लिए कर तात ।
लागौ बेगि गुहारि सूर-प्रभु, गोकुल बैरिनि घात ।।६४८।।

ऊधौ इतनी कहियौ जाइ ।
अति कृस गात भईं ये तुम बिनु, परम दुखारी गाइ ।।
जल समूह बरषति दोउ अँखियाँ, हूँकति लीन्हैं नाउँ ।
जहाँ-जहाँ गो दोहन कीन्हौ, सूँघति सोई ठाउँ ।।
परति पछार खाइ छिन हीं छिन अति आतुर ह्वै दीन ।
मानहु सूर काढ़ि डारी हैं, वारि मध्य तैं मीन ।।६४९।।

तुम कहियौ जैसैं गोकुल आवैं ।
दिन दस रहे भली सो कीन्ही, अब जनि गहरु लगावैं ।।
नहिं न सुहात कछू हरि तुम बिनु, कानन भवन न भावैं ।
धेनु बिकल अति चरतिं नहीं तृन, बच्छ न पीवन धावैं ।।
देखत अपनो आँखिनि तुमहीं, हम कहि कहा जनावैं ।
सूरदास-प्रभु कठिन होत कत, वै ब्रजनाथ कहावै ।।६५०।।

ऊधौ हरि बेगिहिं देउ पठाइ ।
नँद-नंदन दरस बिनु, रटि मरै ब्रज अकुलाइ ।।
मातु जसुमति सहित ब्रजपति, परे धर मुरझाइ ।।
अति बिकल तन, प्रान त्यागत, करै कछु गति आइ ।।
सकल सुरभी जूथ दिन प्रति, रुदत पुर दिसि धाइ ।
जहाँ-जहाँ दुहि बन चराईं, मरतिं तहँ बिललाइ ।।
परम प्यारी सरद राका, रही गृह दुख छाइ ।
तजत चक्र न वक्र चख बिनु, करै कोटि उपाइ ।
जोग पद लै देहु जोगिहिं, हमहिं जोग मिलाइ ।

मधुप बिछुरे बारि मीनहिं, अनत कहा सुहाइ ।।
आजु जिहिं बिधि स्याम आवहिं, कहौ तिहिं बिधि जाइ ।
सूर दावा बिरह ब्रज जन, जरत लेहु बुझाइ ।।६५१।।

अति मलीन वृषभानु-कुमारी ।
हरि स्रम-जल भींज्यौ उर-अंचल, तिहिं लालच न धुवावति सारी ।।
अध मुख रहित अनत नहिं चितवति, ज्यौं गथ हारे थकित जुवारी ।
छूटे चिकुर बदन कुम्हिलाने, ज्यौं नलिनी हिमकर की मारी ।।
हरि सँदेस सुनि सहज मृतक भइ, इक बिरहिनि, दूजे अलि जारी ।
सूरदास कैसैं करि जीवै, ब्रज बनिता बिन स्याम दुखारी ।।६५२।।

ऊधौ देखे ही ब्रज जात ।
जाइ कहियौ स्याम सौं यौं, बिरह के उतपात ।।
नैन नहिं कछु और सूझै, स्रवन कछु न सुहात ।
स्याम बिनु आँसुअनि बूड़त, दुसह धुनि भइ गात ।।
आइवैं तौ आइऐ हरि, पुनि सरीर समात ।
सूर-प्रभु पछिताहुगे तुम, अंतहूँ गए गात ।।६५३।।

ऊधौ तुमहिं स्याम की सौंहैं ।
मुख देखत कहियो तुम उनसौं, जिति-तित लगी मदन की दौंहैं ।।
जो मन जोग जुगुति आराधै, सो मन तौ सबकौ उन मौं है ।
जैसैं बसन तजत हैं पन्नग, सो गति करी कान्ह हमकौं है ।।
हम बावरी त्यौं न चलि जान्यौ, ज्यौं गज चलत आपनी गौंहैं ।
सूरदास कपटी चित माधव, कुबिजा मिली कपटी की खौंहैं ।।६५४।।

मधुकर कहियौ सुचित संदेसौ ।
समय पाइ समुझाइ स्याम सौं, हम जिय बहुत अँदेसौ ।।
एक बार रस-रास हमारे, मन मुरली जो हरे सौ ।
तब उन बेनु बजाइ बुलाई, अब निरगुन उपदेसौ ।।
और बार उन जोग जुगुति कौ, भेद न कह्यौ परै सौ ।
तब पतिब्रत तुम करन कहत, अब उधरौ ज्ञान गड़े सौ ।।
और कहाँ लौं हम कहैं ऊधौ, अबलनि कौं दुख ऐसौ ।
सूरदास इन पर हम मरियत, कुबिजा के बस केसौ ।।६५५।।

मधुप जाइ कहियौ तुम हरि सौं, बहुरि जु आइ दूसरी होरी।
ए सब नवल-नारि गोकुल की, खेलि फाग मुख माँड़ति रोरी॥
पग-पग पर नाचति गावति हैं, चंद्र-बदन तन राजति गोरी।
सूरदास-प्रभु कबहिं देखिहौं, मोहन, राधा बाहाँ जोरी॥६५६॥

ऊधौ कहियौ यह संदेस।
लोग कहत कुबिजा की प्रभुता, तुम सकुचहु जनि लेस॥
कबहुँक इत पग धारि सिधारहु, हरि उहिं सुखद सुबेस।
हमरे मन रंजन कीन्हे तैं, ह्वैहौ भुवन नरेस॥
तब तुम इत ठहराइ रहौगे, देखौगे सब देस।
नहिं बैकुंठ अखिल ब्रह्मांडहु, ब्रज बिनु सब कृत क्लेश॥
यह किहिं मंत्र दियौ नँदनंदन, ब्रज तजि भ्रमन बिदेस॥
जसुमति-जननी प्रिया-राधिका, देखे औरहुँ देस।
इतनी कहत कहत स्यामा पै, कछु न रह्यौ अवसेस॥
मोहनलाल प्रबाल मृदुल-मन, तच्छन करी सुहेस।
को ऊधौ को दुसह बिरह ज्वर, को नृप नगर सुरेस॥
कैसौ ज्ञान कह्यौ कहि कासौं, किहिं पठयौ उपदेस।
मुख मृदु छबि मुरली रव पूरत, गोरज करबुर केस॥
नट-नायक गति बिकट लटक तव, वन तैं कियौ प्रवेस।
अति आतुर अकुलाय धाइ पिय, पौंछत नयन कुसेस॥
कुम्हिलानौ मुख-पद्म परस करि, देखत छबिहिं बिसेस।
सूर सोम सनकादि इंद्र अज, सारद निगम महेस।
नित्य बिहार सकल सुर भ्रम गति, कह गावैं मुख सेस॥६५७॥

उद्धव-वचन

अब अति चकितवंत मन मेरौ।
आयौ हो निरगुन उपदेसन, भयौ सगुन कौ चेरौ॥
जो मैं ज्ञान कह्यौ गीता कौ, तुमहिं न परस्यौ नेरौ।
अति अज्ञान कछु कहत न आवै, दूत भयौ हरि केरौ॥
निज जन जानि मानि जतननि तुम कीन्हौ नेह घनेरौ।
सूर मधुप उठि चले मधुपुरी, बोरि जोग कौ बेरौ॥६५८॥

गोपी-वचन

ऊधौ तिहारे पा लागति हौं, बहुरिहूँ इहिं ब्रज करबी भाँवरी।
निसि न नींद भोजन नहिं भावै, चितवत मग भई दृष्टि झाँवरी॥

वहै वृंदाबन वहै कुंज-घन, वहै जमुना वहै सुभग साँवरी।
एक स्याम बिनु कछू न भावै, रटति फिरति ज्यौं बकति बावरी।।
चलि न सकति मग डुलत धरत-पग, आवत बैठत उठत ताँवरी।
सूरदास-प्रभु आनि मिलावहु, जग मैं कीरति होइ रावरी।।६५९।।

दिन कछू औरहू बहुरिं इहाँ ऐबौ।
बलि हौं गुपाल मिलि जाहिं संगहि संग, इतनी कहि बात सुख बहुत पैबौ।
महाराज भए सुनि सबनि आनँद भयौ, तौ बचन एक हमहिं दीजै।
देखि वह नाउँ बन खरिक जमुना पुलिन, नंद-नंदन नाथ कृपा कीजै।।
बिरह व्याकुल भईं इहाँ गोपी सकल, कीरति न छाँड़ैं गोपाल न्यारे।
वे क्यौं जिएँ सूर स्याम! दरसन बिना, जिनहिं तुम प्रान तैं
अधिक प्यारे।।६६०।।

यशोदा- सन्देश

ऊधौ पा लागति हौं कहियौ, स्यामहिं इतनी बात।
इतनी दूरि बसत क्यौं बिसरे, अपने जननी-तात।।
जा दिन तैं मधुपुरी सिधारे, स्याम मनोहर गात।
ता दिन तैं मेरे नैन पपीहा, दरस प्यास अकुलात।।
जहँ खेलन के ठौर तुम्हारे, नंद देखि मुरझात।
जौ कबहूँ उठि जात खरिक लौं, गाइ दुहावन प्रात।
दुहत देखि औरनि के लरिका, प्रान निकसि नहिं जात।।
सूरदास बहुरौ कब देखौं, कोमल कर दधि-खात।।६३१।।

मैं नंद-नँदन सौं कछु न कह्यौ।
सुनि ऊधौ हरि ऐसी कीन्ही, मधुपुरि बसि जु रह्यौ।।
चलत कह्यौ हो मोहन आवन, मैं बिस्वास गह्यौ।
सूर बियोग नंदनंदन कौ, अब नहिं जात सह्यौ।।६६२।।

तब तुम मेरैं काहे कौं आए।
मथुरा क्यौं न रहे जदुनंदन, जौ पैं कान्ह देवकी जाए।।
दूध दही काहे कौं चोर्यौ, काहे कौं बन बच्छ चराए।
अघ अरिष्ट, काली फनि काढ़्यौ, बिष जल तैं सब सखा जिवाए।।
पय पीवत हरे प्रान पूतना, सदा किए जसुमति के भाए।
सूरदास लोगनि के भुरए, काहैं कान्ह, अब होत पराए।।६६३।।

ऊधौ हम ऐसी नहिं जानी ।
सुत कैं हेत मरम नहिं पायौ, प्रगटे सारँग-पानी ।।
निसि बासर छतिया सौं लाई, बालक लीला गाऊँ ।
ऐसे कबहूँ भाग होंहिंगे, बहुरौ गोद खिलाऊँ ।।
को अब ग्वाल सखा सँग लीन्हे, साँझ समै ब्रज आवै ।
को अब चोरि चोरि दधि खैहै, मैया कौन बुलावै ।।
बिदरति नाहिं बज्र की छाती, हरि-वियोग क्यौं सहियै ।
सूरदास अब नंदनँदन बिनु, कहौ कौन विधि रहियै ।६६४।।

गोपालहिं पठै देहु, हम देखें ।
एक बार मिलि जाहु पाहुनैं, जनम सफल करि लेखैं ।।
कहियौ जाइ देवकी सौं तुम, कौन घाटि हम कीन्ही ।
मैं तुम्हरे ढोटा के बदलैं, तनया कंस बलि दीन्ही ।।
इतनी सील करैं पालागैं, यहै निहोरौ मानैं ।
अपने तैं ह्वै हैं न पराए, यह प्रतीति जिय आनैं ।।
जौ हौं मधुवन देखन आऊँ, सब ब्रज लागै साथ ।
एक बार मुख देखि पठैहौं, सूरदास के हाथ ।।६६५।।

ऊधौ जौ अब कान्ह न ऐहैं ।
जिय जानौ अरु हृदय बिचारौ, हम अतिहीं दुख पैहैं ।।
पूछौ जाइ कौन कौ ढोटा, तब कह उत्तर दैहैं ।
खायौ खेल्यौ संग हमारैं, ताकौ कहा बतैहैं ।।
गोकुल औ मथुरा के वासी, कहँ लौं झूठौ कैहैं ।
अब हम लिखि पठयौ चाहति हैं, ह्वाँऊ पत नहिं पैहैं ।।
इनि गाइनि चरिबौ छाँड़्यौ है, जो नहिं लाल चरैहैं ।
एते पर नहिं मिलत सूर-प्रभु, फिरि पाछैं पछितैहैं ।।७६६।।

(मोहन) अपनी गैयाँ घेरि लै ।
बिडरी जाति काहु नहिं मानति, नैंकु मुरलि की टेर दै ।।
धौरी, धूमरि, पांरी, काजरि, बन-बन फिरती पीय ।
अपनी जानि कै आनि सँभारहु, धरौ चेत अब जीय ।।
तुम हौ जग जीवनि प्रतिपालक, निठुराई नहिं कीजै ।
ग्वालऽरु बाल बच्छ गो बिलखत, सूर सु दरसन दीजै ।।६६७।।

तब तैं छीन सरीर सुबाहु ।
आधौ भोजन सुबल करत है, सब ग्वालनि उर दाहु ॥
नंद गोप पिछवारे डोलत, नैननि नीर प्रवाहु ।
आनँद मिट्यौ मिटी सब लीला, काहू मन न उछाहु ॥
एक बेर बहुरौ ब्रज आवहु, दूध पतूखी खाहु ।
सूर सपथ गोकुल जौ पैठहु, उलटि मधुपुरी जाहु ॥६६८॥

कहियौ जसुमति की आसीस ।
जहाँ रहौ तहँ नंद लाड़िलो, जीवौ कोटि बरीस ॥
मुरली दई दोहनी घृत भरि, ऊधौ धरि लइ सीस ।
यह तौ घृत उनही सुरभिनि कौ, जे प्यारी जगदीस ॥
ऊधौ चलत सखा मिलि आए, ग्वाल बाल दस-बीस ।
अबकैं यह ब्रज फेरि बसावहु, सूरदास के ईस ॥६६९॥

(ऊधौ) देखत हौ जैसे ब्रजबासी ।
लेत उसाँस नैन-जल पूरत, सुमिरि-सुमिरि अवनासी ॥
भूलि न उठत जसोदा जननी, मनौ भुबंगम डासी ।
छूटत नहीं प्रान क्यौं अटके, कठिन प्रेम की फाँसी ॥
आवत नहीं नंद मंदिर मैं, भयौ फिरत बनबासी ।
परम मलीन धेनु दुबल भईं, स्याम बिरह की त्रासी ॥
गोपी ग्वाल सखा बालक सब, कहूँ न सुनियत हाँसी ।
काहैं दियौ सूर सुख मैं दुख, कपटी कान्ह बिसासी ॥६७०॥

धन्य नंद, धनि जसुमति रानी ।
धन्य ग्वाल गोपी जु खिलाए, गोदहि सारँगपानी ॥
धनि ब्रज भूमि धन्य वृंदावन, जहँ अविनासी आए ।
धनि धनि सूर आज हमहूँ जो, तुम सब देखे पाए ॥६७१॥

उद्धव प्रत्यागमन

ऊधौ जब ब्रज पहुँचे जाइ ।
तबकी कथा कृपा करि कहियै, हम सुनिहैं मन लाइ ॥
बाबा नंद, जसोदा मैया, मिले कौन हित आइ ?
कबहूँ सुरति करत माखन की, किधौं रहे बिसराइ ॥

गोप सखा दधि-भात खात बन, अरु चाखते चखाइ ।
गऊ बच्छ मुरली सुनि उमड़त, अब जु रहत किहिं भाइ ।।
गोपिन गृह व्यवहार बिसारे, मुख सन्मुख सुख पाइ ।
पलक ओट निमि पर अनखातीं, यह दुख कहाँ समाइ ।।
एक सखी उनमें जो राधा, लेति मनहिं जु चुराइ ।
सूर स्याम यह बार बार कहि, मनहीं मन पछिताइ ।।६७२।।

ब्रज के निकट जाइ फिर आयौ ।
गोपी-नैन-नीर-सरिता तैं, पार न पहुँचन पायौ ।
तुम्हरी सीख सु नाव बैठि कै, चाहत पार गयौ ।
ज्ञान ध्यान ब्रत नेम जोग कौ, सँग परिवार लयौ ।।
इहिं तट तैं चलि जात नैंकु उत, बिरह पवन झकझोरै ।
सुरति बृच्छ सो मारि बाहुबल, टूक-टूक करि तोरै ।।
हौं हूँ बूड़ि चल्यौ वा गहिरैं, केतिक बुड़की खाईं ।
ना जानौं वह जोग बापुरौ, कहँ धौं गयौ गुसाईं ।।
जानत हुतौ थाह वा जल कौ, औ तरिबे कौ धीर ।
सूर कथा जु कहा कहौं उनकी, पर्‍यौ प्रेम की भीर ।।६७३।।

जब मैं इहाँ तैं जु गयौ ।
तब ब्रजराज सकल गोपी जन, आगैं होइ लायौं ।
उतरे जाइ नंद बाबा कैं, सबहीं सोध लह्यौ ।।
मेरी सौं मोसौं साँची कहि, मैया कहा कह्यौ ?
बारंबार कुसल पूछी मोहिं, लै लै तुम्हरौ नाम ।
ज्यौं जल तृषा बढ़ी चातक चित, कृष्न-कृष्न बलराम ।।
सुन्दर परम बिचित्र मनोहर, यह मुरली दै घाली ।
लई उठाइ सुख मानि सूर-प्रभु, प्रीति आनि उर साली ।।६७४।।

सुनियै ब्रज की दास गुसाईं ।
रथ की धुजा पीत-तट भूषन देखत ही उठि धाईं ।।
जो तुम कही जोग की बातैं, सो हम सबै बताईं ।
श्रवन मूँदि गुन-कर्म तुम्हारे, प्रेम तगन मन गाईं ।।
औरौ कछू सँदेस सखी इक, कहत दूरि लौं आई ।
हुतौ कछू हमहूँ सौं नातौ निपट कहा बिसराई ।।

सूरदास प्रभु वन बिनोद करि, जे तुम भाइ चराई ।
ते गाई अब ग्वाल न घेरत, मानौ भईँ पराई ।।६७५।।

ब्रज के बिरही लोग दुखारे ।
बिन गोपाल ठगे से ठाढ़े, अति दुर्बल तन कारे ।।
नंद, जसोदा मारग जोवति, निसि-दिन साँझ, सकारे ।
चहुँ-दिसि कान्ह-कान्ह कहि टेरत, अँसुवन बहत पनारे ।।
गोपी, ग्वाल, गाइ गो-सुत सब, अतिहीं दीन बिचारे ।
सूरदास-प्रभु बिनु यौं देखियत, चंद बिना ज्यौं तारे ।।६७६।।

हरि जू, सुनहु बचन सुजान ।
विरह ब्याकुल छीन तन-मन, हीन लोचन-कान ।।
यहै है संदेस ब्रज कौ, नाथ सुनहु निदान ।
मैं सबै ब्रज दीन देख्यौ, तन बिना ज्यौं प्रान ।।
तुम विना सोभा नहीं प्रभु, ज्यौं दिवस बिनु भान ।
आस साँस उसास घट मैं, अवधि आसा मान ।।
जगत-जीवन, जगत-पालक, जगत-नाथ, कृपाल ।
करि जतन कछु सूर के प्रभु, ज्यौं जियैं ब्रज बाल ।।६७७।।

बिनती एक सुनौ श्री स्याम ।
चलन न देतिं, चल्यौ नहिं भावत, चलत कह्यौ आवन षट याम ।।
तुम सर्वज्ञ सकल घट ब्यापक, जीवन-पद, जन के बिस्राम ।
संतत रहत कहत ढीठौ दै, स्याम सदा सेवक सुख धाम ।।
वह रस-रीति प्रीति गोपिन की लिए रहतिं लीला, गुन नाम ।
सूरदास-प्रभु सब सुखदाता, तेऊ तौ नियरे नँद-ग्राम ।।६७८।।

सुनहु स्याम वै सब ब्रज-बनिता, बिरह तुम्हारै भईँ बावरी ।
नाहीं बात और कहि आवति, छाँड़ि जहाँ लगि कथा रावरी ।।
कबहुँ कहतिं हरि माखन खायौ, कौन बसै या कठिन गाँव री ।
कबहुँ कहतिं हरि ऊखल बाँधे, घर-घर ते लै चलौ दाँवरी ।।
कबहुँ कहतिं ब्रजनाथ बन गए, जोवत-मग भई दृष्टि झाँवरी ।
कबहुँ कहतिं वा मुरली महियाँ, लै-लै बोलत हमरो नावँ री ।।
कबहुँ कहतिं ब्रजनाथ साथ तैं, चंद उयौ है इहै ठाँव री ।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, अब वह मूरति भईँ साँव री ।।६७९।।

हरि जू आए सो भली कीन्ही ।
मो देखत कहि उठि राधिका, अंक तिमिर कौं दीन्ही ।।
तन अति कंप बिरह अति ब्याकुल, उर धुकधुकि अति कीन्ही ।
चलत चरन गहि रही गई गिरि, स्वेद सलिल भइ भीनी ।।
छुटी न भुज, टूटी बलयावलि, फटी कंचुकी झीनी ।
मनौ प्रेम की परनि परेवा याही तैं पढ़ि लीनी ।।
अवलोकत इहिं भाँति रमापति, मानौ अहि मनि छीनी ।
सूरदास-प्रभु कहौं कहाँ लै, भई अयान मतिहीनी ।।६८०।।

तुम्हारी भावती कह्यौ ।
यह कहियौ नँद-नंदन आगैं, अति दुख दुसह सह्यौ ।।
लेति उसाँस सोच निसि-दिन के, नैकु न रूप रह्यौ ।
बिगलित केस बदन छबि ऐसी, जनु ससि राहु गह्यौ ।।
माखन काढ़ि कूबरी लीन्हौ, ब्रज मैं रह्यौ मह्यौ ।
सूर स्याम रति जाम प्रेम पय, बहुरौ जम्यौ कह्यौ ।।६८१।।

सुनहु स्याम यह बात और कोउ क्यौं समुझाइ कहै ।।
दुहुँ दिसि कौ अति बिरह बिरहिनी, कैसैं कैयजु सहै ।।
जब राधा तबहीं मुख माधौ, माधौ रटत रहै ।
जब माधौ ह्वै जात सकल तन, राधा-बिरह दहै ।।
उभै अग्र दव दारु कीट ज्यौं, सीतलताहिं चहै ।
सूरदास अति बिकल बिरहिनी, कैसैंहु सुख न लहै ।।६८२।।

चित दै सुनौ स्याम प्रवीन ।
हरि तुम्हारैं बिरह राधा, मैं जु देखी छीन ।।
तज्यौ तेल तमोल भूषन, अंग बसन मलीन ।
कंकना कर रहत नाहीं, टाड़ भुज गहि लीन ।।
जब सँदेसौ कहन सुंदरि, गवन मो तन कीन ।
छुटी छुद्रावलि चरन अरुझी गिरी बल हीन ।।
कंठ बचन न बोलि आवै, हृदय परिहस भीन ।
नैन जल भरि रोइ दीनौ, ग्रसित आपद दीन ।।
उठी बहुरि सँभारि भट ज्यौं, परम साहस कीन ।
सूर हरि के दरस कारन, रही आसा लीन ।।६८३।।

फिरि ब्रज वसौ नंदकुमार।
हरि तिहारे बिरह राधा, भइ तन जरि छार॥
बिनु अभूषन मैं जु देखी, परी है बिकरार।
एकई रट रटत भामिनि, पीव पीव पुकार॥
सजल लोचन चुअत उनके, बहति जमुना धार।
बिरह अगिनि प्रचंड उनकैं, जरे हाथ लुहार॥
दूसरी गति और नाहीं, रटति बारंबार।
सूर प्रभु कौ नाम उनकैं लकुट अंध अधार॥६८४॥

सुनहु स्याम सुजान, तिय गज-गामिनी की पीर।
विरह सर गंभीर ग्राह जु, ग्रसी काम अधीर॥
सोच पंक जु सनी सुंदरि, मोच नैननि नीर।
चक्र लै कै वेगि धावहु, करि कृपा बलबीर॥
नहीं कछ सँभार बिहवल, बिकल भई सरीर।
काटि दुःख समूह फंदनि, काढ़ि आनहु तीर॥
कहा जानि छँड़ाइ लीन्हौ, द्विरद दीनदयाल।
सूर प्रभु न बिसारियै जू, राधिका सी बाल॥६८५॥

भरि-भरि लेति ऊरध स्वास।
साँवरे ब्रजनाथ तुम बिनु, दुखित मनसिज त्रास॥
अमित पीर अधीर डोलति, सुमिरि नैन बिलास।
तेइ सुख दुख भए दारुन, जे किए रस-रास॥
निगम गुरुजन लोग निदरत, जग करत उपहास।
सूर तुम बिनु बिकल बिरहिनि, मरति दरसन प्यास॥६८६॥

भरि-भरि लेति लोचन नीर।
तुम बिना ब्रजनाथ सुंदरि बिरह खेद अधीर॥
कमल-उर पर धरति छिन-छिन छिरकि चंदन चीर।
जाल-मग ससि-किरन रोकति मलय मंद समीर॥
हौं इहाँ तुम पास आयौ देखि मनसिज-भीर।
सूरदास सुजान श्रीपति मिलि हरहु तन-पीर॥६८७॥

उमँगि चले दोउ नैन बिसाल।
सुनि सुनि यह संदेस स्याम-घन, सुमिरि तुम्हारे गुन गोपाल॥

आनन अरु उरजनि के अंतर, जलधारा बाढ़ी तिहिं काल।
मनु जुग जलज सुमेरु सृंग तैं जाइ मिले सम ससिहिं सनाल।।
भींजे उर अंचल अति राजति, तिन तरहरि मुक्तनि की माल।
मानौ इंदु नवल नलिनी दल, लंकृत अमी असु-कन-जाल।।
कहँ वह प्रीति रीति राधा की, कहँ यह करनी उलटी चाल।
सूरदास-प्रभु कपट बचन तैं, क्यौं जीवै बिरहिनि बेहाल।।६८८।।

तुम्हारे बिरह ब्रजनाथ राधिका नैननि नदी बढ़ी।
लीनें जात निमेष कूल दोउ, एते मान चढ़ी।।
चलि न सकत गोलक नौका लौं, सींव पलक वल बोरति।
ऊर्ध्व उसाँस समीर तरंगनि, तेज तिलक तरु तोरति।।
कज्जल कीच कुचील किए तट, अंबर अधर कपोल।
रहे पथिक जु जहाँ सु तहाँ थकि, हस्त चरन मुख बोल।।
नाहीं औंर उपाय रमापति, बिनु दरसन क्यौं जीजै।
आँसु-सलिल बूड़त सब गोकुल, सूर स्वकर गहि लीजै।।६८९।।

नैन घन घटत न एक घरी।
कबहुँ न मिटति सदा पावस ब्रज, लागी रहत झरी।।
बिरह इंद्र बरषत निसि बासर, इहिं अति अधिक करी।
ऊर्ध उसाँस समीर तेज जल, उर भू उमँगि भरी।।
बूड़त भुजा रोम द्रुम अंबर, अरु कुच उच्च थरी।
चलि न सकत पद रेह पंथ की, चंदन कीच खरी।।
सब रितु भई एक सौ इहिं ब्रज इहिं बिधि उलटि धरी।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे बिछुरे, सब मरजाद टरी।।६९०।।

देखी मैं लोचन चुवत अचेत।
मनहु कमल ससि त्रास ईस कौ, मुक्ता गनि-गनि देत।।
कहुँ कंकन कहुँ गिरी मुद्रिका, कहूँ टाड़ कहुँ नेत।
चेतति नहीं चित्र की पुतरी, समुझाई सौचेत।।
द्वार खरी इकटक मग जोवति, ऊर्ध उसाँसनि लेत।
सूरदास कछु सुधि नहिं तन की, बंधी तिहारैं हेत।।६९१।।

नैननि होड़ बदी बरषा सौं।
राति दिवस बरसत झर लाए, दिन दूनी करषा सौं।।

चारि मास बरषैं जल खूँटै, हारि समुझि उन मानी ।
ये तेहूँ पर धार न खंडत, इनकी अकथ कहानी ।।
एते मान चढ़ाइ चढ़ी अति तजी पलक की सींव ।
मैं जानी दीनी उन मानौ, महाप्रलय की नींव ।।
तुम पै होइ सु करहु कृपानिधि, ये ब्रज के ब्यौहार ।
अबकी बेर पाछिले नातैं, सूर लगावहु पार ।।६६२।।

ब्रज तैं द्वै रितु पै न गई ।
ग्रीषम अरु पावस प्रवीन हरि, तुम बिनु अधिक भई ।।
ऊधै उसास समीर नैन घन, सब जल जोग जुरे ।
बरषि प्रकट कीन्है दुख दादुर, हुते जो दूरि दुरे ।।
बिषम बियोग जु बृष दिनकर सम, हिय अति उदौ करै ।
हरि-पद-बिमुख भए सुनि सूरज, को तन ताप हरै ।।६६३।।

नाहीं कछु सुधि रही हिए ।
सुनहु स्याम वे सखी राधिकाहिं, जुगवतिं जतन किए ।।
सैन सूच, नख लिखतिं किसलयनि, स्रवन न सब्द छिए ।
कर कंकन कोकिला उड़ावतिं, बिनु मुख नाम लिए ।।
ससि संका निसि जालनि के मग, बसन बनाइ सिए ।
दिसि दिसि सीत समीरहिं रोकतिं, अंचल ओट दिए ।।
मृगमद मलय परसि तन तलफत, जनु बिष बिषम पिए ।
जौ न इते पर मिलहु सूर प्रभु, तौ जानिबी जिए ।।६६४।।

कहाँ लौं कहिऐ ब्रज की बात ।
सुनहु स्याम तुम बिनु उन लोगनि, जैसैं दिवस बिहात ।।
गोपी ग्वाल गाइ गोसुत सब, मलिन बदन कृस गात ।
परम दीन जनु सिसिर हेम हत, अंबुजगन बिनु पात ।।
जो कोउ आवत देखि दूरि तैं, उठि पूछत कुसलात ।
चलन न देत प्रेम आतुर उर, कर चरननि लपटात ।।
पिक चातक बन बसन न पावत, बायस बलि नहिं खात ।
सूर स्याम संदेसनि कै डर, पथिक न उहिं मग जात ।।६६५।।

ब्रज की कहि न परति हैं बातैं ।
गिरि-तनया-पति भूषन जैसैं, बिरह जरी दिन रातैं ।।

मलिन बसन हरि हित अंतरगति, तन पीरौ जनु पातैं।
गदगद बचन नैन-जल-पूरित, बिलख बदन कृस गातैं॥
मुत्ता-तात भवन तैं बिछुरैं मीन मकर बिललातैं।
सारँग-रिपु-सुत-सुहृद पति बिना, दुख पावत बहु भातैं॥
हरि सुर भषन बिना बिरहानें, छीन भई तन तातैं।
सूरदास गोपिनि परतिज्ञा, मिलहु पहिलैं के नातैं॥६९६॥

कही न परति हरि ब्रज की बात।
नर नारी पंछी द्रुम बेली, दरसन कौं अकुलात॥
जब तुम हे तब बनफल फलते, तहँ अब पुहुप न पात।
क्रीड़त नाहिं कपोत कुलाहल करत नहीं उठि प्रात॥
गो-मृग निकसि नवाइ नैन मुख, अति दुख तृन नहिं खात।
गोपी ग्वाल उसास हुतासन, बिरह ज्वाल अकुलात॥
गोकुल की यह बिपति कहा कहौं, तुम बिनु हो जदुनाथ।
सूरदास स्वामी दरसन की करत सुरति दिन-रात।६९७॥

रहति रैन-दिन हरि-हरि रट।
चितवंति इकटक मग चकोर लौं, जब तैं तुम बिछुरे नागर नट॥
भरि भरि नैन नीर ढारति हैं, सजल करति अति कंचुकि के पट।
मनहु बिरह की बिज्जुरता लगि, लियौ नेम सिव सिसि सहस घट॥
जैसें जब के अग्र ओस-कन, प्रान रहय ऐसैंहि अवधिहिं तट।
सूरदास-प्रभु मिलहु कृपा करि, जे दिन कहे तेउ आए निकट॥६९८॥

दिन दस घोष चलहु गोपाल।
गाइनि की अवसेरि मिटावहु, आपने ग्वाल॥
नाचत नहीं मोर ता दिन तैं, रटत न बरषा-काल।
मृग दुबरे तुम्हरे दरसन बिनु, सुनत न बेनु रसाल॥
बृंदावन हर्‍यौ होत न भावत, देख्यौ स्याम तमाल।
सूरदास मैया अनाथ है, घर चलियै नँदलाल॥६९९॥

श्रीकृष्ण-वचन

ऊधौ भलौ ज्ञान समुझायौ।
तुम मोसौं अब कहा कहत हौ, मैं कहि कहा पठायौ॥
कहवावत हौ बड़े चतुर पै, उहाँ न कछु कहि आयौ।
सूरदास ब्रज-बासिन कौ हित, हरि हिय माहँ दुरायौ॥७००॥

उद्धव-वचन

मैं समुझाई अति अपनौ सौ।
तदपि उन्हैं परतीति न उपजी, सबै लख्यौ सपनौ सौ ॥
कही तुम्हरी सबै कही मैं, और कही कछु अपनी।
स्रवननि बचन सुनत भइ ऊनकैं, ज्यौं घृत नाऐं अगनी ॥
कोउ कहौ बनाइ पचासक, उनकी बात जु एक।
धन्य धन्य ब्रजनारि बापुरी, जिनकी और न टेक ॥
देखत उमग्यौ प्रेम इहाँ कौ, धरे रहे सब ऊलौ।
सूर स्याम हौं रह्यौ थक्यौ सौ, ज्यौं मृग चौका भूलौ ॥७०१॥

बातैं सुनहु तौ स्याम सुनाऊँ।
जुवतिनि स कहि कथा जोग की, क्यौं न इतौ दुख पाऊँ ॥
हौं पचि एक कहौं निरगुन की, ताहू मैं अटकाऊँ।
वै उमड़ैं वारिधि के जल ज्यौं, क्यौंहूँ थाह न पाऊँ ॥
कौन कौन कौ उत्तर दीजै, तातैं भज्यौ अगाऊँ।
वै मेरे सिर पटिया पारैं, कंथा काहि उढ़ाऊँ ॥
एक आँधरौ, हिय की फूटी, दौरत पहिरि खराऊँ।
सूर सकल षट दरसन वै, हौं बारहखरी पढ़ाऊँ ॥७०२॥

सुनि लीन्ह्यौ उनहीं कौ कह्यौ।
अपनी चाल समुझि मन ही मन, गुनि अरगाइ रह्यौ ॥
अवलनि सौं न कही परै जु पै, बात तोरि करि कानि।
अनबोले पूरौ दै निबह्यौ, बहुत दिननि की जानि ॥
जानि बूझि कै कत हौं पठयौ, सठ बावरौ अयानौ।
तुमहूँ बूझ बहुत बातनि के, उहाँ जाहु तौ जानौ ॥
अज्ञाभंग होइ क्यौं मो पै, गयौ तुम्हारे ठीले।
सूर पठावन ही की ओरी, रह्यौ जुगुति सौं लीले ॥७०३॥

हरि हौं बहुत दाउँ दै हार्यौ।
अज्ञाभंग होइ क्यौ मोपै, बचन तिहारौ पार्यौ ॥
हारि मानि उठि चल्यौ दीन ह्वै मानि अपुन तन खेद ॥
जानि लियौ थोरैं मैं थोरौ, प्रेम न रोकै वेद।
ऊतर को ऊतर नहिं आवै, तब उनहीं मिलि जात ॥
मेरी बात कहा, ब्रह्मा हू, अर्ध-बचन मैं मात।

अपनी चाल जानि मनही मन, चल्यौ बसीठी तोरि ।।
सूर एकहू अंग न काँची, मैं देखी टकटोरि ।।७०४।।

हौं हरि अधर दाउँ दै हार्‌यौ ।
कहौं कहा निरगुन की बातैं, उनकौ प्रेम निन्यारौ ।।
जौ हौं कहौं प्रात बातैं वे, निस-दिन कथा चलावैं ।
उनकी प्रीति देखि सब भूलत, कछू मर्म नहिं पावैं ।।
तन, मन, प्रान सबै हरि अरपन, कमल-नैन कौ ध्यान ।
निसि-बासर उनकैं यह चरचा, और न दूजौं ज्ञान ।।
कौन भाँति करि जोग सिखाऊँ, भूलि गईं मुख बातैं ।
सूर सकल वे स्याम उपासी, मोकौं मारत लातैं ।।७०५।।

कहिवे मैं न कछू सक राखी ।
बुधि बिवेक अनुमान आपनैं, मुख आई सो भाषी ।।
हौं मरि एक कहौं पहरक मैं, वे पल माहिं अनेक ।
हारि मानि उठि चल्यो दीन ह्वै, छाँड़ि आपनी टेक ।।
हौं पठयौ कतहीं बे काजै, सठ मूरख जु अयानौ ।
तुमहिं बूझ बहुतै बातनि की, उहाँ जाहु तौ जानौं ।।
श्री मुख के सिखए ग्रंथादिक, ते सब भए कहानी ।
एक होइ तौ उत्तर दीजै, सूर सु मठो उफानी ।।७०६।।

माधौ जू जोग कौ बोझ भह्यौ ।
स्याम सुमुख बिधु बचन सुधा-रस, सो पुनि कछु न कह्यौ ।।
नव-नव भाव तरग महोदधि, सखि लोचन उमह्यौ ।
तुम जो कह्यौ ज्ञान कौ मारग, पानी ह्वै सु बह्यौ ।।
सकल सिंगार हार रस सरबस, ब्रज नवनीत लह्यौ ।
छूँछे भाँड़े पर्‌यौ न पावैं, लिखि तुम दियौ मह्यौ ।।
मोहिं आचरज एक पै लागत, तुम पै जात सह्यौ ।
सूर स्याम सुनि सखा सयानौ, लै भुज बीच गह्यौ ।।७०७।।

कोऊ सुनत न बात हमारी ।
मानैं कहा जोग जादवपति, प्रगट प्रैम ब्रजनारी ।।
कोऊ कहति हरि गए कुंज-वन, सैन धाम वे देत ।

कोऊ कहतिँ इंद्र बरषा तकि, गिरि गोबर्धन लेत ।।
कोऊ कहतिँ नाग काली सुनि, हरि गए जमुना तीर ।
कोऊ कहतिँ अघासुर मारन, गए संग बलवीर ।।
कोऊ कहत ग्वाल बालनि सँग, खेलत बनहिं लुकाने ।
सूर सुमिरि गुन नाथ तुम्हारे, कोऊ कह्यौ न माने ।।७०८।।

हरि तुम्हें बारंबार सम्हारैं ।
कहौ तौ सब जुवतिनि के नाम कहौं, जे हित सौँ उर धारैं ।।
कबहुँक आँखि मूँदि कै चाहतिँ, सब सुख अधिक तिहारैं ।
तब प्रसिद्ध लीला सँग बिहरतिँ, अब चित डोर बिहारैं ।।
जाकौं कोऊ जिहि बिधि सुमिरै, सोऊ तिहिं हित मानैं ।
उलटी रीति सबै तुम्हरी है, हम तो प्रगट कहि जानैं ।।
जो पतिया तुम लिखि पठवत हौ, बाँचि समुझि सब पाउ ।
सूर स्याम हैं पलक धाम मैँ, लखि चित कत बिलखाउ ।।७०९।।

माधौ जू कहा कहौं उनकी गति ।
देखत बनै कहत नहिं आवै, अति प्रतीति तुम तैं रति ।।
जद्यपि हौँ षट मास रह्यौ ढिग, लही नहीं उनकी मति ।
तासौं कहौं सबै एकै बुधि, परमोधी नहिं मानति ।।
तुम कृपालु करुनामय कहियत, तातैं मिलत कहा छति ।
सूरदास प्रभु सोई कीजै, जातैं तुम पाबहु पति ।।७१०।।

अब जनि बाँधिबेहिं डराहु ।
दूध दधि माखन मनोहर, डारि देहु अरु खाहु ।।
सदा बैठे घोष रहियौ, बन न देहैं जान ।
पलकहूँ भरि दुख न देहैं, राखिहैं ज्यौं प्रान ।।
सब तिहारौ कह्यौ करिहैं, बचन माथैं मानि ।
परम चतुर सुजान एते, माँझ लीजौ जानि ।।
अब न कबहूँ चूक परिहै, यह हमारौ बोल ।
किकिरिनि की लाज धरि, ब्रज सुबस करहु निठोल ।।
समुझि निज अपराध करनी, नार नावतिं नीच ।
बहुत दिन तैं बरति हैं, वे आँखि दीजैं सींच ।।
मन बचन अरु कर्मना कछु, कहत नाहीं राखि ।
सूर-प्रभु यह बोल हिरदैं, सात राजा साखि ।।७११।।

कहत न बनै ब्रज की रीति ।
कहा मों सठ कौं पठायौ, देखि उनकी प्रीति ।।
जुवति-बल्लभ कत कहावत, करत सकल अनीति ।
मोहिं तौ यह कठिन लागत, क्यौं करौं परतीति ।।
सुनौ धौं दै कान अपनी, लोक-लोकनि क्रीति ।
सूर-प्रभु अपनी सचाई, रही निगमनि जीति ।।७१२।।

परम बियोगिनी सब ठाढ़ी ।
ज्यौं जलहीन दीन कुमुदिनि बन, रबि-प्रकास की डाढ़ी ।।
जिहिं बिधि मीन सलिल तैं बिछुरै, तिहिं अति गति अकुलानी ।
सूखे अधर न कहि आवै कछु, वचन रहित मुख बानी ।।
उन्नत स्वास बिरह बिरहातुर, कमल बदनि कुम्हिलानी ।
निंदति नैन निमेष छिनहिं छिन, मिलन कठिन जिय जानी ।।
बिनु बुधि बल विचित्र कृत सोभित, चलि न सकी पचि हारी ।
सूरदास-प्रभु अवधि लागि नतु प्रान तजति ब्रजनारी ।।७१३।।

सबै ब्रज घर-घर एकै रीति ।
ज्यौ कुरुखेत गड़े कौ सोनौ, त्यौं प्रभु तुम्हरी प्रीति ।।
वै सब परम विचित्र सयानी, अरु सब हीं जग क्रीति ।
उनकौ ज्ञान सुनत हौं सठ भयौं, ज्यौ बारू की भीति ।।
एकै गहन गही उन हठ करि, मेटि बेद-विधि नीति ।
गोप वेष भजि सूर स्याम वै, रहीं बिस्व वर जीति ।।७१४।।

ब्रज मैं एकै धरम रह्यौ ।
स्रुति सुंमृति औ बेद पुराननि, सबै गोविंद कह्यौ ।।
बालक बृद्ध तरुन अबलनि कौ, एक प्रेम निबह्यौ ।
सूरदास-प्रभु छाड़ि जमुन जल, हरि की सरन गह्यौ ।।७१५।।

ब्रज-जन दुखित अति तन छीन ।
रटत इकटक चित्त चातक, स्याम-घन-तन-लीन ।।
नाहिं पलटत बसन भूषन, दृगनि दीपक तात ।
बिलख बदन मलीन तन ज्यौं, तरनि बिनु जल-जात ।।
कहन जो तुम कहे सो मत, पच्यौ करि उपदेस ।
धरत जल ज्यौं नलिनि दल नहिं, बचन उर न प्रवेस ।।

धरे मुरली मोर चन्द्रिक, पीत-पट बनमाल ।
रही वह छबि अंग अंगनि, लपटि स्याम तमाल ।।
दिवस बितवतिं सकल जन मिलि, कहत गुन बलवीर ।
रैन उडुपति निरखि तलफति मीन ज्यौं बिनु नीइं ।।
होहु करुनानाथ बंधु, गहे ऊधौ पाइँ ।
सूर-प्रभु अब दरस दै कै, लेहु मरत जिवाइ ।।७१६।।

तब तैं इन सबहिनि सचु पायौ ।
जब तैं हरि सदेस तुम्हारौ, सुनत ताँवरौ आयौ ।।
फूले व्याल दुरे ते प्रगटे, पवन पेट भरि खायौ ।
खोले मृगनि चौक चरननि के, हुतौ जु जिय बिसरायौ ।।
ऊँचे बैठि बिहंग सभा मैं, सुक बनराइ कहायौ ।
किलकि-किलकि कुल सहित आपनैं, कोकिल मंगल गायौ ।।
निकसि कंदराहू तैं केहरि, पूँछ मूड़ पर ल्यायौ ।
गहवर तैं गजराज आइकै, अंगहिं गर्व बढ़ायौ ।।
अब जनि गहरु करहु हो मोहन, जौ चाहत हौ ज्यायौ ।
सूर बहुरि ह्वैहै राधा कौं, सब बैरिनि कौ भायौ ।।७१७।।

आजु विरहिनी बिरह तुम्हारैं, कैसौ रटति रहीं ।
चारि जाम निसि तुम्हरोइ सुमिरन, और न बात कहीं ।।
बासर कथा कठिन करि करि मन, क्रम-क्रम व्यथा सहीं ।
संध्या ससि द्रव जानि चलीं उठि, रहतिं न अंक गहीं ।।
अति स्रम मलय कुंकुमा सींचत, सरिता सेज बहीं ।
ते क्यों सीतल होहिं सूर अब, पिया बियोग दहीं ।।७१८।।

कान्ह तुम्हारी बिकल बिरहिनी, बिलपतिं बिरह बिगोयैं ।
अति आरति न सम्हारति तन मन, इकटक लौं मग जोयैं ।।
काजर मिलि लोचन बरषत अति, दुख सुख की छबि रोयैं ।
राहू केतु मानौ सुमीड़ि बिधु, अंक छुड़ावत धोयैं ।।
अबला कहा जोग मत जानैं, मनमथ व्यथा बिलोयै ।
सूरदास क्यौं नीर चुवत हैं, नीरस बसन निचोयैं ।।७१९।।

माधौ जू सुनौ ब्रज कौ प्रेम ।
सोधि मैं षट मास देख्यौ, गोपिकनि कौ नेम ।।

हृदय तैं नहिं टरत टारे, स्याम राम समेत ।
आँसु-सलिल प्रवाह मानौ, अर्घ नैननि देत ।।
चँवर अंचल कुच कलस, वर पानि पद्म चढ़ाइ ।
सुमिरि तुम्हरि प्रगट लीला, कर्म उठतीं गाइ ।।
देह गेह सनेह अर्पन कमल लोचन ध्यान ।
सूर उनकौ प्रेम देखैं, फीकौ लागत ज्ञान ।।७२०।।

माधौ जू सुनियै ब्रज व्यवहार ।
मेरौ कह्यौ पवन कौ भुस भयौ, गावत नंदकुमार ।।
एक ग्वाल गोसुत ह्वै रेंगत, एक लकुट कर लेत ।
एक मंडली करि बैठारत, छाक बाँटि इक देत ।
एक ग्वाल नटवर बपु लीला, एक कर्म गुन गावत ।
बहुत भाँति करि मैं समुझायौ, एक न उर मैं आवत ।।
निसि-बासर येही ढँग सब ब्रज, दिन दिन नव तन प्रीति ।
सूर सकल फीकौ लागत है, देखत वह रस रीति ।।७२१।।

बातैं बूझत यौं बहरावतिं ।
सुनहु स्याम वै सखी सयानी, पावस रितु राधेहिं न सुनावति ।।
घन देखत गिरि कहतिं कुसल मति, गरजत, गुहा सिंह समुझावतिं ।
नहिं दामिनि द्रुम दवा सैल चढ़ि, करि बयारि उलटी झर धावति ।।
नाहिंन मोर वकत पिक दादुर, ग्वाल-मंडली खगनी खिलावति ।
नाहिं नभ बृष्टि झरत झरना जल, परि-परि बुंद उचटि इत आवति ।
कबहुँक प्रगट पपीहा बोलत, कहि कुपच्छि कर तारि बजावतिं ।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु, सो बिरहिनि इतनौ दुख पावति ।।
७२२।।

नैकहु सोच न काहू कीन्हौ ।
सुनि ब्रजनाथ सबनि के औगुन, मिलि मिलि है दुख दीन्हौ ।।
रितु बसंत अनसमै अधम मति, पिक सहाइ लै धावत ।
प्रीतम संग जानि जुवती रुचि, बोलेहूँ नहिं आवत ।।
सदा सरद रितु सकल कला लै, सनमुख रहत जुन्हाई ।
सो सित पच्छ कुहू सम बीतत, कबहुँ न देत दिखाई ।।
त्रिबिधि समीर सुमन सौरभ मिलि, मत्त मधुप गुंजार ।
जोइ-जोइ रुचै सो कियौ बाँधि बल, तजि मन सकुच बिचार ।।

रतिपति अति अनीति करिवे कौं, कोटि धूम-धुज मानौ ।
लै करै धनुष चितै तुम्हरौ मुख, अव वोलै तब जानौ ।।
इहिं बिधि सबनि बीच पायौ ब्रज, काढ़त बैर दुरासी ।
सूरदास-प्रभु बेगि मिलहु अव, पिसुन करत सब हाँसी ।।७२३।।

सब तैं परम मनोहर गोपी ।
नंद- नँदन के नेह मेह जिन लोक लीक लोही ।।
बरु कुबिजा के रंगहिं राँचे, जदपि तजी सोपी ।
तदपि न तजे भजे निसि बासर, नैंकहुँ नहिं कोपी ।।
ज्ञान कथा कौं मथि मन देख्यौ, ऊधौ बहु धोपी ।
टरति घरी छिन नैकु न अँखियाँ, स्याम रूप रोपी ।।
जिती हुती हरि के अवगुन की, ते सबही तोपी ।
सूरदास-प्रभु-प्रेम हेम ज्यौं, अधिक ओप ओपी ।।७२४।।

मो मन उनहीं कौ जु भयौ ।
पर्‌यौ प्रभु उनकैं प्रेम कोस मैं, तुमहूँ बिसरि गयो ।।
तुमसौं सपथ करि गयौ मोहन, बेगि कह्यौ हो आवन ।
तिनहिं देखि वैसोइ मैं ह्वै रह्यौ, लग्यौ उनहिं मिलि गावन ।।
समुझि पी षट् मास बितीते, कहाँ हुतौ हो आयौ ।।
सूर अनकही दै गोपिनि सौं, स्रवन मूँदि उठि धायौ ।।७२५।।

उनमैं पाँचौ दिन जौ बसियै ।
नाथ तुम्हारी सौं जिय उपजत, बहुरि अपुनपौ कसियै ।।
वह बिनोद वह लीला रचना, देखे ही बनि आवै ।
मोकौं बहुरि कहाँ वैसौ सुख, बड़भागी जो पावै ।।
मनसा बाचा और कर्मना, हौं न कहत कछु राखी ।
सूर काढ़ि डार्‌यौ ब्रज तैं ज्यौं, दूध माँझ तैं माखी ।।७२६।।

माधौ जू मैं अतिही सचु पायौ ।
अपनौ जानि सँदेस ब्याज करि, ब्रज जन मिलन पठायौ ।।
छमा करौ तौ करौं बीनती, उनहिं देखि जौ आयौ ।
श्रीमुख ग्यान पंथ जौ उचर्‌यौ, सो पै कछु न सुहायौ ।।
सकल नियम सिद्धांत जन्म क्रम, स्यामा सहज सुनायौ ।
नहिं स्रुति, सेष, महेस प्रजापति, जो रस गोपिनि गायौ ।।

कटुक-कथा लागी मोहिं मेरी, वह रस सिंधु उम्हायौ ।
उत तुम देखे और भाँति मैं, सकल तृषा जु बुझायौ ।।
तुम्हरी अकथ कथा तुम जानौ, हम जन नाहिं बसायौ ।
सूर स्याम सुन्दर यह सुनि कैं, नैंननि नीर बहायौ ।।७२७।।

ब्रज मैं संभ्रम मोहिं भयौ ।
तुम्हरौ ज्ञान संदेसौ प्रभु जू सबै जु भूलि गयौ ।।
तुमहीं सौं बालक किसोर बपु, मैं घर-घर प्रति देख्यौ ।
मुरलीधर घन स्याम मनोहर, अद्भुत नटवर पेख्यौ ।।
कौतुक रूप ग्वाल बृंदनि सँग, गाइ चरावन जात ।
साँझ प्रभातहिं गो दोहन मिस, चौरी माखन खात ।।
नँद-नंदन अनेक लीला करि, गोपिनि चित्त चुरावत ।
वह सुख देखि जु नैन हमारे, ब्रह्म न देख्यौ भावत ।।
करि करुना उन दरसन दीन्हौ, मैं पचि जोग बह्यौ ।
छन मानहु षट्मास सूर-प्रभु, देखत भूलि रह्यौ ।।७२८।।

ब्रज में एक अचंभौ देख्यौ ।
मोर मुकुट पीतांबर धारे, तुम गाइनि सँग पेख्यौ ।।
गोप बाल सँग धावत तुम्हरें तुम घर घर प्रति जात ।
दूध दहीऽरु मही लै ढ़ारत, चोरी माखन खात ।।
गोपी सब मिलि पकरतिं तुमकौं, तुम छुड़ाइ कर भागत ।
सूर स्याम नित प्रति यह लीला, देखि देखि मन लागत ।।७२९।।

जौ पै प्रभु करुना के आले ।
तौ कत कठिन कठोर होत मन, माहिं बहुत दुख सालैं ।।
गहौ बिरद की लाज दीन हित, करि सुदृष्टि ब्रज देखौ ।
मोसौं बात कहत किन सन्मुख, कहा अवनि अवलेखौ ।।
निगम कहत बस होत भक्ति तैं, सोऊ है उन कीनो ।
सूर उसाँस छाँड़ि हा-हा-ब्रज, जल अँखिया भरि लीनी ।।७३०।।

सुनि ऊधौ मोहिं नैंकु न विसरत वै ब्रजबासी लोग ।
तुम उनकौं कछु भली न कीन्ही, निसि दिन दियौ बियोग ।।
जउ वसुदेव-देवकी मथुरा, सकल राज-सुख भोग ।
तद्यपि मनहिं बसत बंसी बट, बन जमुना संजोग ।।

वै उत रहत प्रेम अवलंबन, इत तैं पठयौ जोग ।
सूर उसाँस छाँड़ि भरि लोचन, बढ़यौ विरह ज्वर सोग ॥७३१॥

ऊधौ मोहिं ब्रज बिसरेत नाहीं ।
बृंदावन गोकुल बन उपवन, सघन कुंज की छाहीं ॥
प्रात समय माता जसुमति अरु नंद देखि सुख पावत ।
माखन रोटी दह्यौ सजायौ, अति हित साथ खवावत ॥
गोपी ग्वाल बाल सँग खेलत, सब दिन हँसत सिरात ।
सूरदास धनि-धनि ब्रजबासी, जिनसौं हित जदु-तात ॥७३२॥

ऊधौ मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं
हँस-सुता की सुन्दर कगरी, अरु कुंजनि कीछाँहीं ॥
वै सुरभी वै बच्छ दोहनी, खरिक दुहावन जाहीं ।
ग्वाल बाल मिलि करत कुलाहल नाचत गहि गहि बाहीं ॥
यह मथुरा कंचन की नगरी, मनि-मुक्ताहल जाहीं ।
जबहिं सुरति आवति वा सुख की, जिय उमगत तन नाहीं ॥
अनगन भाँति करी बहु लीला, जसुदा नंद निबाहीं ।
सूरदास प्रभु रहे मौन ह्वै, यह कहि-कहि पछिताहीं ॥७३३॥

ब्रज सुधि नैंकुहूँ नहिं जाइ ।
जदपि मथुरापुरी मनोहर, बिरद जादौराइ ॥
जौ कोऊ कहि कान्ह टेरत, चौंकि चितवन धाइ ।
ग्वालिनी अवलोकि पाछैं, रहत सीस नवाइ ॥
देखि सुरभी बच्छ हित जल रहत लोचन छाइ ।
सृंग बेनु बिषान सुनि कै, उठत हेरी गाइ ॥
दखि पत्र पलास के अलि, रहत उर लपटाइ ।
आनि छबि पै पान कै प्रभु, पिवत जल मुसुकाइ ॥
मोर के चँदवा धरनि तैं, स्याम लेत उठाइ ।
छाक छवि कै कोस भोजन, हँसत दधि परसाइ ॥
कुंज-केलि समान नाहीं, सुरपुरी सुखदाइ ।
बीसर्‌यौ नहि सूर कबहूँ, नंद जसुदा माइ ॥७३४॥

जो जन ऊधौ मोहि न बिसारत, तिहिं न बिसारौं एक घरी ।
मेटौं जनम जनम के संकट, राखौं सुख आनंद भरी ।

जो मोहिं भजै भजौं मैं ताकौं, यह परिमिति मेरे पाइँ परी ।
सदा सहाइ करौं वा जनकी,, गुप्त हुती सो प्रगट करी ।।
ज्यौं भारत भरुही के अंडा, राखे गज के घंट तरी ।
सूरजदास ताहि डर काकौ, निसि बासर जौ जपत हरी ।।७३५।।

हरिराय

सनेहलीला

एक समै ब्रजवास की, सुरति करी हरिराइ ।
निज जनु अपनौ जानिकै, ऊधौ लये बुलाइ ।।१।।

कृष्न वचन ऐसे कहैं, ऊधौ तुम सुनि लेउ ।
नंद जसोधा आदि दै, या ब्रज मै सुष देउ ।।२।।

ब्रजवासी वल्लभ सदा, मेरे जीवन प्रान ।
उनिकौं निमष न बीसरौ, मोहि नदराउ की आंन ।।३।।

हम उनिसौं अैसे कहैं, आवैगें रिपु जीति ।
अवतोरै कंसे बनै, पिता मातु सो प्रीति ।।४।।

ऊधौ वे ब्रज-जोषिता, जिनकैं मेरौ ध्यानु ।
जिनहि जाइ उपदेसियौ, पूरन ब्रह्म सुग्यान ।।५।।

वागौ अपनैं अंक कौ, कीट मुकट पहिराइ ।
श्री कुंडिलमाला दई, अपनौ मेष बनाइ ।।६।।

अरु अपनौ रथ साजि कैं, सुरथ स्वारथी दीन ।
ऊधौ चरन प्रनामु की, परशु आरोधनु कीन ।।७।।

विद्यावंत विवेकवान, सीलवंत मन सुद्ध ।
चक्रचीन जानत सबै, जो पठये श्री उद्ध ।।८।।

परम सखा श्रीकृष्ण कौ, सुरगन सिष्य प्रवीन ।
तातै लाईक जानिकै, व्रज मैं आइसु दीन ।।९।।

रथु जोति ऊधौ चले, आनँद अति मन भाउ ।
दिनकर ग्रह प्रापति भये, गये नंद के गाउ ।।१०।।

दिसि दिसि गौधन आवही, अरु व्रषभान की गाज ।
वह्द वचन लागत भले, मनहु थांन सुरराज ।।११।।

अपनी अपनी मंडिली, मिली ग्वालिन के वृंद ।
मुरली मधुर बजावही, गावै गुन गोविंद ।।१२।।

गौदोहनि मोहनि त्रिया, टेरत लै लै नाम ।
गोरज उड़ि अंबर लगी, छबि पावत ना दाम ।।१३।।

तब ऊधौ रथु हांकि के, गये नंद की पौरि ।
नंद जसोदा देषि के, सनमुष आए दौरि ।।१४।।

उधौ रथ ते उतरि के, मिले नंद कौ धाइ ।
नैन सजल जल सौ भरे, आनँद उर न समाइ ।।१५।।

कर गहि ग्रह कौ ले चले, सुर्त सनेह के भाइ ।
आसन विधि सौ लै किये, निज मंदिर पधराइ ।।१६।।

अरचन वंदन पहुम जल, धूप दीप करि आदि ।
विधि पूरब पूजा करी, सुष सिज्या अनुवाद ।।१७।।

नंद जसोधा प्रीति सौ, बूझन लागे बात ।
सूरसैन के पुत्र कौ, कहौ परम कुसलात ।।१८।।

उनिके षट् बालक हते, वंदि मेलिबे काज ।
बहुतक दिन दुषित भये, दुष्ट क़ंस कै राज ।।१९।।

भज़ी भई चानूर जू, श्रीकृष्ण की पौहति कंस ।
ता दिन ते सुष पावही, मातु पिता जदुवंस ।।२०।।

जिनके अष्ठादस त्रिया, राम कृष्न सुत दोइ ।
सरवस ता वसदेव की, कहैं कौन ते होइ ।।२१।।

देवन कौ मंगल भयौ; श्री वासुदेव जनमंत ।
घर घर प्रति सुरनरन के, दुःद्यवी बजै अनंत ।।२२।।

पटरानी देवकि सुता, करती परम कृपाल ।
ताकी महिमा को कहै, पचिहारे कवि जाल ।।२३।।

ऊधव तातें कीजिये, उनिकौ सुमिरनु ध्यानु ।
अवधौवै कवि आई है, आंनदरूपनिधान ।।२४।।

सुफल सुत आये यहाँ, राम कृष्ण लै जान ।
तवतै तनगति ह्यौ भई, इहा देह उह प्रान ।।२५।।

जसुधा नैन सजल कियौ, कंठ सास नहि लेत ।
करि करि बातै पुत्र की, हियरा भरि भरि देत ।।२६।।

निमष निमष मैं अगरतै, वे मो सौ दोऊ भ्रात ।
अवधौ कहि अब देषि हौ, चोर चोर दधि खात ।।२७।।

मौतिन की माला गरैं, राजहंस गति दौरि ।
वे अंगना कब देषिहौ, राम कृस्न की जोरि ।।२८।।

पीतांबर की वोढ़नी, बोलत मधुरैं बैन ।
वे नैननि कवि देषिहौ, बन-बन चारत धैन ।।२९।।

वे तो भूषै होत हैं प्रातकाल की बानि ।
उहाँ कहौ को राषही, धृत सौ रोटी सानि ।।३०।।

बात सुनौ इक देस की, तुम सौ कहौ बनाई ।
हियरा मै करि आलसी, चितै चितै वे जाई ।।३१।।

ऊधौ पैय उ फुनि चलौ, मैं दौरी तजि अंग ।
पीछे तै मेरे लला, दधि कौ भाजन भंग ।।३२।।

मैं देषत ही रिस भरी, थोरे दधि कै काज ।
ऊषल सौं आनंदघनै, मै बाँधौगे दाज ।।३३।।

ता दिन तै षटकत सदा, ये मेरे अविवेक ।
अैसी कहै को संभवै, सुत सौ औगुन एक ।।३४।।

ऊधव-वचन

तब ऊधौ अैसी कहै, सुत कौ सुनौ सदेस ।
तुम कौ नाहि न बीसरैं, या ब्रज कौ आवेस ।।३५।।

तुमहि पाइ लागन कह्यौ, जल सौ नैन भराइ ।
मैया मोहि न बीसरैं, जिनि बड़ौ कीयो पय प्याइ ।३६।।

जा दिन तैं आयै इहाँ, छाड़ौ गोकुल ग्राम।
इहाँ हम सौ कोउ ना कहै, कोन्ह कान्हं बलिराम ।।३७।।

जब हम तुम तैं बीछुरैं, आये मथुरा माँझ।
मैं कबहूँ नाहिन पीयौ, दधि घृत प्रातन साँझ ।।३८।।

ऊधौ बाबा नंद सौं, अैसौ कहियो जाइ।
वे तुमनी कै रषियौ, धौरी घूमरि गाइ ।।३९।।

मन वच करम करिहै सबै, उनिके पूरन काम।
आवैंगे दिन पाँच मै, हम भैया वलराम ।।४०।।

राजपाट सिंहासन, षान पान सुष देत ।
या ब्रज सुष पावत भले, बन मै बटै संकेत ।।४१।।

बात कहत बीती निसा, तमचुर कीनौ गान।
मानौ गाजत मेघ, घर घर दधि मथान ।।४२।।

ऊधौ उठि जमुना गये, कीनौ जल अस्नान।
सेवा सुमिरनु सब कियौ, जे तुक अपनौ जान ।।४३।।

करि कृतु आये घोष, ऊधौ मन आनन्द ।
या ब्रज सुष पावत भये, ले पूरन परमानन्द ।।४४।।

अपनैं अपनैं धाम तैं, बाहिर निकसी ग्वार।
रथु देष्यौ श्रीकृष्ण कौ, नंद महरि के द्वार ।।४५।।

जूथ जूथ केती भई, कीनौ यहू विचार ।
यौ नेही सुतनंद कौ, है कोई प्रतिहार ।।४६।।

ऊधौ पै गोपी गई, कीनौ वंदन पान ।
सीस नवाई आदर कीयौ, सषा कृष्न कौ जान ।।४७।।

ऊधौ ब्रज आए भलैं, कहौं कृष्न कुसलात।
उहाँ जाई इनिको कियौ, कहौ कहु उत्तिम बात ।।४८।।

तुम साचे सज्जन सखा, मन वच करम सहेत।
प्रानन कौ हरि लै गयै, पिंडदान तुम देत ।।४९।।

या ब्रज कबहू आवही, मैया के हितकाज ।
ब्रज जुवतिन कौ ना भजे, सो भये उहाँ के राज ।।५०।।

हम सखन द्वाडी सुनी, मोर पद्द विनधात।
सुरभी सांचे चित की, देषत ही सकचात ।।५१।।

ऊधौ हम तौ बावरी, करै कौन सौ प्रीति ।
उहाँ जाई छाँडी सबै, नंदगाव की रीति ।।५२।।

तब ऊधौ अैसे कहै, सुनो सकल ब्रजनारि ।
घातक हौ परब्रह्म की, आतमतत्व विचारि ।।५३।।

वे तुम सौ करिहै कृपा, प्रभूता जानि परंम ।
तजिए नातौ गाँम कौ, भजिए पूरन ब्रह्म । ५४।।

छया मया तै रहत है, होत नहीं उनमान ।
हरि तुम सौ अैसी कही, भजिये श्रीभगवान् ।।५५।।

या पद कौ जोगैस्वरा, लगै रहत अनुराग ।
सो साधन कीजै सदा, नाम ताहि वैराग ।।५६।।

नैननि मूदि मुष मौन गहि, त्रगुन रहत गुन धाम ।
तुव तुमही मे दीषिहौ, आपै आतम राम ।।५७।।
मधुकर अंतर कठिन है, कठिन बात कहि जात ।
भूष मरैं दिन सात लों, सिंघ घास नहिं षात ।।५८।।

जदपि जोग प्रसिद्ध है, तो तुमही लै जाउ ।
बहुरौ नाहिन पाइहौ, अैसौ उत्तिम दाउ ।।५९।।
मधुकर जातै जाति पै, तत्व रूप मन माहि ।
मोहन को सिषवत कहा, तुमही साधौ नाहि ।।६०।।
यह तौ जिनकौ चाहिये, जिनके अंतर राई ।
दादुर तौ जल बिनु जियै, मीन तुरत मरि जाई ।।६१।।

है दोऊ ऐक ठौर के, दादुर मीन समान ।
वे जल बिनु मारत मषै, वं छाड़त तजै पिरान ।।६२।।
मधूकर इतनौ आंतरौ, ब्रजमथुरा कौ लोग
विमुख करै हरि नाम तैं, जारि देउ यह जोगु ।।६३।।
पठये आए कौन के, कौन मित्र कौ जान ।
इहा तुम्हांरी कौन सौ, कहौ कहा पहिचांन ।।६४।।

वचन वचन बाढ़ी बिथा, नहिं जानत मन होति ।
मधुकर दादे अंग पर, कहा लौन घसि देत ।।६५।।

तनकारे मन साँवरे, कपटी परम पुनीत ।
मधुकर लोभी बासु के, निमष एक के मीत ।।६६।।

तुम तौ स्वरथ के सगे, नहीं वेलितैं भाउ ।
भावै वह गैह्वर चढ़ो, भावै जरि वरि जाउ ।।६७।।

तुम चरननि कौ जिन छिपौ, अैसी गति के वीर ।
मधुकर अंतर लालची, कह जानै पर पीर ।।६८।।

निकट रहत तिन स्याम के, तातैं निपट निपीर ।
बिछूरौगे जव स्याम सौ, तब जानौगैं वीर ।।६९।।

मधुकर बिछुरन की बिथा, तुम पर बीती नाहि ।
बिछुरौगे हरि संगतैं, जानौगे मन माहि ।।७०।।

हियरा भीतर दौं जरैं, धुवा न परगट होइ ।
कै जिय जानै आपनौ, कै जहि पर बीती होइ ।।७१।।

मधुकर अपनै चोर कौ, सब कोई डारैं मारि ।
मन कौ चोर हमकौ मिलैं, सखसु सु डारे वारि ।।७२।।

प्रेम वनजु की नौह तौ, नेह न पूजिय जानि ।
अब ऊधौ उलटी भई, प्रान पुजी मैं हान ।।७३।।

हम तुमसौ अैसे कहै, मधुकर सुनौ संदेस ।
नाहरि जातिन पात के, कह करत उपदेस ।।७४।।

कित विधना सिरजी हमैं, कित दे लै ब्रजवास ।
कित मिलाप श्रीकृष्ण सौ, कित बिछुरन की आस ।।७५।।

नैंन हमारे मधुकरा, आनन कृष्ण सरोज ।
ब्रज छाड़ी ताच्यौ सतैं, बैंरी भयो मनोज ।।७६।।

मनमोहन जौ नामुहै, मोहन नेन विसाल ।
रौम रौम मोहन सवैं, मो मन मैं है साल ।।७७।।

मोहन रूप सब अंग है, मोहन कव उनहार ।
मोहन पीठ कछु मोहनी, मोही सब ब्रजनारि ।।७८।।

वचन वचन मोही त्रीया, हम तुम कितियक बात ।
सुरन सहित सुर जोषिताः थकी घाम नहिं जात ।।७९।।

एक समै निस सरद की, मोहन बैंन बजाई ।
नैंन सैंन दै ब्रजबधू, लीनी सबैं बुलाई ।।८०।।

अरस परस हमकौ मिलै, कुंजनि कियो बिहार ।
सो सुष नाहिन बीसरैं, सुमिरत बारंबार ।।८१।।

एक समै जल के विषै, करत केल अस्नान ।
चीर चोर तरवर चढे, वे जसुधा के प्रान ॥८२॥

बहुरौ नाहिन बीसरै, भजबल की उनहार ।
राषि लयौ ब्रजकुल सबै, कर पर गिरवर धारि ॥८३॥

बहुरौ वन वन के विषै, कुंज कुंज निज धाम ।
हरि हम सौ क्रीड़ा करी, पल पल पूरन काम ॥८४॥

एक दिवस इक गोपिका, गई जु ग्रह के द्वार ।
दधि चोरत हरि के हरी, चले जु चा परमार ॥८५॥

हेरी दै ढाढे भये, आयै सकरी षोरि ।
मटुकी पटकी भूम सौ, हंसे हार कौ तोरि ॥८६॥

ऐसी दिन दिन की कथा, वरनत नाही और ।
हरि हमरी जानत सबै, मोहन चित के चोर ॥८७॥

लीला गोकुल गाँम की, है हमरे मन माह ।
ऊधौ तुम सरबस सुनी, नैननि देषी नांह ॥८८॥

जो तुम ल्याये जोग कौ, जदुपति के परधान ।
या रस की सीची सबै, अनरस भावन नान ॥८९॥

पतिवरता काहू रांक की, साषि भरत सब गांम
जदपि भजै काहू भूप कौ, तो विभचारिन नाम ॥९०॥

द्वीप रहत सार विषै, मन मिलाप नहि लेत ।
मधुरकर यउ तिम मतौ, स्वात बूंद सौ होत ॥९१॥

मान सरोवर तैं उड़ै, आने भूमि चलि जाई ।
विधि वाहन छुध्यारथी, काहू रतअन्न न षाई ॥९२॥

जल थोरा नाहिन कहू, सागर नदीं निमांन ।
स्वाति बूंद चात्रक पियै, अरु सब झूठ समान ॥९३॥

ऐ दोऊ नैन विराट के, निगम कहत है नित्त ।
वह चकोर अंतर कियौ, दिनकर आरसमित्त ॥९४॥

बेलि होत बरषा समै, करत बुद्ध सौ प्रीति ।
प्रान गये छाड़े नहीं, अपनो उतिम रीति ॥९५॥

उद्धव हम नर देह है, वे इतनी जानत नाहिं ।
रस तजि भजियै जोग कौ, भंग होत व्रत माहि ॥९६॥

करि आएँ जोवै करत, ऊँच नीच सौ संग।
हम नाहिन कबहू कियौ, इष्ट भाव सौ भंग ॥९७॥

जद्यपि कुबिजा चतुर है, यऊ कंस की दासि।
भवन गवन उनिकै कियौ, तुमसे सेवक पास ॥९८॥

लक्षिन के नाही दुरे, बड़े भूप के पूत।
कै वे साँचे रावरे, कै तम सांचे दूत ॥९९॥

यही कठिन लागत हमै, सुनौ स्याम के हेत।
आपु जाइ कुबिजा रची, हमै जोग सिष देत ॥१००॥

जा कहू लिष्यौ ललाट में, विछुरन मिलन सजोग।
दोस न काहू दीजियै, यह जानत सब लोग ॥१०१॥

देह धरी जा कारनै, लगिही ताके काम।
मनघट हरि रस सौ भरय्यौ, नहीं जोग को ठाम ॥१०२॥

मोर मुकुट गुंजामनी कुंडिल तिलक सुढार।
पीताम्बर क्षुद्र घंटिका, उर बैजन्तीमाल ॥१०३॥

कर लकुटी मुरली गहै, घूघरंवारे केस।
वे हमरे नैननि बसै, स्याम मनोहर बेस ॥१०४॥

तब ऊधौ ऐसी कहे, धनि धनि ब्रज की नारि।
प्रेम भगति सरबस किये, स्याम भजे उर धारि ॥१०५॥

यह लीला ब्रजवास की, गोपमेष अवतार।
प्रकट भये श्रीकृष्ण जू, तुम सौ करन विहार ॥१०६॥
निगम जाहि षोजत रहै, आगम लहै न अंतु।
सो तुम्हरे रस बस भयौ, श्रीपति श्री भगवंत ॥१०७॥

जोगेश्वर पावै नहीं, सिद्धि समाधि लगाई।
सो तुम्हरै बस रस रस भयै, बन बन चारत गाई ॥१०८॥
कहत कहत ऐसी कथा, लहरिह षटमास।
अब उधौ अग्या लई, हरि चरनन की आस ॥१०९॥

नंद मिले जसुधा मिली, गोपी मिलीं जु ग्वाल।
वंदन कर कर बाहुरे, ऊधौ चलै कृपाल ॥११०॥

नंद कह्यौ ज़सुदा कह्यौ, गोपिन कह्यौ बहोरि।
वे रजधानी रमि रहे, ब्रज कौ नातौ तोरि ॥१११॥

करिहै कब हम पर कृपा, निज करि सेवकु जानि।
हरि हम सौ जिनि बीछुरौ, पूरब ली पहिचानि ।।११२।।

अब आये ऊधौ यहाँ, कृष्ण चंद के धाम।
सीस नाउ वंदन कियो, बोलत लै लै नाम ।।११३।।

ग्वालबाल सब गोपिका, ब्रज के जीव अनिन्य।
तुमहि पाइ लागन कह्यौ, सुनौ देव ब्राह्मन्य ।।११४।।

नंद जसोदा हेत की, कहिये कहा बनाई।
वे जानें कै तुम भलै, हम पर कही न जाई ।।११५।।

अरु गोपिन के प्रेम की, महिमा कछू अनंत।
मैं पूछी षटमास लो, तऊ न पायौ अन्त ।।११६।।

देह ग्रेह सब छांड़ि कै, करत रूप को ध्यानु।
उनकौ भजनु विचारिये, तौ सब फीकौ ग्यानु ।।११७।।

वे चित तै टारत नहीं, स्याम राम इक जोर।
मधि नाइक मुरली गहै, पूरति मधुर किसोर ।।११८।।

उनके गुन नित गाइये, करि करि उत्तिम प्रीति।
हम कवहू दोषी नहीं, ब्रजबासिन की रीति ।।११९।।

तब हरि उधौ सौ कहै, वे जानत सब अंग।
मैं कबहू छाड़ौ नहीं, ब्रजवासिन कौ संगु ।।२००।।

ब्रज तजि अन्त न जाइहौ, मेरी तौ यह टेक।
भूतल भार उतारिहौ, धरिहौं रूप अनेक ।।१२१।।

कृष्ण भक्तु सो जानिये, जाके अंतर प्रेम।
राषै अपने इष्ट कौ, गोपिन कै सौ नेंम ।।१२२।।

गोपी-हरि-उधौ कथा, भुव पर परम पुनीत।
तीन लोक चौदह भुवन, बंदनीक सब गीत ।।१२३।।

संत भक्त भूतल विषै, अरु सब ब्रज की नारि।
चरन सरन रहियें सदा, मिथ्या जोग विचार ।।१२४।।

श्री मुकुंद मन मधुप जह, सकल संत अनुराग।
जसुदा प्रेम-प्रवाह में, परे रहत बड़ भाग ।।१२५।।

नासत सकल कलेस जग, अरु उपजत मनु मोद ।
जुगल चरन मकरंद मन, पादत परम विनोद ।।१२६।।

यह लीला ब्रजवास की, गोपी कृषन सनेंह ।
जनमोहन जे गावही, ते फिर लहै न देह ।।१२७।।

जो गावै सीषैं सुनो, मन वच कर सहेत ।
श्री रसिक राय पूरन कथा, मनवंछित फलुदेत ।।१२८।।

बारहमासा

१

कातिक किल्लोल करें सब सखियाँ, राधा विचार करै मन मैं ।
माधो पिया को आन मिलाओ, नहीं तो प्रान तजूं छिन में रे ।
हमको छोड़ चले बोनीमाधव, राधा विचार०

अगहन गेंद बनाये साँवरे ।
जाय खेले तट जमुना के, खेंलत गेंद गई जमना में ।
काली नाथ्यौ छिन में रे, राधा विचार०

पूस मास स्वामी हमसे छल कीन्हो, आप बसे सइयां मधुबन में रे ।
तुम नंदलाल जनम के कपटी,
हमसे कपट कियो छिन में रे, राधा विचार०

माहमास स्वामी जाड़ो लागत है
नींद न आवै मोरे नैनन में, राधा विचार०

फागन रंग बनाये सांवरे जाय खेले संग कुब्जा के
फेंक गुलाल हाथ पिचकारी, मारत तक घूंघट मेरे । राधा विचार

चैंत मास बन फूले हैं टेसू, ऊधौ आये समझावन को रे ।
हाथ सुमरनी गले मृगछाला, अंग भभूत मलै तन में रे ।
राधा विचार०

मास बैसाख बंस मोरी बारी, आप न आये सइयाँ मधुबन से रे
रितु ग्रीष्म और विरहा सताये
बिरहा की हूक उठी मोरे तन में रे राधा विचार०

जेठ में ज्वाला फूंके मेरे तन में
ऊधौ आये समुझाबन को रे, एक तो अकेली दूजे विरहा सताबै
आई गई रितु बर्षा की रे, राधा विचार०

लागो अषाढ़ घुमाड़े आये बदरा, बिजुरी चमके मोरे आंगन में रे
चौंक चौंक चहुं ओर निहारू, जैसे मीन फिरै जल में रे ।
राधा विचार०

सावन स्वामी हमसे छल कीन्हौं, प्रीति करि जाय कुब्जा से रे ।
कहो नन्दलाल प्रान कैसे राखू, नहीं आये श्याम वृन्दावन से रे ।
राधा विचार०

भादों भवन नींद नहिं आये, मोरा बोले मधुवन में रे ।
कोयल होके बन वन बोलूं, खोजूँ लाला वृन्दावन के रे ।
राधा विचार०

क्वार मास निरमल है चन्दा, गौरी सौवत अपने आंगन में रे ।
सूरदास तब औगन मिले हर, राधा सुखी भई मन में रे ।

२

आली रे घनश्याम बिना व्याकुल राधा, जेठ मास नहिं भावए चीर
मंजु मनोहर जमुना तीर, ओढ़े मृगछाला योगिन वेश ।
पुष्पहार छवि अति दुख देत । व्याकुल राधा ।।

अषाढ़ मास घन गरजत घोर, रटत पपिहरा नाचत मोर ।
आयल है सखि मास अषाढ़
हरि बिनु मोहि चन्द्रिका भार । हार मोतियन ।।

रतन सिंहासन रेशम क डोर
मोतियन झालर लगए चहु ओर परत हिंडोरा
सावन मास गहि गहि धरम, सखियन के बाँह माझ बइसावे ।।

भादव जे जिया भयावन रात, बिजली घटा देखि काँपत गात ।
भरि भरि नदिया अगम बह नीर
विकल विरह जियरा नहि धीर । धरू कह कइसे ।।

असिन शरद जनावत जोर, उगए चाँदनी दुख बरजोर
बोलत हे सखि कीर चकोर, कहवाँ गेल मोरा नन्द किशोर ।
आली रे घनश्याम बिना ।।

कातिक कामिनी करत सिंगार, नव सुत गज मुक्ता के हार ।
माधव न आय पठवै संदेश
छत्र मुकुट छबि अति सुख देत । आली रे घनश्याम बिना ।

अगहन अग्र सोहावन लाग, श्री कृष्ण बिना राधा जी बेहाल ।
अबके मुरली बजइहें रंग
ता संग रन बन घूमव संग । आली रे घनश्याम बिना ।।

पूस ऊधौ जी आए पास, पत्रिका दीन्ह गोपि राधिका हाथ ।
बाँचत पाती झहरत नीर,
खाय हलाहल तजब शरीर । जिअब हम कइसे ।।

माघ ऊधव नहि आये कंत, केहि संग खेलब रीति वसंत ।
अब बनि बइसब साधु गंभीर
योग लिखि पठवै । आली रे घनश्याम बिना ।।

फागुन सखि सब घोरत रंग, चोआ चंदन चढ़ाइव अंग ।
हम अबला सोचत ब्रजनारी, कुबरी सउतनिया संग खेलत मुरारी
त्यागि मोहि कइसे ।।

चैत उधव बन ही फूलय गुलाव, चुन चुन फूल गुथाएव माल ।
जाय मधुपुर छाड़ब लाज, सोच सुदिन दिन मंगल आज ।
आली रे घनश्याम बिना ।।

वइसाख ऊधव नहि आय श्याम, कइसे काटत हम उखंम घाम ।
सूरश्याम आवत यदुराय, राधा मिलपि अंग लगाय ।
आली रे घनश्याम विना ।।

३

उमड़ि बादल घिरे चहुं दिशि, गरजि गरजि सुनावहीं ।
श्लाम ऐसो निठुर बालम, मास अषाढ़ न आवहीं ।।

सावन रिम झिम मेघ वरिसय, जोर सँ भरि लावहीं ।
चहुँ और चक्रित मोर बोले, दादुर शब्द सुनावहीं ।।

भादव गरजत झहरि बरिसत, जोरि दमकत दामिनी ।
श्याम बिनु सून सेजिया, रात डरपत कामिनी ।।

आसिन हे सखि आस लगवल, श्याम अजहूँ न आवहीं ।
ताल भरि भरि नीर हे सखि, विदित वर्षा हो गई ।।

कातिक कामिनि रटत पिउ, निशि अकेली हम खड़ी ।
हम जिअब कोन हेत ऊधो, जोग बस ज्वानी गई ।।

अगहन हे सखि श्याम नहि, किछु कहि गेल ।
श्याम जी के कठिन हृदय, मोहि दुख दय गेल ।।

पूस ऊधो जाहु मधुपुर, कौन जोगिनि बस किय ।
जाय हिल मिल के कान्हा, हमरे के दुख दय गिय ।।

माघ जाडा शीत गहरा, काहु के न पठाइय ।
छाड़हु सखि सब लाज तन के, चलहु मधुपुर छाइय ।।

फागुन हे सखि होरि आयल, दिल सें उमड़त अंगिया ।
नाक बेसरि सुरंग चोली, तिलक थिक मल मँतिया ।।

चैत हे सखि पुहुप फूलय, से देखि भौंरा लुभाइल ।
रूप सुन्दर सियहु से बल, चलत मन पछताइय ।।

वइस साख ऊधो जाहु मधुपुर, हरि सं बिपति जनाइय ।
हम ता अबला दुखित हरि बिनु, हरि के आनि मिलाइय ।।

जेठ ऊधो भेंट होय गेल, पुरल मन के आशिया ।
सूर कहे भजु कृष्ण राधा, पुरल बारस मसिया ।।

४

चनन रगरु सुहागिन, गला मोहर माल।
मोतियन माँग भरोरे, आयल सुख मास असाढ़।।

सावन अति दुख भरी, दुख सहलो नें जाय।
एहो दुख सहरानी कुबरो, भादव रात अंधिरिया।।

मेघ बरिसन लागु, आसिन आस लगाओल।
आसो न फुरल हमार, एहो आस पुररानी कुबरो।।

जिन कंत राखल लुभाय, कातिके निज पूर्णिमा।
चलु सखि गंगा स्नान, गंगा नहाइन लट धूरमय।।

राधा मन पछतात, अगहन अग्र महीना।
लयलन अग्रक चीर, चीर खोलि धयलो मन्दिर धर।।

मनमा मोर भेल उदास, पूसहि फ़ूँह पड़िया गेल।
भिजि गेल अग्रक चीर, जे लयलन विदेशी बालम।।

जिओ कंत लाख बरीस, माघहि निज पूर्णिमा।
करितो व्रत त्यौहार, घरसिंगार सब करितो।।

धरितो व्रत त्यौहार, फागुन फगुआ जँ खेलितो।
रहितो रंग रेजुवा क मास, इत्र गुलाव रंग खेलितो।।

धोरितो बटाभरि अबीर, चैतहि बेला फुलिय गेल।
फूल देखि भौंरा लोभायल गेल, गमकय हमर शरीर।।

बइशाखहि वंसवा कटइतो, छवइतो नवरंगी बंगला।
ओहि बँगला पहसि सुनितों, करितो भोग विलास।।

जेठहि हेठ होइ गेल, पुरिगेल बारहों ज मास।
'सुरहि दास' बलिहारी, लेखा लेहु न विचार।।

५

चैत हे सखि फूलल बेली, भंओरा लिहल निज वास हे।
तेजि मोहन गेला मधुपुर, हमर कौन अपराध हे।।

बैशाख हे सखि उखम ज्वाला, घाम में भिजल शरीर हे।
रगरि चंदन अंग लेपों, जौं गृहि रहितो में कंत हे।।

जेठ हे सखि हेठ बरसा, श्याम हमार विदेश हे।
सुमिरि हरि बिनु जीव तरसम, नयन सँ झहरत नीर हे।।

असाढ़ हे सखि बूँद छन छन, दादुर रंग मचाव हे।
पाहुन पहुना अवइत देखल, श्याम मधुपुर छाव हे।।

सावन हे सखि लिखत पाँती, ऊधो पठवल मोहि हे।
बलहु सखि सब घाट यमुना, देखव कदम चढ़ि बाट हे।।

भादव हे सखि रइनि भयावन, दूजे अँधेरिया रात हे।
घर पछुअरवा कुम्हारक डेरवा, नित उठि छानत दुकान हे।।

आसिन के सखि आस लगाओल, आसो ने पुरल हमार हे।
एहो आस पुरल कुवरि जोगनिया, जिन कंत राखल लोभाय है।।

कर्त्तिक हे सखि कंत विदेश गेल, नयन भरल दुनु नीर हे।
केकरा दुआरिया रामा ठाढ़ि होएवो, केकरा सँबोलब बात हे।।

अगहन हे सखि सारि बुधि भुलि गेल, फुटि गेल संग रंग धान हे।
हंसा चकेउआ रामा केंरि करम, कोयल करत किरकार हे।।

पूस हे सखि कूहि परि गेल, भिजि भेल तनमा क चीर हे।
एकत भिजे रामा कटावक चोलिया, जोवन मेल गतिहीन हे।।

माघ हे सखि चपाला परि गेल, थर थर काँपय आंठो अंग हे।
हम धनि काँपत टुटलि मड़इया, पिया काँपय परदेश हे।।

फागुन हे सखि मास बारह, कृष्ण उतरथि पार है।।

६

कन्हैया नहिं आये कन्हैया के लीआई।।
सीतल चंदन अंग सगावति कामिनि करत सिंगार।
जा दिन ते मन मोहन बिछुड़े सुनकै मास प्रसार।।
कन्हैया नहीं ।।१।।

एक त गोरिया अंगवा क पातरि, दूसरे पिया परदेस।
तिसरे मेह झमाझम बरसै सावन अधिक अंदेस।।
कन्हैया नहीं० ।।२।।

भादौं रैनि भयावनि ऊधौ, गरजै अस घहराय।
लवका लवकै ठनका ठनकै छतिया दरद उठि जाय।।
कन्हैया नहीं० ।।३।।

क्वारैं कामिनि आस लगावै जोहै पिया की बाट।
अबकी बार जो हरि मोर अइहैं हियरा क खुलि है कपाट।।
कन्हैया नहीं० ।।४।।

कातिकैं पूरनमासी ऊधो सव सखी गंगा नहाय।
हम अस अबला परम सुनरिया काके गोहनवां जायं।।
कन्हैया नहीं ।५।।

अगहन ठाढ़ि अंगनवाँ ऊधो चहुँदिहि उपजा धान।
पिया बिनु करके मोर करेजवा तन ते निकरत प्रान।।
कन्हैया नहीं ।।६।।

पूसहि पुरवा परिगै ऊधौ भींजि गई तन चीर।
चकई चकवा बोलि करतु हैं वाहि जमुना के तीर।।
कन्हैया नहीं ।।७।।

माघ कड़ाका जाड़ा ऊधो सब सखी रुइया भराय।
हमरा बलम परदेस रहतु हैं पिया बिन जाड़ न जाय।।
कन्हैया नहीं ।।८।।

फागुन फगुवा बीति गये ऊधो, हरि नहिं आये मोर।
अबकी जे हरि मोर ऐहैं, रंग खेलव झकझोर।।
कन्हैया नहीं ।।९।।

चैत फूले बन टेसुल ऊधो, भंवरा पइठि रस लेइ।
का भवराँ नू लोटा पोटा, काहे दरद मोहिं देइ।।
कन्हैया नहीं ।।१०।।

वैसाख वांस कटोतिऊँ ऊधो, रचि रचि अंटा छबाय।
तेहि चढ़ि सोवतैं कृष्णाह कन्हैया अंचरन करतिहँ बाय।।
कन्हैया नहीं ।।११।।

जेठ तपै मृग डहिया ऊधो बन कै पवन हहराय।
आये पिया हिल मिल के प्यारी, जिय की जरनि बुताय।।
कन्हैया नहीं ।।१२।।

७

पहिला महिना आसा लागो बरषा रित आई।
प्रीतम हमारे स्याम सलौने चिठि भिजवाई॥
कहौ जीवै कैसे नहीं आयें अैसे चतुर सुजान।
स्याम कै चेरी ने विलमाये डार कर जादू की फाँसी॥
श्री राधा गोपी त्याग करी घरबारी कुबजा सी॥१॥

सावन मैं मन भावन हर के दामन सी लागी।
जब तो तिल तिल प्रीति बढ़ाई अब कैसी त्यागी॥
सुनौ तुम ऊधौ मेरी सौं लाज सरम गई छूट।
प्रीत जब की नीचे रीसौ नहीं रे मोहि आवत है हासी॥
श्री राधा गोपी त्याग करी घरबारी कुबजा सी॥२॥

भादौ रेन अँधेरी लागी पीतम की प्यारी।
भूक न लागे नीद न आवै सरद गरम न्यारी॥
मिलावै है कोई ऐसा॥
कपटी कुइल अहीर स्याम कौं जानत हो जंसा।
मार गयौ बिरहा की गासी॥
श्री राधा गोपी·········॥३॥

कुवार कनागत लागे सजनी सब कोई धरम धरम करै।
हम तो धरम जबही करहै पीतम नजर परै॥
मिलावै है कोई ऐसा।
लै कर चलै मथुरा कौ वा दिन कै वै॥
बुद्धि ज़ाकि अब कैसी नासी।
श्री राधा गोपी·········॥४॥

कातिक का तिक करे कृस्नु ने सब काउ जानी।
आषर जात अहीर स्याम को कुबजा मन मानी॥
कंसि की आखर कौ चेरी।
जाही सै दिन रैनि आस मेरी फरकत है डेरी॥
प्रीत कर अब त्यागी केसी॥
श्री राधा गोपी·········॥५॥

अगहन में मन भड़िकन लागा धरकत है छाती ।
ऊधौ ऊधौ हत सदेसौ आयौं बाचौ री पाती ।।
लिषियौ री कुछ तुम पीतम कौ प्यारो
बोहोंरि मिलेगै आवन जिपतन हिया होगे
हम कौ हमारे जिय कै सुष वासी ।।
श्री राधा गोपी·········।।६।।

पूस मास पिय चले डगर कौ भोरे पीतम पीय
प्यारे काननि लागे दुतकर हेरे नैन से न्यारे
अबैरी मोहि मदन सतावै री जिय के कारन जात सहे
सौ ऊधौ ल्यावै री मार गयौ मोहि वन की गासी
श्री राधा गोपी·········।।७।।

माही नाह की डाव कहौ अब केसो का कीजै
उठत कारह कराह साहस अब कैसे कै कीजै
कहो जी कब आव वृजवासी
श्री राधा गोपी·········।।८।।

फागुन फीके लाग पिया बिन मोह गही विस्नौ
पाती वाचत खेम गोपिकन बात कही रिस सौ
गयै री वै स्याम करन चेरी
हमरे जीवन कंथ संग वाही षेल होरी
खबर मोरी लीनौ कै लासी, श्री राधा गोपी·········।।९।।

चेत चिता वरज रोवरो मे गिरती कुयला मैं
कहियौ मदन गोपाल स्याम कुब्जा कौ लै आवै
उनै कछु इनि बातर कौ डरना
हम तौ हैं दरसन के लौवी और नहीं करना
सकल हम दरसन के प्यासी, श्री राधा गोपी·········।।१०।।

लगे घैम वैसाख सीस घर घर सै फिर आई ।।
ऊधौ जी नै स्याम कौ ऐसे समझावै ।।
पैज तौ नाहक क्यौं रोपी ।।
हाड़ चाम रे गयौं सूक बावरी हो गई सब गोपी ।।
श्री राधा गोपी······।।११।।

जेठ मास मैं मिलै कृस्नु कौ जब राधा गोपी सौ
वृजवास न अनंद भयौं जब छुटै बाधा सौ,
परम यह पढ़ै सुनै गावै
वास बरेली के लाल सास नैं बारामासी गावै
श्री राधा गोपी·········॥१२॥

८

सखि, लागौ असाड़े मास, प्रभु वन चाल्या रे
चाल्या चाल्या रे दुवारकानाथ, हरि मन्दर सूनो रे
म्हारा प्रभुजी ने राख्या विलमाय कामणी करिया रे
सखि, एक सो दासी ने साथें, दूजी कुबजा रे ॥१॥

सखि लागो सावण मास, बिजेला चमके रे
झींड़ीं-झींड़ीं पड़ रही बुन्द सालूड़ा भीजे रे ॥२॥

सखि लागो भादव मास घटा घनघोर छई रे
छई रे छई रे दुधारी रात, हरि मन्दर सूनो रे ॥३॥

सखि, लागो कुँवारे मास दसेरो आयो रे
म्हारा प्रभु जी बिना यों कुण, दसेरो मनावे रे ॥४॥

सखि लागो कार्त्तिक मास, दिंवाली आई रे
सखि घरे घरे गोरेघन पुजाय, हरि मन्दर सूनी रे ॥५॥

सखि, लागो अगठो मास, सियालो आयी रे
म्हारा प्रभु जी बिना यो कुण सोड़े पधारे रे ॥६॥

सखि, लागो पोसज मास अँगिया फाटी रे
म्हारा किसन जी बिना कुण अँगिया सिवाड़े रे ॥७॥

सखि, लागो म्हावज मास बसन रितु अई रे
म्हारा प्रभु जी बिना यो कुण बसन रमकि रे ॥८॥

सखि लागो फागण मास होली आई रे
सखि घर-घर फागे खेलाय हरि मन्दर सूनो रे ॥९॥

सखि लागो चेतज मास गणेगोर आई रे
सखि घर-घर गणगोर पुजाये हरि मन्दर सूनो रे ॥१०॥

सखि लागो बेसाख मास उणालो आयो रे
घर घर पंखा डोलाय, प्रभु मन्दर सूनो रे ।।११।।
सखि लागो जेठज मास प्रभु घर आया रे
आयो आयौ से जवानी रो जोस कसेना टूटे रे ।।१२।।

६

ऊधौ सुख न मिले दिन राती ।
माह वसन्त लगो मोहि फीको फागुन रंग न सुहाती ।
उड़त अबीर छुटै पिचकारी चैत न हूक बुझाती ।।१।।ऊधौ०

बाट लखी बैशाख श्याम की जेठ ज्वाल तन घाती ।
असाढ़ मेघघन गर्जन लागे बूंद लगे मोरी छाती ।।२।।ऊधौ०

सावन में सखि झूलें हिंडोला भादों नींद नहीं आती ।
बरसत नीर झुकी अँधियारी क्वार शरद ऋतु आती ।।३।। ऊधौ०

कातिक में जब भई दिवाली मन हरदेव न भाती ।
अगहन आस लगी मिलबे की पूष भेज दई पाती ।।४।। ऊधौ०

१०

प्रथम मास असाई हे सखि ! साम अबहुँ न आवहीं ।
गोखुला उजारि ऊधो ; जाके मधुपुर छावहीं ।।१।।

सावन सगुन सोहावन हे सखि ! देखि के मन लोभहीं ।
घर घर सखि सभ झूले हिंडोला, पिया से करत कलोलहीं ।।२।।

भादो रैनि भयावनि हे सखि ! देखि के जियरी डरी ।
चहुँ ओर चमकत बिजुरी ऊधो, मेघ गरजत घन भरी ।।३।।

आसिन मास अनदेस ऊधो, कवन बात धिरिजा धरीं ।
हम मरीं बिख खाइ ऊधौ, जो मोहन नहिं आवहीं ।।४।।

कातिक मास पुनीत ऊधो, सखिन सम कौतुक करे ।
हरि दुआरे पूजि के ललित हो कूल्हि आवहीं ।।५।।

अगहन में सखि जाड़ लागतबा, जो पिया रहिते साथ हीं ।
दुःख सुख राम साचे गवँइतो, दिया बरितो अकासहीं ।।६।।

पूस में सखि परेला फ़ुहेरा, धूँध काल न सूझहीं ।
अस पुरुख असि नारि नाहीं, और सो मन लावहीं ।।७।।

माघ में धन भाग उनकर, जे पिया के साथ हीं ।
अंग में अंग मिलाइ ऊधो, बाँहि धरि सिरहानहीं ।।८।।

फागुन में सखि खेलत होरी, रंगन भींजत सरीरहीं ।
खेलत होरी राम करत बोली, पिया बिनु लहरें करेजहीं ।।९।।

चैत में चित चार ऊधो, भाग से पिया पावहीं ।
अपना करम के बात ऊधो, दोस काहु न लावहीं ।।१०।।

बैसाख में बहुत उछाह ऊधो, नारी मंगल गावहीं ।
घर घर सखि सभ मंगल गावें, हरखि झूमर पारहीं ।।११।।

जेठ में प्रभु भइ गइले भेंट, पूजल बारह मासहीं ।
पूजल बारह मास ऊधो, पूजल मनवा के आसहीं ।।१२।।

११

प्रथम मास आसहि हे सखि ! बूँद से झड़ि लागहीं ।
साम अइसन निठुर ए सखि, मास असहि आवहीं ।।१।।

सावन रिमझिमि दैव बरिसेले, बूँद से झड़ि लागहीं ।
चारु चक्र चाकरित मोर बोलेला, बेग सबद सुनावहीं ।।२।।

भादों रैनि भयावन ए सखि, दूसरे अँधरिया राति हो ।
सेज छाड़ि हरि हमरा के गइले, इहे ह दुःखवा के बात हो ।।३।।

कुआर लालन, कुआर लालन, कहाँ गइले नन्दलाल हो ।
किया राम घूमेले कदली के बनवा, किया कुबरी के साथ हो ।।४।।

कातिक कन्त विदेस ए सखि, जोगिनी तैयार हो ।
दुःख सुखवा हरि संग गवँइतो, दियवा बारतों अकास हो ।।५।।

अगहन में सखि रैनि अगम भइल, नाहीं त होला विहान हो ।
सेज छाड़ि हरि हमरा के गइले, इहे दुःखवा के बात हो ।।६।।

पूस में सखि ओस परत बा, ओसे भीजेला लामी केस हो ।
सीर सेंदुर नयन काजर, इहो तोहरा साथ हो ।।७।।

माघ में सखि ठाट परेला, जइसे जीव के ज़ंजाल हो ।
बारि समय परदेस वालम, जियवि कवन हवाल हो ।।८।।

फागुन में सखि फाग होला, होता रंग अबीर हो ।
खेलत होली करत ठिठोली विहरेला हमरे करेज हो ।।९।।

चैत में सखि जीव चंचल, कोइलि बोले आय डारी हो ।
कोइलि सबद सुनि निनियो ना आवेले झंखत होला विहान हो ।।१०।।

बैसाख में सखि बँगला छबाइवि, काटवि वतीस दुआरि हो ।
ओहि में हरि सूतल रहिहें, हम धनि बेनिया डोलाई हो ।।११।।

जेठ में सखि भेंट भइले, पूजेला मन के आस हो ।
'सिव नारायन' रोज गावेले, गावेले वारहमास हो ।।१२।।

भजन

राधे जी चललीं साम मिलन को, बीच में जमुना धार,
बिनु रे कन्हइया नइया डगमग करे, कइ से के उतरबि पार ।।१।।

अब त कन्हइया गीरिहि छाड़ि देलें, ले लें हो मथुरा में बास,
हमरो सुरति बिसरा दे लें हो लिहलें मथुरा में वास ।।२।।

सुख सब अपना साथ ले गइलैं हो दुख दे गइलें गात,
दुसह बिरह मोके दे गइलें हो, तलफे दिन रात ।।३।।

ऊधो जी हमरो सनेसिया हो, तू त मथुरा में जाई,
हरि से कहिह समुझाइके हो, कवन चूकिया हमार ।।४।।

ऊधो जी हमरो सनेसिया हो, तू त गोकुल में जाई,
धनिया से कहिह समुझाइके हो कवनो चूकि न तोहार ।।५।।

धिरिजा धरहु मोरे राधा जी हो, सुख होइहें हमार ।।६।।

कजली

मथुरा के देसवा भेजलैं पियरवाँ रामा ।
हरि हरि ऊधो लाए जोगवा को पाती रे हरी ।।

सब मिलि आओ सखी सुनो नई बतियाँ रामा ।
हरि हरि मोहन भए कुवरी संघाती रे हरी ।।

छोड़ि घर-बार अब भसम रमाओ रामा।
हरि हरि अब नहिं ऐहैं सुख की राती रेहरी ॥
अपने पियरवाँ अब भए हैं पराए रामा।
हरि हरि सुनत जुड़ाओ सब छाती रे हरी ॥१॥

'हरीचंद'

ऊधो ऐसी कहियो हर सों,
नँदलाला गिरधर सें।
कै गये ते दस पाँच रोज की।
बीत गई हैं बरसें।
खान पान निस नींद न आवै,
प्रान रहे दिन तरसें।
अवध लाल आँखन के असुँवा,
होड़ लगाये फिर सें ॥२॥
जब से लगी कूबरी काने,
हो गए स्याम बिराने।
उन बिन बिकल रहत हम ऊधो,
कब आवें बरसाने।
कहियो कही हमारी ऐसी,
कही जोर जुग पानें।
मन भावन बिन बिकल राधिका,
न रये प्रान ठिकाने ॥३॥

कौन गुन सुरति बिसारी अरे हाँ रे ऊधो।
इन गलियन हम हरि संग खेले, अब का फिरे अकेले। अरे०
हमको जोग भोग कुबिजा को, लिख-लिख भेजे पाती। अरे०
इन पटियन हय डारयो फ़ुलेला, अब क्या जटा बढ़ावे। अरे०
सोलह सहज गोपिका छोड़ी, करि कुबिजा घरबारी। अरे० ॥४॥

क्या मेरी तकसीर, कुंजन बन छोड़ी ऐ ऊधो।
जो मैं होती मानिक मोती, कृष्ण बाँधते मुकुट,
मुकुट में जड़ रहती ऐ ऊधो।
जो मैं होती मोर की पखी, कृष्ण धारते सीस,
सीस पर रहती ऐ ऊधो ॥५॥

जोग

बसहर घरवा ए ऊधो, रामा झिलिमिलि बाती।
पिया ले में सुतली ए ऊधो, रामा अँचरा उसाई ॥१॥

जौं हम जानितिं ए ऊधो, रामा पिया जइहें चोरी।
रेसम के डोरिया ए ऊधो, रामा घीचि बाँध बँधितीं ॥२॥

रेसम के डोरिया ए ऊधो, रामा टूटि फाटि जइहैं।
बचन के बान्हल पियबा, रामा से हो काहाँ पइवो ॥३॥

जवनी डहरिया ए ऊधो, रामा पिया गइले चोरी।
तवनी डहरिया ए ऊधो रामा बगिया लगाओं ॥४॥

बगिया के ओते रे ओते रामा केरा नरिअर लाई।
अँगना ससुर ए ऊधो, रामा दुअरा भसुरा ॥५॥

कइसे के बहरा रे होरवीं, रामा बाजेला नुपुर।
गोड़ के नुपुरवा ए ऊधो, रामा फाँड़े बाँधि लेहूँ ॥६॥

अलप जोवनवा ए ऊधो, रामा हिर्दये लगाई ॥७॥

पग मधे पान ए ऊधो, रामा फ़र मधे नरियर।
तिरिया मधे रामा ए ऊधो रामा पुरुख मधे कान्हा ॥८।

कत ले पहिरों ए ऊधो रामा कत समझो गूना।
सोना के सिँधोरवा ए ऊधो, रामा लागि गइले घूना ॥९॥

मोरा लेखे आहो ए ऊधो, रामा दिन भरले रत्तिया।
मोरा लेखे आहो ए ऊधो, रामा जमुना भयाती ॥१०॥

भनहिं विदापति ए ऊधो, रामा सुनु सुनु ब्रिज नारी।
धिरिजा धरहु ए राधा, रामा मिलिहैं मुरारी ॥११॥

बिरहा

गोखुला में कइल गोखुलइया तू कन्हैया,
मथुरा में कइल ठकुराई।
कूवरी के लेके छावेल मधुवाना वा,
राधिका के दिहल बिसराई ॥१॥

१

पिढ़िया के गीत

कूबरी का नाकवा बेंसरिया सोभेला रे।
किसुन जी का सोभेला गरबा में हारवा रे ॥१॥

भले भले कूबरी मचवले तू कजरी रे। टेक।
कूबरी का गरवा हसुलिया सोभेला रे।
किसुन जी का माथे सोभे मोर के मुकुटवा रे ॥२॥

भले भले कूबरी मचवले तू कजरी रे। टेक।

जतसार

मधुबनवा से मोर हरी अइहें कि ना ॥टेक॥
गोकुला नगरिया के लोग सब व्याकुल;
आपन सुरतिया देखलइहें कि ना ॥१॥ मधुबनवा०

तड़पी तड़पि मोर निनियों ना लागे,
छूटल पिरितिया लगइहें कि ना ॥२॥ मधुबनवा

छलिया छल कइके काहे के तजलें,
कुबरी सवतिया ले अइहें कि ना ॥३॥ मधुबनवा

पिया पिया कहत भइली हम पगली,
ओरवधिया अब लेके उ अइहें कि ना ॥४॥

२

ऊधौ सब कारे अजमाये।
कोयल काग भमर अति काले, ऊनहूँ के रंग सुहाये।
ये तीनों मतलब के गरजी, बहुरि पास ने आये।
कोयल के सुत कागा पाले, हितकर कंठ लगाये ॥
बड़े भये जब समझन लागे, कुल अपने को धाये।
आप तो जाय मथुरा जी छाये, ब्रजवासी भरमाये ॥
सूरदास यो कहत राधिका, अब को पार लगाये ॥१॥

ऊधौ कहि सो फेर मत कहियो।
माधौ कहि सो फेर मत कहियो।
जो हर हमको उबरी चाहे, अनबोला चुप रहियो॥
काया को जला भस्म कर देंगीं, आन मसान जगइयो।
या हरि हमको आन मिलाओ, या चल्यो साथै॥
पूरा बैर कर हरि हमसे, उनसे यौं जा कहियो।
कुब्जा सेती रास रचा है, हमें जोग लिख दियो॥
गोपी प्रान तजें गिरधर बिन, हमें दोष न देइयो॥२॥

ऊधौ पाती कैसे लिखूँ, लिखि न जाय।
पाती लिखत मोरा कर कंपत है, डोबा बहि बहि जाय।
पाती लिखत दोऊ नयन बहत हैं नदियाँ बहि बहि जाय॥
एक-एक बात मेरी ऐसी मरम की, छतियाँ फटि-फटि जाय।
हाड़-माँस सब खून सूखिगो, भस्म टटोलेंगे आय॥३॥

ऊधौ जी तुम जाय स्याम् को समझाना।
हमको लिखि-लिखि जोग पठावैं, आप तो बैठे मौज उड़ावैं,
सौतन लियौ बिरमाय—निठुर बन गयो कान्हा।
लिखते में कछु शर्म न आई, जियत खसम किन भस्म रमाई,
प्रान रहे घबराय–लिवा उनको लाना।
जमुना जल में स्वाद न आवे, ब्रज मंडल देखो नहीं भावे,
घर अंगना न सुहाय—न कछु खाना पीना,
कारे स्याम बेगि सुधि लीजो, राधा कहे दरश मोय दीजो,
बरसाने में आय—प्रेम रस बरसाना॥४॥

ऊधौ फेर ले जाओ या पाती।
पाती दिखत मोरे आँसू चलत है, बांचत फाटे छाती।
ना हम ऊनखां वै ना हमारे, भये कुब्जा के साथी।
हमारे होते हमरी सुध लेते, काहे खां जरावें मोरी छाती॥५॥

ऊधौ कारे रंग अजमाये।
कारी कोयल भौंर अँधियारी, तीनों रंग सुहाये।
ये तीनों मतलब के साथी, फिर वापस न आये॥
कारे नाग रहै बाबिन माँ, उनहुन दूध पियाये।
बीजक में जब काटन लागे, फेर लहर न आये॥

कोयली के सुत कागा पाले, भर-भर अंग लगा ये ।
बड़े भये जब बोलन लागे, कुल अपने को धाये ।।
जसुधा के लाल नंद जी के बेटा, जाइ द्वारका छाये ।
सूरदास बल जाब चरनन की, अब को पार लगाये ।।६।।

ऊधौ स्याम सनेहिरा कहाँ को ।
आठ मास नौ गौद में राखे, भये न अपनी माँ के ।
जब रथ हाँक दये मधुवन खाँ, सखितन बाँधे नीके ।।
खा-खा दूध दही गोकुल की, फिर ना ब्रज में झाँके ।
जो मैं जानती प्रीत न करती, करें कुबजा के नाते ।।७।।

ऊधौ स्याम सनेंही कहा को ।
प्रथमैं लीला ब्रज माँ टाँको, फैल रहे जस बाँको ।
दूध-दही गोकुल में खाइन, फेर न ब्रज में झाँको ।।
अब रथ हाँक चले मधुबन को, सखियन नाका ताको ।
लाख दुहाई तोरी नंद बावा की, जो जमुना जल नाको ।।
जो मैं जनतिऊं प्रीत न करती, ह्वै अपनें दिल वाँ को ।
लोक कुटुम क्रिया पर डालिन, परगे कुल माँ टाँको ।।
जसुदा जी के लाल नंद जी के बेटा भयौ न अपनें माँ को ।
सूरदास बल जाव चरनन की, जसुमत दूध पियायो ।।८।।

कहा करौ तकसीर, कुँजन बन छोड़ गए ए ऊधौ ।
जो मैं होती जल की मछरिया, कृष्ण करते असनान,
चरन गहि लेती ए ऊधौ ।
जो मैं होती बन की हिरनियाँ, कृष्ण चलाते बान,
प्रान तज देती ए ऊधौ ।
जो मैं होती सुरहिन गैया, कृष्ण दुहाते गाय,
गगर भर देती ए ऊधौ ।
जो मैं होती बाँस की बसुरिया, कृष्ण बजाते बीन,
अधर रस लेती ए ऊधौ ।
जो मैं होती सीप की मोती, कृष्ण गुहावते हार,
गले बिच रहती ए ऊधौ ।।९।।

श्यामल कली राधे श्याम गये अन्त, रसवारी के भौंरा रे।
ऊधौ तुम जइयो और माधौ से कहियो, तुम कहैंत न डरइयो,
वे राधे हो गई संत, रसबारी के भौंरा रे।
भूली सोलहू सिंगार टूटो गज मोती हार, जिया भम्रो छार-छार,
कैसे निर्मोही कंत, रसवारी के भौंरा रे।
कछु बोलत न बात, खान-पान ना सुहात, भयो तातो सब गात,
परो दुःख के अनन्त, रसवारौ के भौंरा रे।
सखी हारी समुझाय, बात कौनऊ न भाय, हाथ मीजैं पछिताय,
लगें अ गम्रो बस अंत, रसवारी के भौंरा रे ।।१०।।

ऊधौ कहियो संवरिया से जाय, खबरिया काहे भूले मोरे लाल।
रोय रोय के कहै राधिका, सुन ऊधौ चित लाय मोरे लाल ।।
कहियो मोर संदेश स्याम कों, कुवरी विलग बुलाय मोरे लाल।
जा दिन से हरि संग छोड़ के, मथुरा गये सिधाय मोरे लाल ।।
तब सो मन चंचल निस-वासर, दर्शन को ललचाय मोरे लाल।
परसों के आवन को कहि गये, बरसों दिये बिताय मोरे लाल ।।
बात लाज की स्याम बिन राधा, कीसे कहै सुनाय मोरे लाल।
ऊधौ स्याम वियोग राधिका, जनमी करम लिखाय मोरे लाल ।।
जो कछु लिखो बिधान बिधी का, सो मिटने को नाय मोरे लाल।
खुशी रहै वह सौति कुबरिया, चिरजीवो यदुराय मोरे लाल ।।११।।

ऊधौ हरी को समझाय दीजै मथुरा जाय कै।
मोहन भूले जो होवे दधि-माखन को,
ऊधौ गोरस वहीं लुटाय दीजौं मथुरा जाय कै।
मोहन भले जो होवें गोपी-ग्वालन को,
ऊधौ रहस वही रचवाय दीजौं मथुरा जाय कै।
मोहन भूले जो होवे गइया बछनन को,
ऊधौ लकुटी उन्हैं गहाय दीजौ मथुरा जाय कै।
मोहन भूले जो होवें नन्द-जसुदा को,
ऊधौ माखन-मिसरी धराय दीजौ मथुरा जाय कै।
मोहन भूले जो होवें बृज-गोकुल को,
ऊधौ हाल-चाल बताय दीजौ मथुरा जाय कै ।।१२।।

दुर लगे असाढ़ खबर ने लई, हरि मोरी।
दादुर बोले पपीरा, मतुबन बोली मोर,
श्याम श्याम कह टेरियो, चित है मोरी ओर। खबर०
ऊधौ जाइयो मथुरा, हरि सौं कहियो समझाय,
खाके जहर बिष मरहीं, पीछूं परे पछताय। खबर०
पाती ले जाय के, ऊधौ कही प्रेम कुशलात।
हँस-हँस पूछे साँवला, ब्रज भौन की बात।
कैसे बाबा नन्द, कैसी यशोदा माई,
कैसी हमरी गऊ, कैसे हलधर भाई।
कैसी दुनियाँ ब्रज की, अरु कदम्ब वृक्ष की छाँह।
कैसी तो 'वह गोपी' कहिये बसै कौन की बाँह।
अच्छे बाबा नन्द, अच्छी यशोदा माई,
अच्छी तुम्हारी गऊ, अच्छे हलधर भाइ।
अच्छी दुनियाँ ब्रज की, अरु कदम्ब वृक्ष की छाँह।
गोपी तो वह भटकत डोलैं, बसैं कृष्ण की बाँह ।।१३।।

१

भजन

ऊधौ जी लाये कहाँ से पाती ।।टेक।।

कौन देश कहँ धाम तिहारो नाम कहा कह जाती।
कारण कौन कहा तुम लाये सो पहिचान कहाती।
ऊधौ जी० ।।१।।

कौनें लिखि कौन को भेजी समझ परै यह बाती।
सांचो हाल कहो तुम मोसों जो सुन भ्रम मिट जाती ।।
ऊधौ जी० ।।२।।

हरि ने लिखि द्वारिका से लाये हैं तुम्हरे हित पाती।
ऊधौ नाम स्याम के साथी यदुवँशी मेरी जाती ।।
ऊधौ जी० ।।३।।

हरि ने करी याद गोपिन की भूलैं नहिं दिन राती।
कहैं हरदेव राधिका करपै ऊधौ धर दई पाती ।।
ऊधौ जी० ।।४।।

२

ऊधौ जी पाती काम नहिं आती ।।टेक।।
निद्रा लगी खाट है टूटी जगत बीत गई राती ।
भोजन करे उदर ना अफरे ओसन प्यास बुझाती ।।
ऊधौ जी पाती ।।१।।

जैसे नाग तजै कुचली को फेर न वाय सुहाती ।
तैसे ही तजो हमैं यदुपति ने ऋतु बसंत दुख पाती ।।
ऊधौ जी पाती ।।२।।

मोहिं अभिलाष हती मिलवे की हरि मुख देख अघाती ।
खस को देख सूख गई आँखें टूक-टूक भई छाती ।।
ऊधौ जी ।।पाती ।३।

अबकी बेर हमें हरि मिलते समझाती बहु भाँती ।
कहैं हरदेव राधिका बोली कर लेती मन माती ।।
ऊधौ जी पाती ।।४।।

३

ऊधौ कैसे कटे दिन राती ।।टेक।।
अभै लों आस हती मिलवे की आस घटी बहु भांती ।
कुबिजा छोड़ नहीं हरि आवैं अनहक मन भटकाती ।
ऊधौ कैसे कटे० ।।१।।

अक्षर देख-देख राधा जी सब खत को पढ़ जाती ।
जेतौ दस्तखत हैं मोहन के निरख लगावत छाती ।।
ऊधौ कैसे कटे० ।।२।।

धन्य वह कलम धन्य वह स्याही धन कागज की जाती ।
आधो मिलन भयो मेरे ऊधौ कर धर सिर पछताती ।।
ऊधो कैसे कटे० ।।३।।

हमसे बंर हेंत कुबिजा सों बीच परो बहु भाँती ।
कहै हरदेव श्याम नहिं आये सो यह बात वृथा कहा थी ।
उधौ कैसे कटे० ।।४।।

४

ऊधौ जी लाग नहीं कुबिजा की ।।टेक।।
अपनों दाम होय जो खोटो लाग कहा परखा की ।
पूत कपूत होय जा कुल में लाग न मात पिता की ।
ऊधौ जी लाग ।।१।।

दिनकर उदय उलूक लुकत है मलिन कहा सविता की ।
ऋतु पावस में चातक प्यासी कमी कहा वर्षा की ।।
ऊधौ जी लाग० ।।२।।

बार करील पात नहिं आवें जग बस ऋतु राजा की ।
हाड़िल पाँव धरं ना धरती भार परै दुनियाँ की ।।
ऊधौ जी लाग० ।।३।।

पूरी लाग राधिका गोपी नन्द बबा यशुदा की ।
कहैं हरदेव राधिका बोली मरी मीच ममता की ।।
ऊधौ जी लाग० ।।४।।

५

ऊधौ जी लगी है प्रेम की फाँसी ।।टेक।।
फाँसी लगी प्रान न निकसो भुगति रही चौरासी ।
जीवन मरन भयो न हमको ठीक बैठ गई गाँसी ।।
ऊधौ जी लगी० ।।१।।

हमको जनंम कहा बिध दीन्हों बास बदो ब्रज वासी ।
हरि के संग रहस में नाची सो जग में भई हांसी ।।
ऊधौ जी लगी० ।।२।।

राढ़िन की जड़ हांसी कहिये रोगन की जड़ खाँसी ।
हमको जड़ उपजी वे कुबजा मोहि लियो अविनासी ।।
ऊधौ जी लगी० ।।३।।

भूखन मरत कुबेर घरन में जल बिन मीन पियासी ।
कहैं हरदेव राधिका बोली मरिहैं तप कर काशी ।।
ऊधौ जी लगी० ।।४।।

६

ऊधौ जी बखत पड़े की बातें ।।टेक।।
थे हरिश्चन्द्र सत्य के अगरे धर्म करी सब बातें ।
पानी भरे नींच के घर में दुख भुगतें बहु भाँते ।।
ऊधौ जी बखत० ।।१।।

नौलख हार लील गइ खुटिया अपयश लग गयो गातें ।
मछली भुनी भाग गई जल में भूख मरें दिन रातें ।।
ऊधौ जी बखत० ।।२।।

सिया समेत राम गये बनको बिछुरे हैं मात पिता तें ।
रावण सिया हरी वा बन में असुर करी बहु घातें ।।
ऊधौ जी बखत० ।।३।।

हमको छोड़ कूबरी ले गये कढ़ि गये दूर यहाँ तें ।
कहैं हरदेव राधिका बोली हुइ है मिलन कहाँ तें ।।
ऊधौ जी बखत० ।।४।।

७

ऊधौ जी समरथ को हित नीको ।।टेक।।
ऊसर खेत और खादर बन बंजर पृथ्वी को ।
एकौ ठौर मेघ ना छोड़े बरसत है मन ही को ।।
ऊधौ जी समरथ० ।।१।।

गिरि कंदरा खोय अस डांगे चारहु दिशि रजनी को।
रवि को उदय होत सब जग में बुरो ठौर कह नीको ।।
ऊधौ जी समरथ० ।।२।।

मेवा पाँस तेल घृत मैला जौ भर तृण लकड़ी को।
पावक नेंक बिवेक करै ना भस्म करै सबही को ।।
ऊधौ जी समरथ० ।।३।।

कुबिजा संग हमेंउ ले जाते मिट जातो दुख जी को।
कहैं हरदेव राधिका बोली करो हेत छल ही को ।।
ऊधौ जी समरथ० ।।४।।

८

ऊधौ है अपनो नहीं कोई ।।टेक।।
शम्भु कही भस्मासुर सुनिये देंय अजड़ बर तोई।
बर पाये फिर हाथ पसारो भजैं शम्भु दुख होई।।
ऊधौ है अपनो० ।।१।।

कह सुग्रीव सिया हम ढूँढे खोज लेंय जहँ होई।
राज पाय फिर खबर भूल गई मतलब को सब कोई।।
ऊधौ है अपनो० ।।२।।

अपनें अपनें निज स्वारथ की प्रीति करै सब कोई।
स्वारथ बीति फेर ना पूछे बात कहै ना कोई।।
ऊधौ है अपनो० ।।३।।

प्रीति करी हम बीच न राखी लाज शरम सब खोई।
कहैं हरदेव हकीकत किसकी सिर पै कर धर रोई।।
ऊधौ है अपनो० ।।४।।

९

ऊधौ प्रीति की रीति न्यारी ।।टेक।।
जैसे बेल खाय नित हाथी कैसे नीति बिचारी।
बेल गले ना दुहका होबैं गूदा लेत निकारी।।
ऊधौ प्रीति की० ।।१।।

ऊपर से जब गिरो नारियल बट की आस बिसारी ।
बाको संग दूध ना छोड़े तार न तजत पिछारो ।।
ऊधौ प्रीति की० ।।२।।
यामिन उदय चन्द्र जब होवै छिटक रही उजियारी ।
ऐसी प्रीति सराहन करिये चन्द्र चकोर निहारी ।।
ऊधौ प्रीति की० ।।३।।
आवत जात बने हरि रहते पुजती आस हमारी ।
कहै हरदेव राधिका बोली कपटी मित्र बिहारी ।।
ऊधौ प्रीति की० ।।४।।

१०

ऊधौ राधा स्याम युग फूटो ।।टेक।।
यहाँ से जाय दूर हरि काढ़े गये दूर बसे हित टूटो ।
कर कर सुरत स्याम सुन्दर की नैन से जस छूटो ।।
ऊधौ राधा स्याम० ।।१।।
कुबजा को हित साँचोहि जानो है हमरो हित झूठ ।
लाज शरम हरि के संग खोई सिर पै कर सर कूटो ।।
ऊधौ राधा स्याम ।२।।
बालापन जसुदा से सेये हाथन से मल सूटो ।
अब तो माय देवकी जानी नवत पेट को घूंटो ।।
ऊधौ राधा स्याम० ।।३।।
जब मैं मान करो उन हरि सों आनि गहै मेरो खूटो ।
कहैं हरदेव राधिका वोली कुबजा ने सुख लूटो ।।
ऊधौ राधा स्याम० ।।४।।

११

उधौ जुग बिछुरे दुख होवे ।।टेक।।
चौपड़ खेलत चतुर सुजाना साँझ झूठ सब होवे ।
मार जाय नर्द जुग फूटे कबहूँ लाल न होबे ।।
ऊधौ जुग बिछुरे ।।१।।
बड़े चतुर चकवा और चकई प्रेम मगन दिन खाबे ।
जामिन होत संग छुटि जाबे रैन समय नहिं सोबे ।।
ऊधौ जुग बिछुरे० ।।३।।

जगत मात सिय हरी असुर नें राज पाट सब खोबे ।
कैसे कष्ट पड़े सीता पै दुःख भुगते और रोबे ।।
ऊधौ जुग बिछुरे० ।।३।।

हरि के छुटत मलिन मुख हुई गयो बार-बार क्या धोवें ।
कहैं हरदेव राधिका बोली अब मिलबो नहीं होवे ।।
ऊधौ जुग बिछुरे० ।।४।।

१२

ऊधौ बिकल भई ब्रज नारी ।।टेक।।
जौ भर कला चन्द्र की जानों सोई सिंगार बिसारी ।
मास दिवस की एक समझ के भूषन चीर उतारी ।।
ऊधौ बिकल भई० ।।१।।

है मधुपुरी नृपति सुत अरि जो ता मेरी याद बिसारी ।
दशरथ सुअन तासुरिपु पति जो ताअरि घात बिचारी ।।
उधौ बिकल भई० ।।२।।

अपिया सुत ताकी जो नारी तासु पिता मुख लारी ।
सो हरि भेज देय कुबजा को हरि मुख सोव अनुसारी ।।
उधौ बिकल भई० ।।३।।

तो याको सुत, सुत मोहि जानों तामखि लेउ बिचारी ।
कहैं हरदेव राधिका बोली तासे अधिक दुख भारी ।।
उधौ बिकल भई० ।।४।।

१३

उधौ स्याम फजीहत कीनीं ।।टेक।।
उड़गनपति को तात जौन है ता सुत सुत रचदीनी ।
तमरिपु सुत अरि जौन कहावे ता स्वारथ घट कीनी ।
उधौ स्याम फजीहत० ।।१।।

गउ सुत भख को बीर भाई मैं सोई की मति करि हीनी ।
सैल सुता पति दहन ग्रसतु है बिरहाग्नि बपु छीनी ।।
उधौं स्याम फजीहत० ।।२।।

उरग अहार तासु सुत पति जो सोई हिरदै धरि लीनी ।
बाहन इन्द्र तासु रिपु घर में भगत करी लव लीनी ।।
उधौ स्याम फजीहत० ।।३।।

मीन सुता पति नारि धरै शिर ता भख बात न कीनी ।
कहैं हरदेव राधिका बोली ताहू पैं तज दीनी ।।
उधौ स्याम फजीहत० ।।४।।

१४

ऊधौ कुविजा अधिक मन लागी ।।टेक।।
आज्ञा भंग करी ना हमने हरि काहे मोहि त्यागी ।
धन्य भाग कुबिजा के जानों हम हैं कर्म अभागी ।।
ऊधो कुबिजा अधिक ।।१।।

जाति कुजाति कंस की दासी है कुल की अति दागी ।
सो हरि जाय करी पटरानी कैसी पंटाखा टोगी ।।
ऊधो कुबिजा अधिक ।।२।।

जा दिन बीन बजै उन हरि की काम छोड़ नित भागी ।
सोलह सहस गोपिका मोही सब हरि के रंग पागी ।।
ऊधौ कुबिजा अधिक ।।३।।

करि करि सूरत श्याम सुन्दर की रात दिना हम जागी ।
कहैं हरदेव राधिका बोली जरत अंग बिन आगी ।।
ऊधौ कुबिजा अधिक ।।४।।

१५

ऊधौ कुबिजा कहा जस कीनों ।।टेक।।
चन्दन गारि कूबरी लाई हरि के तिलक कर दीनों ।।
जा जस बनो एक कुबिजा पै तासें इनि घर लीनों ।।
ऊधौ कुबिजा कहा० ।।१।।

कुविजा नाम वदन की टेढ़ी तीन ठौर तन हीनों ।
करिहा दाव करी हरि सूधी जती खेंच मन दीनों ।।
ऊधौ कुबिजा कहा० ।।२।।

हरि को पोटि द्वारिका ले गई पति अपनो कर लीनो ।
दासी हती भई पटरानी लोहे कनक कर दीनो ।।
ऊधौ कुविजा कहा० ।।३।।

उदित भाग कुबिजा के कहिये हमरो पुन्य भयौ छीनों ।
कहैं हरदेव राधिका बोली हरि बिन धृक है जीनों ।।
ऊधौ कुबिजा कहा० ।।४।।

१६

ऊधौ हरि को कौन विधि पाउँ ।।टेक।।
धनि वह दिवस धन्य तिथि जानों हरि सूरत लखि पाऊँ ।
सोने सींग मढ़ाय धेनु के विप्रन पुण्य कराऊँ ।।
ऊधौ हरि को० ।।१।।

भोजन खीर खांड घृत मेवा व्यंजन थार सजाऊँ ।
दूध दही अरु माखन मिश्री हरि को बैठ जिमाऊँ ।।
ऊधौ हरि को० ।।२।।

गुहि गुहि हार धरौं फूलन के चुनि चुनि सेज बिछाऊँ ।
चरन पलोट लौट चरनन पै पंखा पवन डुलाऊँ ।।
ऊधौ हरि को० ।।३।।

अतर सुगन्धित अंग लेपन कर दर्प हाथ दिखाऊँ ।
कहैं हरदेव राधिका बोली पलिगा पान खबाऊँ ।।
ऊधौ हरि को० ।।४।।

१७

ऊधौ हरि अबकी घर आवैं ।।टेक।।
हमरे कसूर छमा करि देवैं बातन में नहिं आवैं ।
हमको आस बड़ी मिलिवे की निज मुख आन दिखावें ।।
ऊधौ हरि अबकी ।।१।।

बछरा धेनु बनें हरि बेई अपनी आन चरावैं ।
दूध दही की खान वही है नित उठ भोग लगावैं ।।
ऊधौ हरि अबकी ।।२।।

गोपी ग्वाल बेन हरि वेई कुंजन रहस रचावैं ।
जा वंशी बनिता बस हो गई सो वह बीन सुनावैं ।।
ऊधौ हरि अबकी ।।३।।

नन्द बबा यशुदा नित बिलखैं उनको धीर धरावैं ।
कहैं हरदेव राधिका बोली ब्रज के कष्ट मिटावैं ।।
ऊधौ हरि अबकी ।।४।।

१८

ऊधौ कुबिजा भई घर वाली ।।टेक।।
मुरली बेचि अजाधन लीनों शब्द सुहावन वाली ।
चन्दन काटि धमाई बवाई कामिनि कसक कराली ।।
ऊधौ कुबिजा भई० ।।१।।

सुरसरि छोड़ि नहाय पोखर में तिलक दिये घिस भाली ।
कस्बा छोड़ बसे पुरवा में बूझती आज कै काली ।।
ऊधौ कुबिजा भई० ।।२।।

नौता छौड़ि भीख को मागै द्वारे खोद दई नाली ।
मेवा छोड़ि खाय गूलर को पेट भरो नित खाली ।।
ऊधौ कुबिजा भई० ।।३।।

फूल गुलाब राधिका छोड़ी कुबिजा फूल अधाली ।
कहैं हरदेव राधिका बोली बड़े चतुर बनमाली ।।
ऊधौ कुबिजा भई ।।४।।

१९

ऊधौ विधि नें रची सोई होवै ।।टेक।।
जगत मात सीता सुत अगरो व्याह राम संग होवै ।
विधि की रची न बची बचाये वन भटकै दुख रोवै ।।
ऊधौ विधि ने० ।।१।।

रावण शिव विरंच नित पूजै इनके बल सुख सोवै ।
उनको वंश सहित दल जूझो राज-पाट सब खोवै ।।
ऊधौ विधि नें० ।।२।।

एक सौ एक बन्धु दुर्योधन राज अवनि पति भावै ।
हत्या हंस प्रकट भई जबहीं नाश एक संग होवै ।।
ऊधौ विधि नें० ।।३।।

श्री हरि मिले हमें वर ऐसे जिनकी करी जग होवै ।
कहैं हरदेव राधिका बोली नाव नीर बिच डोवै ।।
ऊधौ विधि ने० ।।४।।

२०

ऊधौ हरि ने एक न मानी ।।टेक।।
जा दिन श्याम चले रथ चढ़िके हम दौरी अकुलानी ।
घोड़न के आगे गिरि गई सुम्भ गहे लपटानी ।।
ऊधौ हरि नें० ।।१।।

कै संग रहौ कै संग लै जावौ तज धीरज मन आनी ।
कै रथ हांकि देउ ऊपर भये सुन वे पीर गुमानी ।।
ऊधौ हरि नें० ।।२।।

रथ को घुमाय राह हरि गहि लई निपट कपट तब जानी ।
बिलखत राह राधिका छोड़ी उन हरि पीर न जानी ।।
ऊधौ हरि नें ।।३।।

गोपी ग्वाल बिनय बहु कीनी हरि सों कछु न बसानी ।
कहैं हरदेव राधिका बोली हुई गई बात बिरानी ।।
ऊधौ हरि नें० ।।४।।

२१

ऊधौ हरि सों महा हित जोरो ।।टेक।।
हरि की लाग कछु नहिं ऊधौ हरि को महा मन भारो ।
जब से संग भयो कुबिजा को वो हमको विष घोरो ।।
ऊधौ हरि सों ।।१।।

कुविजा हेत सौ गुनो जानों है हमरो हित थोरो ।
पूरब पुन्य छीन भयो हमरो तासें मोह हरि तोरो ।।
ऊधौ हरि सों ।।२।।

हरि के संग लाज तजि नाची हम अपनो कुल बोरो ।
जाको जस हरि कछु नहिं जानों उलटो करे निहोरो ।।
ऊधौ हरि सों ।।३।।

राधा श्याम मिलो भल जोड़ा विधि अपने कर जोरो ।
कहैं हरदेव राधिका बोली सो कुबिजा जग फोरो ।।
ऊधौ हरि सों० ।।४।।

२२

ऊधौ ध्यान धरें उनही को ।।टेक।।
ध्रुव की दुमात अफिक दुख दीनो काम करो मनही को ।
वाही देह ध्रुव सुरपुर पहुँचे भजन करो हरि ही को ।।
ऊधौ ध्यान धरें ।।१।।

जब प्रहलाद खंभ सों बाधें निरखो रूप चिटी को ।
खम्भ फार प्रहलाद उबारो बन के बाघ बनी को ।।
ऊधौ ध्यान धरें ।।२।।

द्रुपदी बीच सभा में ठाढ़ी चीर खिचो तनही को ।
उनको सीस नेक ना उघरो सुमरो नाम हरी को ।।
ऊधौ ध्यान धरें ।।३।।

उनकी सुनी तो मेरी हू सुनिहैं समुझि प्रेम हित जी को ।
कहैं हरदेव राधिका बोली मिटैं मर्म तब जो को ।।
ऊधौ ध्यान धरें ।।४।।

२३

ऊधौ हरि सों अरज कहि दीजो ।।टेक।।
नागा छोड़ि भलाई कहियो अनुचित सब तज दीजो ।
रिस के बस हम जो कुछ कहिलई ताको दुराय न कीजो ।।
ऊधौ हरि सों० ।।१।।

थोड़ी कही बहुत समुझाई अरु सब मम भर दीजो ।
जैसो स्वारथ होय हमारो सोई सिखावनि दीजो ।।
ऊधौ हरि सों० ।।२।।

हरि के पास न होय कूबरी वही अवसर लखि लीजो ।
वाही समय मेरी पाती जे हरि के चरनन पै धर दीजो ।।
ऊधौ हरि सों० ।।३।।

अबकी मोय मिलन देउ हरि को इतनो यश तुम लीजो ।
कहैं हरदेव हकीक़त कह के अँसुवन से पट भीजो ।।
ऊधौ हरि सों० ।।४।।

२४

ऊधौ कुबिजा श्याम को कैहै ।।टेक।।
राधा श्याम कहाय जगत में सो वदली न जैहै ।
कुबिजा श्याम कहै जो कोई माहिल बैल संग नैहै ।।
ऊधौ कुविजा श्याम० ।।१।।

भात कढ़ी को सदा मेल है कढ़ी पूरी को खैहै ।
हंसन बीच काग जो बैठो शोभा कबहुँ न दैहै ।।
ऊधौ कुबिजा श्याम० ।।२।।

एक पुत्र जो बाहर जैहै घर में को रह जैहै ।
नन्द पिता और माय यशोदा इन्है कौन सुख दैहै ।।
ऊधौ कुबिजा श्याम० ।।३।।

ब्रज को छोड़ द्वारिका पहुँचे पदवी अधिक बढ़ जैहै ।
कहैं हरदेव राधिका बोली कलि में कथा चलि जैहै ।।
ऊधौ कुबिजा श्याम० ।।४।।

२५

ऊधौ श्याम नहीं हित हेरे ।।टेक।।
पारवती भसमासुर चाही हर के सर कर फेरे ।
गौर न दई भजे शिवशंकर दुख भुगते वहुतेरे ।।
ऊधौ श्याम नहीं० ।।१।।

जनक सुता ने गही सुअरिया बाको कष्ट घनेरे ।
वाके हेत सुआ तन त्यागो सरजू निकट बसेरे ।।
ऊधौ श्याम नहीं० ।।२।।

सीता हेत राम लक्ष्मन गये जाय असुर घर घेरे ।
रावण मार सिया ले आए असुर मार कर ढेरे ।।
ऊधौ श्याम नहीं० ।।३।।

व्रज वनिता सब ब्रज में छोड़ी फेर न आये नेरे ।
·········राधिका बोली कर गये भवन अँधेरे ।।
ऊधौ श्याम नहीं० ।।४।।